पुस्तकालय-दुर्लभ-ग्रन्थ-प्रकाशन-योजना

[सत्तमं पुप्फं]

कच्चायनमहाथेरविरचितं

कच्चायनव्याकरणं

महाविजितावित्थेरविरचिताय

कच्चायनवण्णनाय

समन्नागतं

[पठमो भागो]

सम्पादको टिप्पणीकारो च

डॉ० लक्ष्मीनारायण तिवारी

सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयः

LIBRARY RARE TEXTS PUBLICATIONS SERIES
[Vol. 7]

KACCĀYANAVYĀKARAṆAṀ

OF

KACCĀYANA MAHĀTHERA

With the Commentary

KACCĀYANAVAṆṆANĀ

BY

MAHĀVIJITĀVĪ THERA

[Vol. I]

Foreword By
DR. VIDYANIWAS MISRA
Vice-Chancellor
Sampurnanand Sanskrit University

Critically Edited and Annotated with Notes
BY
PROF. LAKSHMI NARAYAN TIWARI
Professor and Head in Pali Department
Sampurnanand Sanskrit University

VARANASI
1992

Published by—
Dr. Harish Chandra Mani Tripathi
Publication Officer,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi-221 002.

□

[Published under the Rare Texts Publication Scheme of Sarasvati Bhavana Library with financial assistance provided by University Grants Commission]

□

Available at—
Sales Department,
Sampurnanand Sanskrit University
Varanasi-221 002.

□

First Edition—1000 copies
Price—Rs. 80.00

□

Printed by—
Ratna Printing Works
B 21/42 A, Kamachha,
Varanasi-221 010.

पुस्तकालय-दुर्लभ ग्रन्थ-प्रकाशन-योजना

[सत्तमं पुप्फं]

कच्चायनमहाथेरविरचितं

कच्चायनव्याकरणं

महाविजिताविथेरविरचिताय

कच्चायनवण्णनाय

समन्नागतं

[पठमो भागो]

कुलपतिश्रीविद्यानिवासमिश्रप्ररोचनया समलङ्कृतम्

सम्पादको टिप्पणीकारो च

प्रो० लक्ष्मीनारायण तिवारी

आचार्योऽध्यक्षश्च पालिविभागस्य

सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये

वाराणस्याम्

खरिसवस्से १९९२

विक्कमवस्से २०४८

बुद्धवस्से २५३५

प्रकाशकः—
डॉ० हरिश्चन्द्रमणित्रिपाठी
प्रकाशनाधिकारी,
सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य
वाराणसी-२२१ ००२.

[सरस्वतीभवनपुस्तकालयस्य दुर्लभग्रन्थप्रकाशन-योजनान्तर्गत-
विश्वविद्यालयानुदानायोगस्य वित्तीयसहाय्यतया प्रकाशितम्]

प्राप्तिस्थानम्—
विक्रयविभागः,
सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालयस्य
वाराणसी-२२१ ००२.

प्रथमं संस्करणम्—१००० प्रतिरूपाणि
मूल्यम् : ८०.०० रूप्यकाणि

MAHENDRA SANSKRIT UNIVERSITY
29005

मुद्रक :
रत्ना प्रिंटिंग वर्क्स
बी. २१/४२ ए, कमच्छा,
वाराणसी-२२१ ०१०

प्ररोचना

मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि पालि-भाषा के प्रसिद्ध **'कच्चायनव्याकरण'** को **'कच्चायनवण्णनाय'** टीका के साथ अनेक मातृकाओं के अध्ययन के अनन्तर वर्षों के अथक परिश्रम के पश्चात् आचार्य **श्रीलक्ष्मीनारायण तिवारी** ने सम्पादित किया है और अब वह उनकी विस्तृत भूमिका के साथ प्रकाशित हो रहा है। उनकी विस्तृत भूमिका से स्पष्ट हो रहा है कि पाणिनि-व्याकरण की ही तरह कच्चायन-व्याकरण भी बहुत सुगठित और विशाल है। यह केवल वर्णन ही नहीं है; अपितु यह पालि-भाषा के मर्म तक पहुँचाने वाला सिद्ध उपाय भी है। इसकी टीका बहुत प्रौढ़ और स्वयंपूर्ण है। ऐसे सार्थक परिश्रम के लिए मैं श्री तिवारी को साधुवाद देता हूँ।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह ग्रन्थ पालि-भाषा के अध्येताओं के आदर का भाजन होगा।

वाराणसी
मार्गशीर्ष-पूर्णिमा,
२०४८ वैक्रमाब्द
(२१-१२-१९९१ खैस्ताब्द)

विद्यानिवास मिश्र
कुलपति
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

भूमिका

महाकरुणा के अनन्तसागर, विद्याचरण-सम्पन्न, देव-मनुष्यों के शास्ता तथागत भगवान् बुद्ध ने जिस भाषा के माध्यम से अपने उपदेश दिये, उसे थेरवाद की परम्परा में अधुना 'पालि' की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। बुद्ध के समय से लेकर आधुनिक काल तक इसका प्रवाह अविच्छिन्न रहा है तथा एशिया के वे देश जो थेरवाद परम्परा के अनुयायी हैं, धार्मिक भाषा के रूप में अतीत से ही इसका व्यवहार करते आ रहे हैं। आधुनिक युग में ही इसे पालि-भाषा की संज्ञा प्रदान की गयी। परम्परा इसे मागधी भाषा कहती है।

यूरोप में 'पालि' शब्द फ्रान्स के सम्राट् लुई चतुर्दश के थाईलैण्ड (स्याम) में नियुक्त राजदूत लुब्रे द्वारा ले जाया गया। उसे थाईलैण्ड में त्रिपिटिक के जो ग्रन्थ प्राप्त हुए थे, उनके नामों में मूल अर्थ को द्योतित करने के लिए यह शब्द जुड़ा हुआ था, उदाहरणार्थ—महावग्ग-पालि, उदान-पालि आदि; और इसी से लोगों ने एक विशेष भाषा के अर्थ में इसका प्रयोग प्रारम्भ कर दिया तथा आज स्थिति यह है कि परम्परा के रूप में प्राप्त इसका 'मागधी' नाम पीछे छूट गया है।

आधुनिक जगत् को इस भाषा का पूर्ण परिचय विगत शताब्दी में पाश्चात्य विद्वानों द्वारा प्राप्त हुआ और इसके प्रचार तथा प्रसार का श्रेय वर्तमान में यूरोपीय विद्वानों को है एवं उन्हीं के फलस्वरूप विद्वत्-जगत् की अभिरुचि बौद्ध धर्म तथा दर्शन के अध्ययन में जागृत हुई।

किसी भी भाषा के अध्ययन-कार्य में उसका व्याकरण ही प्रधान रूप से सहायक होता है। शास्त्रीय तथा साहित्यिक भाषाओं के अध्ययन की दिशा उसके व्याकरण के बिना निर्धारित ही नहीं हो पाती। अतः बौद्ध धर्म एवं दर्शन के सुव्यवस्थित अध्ययन हेतु उसकी उद्वाहिका पालि-भाषा के व्याकरण का ज्ञान परमावश्यक है। परम्परागत पालि व्याकरणों में यही स्थापना की गयी है कि बुद्ध द्वारा उपदिष्ट मार्ग का अवलम्बन करके ही लोकोत्तर धर्म निर्वाण को प्राप्त किया जा सकता है और यह तथागत के वचनों के अर्थावबोध से ही सम्भव है तथा यह अर्थावबोध व्याकरण के सम्यक् ज्ञान के बिना नहीं हो सकता[1]। अतः पालि की परम्परा में इस भाषा के व्याकरणों की रचनाएँ प्रस्तुत हुईं। इसी दृष्टि से इस भाषा से परिचित होते ही आधुनिक युग के विद्वानों ने इसके व्याकरण तथा भाषा-सम्बन्धी कार्य को प्रारम्भ किया और १८२४ ई० में बी० क्लो ने शब्दकोश के साथ पालि व्याकरण को प्रकाशित

---

१. क०—मूल, पृ० ३।

किया। बर्नफ तथा लेसेन द्वारा पालि-भाषा-विषयक निबन्ध १८२६ ई० में प्रस्तुत हुए और जेम्स एलविस ने बुद्धवचनों की भाषा के सम्बन्ध में १८६१ ई० में अपना निबन्ध लिखा तथा इस दिशा में क्रमशः वृद्धि होती गयी एवं १८६३ ई० में इनके द्वारा कच्चायन व्याकरण पर प्रकाश डालते हुए एक पुस्तक प्रस्तुत हुई। कच्चायन व्याकरण का मूल तथा फ्रेन्च अनुवाद एवं आलोचनात्मक टिप्पणियों के साथ एक संस्करण सेनार्ट द्वारा रोमन लिपि में १८७१ ई० में प्रकाशित हुआ। इसमें सूत्र देवनागरी में तथा वृत्ति आदि रोमन लिपि में दिये गये थे। उस समय की दृष्टि से सेनार्ट का यह कार्य सराहनीय ही था, क्योंकि तब तक पालि त्रिपिटिक के बहुत कम ग्रन्थ प्रकाश में आये थे और अट्ठकथा तथा टीका ग्रन्थों का आधुनिक दृष्टि से सम्पादन तथा प्रकाशन नहीं हुआ था। १८७२ ई० में मिनायेफ ने रूसी भाषा में पालि-भाषा और व्याकरण-सम्बन्धी अपनी पुस्तक प्रस्तुत की और इस भाषा पर आलोचनात्मक प्रकाश भी उनके द्वारा डाला गया। सेनार्ट के कार्य के पश्चात् सीलोन तथा बर्मा के विद्वान् भी कच्चायन व्याकरण के सूत्र-वृत्ति-सहित संस्करणों के सम्पादन प्रकाशन कार्य की ओर प्रवृत्त हुए। इनमें सीलोन के श्री सुमङ्गल एवं श्री धर्माराम धर्मकीर्ति के संस्करण तथा बर्मा के अन्य संस्करण महत्त्वपूर्ण हैं। इसी क्रम में आगे 'कच्चायनन्यास' एवं 'कच्चायनवण्णना' के भी संस्करण सीलोन तथा बर्मा से प्रकाशित हुए। सेनार्ट के आधार पर ही १९०१ ई० में कच्चायन व्याकरण का संस्करण प्रथम बार भारत में महामहोपाध्याय सतीशचन्द्र विद्याभूषण द्वारा प्रस्तुत हुआ। किन्तु वैज्ञानिक दृष्टि से यह उतना सुन्दर नहीं रहा। प्रसिद्ध जर्मन विद्वान् विन्टरनित्स ने १९१२ ई० में भारतीय-साहित्य-परक अपने ग्रन्थ के द्वितीय भाग में पालि तथा बौद्ध साहित्य का विवेचन किया और पालि भाषा का भाषापरक-अध्ययन १९१६ ई० में गायगर द्वारा सम्पन्न किया गया। १९४० ई० में भिक्षु जगदीश काश्यप ने मोग्गल्लान व्याकरण पर आधारित 'पालि महाव्याकरण' नामक ग्रन्थ की रचना हिन्दी में की। किन्तु वर्तमान समय में, जब पालि तथा बौद्ध दर्शन के अध्ययन-क्षेत्र में पुनर्जागरण की अवस्था दृष्टिगोचर हो रही है, कच्चायन-व्याकरण का कोई सुन्दर संस्करण विद्यमान न होने से अध्ययन-सम्बन्धी समस्याओं के निवारण हेतु इसका एक सुन्दर संस्करण पाठभेद, अनुवाद एवं व्याख्यापरक टिप्पणियों तथा विस्तृत भूमिका के साथ वर्तमान लेखक ने अपने सहयोगी श्री शर्मा के साथ १९६२ ई० में प्रस्तुत किया।

वर्तमान में सम्पूर्ण पालि त्रिपिटक तथा अधिकांश अट्ठकथाओं एवं कुछ टीकाओं के संस्करण देवनागरी लिपि में भारत में प्रकाशित हो चुके हैं और पालि भाषा स्नातक एवं स्नातकोत्तर कथाओं में अध्ययन के एक विषय के रूप में इस देश के अनेक विश्वविद्यालयों में प्रतिष्ठापित हो चुकी है तथा यहाँ आवश्यकता इस बात की है कि पालि व्याकरण के परम्परागत अध्ययन को इस देश की व्याकरण-परम्परा के अध्ययन क्रम में विशेष महत्त्व प्रदान किया जाय। तभी पालि भाषा के गम्भीर

अध्ययन के प्रवृत्ति का सूत्रपात हो सकेगा। यद्यपि स्थविरवादी देशों में संस्कृत व्याकरण की ही भाँति सूत्र, वृत्ति, न्यास, टीका एवं वण्णनाओं के पाठ के द्वारा पालि व्याकरण के अध्ययन की परम्परा चलती रही है, किन्तु आधुनिकता के झंझावात से उसमें ह्रास दृष्टिगोचर हो रहा है। भारत इस परम्परा से सुविज्ञ है तथा यह इसकी अपनी मिट्टी की वस्तु है। अतः इसी दृष्टि से कच्चायन व्याकरण के सूत्र, वृत्ति तथा उसकी 'वण्णना' तथा विस्तृत टिप्पणियों से संवलित यह ग्रन्थ प्रस्तुत किया गया है।

विश्व की भाषाओं में पालि भाषा का स्थान

मुख्य भाषा-परिवार

पालि भाषा के व्याकरण-शास्त्र के इतिहास एवं इसके विकास की विवेचना के पूर्व यह परमावश्यक है कि विश्व की भाषाओं में पालि का क्या स्थान है, इस महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर विचार प्रस्तुत हो। विश्व में भापाओं की संख्या दो सहस्र के लगभग है और इसके अतिरिक्त उपभाषाएँ तथा बोलियाँ हैं। भाषाशास्त्रविदों ने उनकी विभिन्नता में एकता का अन्वेषण कर उनका पारिवारिक वर्गीकरण प्रस्तुत करते हुए परस्पर सम्बन्धित भाषाओं को एक कुल में रखने का प्रयत्न किया है और इन कुलों का तदनुसार नामकरण भी किया है। संसार की विभिन्न प्राचीन तथा अर्वाचीन भाषाओं का वर्गीकरण करना अपने में जटिल तथा कठिन कार्य है, किन्तु इसको विभिन्न भाषाओं की धातुओं, उपसर्ग-प्रत्ययों तथा शब्दों को ध्यान में रखते हुए उनकी गठन-रीति में साम्य एवं वैषम्य को देखकर ही सम्पन्न किया गया है। इस वर्गीकरण कार्य के अनुसार मुख्य भाषा-परिवार निम्नाङ्कित हैं :—

भारोपीय अथवा भारत-योरीपीय, सामी-हामी अथवा सेमेटिक-हेमेटिक, बाण्टू, फिन्नो-उग्रीय, तुर्क-मङ्गोल-मञ्चू, काकेशीय, द्रविड़, आस्ट्रिक, भोट-चीनी, एशिया के उत्तर-पूर्वी सीमान्त की भाषाएँ तथा एस्किमो एवं अमेरिका के आदिवासियों की भाषाएँ।

भारोपीय कुल

इन उपर्युक्त कुलों में भारोपीय कुल का विशेष स्थान है, क्योंकि इसी कुल की भाषाएँ अन्य कुलों की भाषाओं को प्रभावित करती रही हैं। भाषाविदों का ध्यान सर्वप्रथम इसी कुल की ओर गया था और पहले इसका निश्चय करके ही भाषा-कुल-विषयक-सिद्धान्त की स्थापना हुई थी। इसी कुल की परिकल्पना ने आधुनिक तुलनात्मक भाषाविज्ञान को जन्म दिया तथा भारत के आर्य परिवार की प्राचीन तथा अर्वाचीन भाषाएँ इसी कुल के अन्तर्गत परिगणित होती हैं। इस प्रकार संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश एवं नव्य भारतीय आर्यभाषाएँ सभी का यही कुल मुख्य उद्गम-स्थल है और इसकी परिकल्पना इस परिवार की प्राचीन भाषाओं के आधार पर ही की गयी है।

मूल भारोपीय भाषा को बोलने वालों के आदि-स्थान के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है, किन्तु सभी का इस बिन्दु पर ऐक्य है कि अपने मूल स्थान से विभिन्न दिशाओं में इसकी दिग्विजय यात्रा प्रारम्भ हुई। भारोपीय परिवार के अन्तर्गत निम्नलिखित भाषाओं की परिगणना की जाती है :—

केल्तिक, इतालिक, जर्मनिक अथवा ट्यूटनिक, ग्रीक, बाल्तोस्लाविक, आल्बनीय, आर्मनीय, हत्ती अथवा खत्ती, तुखारीय, भारत-ईरानी अथवा आर्य।

भारत-ईरानी अथवा आर्य वर्ग

वेदों का रचनाकाल

तुलनात्मक भाषाविज्ञान के प्रादुर्भाव काल से ही इस सिद्धान्त को सर्वप्रथम मान लिया गया कि लगभग २००० ई० पू० में भारोपीय भाषा भारत-ईरानी स्तर को प्राप्त हो चुकी थी और इसी स्थिति में आर्यभाषा का ईरान में आगमन हुआ तथा वहाँ से भारत में।[1] तभी से इस मान्यता का अन्धाधुन्ध अनुगमन हो रहा है तथा प्राचीन भारतीय इतिहास एवं भाषा के विकास की सभी कड़ियाँ इससे जुड़ी हुई हैं और ऐसी सभी स्थापनाओं में उपर्युक्त मान्यता को लेकर ही चला जाता है। यद्यपि भारतीय परम्परा में आर्यों के बाहर से यहाँ आने का कोई उल्लेख नहीं है, किन्तु बीम्स, हार्नले, ग्रियर्सन तथा बरो आदि विद्वानों के द्वारा यह मत प्रस्तुत हुआ कि अपने मूल निवास-स्थान से आर्य ईरान, अफगानिस्तान और भारत में कई जत्थों में विभक्त होकर प्रविष्ट हुए। सर्वप्रथम ये प्राक् भारतीय और प्राक् ईरानी वर्गों में विभक्त हुए और यह घटना २००० ई०पू० में घटित हुई। कैस्पियन से होते हुए प्रथम दल ईरान और द्वितीय अफगानिस्तान से होकर भारत में प्रविष्ट हुआ। मैक्समूलर ने विशुद्ध कल्पना के आधार पर १८५९ ई० में वैदिक वाङ्मय को एक तिथिक्रम प्रदान किया[2], जिसके सम्बन्ध में १८९० ई० में उन्होंने स्वयं कहा था कि कोई भी शक्ति इन तिथियों का निश्चय नहीं कर सकती और ये कल्पना के आधार पर ही अभिव्यक्त की गयी हैं[3]; फिर भी इस देश में इतिहास तथा भाषाओं के विकास में मैक्समूलर द्वारा १८५९ ई० में प्रतिपादित वैदिक वाङ्मय के तिथि-क्रम को अन्धाधुन्ध रूप से मान लिया गया और बाद की सारी स्थापनाओं में इसे महत्त्व प्रदान किया गया तथा अब भी लोग इससे हटने में हिचकिचाते हैं। मैक्समूलर द्वारा प्रतिपादित वैदिक वाङ्मय के तिथि-क्रम के भ्रम से हिटाइट अथवा खत्ती को वैदिक संस्कृत की बड़ी बहन मान लिया गया, यद्यपि वैदिक वाङ्मय के प्रसिद्ध विद्वान् प्रो० क्षेत्रेशचन्द्र चट्टोपाध्याय ने यह स्थापना की थी

---

१. द्र०—डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या, "भा० आ० हि०", पृ० २९-३०।

२. द्र०—मैक्समूलर, "History of Ancient Sanskrit Literature", p. 29.

३. द्र०—मैक्समूलर, "Physical Religion", 1901, p. 91.

कि 'बोगाज़कोई' लेख (हिटाइट) में वर्णित देवताओं का मूल सम्बन्ध सीधे वैदिक वाङ्मय में वर्णित देवताओं से है, न कि इण्डो-योरोपियन देवताओं से।

किन्तु भाषा और पुरातत्त्व की दृष्टि से इधर सम्पन्न अनुसन्धानों के द्वारा वैदिक वाङ्मय के पूर्व स्थापित तिथि-क्रम तथा अन्य सम्बन्धित स्थापनाओं को धक्का लगा है। १९७७ ई० में दुशानबे (रूस) में आयोजित परिसंवाद गोष्ठी में पठित निबन्धों में आर्यों की उत्पति तथा आर्य-भाषा-भाषियों के विभिन्न क्षेत्रों में आव्रजन पर विचार किया गया और सम्बन्धित निबन्ध "एथनिक प्राब्लेम्स आफ दि हिस्ट्री आफ सेन्ट्रल एशिया इन दि अर्ली पीरियड" नामक पुस्तक में मास्को से १९८१ ई० में प्रकाशित हुए हैं। आर्य समस्या की दृष्टि से इसमें प्रकाशित कई लेख अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं, किन्तु उनमें से दो विशेष महत्त्व रखते हैं :—(१) डा० सत्यस्वरूप मिश्र द्वारा प्रस्तुत निबन्ध "बियरिंग आफ इण्डो यूरोपियन कैम्परेटिव ग्रामर आन दि आर्यन् प्राब्लम"[१]; (२) हंगरी के प्रसिद्ध भाषाविद् जे० हरमत्ता द्वारा प्रस्तुत निबन्ध "प्रोटो ईरानियन्स एण्ड प्रोटो इन्डियन्स इन सेन्ट्रल एशिया इन दि सेकेन्ड मिलेनियम बी० सी०"[२]। इनमें डा० सत्यस्वरूप मिश्र ने लिविशित्स के मत का खण्डन करते हुए 'बोगाज़कोई' लेख में वर्णित देवताओं को इन्डो-आर्यन् सिद्ध करने का प्रयास किया है, साथ ही विभिन्न विद्वानों के मतों का विश्लेषण प्रस्तुत करते हुए वैदिक आर्यों का मूल-सन्निवेश-स्थल भारत स्थापित किया है तथा वैदिक संहिताओं का संकलन-काल ४००० ई० पू० एवं २००० ई० पू० के मध्य स्थापित किया है। प्रो० जे० हरमत्ता के निबन्ध में भाषाशास्त्र के आधार पर स्थापित विचारों से यह निष्कर्ष उद्भूत होता है कि पाँचवीं सहस्राब्दी तक आदि भारतीय आर्यभाषा को उसका विशिष्ट स्वरूप प्राप्त हो चुका था एवं अपने क्षेत्र में उसकी स्थापना हो गयी थी और चौथी से तीसरी सहस्राब्दी तक इस भाषा के शब्दों का बीच में पड़नेवाली अन्य भाषाओं के माध्यम से साइबेरिया तक आगमन हो चुका था।

प्रस्तुत इन मतों पर विचार करने से आर्यभाषा तथा प्राचीन इतिहास की दृष्टि से पूर्व स्थापित सभी स्थापनाओं का दुर्ग चरमराने लगा है और यह आर्य-समस्या तथा वेदों के काल-निर्धारण पर पुनर्विचार हेतु विद्वानों को बाध्य करता हैं।

भारत-ईरानी अथवा आर्य वर्ग को दो उपशाखाओं में विभक्त किया जाता है—(१) ईरानीय, (२) भारतीय। ईरानीय वर्ग भी पुनः दो वर्गों में विभाजित होता है—(१) अवेस्ता की भाषा वाला वर्ग, (२) प्राचीन फारसी वर्ग। जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है ईरानीय के प्रथम वर्ग में अवेस्ता की भाषा आती है। इस भाषा तथा वैदिक भाषा में अनेक सादृश्य प्राप्त होते हैं। प्राचीन फारसी में हखामनीशीय वंश के सम्राट्

---

१. द्र०—उपर्युक्त ग्रन्थ, पृ० ६२-७४।

२. द्र०—वहीं, पृ० ७५-८३।

दारयवउश् (धारयवसुः, डेरियस्) तथा उनके पुत्र ज़रकसीज (क्षयार्ष) के शिलालेख तथा ताम्रलेख प्राप्त हैं। प्राचीन फारसी की ध्वनियाँ तथा व्याकरण यद्यपि अवेस्ता की भाषा के समान ही हैं तथापि इनमें कुछ भिन्नताएँ भी हैं, जो इसे अवेस्ता की भाषा से अलग करती हैं। इसी प्राचीन फारसी से मध्य ईरानी (पहलवी) तथा अर्वाचीन फारसी विकसित हुई हैं और मध्य ईरानी से शक भाषा का विकास हुआ है।

भारतीय आर्यभाषा

आर्यभाषा की दूसरी शाखा को भारतीय आर्यभाषा की संज्ञा प्रदान की जाती है और आज इसके पास कई सहस्राब्दियों का अपना अविच्छिन्न इतिहास है। इसका यह विकास-क्रम दिया जाता है—(१) प्राचीन भारतीय आर्यभाषा (वैदिक संस्कृत तथा लौकिक संस्कृत), (२) मध्य भारतीय आर्यभाषा (पालि, अशोक के शिलालेखों की भाषा, विभिन्न प्राकृतें, बौद्ध संस्कृत, अपभ्रंश आदि), (३) नव्य भारतीय आर्यभाषा (हिन्दी एवं उसकी बोलियाँ, बँगला, गुजराती, मराठी, पंजाबी, सिन्धी आदि)।

प्राचीन भारतीय आर्यभाषा

वैदिक संस्कृत

वैदिक संस्कृत वैदिक वाङ्मय के संहिताओं, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषदों की भाषा है। इसमें भारोपीय की स्वर तथा व्यञ्जन ध्वनियाँ समीचीन रूप से सुरक्षित रही हैं, साथ ही यहाँ व्यञ्जन ध्वनियों में मूर्धन्य टवर्ग का सन्निवेश हो गया है। इसकी अपनी प्रधान विशेषता है संगीतात्मक स्वराघात, जिसके कारण शब्दों के अर्थ तक में परिवर्तन हो जाता है। इसकी अन्य विशेषताएँ हैं अपश्रुति का विद्यमान होना, मूल भारोपीय के शब्द-रूपों एवं धातु-रूपों में विविधता के दर्शन, शब्द-रूपों का तीन वचनों तथा आठ कारकों (सम्बोधन को लेकर) में प्राप्त होना, धातु-रूपों में तीन वचनों, तीन पुरुषों, दो पदों (आत्मने एवं परस्मै पद), चार कालों तथा पाँच भावों का प्राप्त होना, विकरण की भिन्नता के अनुसार धातुओं का दस गणों आदि में विभक्त होना तथा सुप्, तिङ्, वर्ण, लिङ्ग, पुरुष तथा काल आदि के व्यत्ययों का होना।

लौकिक संस्कृत

लौकिक संस्कृत वह भाषा है जिसका वर्णनात्मक व्याकरण पाणिनि ने अपनी 'अष्टाध्यायी' लिख कर प्रस्तुत किया है। विद्वानों का ऐसा अनुमान है कि आगे चलकर उत्तर भारत में आर्यभाषा की स्थिति इस प्रकार हो गयी—(१) तीन प्रादेशिक बोलियाँ—[(क) उदीच्य, (ख) मध्यदेशीय, (ग) प्राच्य, जो तत्तत् क्षेत्रों में बोली जाती थीं], (२) छान्दस् अथवा आर्ष या प्राचीन वैदिक कविता की भाषा (जो प्राचीन भारतीय आर्यभाषा का साहित्यिक रूप थी और जिसका अध्ययन ब्राह्मण लोग पाठशालाओं में करते थे), (३) छान्दस् का एक अपेक्षाकृत नवीन रूप, अथवा मध्यदेश

तथा प्राच्य की प्रादेशिक भाषाओं के उपादानों से युक्त उदीच्य का एक रूप (यह ब्राह्मणों के परस्पर व्यवहार तथा शिक्षण की प्रचलित शिष्ट भाषा थी और उनके द्वारा वेदों के भाष्य तथा धार्मिक कर्मकाण्ड एवं दार्शनिक विवेचनों के लिए प्रयुक्त होती थी)[1]। इस तृतीय प्रकार के भाषा-स्वरूप पर स्थानीय जनभाषाएँ शब्दावली आदि में अपना प्रभाव डाल चुकीं थी। अभिजात ब्राह्मण वर्ग ने परस्पर व्यवहार तथा शिक्षण में इसका व्यवहार करना प्रारम्भ कर दिया था। पाणिनि ने अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ 'अष्टाध्यायी' लिखकर इसका विवेचन प्रस्तुत किया और 'छान्दस्'(वैदिक) से इसकी तुलना भी की। इस प्रकार उस समय की लौकिक भाषा को परिष्कृत तथा शिष्ट रखने के लिए ही महर्षि पाणिनि द्वारा अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना की गयी[2]। उस समय उदीच्य भाषा आदर्श भाषा थी[3]। पाणिनि औदीच्य ही थे।

इस प्रकार पाणिनि द्वारा विवेचित प्राचीन आर्यभाषा के सुसंस्कृत रूप को अथवा उस समय के शिष्ट जनों द्वारा प्रयुक्त भाषा के संस्कृत रूप को 'संस्कृत' की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। यह तथ्य इस तरह उसके 'संस्कृत' इस नाम से भी स्पष्ट है। 'अष्टाध्यायी' द्वारा इस संस्कृत भाषा का रूप सर्वदा के लिए स्थिर हो गया और एक ऐसी महत्त्वपूर्ण एवं महान् भाषा की प्रतिष्ठा हुई, जो तब से लेकर आज तक इस देश की संस्कृति का माध्यम-स्वरूप है। पाणिनि को कुछ लोग यह कहकर आरोपित करते हैं कि प्रवाहशील भाषा को बाँधकर उन्होंने स्थिर कर दिया, जिससे उसके विकास में अवरोध उत्पन्न हो गया। परन्तु ऐसा करते समय वे यह भूल जाते हैं कि कोई व्यक्ति भाषा के विकास को किसी भी प्रकार से बाँधकर रोक नहीं सकता। पाणिनि द्वारा स्थिर किये जाने पर भी इस भाषा का विकास नहीं रुका और आगे बढ़ते हुए मध्य भारतीय आर्यभाषाके रूपोंमें विकसित होते हुए यह नव्य भारतीय आर्यभाषा तक पहुँचा है। पाणिनि द्वारा इसका वर्णनात्मक व्याकरण प्रस्तुत होने के कारण ही आज भी हम इस भाषा में वार्तालाप करने तथा उत्तम कोटि की रचनाओं को प्रस्तुत करने में समर्थ हैं। यद्यपि बौद्धों तथा जैनों ने प्रारम्भ में इसकी अपेक्षा

---

१. द्र०—"भा० आ० हि०", पृ० ६४।

२. द्र०—सूत्र "पृषोदरादीनि यथोपदिष्टम्" ६।३।१०९ पर महाभाष्य—"....कैः पुनरुपदिष्टानि ? शिष्टैः। के पुनः शिष्टाः ? वैयाकरणाः ? कुत एतत् ? शास्त्रपूर्विका हि शिष्टिः, वैयाकरणाश्च शास्त्रज्ञाः....यदि तर्हि शिष्टाः शब्देषु प्रमाणम्, किमष्टाध्याय्या क्रियते ? शिष्टपरिज्ञानार्थाऽष्टाध्यायी। कथं पुनरष्टाध्याय्या शिष्टाः शक्या विज्ञातुम् ? अष्टाध्यायीमधीयानोऽन्यं पश्यत्यनधीयानं ये वाऽस्यां विहिताः शब्दास्तान् प्रयुञ्जानम्। स पश्यति—नूनमस्य देवानुग्रहः स्वभावो वा योऽयं न चाष्टाध्यायीमधीते, ये चास्यां विहिताः शब्दांस्तांश्च प्रयुङ्क्ते। नूनमयमन्यानपि जानाति—इति एवमेषा शिष्टज्ञानार्थाऽष्टाध्यायी इति"।

३. द्र०—"तस्माद् उदीच्यां प्रज्ञाततरा वाग् उद्यते; उदञ्च उ एव यन्ति वाचं शिक्षितुम्; यो वा तत आगच्छति, तस्य वा शुश्रूषन्त इति"—साङ्ख्यायन या कौषीतकि ब्राह्मण, ७–६।

जनभाषाओं को ग्रहण करके उन्हें प्रोत्साहन दिया, किन्तु बाद में अपने-अपने शास्त्रों के गूढ़ तत्त्वों की विवेचना हेतु उन्हें इसका आश्रय स्वीकार करना पड़ा। इस भाषा ने भारत के बाहर भी अपनी दिग्विजय-यात्रा प्रारम्भ की तथा एशिया के एक विस्तीर्ण भूखण्ड पर इसका व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ और कालान्तर में यह देश की अन्त-र्प्रान्तीय तथा एशिया की अन्ताराष्ट्रीय भाषा बन गयी। अब भी यह नव्य भारतीय आर्यभाषाओं के शब्दभाण्डार की पूर्ति करती रहती है। डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या का यह कथन समीचीन है कि "आज की किसी भी आधुनिक आर्यभाषा में संस्कृत शब्दों का परिमाण लगभग ५०% कहा जा सकता हैं—यह देखकर हमारे दुःखी होने के कोई कारण नहीं हैं, जब कि हम प्रत्यक्ष देखते हैं कि अंग्रेजी में भी ६०% विदेशी (फ्रेंच तथा लाटिन) तथा फारसी में ६०% से ८०% तक विदेशी (अरबी) के शब्द मौजूद हैं। संस्कृत शब्दों के आधुनिक शुद्ध तत्सम तथा मध्य भारतीय आर्यभाषा एवं नव्य भारतीय आर्यभाषा अवस्था के अर्द्धतत्सम परिवर्तित रूप इस तथ्य के प्रमाण हैं कि आर्यभाषा के समग्र इतिहास के क्षेत्र में भारतीय संस्कृति की धारा अविच्छिन्न रूप से प्रवाहित होती रही है। भारत की आर्य एवं द्राविड़ सभी भाषाओं में विद्यमान ये संस्कृत शब्द भारत की मूलगत एकता एवं अविभाज्यता के ज्वलन्त प्रतीक रूप हैं। लेखक की दृष्टि में तो इस प्रतीक महत्त्व को रत्ती-भर कम करने की कुचेष्टा, हमारी सबसे अधिक मूल्यवान् रिक्थ 'भारतीय सांस्कृतिक परम्परा' पर प्रत्यक्ष रूप से आक्रमण ही है[१]"।

लौकिक संस्कृत की वैदिक से मुख्य भिन्नताएँ हैं—महत्त्वपूर्ण स्वराघातों का इसमें लोप होना, एक शब्द के अधिक रूपों में से आदर्श रूप को ग्रहण करना, धातु-रूपों में अभिप्राय एवं निर्बन्ध भाव के रूपों का लोप होना, वैदिक में प्रचलित अनेक प्रकार के क्रियाजात विशेषणों एवं असमापिका पदों में से कुछ का ही आंशिक रूप से ग्रहण, अनेक नवीन धातुओं का यहाँ समावेश होना, उपसर्गं का धातुओं से दूर न रहना और शब्द-रूपों तथा धातु-रूपों की विविधता में कमी करके उनमें से कुछ ही परिनिष्ठित एवं आदर्श रूपों को स्वीकार करना।

मध्य भारतीय आर्यभाषा

आर्यभाषा के द्वितीय क्रम को मध्य भारतीय आर्यभाषा कहा जाता है। पालि भाषा इसी के अन्तर्गत आती है। इस विकासक्रम में प्राचीन आर्यभाषा की ऋ, ऌ ध्वनियाँ लुप्त हो गयीं तथा ऐ, औ के स्थान में ए, ओ का प्रयोग होने लगा। इसी प्रकार 'अय' तथा 'अव' ध्वनि-समूहों का स्थान ए, ओ ने ग्रहण कर लिया। पदान्त 'म्' व्यञ्जन के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग तथा श, ष, स के स्थान पर केवल एक ध्वनि (मगध की भाषा में तालव्य 'श' एवं अन्य बोलियों में दन्त्य 'स') का व्यवहार

१. द्र०—"भा० आ० हि०", पृ० १३७।

होने लगा; साथ ही संयुक्त व्यञ्जनों के ध्वनि-समीकरण की प्रवृत्ति भी दृष्टिगोचर हुई। प्राचीन आर्यभाषा में प्रचलित संगीतात्मक स्वराघात का स्थान बलात्मक स्वराघात ने ले लिया तथा शब्द एवं धातु रूपों में भी परिवर्तन हुए। विविध प्रकार के अजन्त एवं हलन्त प्रातिपदिकों के रूप अब अकारान्त प्रातिपदिकों के समान निष्पन्न होने लगे। प्राचीन आर्यभाषा में प्रातिपदिक के अन्तिम स्वर के भिन्न होने के कारण अश्व, मुनि, साधु तथा पितृ शब्दों के षष्ठी एकवचन के रूपों में भिन्नता थी; परन्तु मध्य भारतीय आर्यभाषा में इनके रूप अकारान्त शब्द के समान अस्सस्स, मुनिस्स, साधुस्स तथा पितुस्स आदि होने लगे। संज्ञा शब्दों में भी सर्वनाम के रूपों का विधान प्रारम्भ हो गया, उदाहरणार्थ—गृहे (घरे) के स्थान पर घरस्मि का प्रयोग। धातुओं के रूपों में भी ह्रास हुआ। इनके सन्नन्त (इच्छार्थक) तथा यङन्त (अतिशयार्थक) आदि रूपों के प्रयोग में कमी आयी। तीन वचनों के स्थान पर एकवचन तथा बहुवचन मात्र का प्रयोग होने लगा।

इस प्रकार इन परिवर्तनों से आर्यभाषा का मध्यकालीन रूप प्रकट हुआ। उस समय की उदीच्य भाषा में ये परिवर्तन इतनी संख्या में नहीं हुए; मध्यदेश की भाषा यद्यपि इन परिवर्तनों से प्रभावित हुई, पर उसमें भी उच्चारण की उतनी विकृति नहीं हुई। परन्तु प्राच्य भाषा में ये परिवर्तन बहुत ही तीव्र गति से हुए। मध्य भारतीय आर्यभाषा का विकासक्रम प्रसिद्ध भाषाशास्त्री डा० सुकुमार सेन के अनुसार निम्नाङ्कित है[1]—

प्रारम्भिक मध्य भारतीय आर्यभाषा
(अशोक के शिलालेखों की भाषा तथा पालि)
|
मध्य भारतीय आर्यभाषा की द्वितीय अवस्था
(प्रारम्भिक शिलालेखों की भाषा, निय प्राकृत, बौद्ध संस्कृत)
|
प्राकृतें — अपभ्रंश
अपभ्रंश
|
अवहट्ट

पालि

बुद्धवचनों का संग्रह तथा पालि-मागधी समस्या

महाकारुणिक शास्ता तथागत भगवान् बुद्ध का परम लक्ष्य था अखिल जगत् के प्राणियों को दुःख से मुक्ति दिलाना और इसकी पूर्ति हेतु बोधि की प्राप्ति से लेकर महानिर्वाण पर्यन्त वे अपने श्रेष्ठ मार्ग का उपदेश लोक में करते रहे। उनके ये उपदेश

१. द्र०—"Comparative Grammar of M I A", p. 4.

मौखिक ही होते थे, जिन्हें बहुश्रुत भिक्षु धारण कर लेते थे। शास्ता के महापरिनिर्वाणके पश्चात् उनके शिष्यों को उनके उपदेशों के संग्रह की आवश्यकता प्रतीत हुई, जिससे इनसे पथ-प्रदर्शन प्राप्त किया जा सके और इस प्रकार त्रिपिटक के रूप में ये संगृहीत हुए। त्रिपिटक का अर्थ है तीन पिटारियाँ अथवा विषय की मुख्य दृष्टि से अलग-अलग तीन पिटारियों में रखे हुए बुद्ध के मूलभूत उपदेश, और ये हैं— सुत्तपिटक, विनयपिटक तथा अभिधम्मपिटक।

विकास-क्रम में कालान्तर में बौद्ध धर्म १८ निकायों में विभक्त हो गया और इन निकायों ने अपने-अपने अनुसार मूल बुद्धवचन को ग्रहण किया और भाषा के बारे में ये स्वतन्त्र ही रहे, क्योंकि स्वयं शास्ता ने अपने वचनों के लिए किसी भाषा-विशेष का आग्रह नहीं रखा था और शिष्यों को अपनी-अपनी भाषा में बुद्धवचनों को ग्रहण करने की अनुमति प्रदान की थी। अतः प्रारम्भ से ही बौद्धों में भाषा-विषयक रूढ़िवादिता समाविष्ट नहीं हो पायी और इसके फलस्वरूप बुद्धवचनों का संग्रह अनेक भाषाओं में सम्पन्न हुआ तथा इन सभी की धार्मिक मान्यता अपने-अपने स्थान पर सर्वोच्च है एवं धार्मिक अनुष्ठानों के अवसर पर उन-उन भाषाओं में सूत्रपाठ सम्पन्न होते हैं। इस सम्बन्ध में एक तिब्बती परम्परा यह है कि मूलसर्वास्तिवाद निकाय के ग्रन्थ संस्कृत में, महासाङ्घिकों के प्राकृत में, महासम्मितियों के अपभ्रंश में तथा स्थविरवादियों के पैशाची में थे। इसके अनुसार स्थविरवादियों के त्रिपिटक की भाषा का, जिसे हम पालि कहते हैं, पैशाची नामकरण होगा।

सम्प्रति स्थविरवाद (थेरवाद) निकाय का त्रिपिटक जिस भाषा में हमें प्राप्त है, उसे पालि की संज्ञा प्रदान की जाती है। इसकी परम्परा के अनुसार त्रिपिटक के संग्रह हेतु समय-समय पर सङ्गीतियों का आयोजन हुआ, जिनमें प्रथम चार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। प्रथम सङ्गीति तथागत के परिनिर्वाण के कुछ ही समय बाद राजगृह में आयोजित हुई थी और इसमें 'धम्म' तथा 'विनय' का संगायन हुआ था। द्वितीय सङ्गीति का आयोजन इसके १०० वर्ष बाद वैशाली में हुआ था, जिसमें विनय-विरूद्ध आचरण को गलत ठहराकर बुद्धवचनों का अनुमोदन किया गया था। सम्राट् अशोक के समय में तृतीय सङ्गीति हुई और इसमें विशुद्ध थेरवाद अथवा विभज्यवाद की स्थापना की गयी। इसके लिए इस सङ्गीति के अध्यक्ष 'मोग्गलिपुत्त तिस्स' द्वारा तर्कसम्मत ग्रन्थ 'कथावत्थु' की रचना की गयी, जिसे बुद्धवचन के सदृश ही त्रिपिटक में स्थान दिया गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि तृतीय सङ्गीति के समय में ही पालि त्रिपिटक का वह स्वरूप निर्धारित हो गया था, जो आज हमें प्राप्त होता है। इसी सङ्गीति के निर्णय के परिप्रेक्ष्य में अशोक के पुत्र महामहेन्द्र सिंहलद्वीप में थेरवाद के प्रचारार्थ गये थे और साथ में वे त्रिपिटक की परम्परा भी लेते गये थे, जो तभी से वहाँ पर अक्षुण्ण है। परन्तु सिंहल में भी यह परम्परा मौखिक ही चलती रही और

कालान्तर में आचार्यों का ध्यान इसे लिपिबद्ध करने की ओर गया तथा ईसा की प्रथम शताब्दी में सिंहल-सम्राट् 'वट्टगामिनी अभय' के संरक्षकत्व में सम्पूर्ण त्रिपिटक को लिपिबद्ध किया गया और उसी समय इसका अन्तिम रूप भी निर्धारित हुआ। इसी तथ्य पर आधारित हो कर विद्वानों की यह धारणा है कि आज थेरवाद का जो त्रिपिटक हमें प्राप्त है, जिसे पालि-त्रिपिटक अभिहित किया जाता है, उसके इस स्वरूप का निश्चय 'वट्टगामिनी अभय' के समय में ही हो पाया था। इसके पश्चात् इस त्रिपिटक की भाषा (पालि) का विकास कालक्रम से हुआ और वह एशिया की अन्ताराष्ट्रीय धार्मिक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई।

इस स्थविरवादी त्रिपिटक की भाषा का नामकरण जो 'पालि' किया गया है, वह विचारणीय है। स्थविरवादी परम्परा में आचार्य बुद्धघोष से लेकर अब तक इस भाषा को 'पालि' न कहकर इसका नाम 'मागधी' दिया हुआ है। वहाँ पर 'पालि' शब्द मूल बुद्धवचन के अर्थ में प्रयुक्त होता है, न कि भाषा के अर्थ में। इस प्रकार भाषा विशेष के अर्थ में 'पालि' यह नामकरण अत्यन्त अर्वाचीन है और अब भी इस भाषा में परम्परागत दृष्टि से लिखे गये ग्रन्थों में इस अर्थ में यह प्रयुक्त नहीं होता। यहाँ तक कि इसी युग में सिंहलद्वीप के 'महाथेर' सुमङ्गल ने 'बालावतार' नामक ग्रन्थ पर अपनी टीका प्रस्तुत करते हुए इसे 'पालि' न कहकर 'मागधी' ही कहा है।[1] इस प्रकार स्थिति यह है कि भाषा के अर्थ में आज हम जिसे पालि कहते हैं, उसे प्राचीन काल से ही लोग मागधी कहते आये हैं।

बुद्धघोष ने अपने ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर इस भाषा के लिये मागधी शब्द का प्रयोग किया है—"मागधिकाय सब्बसत्तानं मूलभासाय"; "सकानिरुत्ति नाम सम्मासम्बुद्धेन वुत्तप्पकारो मागधको वोहारो"; "देसभासा नाम एकसतवोहारकुसलता, विसेसेन पन मागधिके कोसल्लं" आदि।[2]

आचार्य 'मोग्गल्लान' ने पालि का व्याकरण प्रस्तुत करते हुए मङ्गल-गाथा में ही कहा है—

"सिद्धमिद्धगुणं साधु नमस्सित्वा तथागतं।
सद्धम्मसङ्घं भासिस्सं मागधं सद्दलक्खणं" ॥

इसकी व्याख्या अपनी 'पञ्चिका' में उन्होंने इस प्रकार से की है—"इधायं सुत्तकारो मागधिकसद्दलक्खणं विरचयितुकामो....." तथा "सद्दलक्खणस्सा पि सक्कतादिभेदेन बहुविधत्ता सकं सद्दलक्खणं विसेसयितुमाह—मागधं ति। मगधेसु विदिता मागधा सद्दा, तेसमिदं लक्खणं मागधं इदं वुत्तं होति मागधं सद्दलक्खणं ति"[3]। इस प्रकार

---

१. द्र०—भिक्षु सिद्धार्थ, "Buddhistic Studies", p. 641.

२. विसु०, पृ० ३४; समन्त०, पृ० ३०८; विसु०, पृ० ३०८।

३. मोग्गल्लानपञ्चिका, पृ० ३

भाषा को मागधी कहते हुए उन्होंने इसमें कारण भी दिया है कि यह मागधी क्यों है और स्पष्ट रूप से इसका नाम मागधी कहते हुए यह उसी का शब्दलक्षण है, इसे व्यक्त किया है।

'कच्चायनसार' में कहा गया है—

> "मागधिकाय बालानं वुद्धिया बुद्धसासने।
> वक्खं कच्चायनसारं निस्साय जङ्घदासकं" ॥[1]

'सारिपुत्त सङ्घराज' (समय ११५० ई०) ने 'सारत्थदीपनी' नामक विनयट्ठ-कथा-टीका के प्रारम्भ में ही लिखा है—

> "मागधिकाय भासाय आरभित्वा पि केनचि।
> भासन्तरेहि सम्मिस्सं लिखितं किञ्चिदेव च" ॥

'सङ्घरक्खित थेर' (समय १३०० ई० के लगभग) द्वारा 'वुत्तोदय' नामक छन्दःशास्त्र के ग्रन्थ के मङ्गलाचरण में कहा गया है—

> "पिङ्गलाचरियादीहि छन्दं यमुदितं पुरा।
> सुद्धमागधिकानं तं न साधेति यथिच्छितं ॥
> ततो मागधभासाय मत्तावण्णविभेदनं।
> लक्खलक्खणसंयुत्तं पसन्नत्थपदक्कमं ॥"

परन्तु उपर्युक्त उदाहरणों के विपरीत १८६१ ई० में परम्परागत शैली में लिखित 'सासनवंस' नामक ग्रन्थ में हम 'मागधी' के स्थान पर 'पालिभासा' का प्रयोग पाते हैं—"इच्चेवं पाळिभासाय परियत्तिं परिवत्तित्वा पच्छा आचरियपरम्परा सिस्सानुसिस्स-वसेहि सीहळदीपे जिनचक्कं मज्झन्तिकंसुमाली विय अतिदिब्बति"।[2] इसके साथ ही इसी ग्रन्थ में इस भाषा के लिये हम 'मागधी' शब्द का प्रयोग भी पाते हैं—"बुद्ध-घोसथेरो च सीहळदीपं पत्वा पठमं सङ्घपालथेरं पस्सित्वा पिटकत्तयं मागधभासक्खरेन परिवत्तेतुं आगतोम्ही ति कारणं आरोचेत्वा"।[3] इस प्रकार 'सासनवंस' में इस भाषा का नाम 'पालि' तथा 'मागधी' दोनो दिया हुआ है, जो यह व्यक्त करता है कि उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में 'मागधी' के स्थान पर भाषा के अर्थ में 'पालि' शब्द का प्रयोग होने लगा था।

इस सन्दर्भ में श्री विमलाचरण लाहा ने कहा है—"यह पूर्णरूपेण निश्चित नहीं हो पाया है कि इस शब्द को इस अर्थ में प्रयोग में लाने का श्रेय यूरोप के विद्वानों को

---

१. गाथा २२।

२. सासनवंश, पृ० २९।

३. वहीं, पृ० २८।

है, अथवा सीलोन, बर्मा तथा स्याम आदि के पिछले समय के स्थविरों को"।[1] किन्तु ऊपर प्रदर्शित किया जा चुका है[2] कि फ्रान्स के सम्राट् लुई चतुर्दश के स्याम (थाईलैण्ड) में नियुक्त राजदूत लुब्रे द्वारा पालि शब्द यूरोप में ले जाया गया और तभी से वहाँ के लोग इसे भाषा के अर्थ में ग्रहण करने लगे। अतः श्री लाहा के उक्त कथन का इस सन्दर्भ में कोई अवकाश शेष नहीं रह जाता है।

'पालि' इस नामकरण के सम्बन्ध में उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कुछ विवाद भी चला। जब यूरोपीय विद्वानों ने इस भाषा के व्याकरण तथा शब्दकोश आदि को पालि-व्याकरण एवं पालि-शब्दकोश की संज्ञा प्रदान की तो इस नामकरण का कुछ लोगों ने खण्डन किया। रंगून हाईस्कूल के विवरण में १८८९-९० ई० में फॅरखाम्मेर ने कहा था—"त्रिपिटक की पालि मागध भाषा के माध्यम से लिखी जाती थी और इसका व्याख्यान किसी भी भाषा द्वारा हो सकता है। अतः यदि किसी ग्रन्थ को हम पालि-व्याकरण अथवा पालि-शब्दकोश की संज्ञा से अभिहित करेंगे तो, वह केवल त्रिपिटक का व्याकरण अथवा त्रिपिटक का शब्दकोश होगा, जैसा कि अर्थ बाइबिल-शब्दकोश से व्यक्त होता है"।[3] उनके इस कथन से यह प्रकट होता है कि यह मात्र मूल बुद्धवचन अथवा त्रिपिटक का व्याकरण अथवा कोश होगा, अनुपिटक साहित्य का नहीं। अतः इनके अनुसार 'पालि' शब्द का भाषा के अर्थ में प्रयोग करना समीचीन नहीं है।

परन्तु ओ० फ्रान्कफुर्तेर ने "Handbook of Pali" प्रस्तुत करते हुए फॅरखाम्मेर द्वारा प्रस्तुत उपरिस्थित मत की आलोचना करते हुए 'मागधी' नाम के स्थान पर 'पालि' नाम का ही प्रयोग किया और इस सन्दर्भ में यह तर्क प्रस्तुत किया कि यदि इस भाषा-विशेष के लिए 'मागधी' शब्द का प्रयोग होगा तो इससे शिलालेखों तथा अन्य वाङ्मय में प्राप्त मागधी भाषा के सम्बन्ध में भ्रम उत्पन्न हो जायेगा; साथ ही इस भाषा के लिये 'पालि' इस नाम के सिंहलद्वीप के प्रसिद्ध विद्वान् सुभूति द्वारा प्रयोग किये जाने को उन्होंने उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत करते हुए अपने सिद्धान्त की पुष्टि की। आचार्य सुभूति ने 'अभिधानप्पदीपिका' नामक ग्रन्थ को पालि-कोश तथा 'नाम-माला' को पालि-व्याकरण कहा था।[4] इसके 'मागधी' इस नामकरण का मिनायेफ ने भी विरोध किया।[5] इस प्रकार वर्तमान युग में मागधी की अपेक्षा 'पालि'

---

१. द्र०—"History of Pali Literature", p. IX.

२. द्र०—पि० १।

३. विशेष विवरण के लिये द्र०—ओ० फ्रान्कफुर्तेर, "Handbook of Pali, Preface, p. IX—X.

४. वहीं।

५. द्र०—J. Minayeff, "Pali Grammar", p. 25.

नाम को ही अन्त में विजय-श्री प्राप्त हुई और इसी का विश्व में व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ।

पालि शब्द का प्रयोग तथा व्युत्पत्ति

आचार्य बुद्धघोष ने अपनी अट्ठकथाओं में 'पालि' शब्द का प्रयोग मूल बुद्धवचन अथवा इसके पाठ के अर्थ में किया है। प्राचीन अट्ठकथाओं से भिन्नता प्रदर्शित करने हेतु 'पालि' शब्द का प्रयोग उनके द्वारा मूल बुद्धवचन के लिए हुआ है—"इमानि ताव पालियं, अट्ठकथायं पन"[१], "पालिमुत्तकेन पन अट्ठकथानयेन"[२], "नेव पालियं न अट्ठकथायं दिस्सति"[३]। मूल बुद्धवचन के अर्थ को द्योतित करते हुए वे लिखते हैं—"इमाय पन पालिया सुमेधपण्डितेन अस्समपण्णसालचङ्कमा सहत्था मापिता विय वुत्ता"[४]। जहाँ उन्हें मूल के एक पाठ के अतिरिक्त किसी दूसरे पाठ को भी उद्धृत करना पड़ा है, वहाँ उनके द्वारा 'पालि' शब्द का प्रयोग 'पाठ' के अर्थं में हुआ है—"इति पि पालि"[५] आदि।

बुद्धघोष के अतिरिक्त इस शब्द का प्रयोग 'दीपवंस, तथा 'महावंस' में भी इन्हीं उपर्युक्त अर्थो में हुआ है। 'चूलवंस' तथा 'सद्धम्मसङ्गह' आदि ग्रन्थों में भी 'पालि' शब्द का प्रयोग इन्हीं अर्थों में हुआ है—"पालिमत्तं इधानीतं नत्थि अट्ठकथा इध"[६]। 'सद्दनीति' आदि पालि-व्याकरण के ग्रन्थों में इस शब्द का प्रयोग मूल अथवा इसकी पङ्क्ति के अर्थ में हुआ है—"तत्र वङ्कती ति किरियापदं पाळियं अविज्जमानम्पि गहेतब्बमेव"[७], "अनेकेसु साट्टकथेसु पाळिप्पदेसेसु"[८], "इमिस्सा पाळिया अत्थं वदन्तेहि"[९], "अत्रायं पाळि"[१०], "किमेत्थ सद्दसत्थं करिस्सति, पाळि एव पमाणं"[११], "अत्र इमा पाळियो"[१२] आदि।

---

१. विसु०, पृ० ४५०।
२. पु० प० अ०, पृ० १७१।
३. दी० नि० अ० १, पृ० १६७।
४. जा० अ० १, पृ० ७।
५. दी० नि० अ० १, पृ० १४८।
६. ३७ : २२७।
७. सद्द० २, पृ० ३२३।
८. वहीं, पृ० ३२९।
९. वहीं, पृ० ३३३।
१०. वहीं, पृ० ३३४।
११. वहीं, पृ० ३३९।
१२. वहीं, पृ० ३६३।

त्रिपिटक के ग्रन्थों के नामों में भी मूल अर्थ को द्योतित करने के लिये 'पालि' शब्द जुड़ता है, उदाहरणार्थं—महावग्ग-पालि, उदान-पालि आदि।

यूरोप में लुब्रे द्वारा जब 'पालि' शब्द ले जाया गया, तभी से लोग इसकी विभिन्न व्युत्पत्तियाँ देने के कार्य में प्रवृत्त हुए। प्रारम्भ में तो इसकी व्युत्पत्तियाँ हास्यास्पद रूप में 'पेलस', 'पल्लि', 'पेलेस्टाइन' तथा 'पहलवी' आदि शब्दों से दी गयीं, जिनका विद्वानों ने खण्डनं किया[1]।

आगे चलकर इसकी व्युत्पत्ति महामहोपाध्याय विधुशेखर भट्टाचार्यं द्वारा संस्कृत के 'पङ्क्ति' शब्द से[2], भिक्षु सिद्धार्थं द्वारा संस्कृत के 'पाठ' शब्द से[3], मैक्स वालसर द्वारा 'पाटलिपुत्र' शब्द से[4], संस्कृत के 'पल्लि' शब्द से[5], तथा भिक्षु जगदीश काश्यप द्वारा 'परियाय' शब्द से दी गयी[6], जो युक्तियुक्त नहीं है[7]। इसमें प्रधानभूत कारण यह है कि 'पालि' स्वयं संस्कृत का शब्द है और इसकी व्युत्पत्ति 'पाल' अथवा 'पा' धातु से है तथा इसके प्रयोग संस्कृत वाङ्मय में अनेक स्थलों पर विद्यमान हैं[8]। परम्परागत संस्कृत कोशों—उदाहरणार्थ—अमरकोश, त्रिकाण्डशेष, मेदिनी, नाममाला, हलायुध, नानार्थसङ्ग्रह, नानार्थमञ्जरी, शब्दरत्नसमन्वयकोश. नानार्थरत्नमाला, अनेकार्थतिलक, विशेषामृत आदि—ने इसके अर्थ का व्याख्यान प्रस्तुत किया है और संस्कृत के आधुनिक कोशों—उदाहरणार्थ—बोथलिंक तथा रोथ द्वारा प्रस्तुत 'संस्कृत-जर्मन वोर्टेबुख', मोनियर विलियम्स कृत 'संस्कृत डिक्शनरी', 'शब्दकल्पद्रुम', 'वाचस्पत्यम्' आदि—ने इन सामग्रियों का उपयोग करते हुए 'पालि' शब्द को स्थान दिया है। इन सबसे यही स्पष्ट है कि 'पालि' संस्कृत में व्यवहृत शब्द है तथा प्राचीन काल से संस्कृत वाङ्मय तथा कोशों में यह आता रहा है। वहाँ इसका अनेक अर्थों में प्रयोग हुआ है तथा उन्हीं में से एक अर्थ 'पङ्क्ति' भी था। इसी को 'मूल बुद्धवचन की पङ्क्ति' ऐसा ग्रहण करते हुए यह पालि वाङ्मय में भी प्रयुक्त हुआ[9]।

पालि कोशकार 'मोग्गल्लान' ने 'अभिधानप्पदीपिका' नामक पालि-कोश में इसका व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए लिखा है—"पाळिरेखा तु राजि च" (गाथा

---

१. द्र०—फ्राँसिस मैसन, "Kachchayana's Pali Grammar." p. 11.
२. द्र०—उदयनारायण तिवारी, "हि० भा० उ० वि०", पृ० ६१।
३. द्र०—भिक्षु सिद्धार्थ, "Buddhistic Studies", p. 641.
४. द्र०—मैक्स वालसर, "Sprache und Heimat des Palikanons", p. 56.
५. उदयनारायण तिवारी, "हि० भा० उ० वि०, पृ० ६१।
६. द्र०—ज० काश्यप, "पालि महाव्याकरण", वस्तु०, पृ० ८-११।
७. द्र०—लक्ष्मीनारायण तिवारी, "कच्चायन व्याकरण", भूमिका, पृ० २४-२८।
८-९. वि० द्र०—वहीं, पृ० २८-३१।

५३९); "सेतुस्मिं तन्तिमन्तासु नारियं पाळि कथ्यते" (गाथा ९९९)। 'अभिधानप्पदीपिकासूची' में इसकी व्याख्या निम्नाङ्कित रूप से प्राप्त है—

"पाळि—पा रक्खणे ळि; पाति रक्खती ति पाळि; पाली ति एकच्चे। (तन्ति, बुद्धवचनं, पन्ति पाळि, भगवता वुच्चमानस्स अत्थस्स वोहारस्स च दीपनतो सद्दो येव पाळि नामा ति गण्ठिपदेसु वुत्तं ति अभिधम्मट्ठकथायं लिखितं);

पाळिसद्दो पाळिधम्मे तळाकपाळियं पि च।
दिस्सते पन्तियं चेव इति ञेय्यं विजानता····॥

परियत्तिधम्मवाचके पाळिसद्दे, अत्थं पाति रक्खती ति पाळी ति च, अन्तोदकं रक्खणत्थेन महतो तळाकस्स थिरा महती पाळि विया ति पाळी ति च, पकट्ठानं उक्कट्ठानं सीलादिअत्थानं बोधनतो सभावनिरुत्तिभावतो बुद्धादीहि भासितत्ता च, पकट्ठानं वचनप्पबन्धानं आळी ति पाळी ति च निब्बचनानि वेदितब्बनि"[1]।

यह द्योतित करता है कि 'पालि' अथवा 'पाळि' शब्द का व्यवहार पालि वाङ्मय में अनेक अर्थों में हुआ है। जिस प्रकार तालाब की मेंड़ अपने परिधि के भीतर स्थित जल की रक्षा करती है, उसी प्रकार मूल बुद्धवचन की पङ्क्तिभूत 'पालि' उसके अर्थों की रक्षा करती है। यहाँ 'पालि' की व्युत्पति 'पा' (रक्षा करना) धातु में उणादि का 'लि' अथवा 'ळि' प्रत्यय लगाकर बतायी गयी है।

'सद्दनीति' में भी 'पालि' अथवा 'पाळि' की व्युत्पत्ति 'पाल' (रक्षा करना) धातु से दी गयी है—"पाल रक्खणे। रक्खणं ताणं गोपनं अवनं पालनं रक्खा रक्खणा गुत्ति इच्चेते परियाया। पालेति, पालयति····पालनं, पाळी। एत्थ पाळी ति अत्थं पालेती ति पाळी, लस्स ळत्तं····"[2]।

संस्कृत कोशों तथा पालि में आये हुए इन निर्वचनों से स्पष्ट है कि 'पालि' शब्द की व्युत्पत्ति के लिए हमें इधर-उधर नहीं जाना है। यौगिक रूप से इसका निर्वचन 'पा' अथवा 'पाल' धातु से है। यह एक प्राचीन शब्द है तथा प्राचीन भारतीय आर्यभाषा एवं मध्य भारतीय आर्यभाषा में समान रूप से इसका व्यवहार अनेक अर्थों में हुआ है। उन्हीं विभिन्न अर्थों में से एक अर्थ 'पङ्क्ति' भी है और पङ्क्तिबद्ध होने के बाद मूल बुद्धवचन को अट्ठकथाओं से एवं अन्य व्याख्यानों से अलग करने के लिए आचार्यों ने आगे चलकर उसके लिए 'पालि' शब्द का व्यवहार करना प्रारम्भ कर दिया। अर्वाचीन काल में त्रिपिटक की भाषा के लिए समस्त-रूप में 'पालि-भाषा' पद का व्यवहार होने लगा, जो हमें 'सासनवंस' नामक ग्रन्थ में प्राप्त है और इस प्रकार आधुनिक काल में 'पालि' शब्द स्थविरवादी (थेरवादी) त्रिपिटक की भाषा का ही द्योतक हो गया, जिसे पूर्व से परम्परा मागधी कहती आयी है।

---

१. द्र०—"अभिधानप्पदीपिकासूची", पृ० २३४।
२. द्र०—हेल्मर स्मिथ, "सद्द०" २, पृ० ५६२।

पालि भाषा का मूल प्रदेश

यह विषय भी विवादग्रस्त है कि पालि मूलतः किस प्रदेश की भाषा थी और इस सन्दर्भ में विद्वानों ने विभिन्न मत प्रस्तुत किये हैं एवं इसमें कारण यह है कि स्वयं यह शब्द इस सम्बन्ध में कुछ भी प्रकाश नहीं डालता।

सिंहल की स्थविरवादी परम्परा पालि को 'मागधी' कहती आयी है। पालि तथा मागधी के सम्बन्ध में पूर्व में विवेचना की जा चुकी है। स्थविरवादी परम्परा के अनुसार मागधी मूलभाषा भी है—

"सा मागधी मूलभासा नरा यायादिकप्पिका।
ब्रह्मानो चस्सुतालापा सम्बुद्धा चा पि भासरे"[1]॥

अर्थात् वह मागधी प्रथम कल्प के मनुष्यों, ब्रह्मा तथा अश्रुतवचनवाले शिशुओं की मूलभाषा है तथा सम्बुद्धों ने भी इसी में व्याख्यान दिया है।

बुद्धवचन की भाषा की विवेचना-सम्बन्धी मूलाधार है विनयपिटक के 'चुल्लवग्ग' में प्रदत्त बुद्धवचनों की भाषा-सम्बन्धी समस्या तथा भगवान् बुद्ध द्वारा उसका समाधान एवं आचार्य बुद्धघोष से लेकर आधुनिक युग तक के विद्वानों द्वारा इसके सहारे अपनी युक्तियों को प्रस्तुत करना। कथा यह है—एक बार ब्राह्मण जाति के सुन्दर वचनवाले दो भिक्षुओं ने जाकर बुद्ध से यह निवेदन किया—भन्ते, इस समय नाना नाम, गोत्र, जाति तथा कुल के लोग सङ्घ में प्रव्रजित होते हैं। वे अपनी भाषा में बुद्धवचन को (कहकर उसे) दूषित करते हैं। अच्छा हो, भन्ते, हम बुद्धवचन को 'छान्दस्' (वैदिक भाषा) में ग्रथित कर दें (जिससे वह सर्वत्र एक ही रूप में प्रचलित हो)। इस पर तथागत ने उन्हें फटकारा—भिक्षुओं, यह अयुक्त है, अनुचित है....। फटकार कर धार्मिक कथा कहकर भगवान् ने भिक्षुओं को सम्बोधित किया—"न, भिक्खवे, बुद्धवचनं छन्दसो आरोपेतब्बं। यो आरोपेय्य, आपत्ति दुक्कटस्स। अनुजानामि, भिक्खवे, सकाय निरुत्तिया बुद्धवचनं परियापुणितुं ति" (अर्थात्, भिक्षुओं, बुद्धवचन को 'छान्दस्' में नहीं करना चाहिए, जो करेगा, उसे 'दुष्कृत' आपत्ति होगी। भिक्षुओं, मैं अपनी भाषा में बुद्धवचन को सीखने की अनुमति देता हूँ)[2]।

आचार्य बुद्धघोष से लेकर आधुनिक युग तक के विचारकों ने इस 'सकाय निरुत्तिया' पद का अपने-अपने अनुसार व्याख्यान प्रस्तुत किया है। बुद्धघोष का कथन है—"एत्थ सकानिरुत्ति नाम सम्मासम्बुद्धेन वुत्तप्पकारो मागधको वोहारो"[3]। 'छन्दसो आरोपेम' का उनके द्वारा व्याख्यान किया गया है—"वेदं विय

---

१. गुणरत्न थेर, "कच्चायन व्याकरण", भूमिका।

२. चुल्लवग्ग, पृ० २२८-२२९।

३. समन्त०, पृ० ३०६।

सक्कटभासाय वाचनामग्गमारोपेम"[1] । इस प्रकार बुद्धघोष के अनुसार 'छन्दसो' का अर्थ वैदिक संस्कृत तथा 'सकानिरुत्ति'का अर्थ बुद्ध की अपनी भाषा अर्थात् मागधी है। आधुनिक विद्वानों में गायगर आदि बुद्धघोष के इस व्याख्यान से सहमत हैं, परन्तु विन्टरनित्स[2], रायस् डेविड्स तथा ओल्डेनबर्ग[3] को बुद्धघोष की 'सकाय निरुत्तिया' की व्याख्या मान्य नहीं है और इन्होंने इसका अर्थ बुद्ध की अपनी भाषा न करके लोगों की अपनी-अपनी भाषा ही किया है। स्थल तथा परिस्थिति एवं बुद्ध के समस्त व्यक्तित्व को ध्यान में रखकर यही समीचीन है कि 'सकानिरुत्ति' से उनका तात्पर्य लोगों की अपनी-अपनी भाषा से है, न कि स्वंय की अपनी भाषा से।

सिंहली परम्परा यही मानती है कि पालि मगध की भाषा थी और बुद्धवचन का संकलन इसी में है। इसमें कारण यह ज्ञात होता है कि सिंहल को बौद्ध धर्म तथा त्रिपिटक की परम्परा मगध के राजकुमार महामहेन्द्र से प्राप्त हुई थी।

भाषावैज्ञानिक रीति से पालि का विश्लेषण करने पर इसे मागधी नहीं माना जा सकता। प्राकृत वैयाकरणों द्वारा विवेचित तथा संस्कृत नाटकों में उपलब्ध मागधी पालि के बहुत बाद की साहित्यिक भाषा है, परन्तु पूर्वी क्षेत्र में प्राप्त मौर्य अभिलेखों तथा अशोक के शिलालेखों की भाषा तो अवश्य ही प्राचीन मागधी है और पालि से तुलना करने पर वह इन दोनों से भिन्न है। मागधी में 'श, ष, स' के स्थान पर मात्र 'श' तथा 'र', 'ल' में केवल 'ल' ध्वनि प्राप्त होती है; परन्तु पालि में इससे भिन्न मात्र 'स' का प्रयोग तथा 'र' एवं 'ल' दोनों ध्वनियाँ प्राप्त होती हैं, और पुल्लिङ्ग एवं नपुंसकलिङ्ग में अकारान्त शब्दों के कर्त्ताकारक एकवचन में मागधी में ए' परन्तु पालि में 'ओ' प्रत्यय होता है। यह मागधी के कर्त्ताकारक एकवचन में 'पुरुष' शब्द के 'पुलिशे' उदाहरण से स्पष्ट है और पालि में इसके स्थान पर 'पुरिसो' होता है। इन भिन्नताओं के आधार पर विद्वानों ने पालि को मागधी न मानकर इस बिन्दु पर अपने-अपने विचार अलग दिये हैं।

मागधी से मूलतः भिन्न होते हुए भी पालि में 'भिक्खवे, सुवे, पुरिसकारे' आदि मागधी के अनेक रूप विद्यमान हैं तथा इनके आधार पर सिल्वाँ लेवी[4] तथा लूडर्स[5] का यह अनुमान है कि त्रिपिटक का मूल रूप पहले मागधी में ही था और पालि तथा संस्कृत में प्राप्त त्रिपिटिक इसके अनुवाद-मात्र हैं और अनुवाद-प्रक्रिया में ही मागधी के उपर्युक्त रूप अवशिष्ट रह गये हैं। भाषावैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित यह तर्क समी-

---

१. वहीं, पृ० ३०६।

२. द्र०—"Indian Literature", Vol. II, p. 602.

३. द्र०—"Sacred Books of the East", Vol. XX. p. 151.

४. द्र०—"Journal Asiatique", S. 10, T. XX, p. 495.

५. द्र०—"Bruchstucke Buddhlsticher Dramen", p. 41.

चीन सा प्रतीत होता है। आधुनिक युग के सिंहली विद्वान् भी यह मानने लगे हैं कि बुद्ध की मागधी सर्वसाधारण के बोलचाल की मागधी नहीं थी, अपितु वह एक विशेष मागधी थी—"....सम्मासम्बुद्धकाले पि मागधानं मनुस्सानं या साधारणगामिक्कादीनं भासा, नेव सा बुद्धमागधी भासा ति वुच्चति"[१]।

ओल्डेनबर्ग ने कलिङ्ग की भाषा को पालि की आधारभूता भाषा[२], वेस्टरगार्ड[३] तथा ई० कुह्न[४] ने इसे उज्जैन प्रदेश की बोली, आर० ओ० फ्रैंक ने विन्ध्य प्रदेश की भाषा को पालि की आधारभूता भाषा[५], स्टेन कोनो ने इसे विन्ध्य प्रदेश की भाषा मानते हुए पैशाची के समकक्ष[६], सर जार्ज ग्रियर्सन ने मूलतः इसे मगध की भाषा मानते हुए तक्षशिला में इसका परिपक्व होना[७], रायस् डेविड्स ने कोशल से इसे सम्पन्न[८], मैक्स वालसर ने इसे पाटलिपुत्र की भाषा[९], विंडिश, कर्न, जेम्स एलविस तथा गायगर ने इसे एक ऐसी साहित्यिक भाषा जिसमें विभिन्न बोलियों का सम्मिश्रण है[१०], यह माना है[११]। महापण्डित राहुल सांकृत्यायन की धारणा है कि सिंहल में मागधी भाषा में ही त्रिपिटक गया था, पर इसे कण्ठस्थ रखने का भार वहाँ के गुजराती प्रवासियों को मिला था और इससे मागधी की सभी विशेषताएँ लुप्त हो गयीं[१२], साथ ही उनका यह भी विचार है कि सिंहल के स्थविरवादी यद्यपि मागधी की प्रमुख विशेषताओं को सहस्राब्दियों पूर्व छोड़ चुके हैं तो भी वे कहते हैं—"हमारे धर्म ग्रन्थ मूल मागधी भाषा में हैं[१३]।

---

१. द्र०—गुणरत्न थेर, "कच्चायन व्याकरण", भूमिका।
२. द्र०—विनयपिटक, भा० १, भूमिका, पृ० ५०।
३. द्र०—"Uber den altesten Zeitraum der indischen Geschichte", p, 87.
४. द्र०—"Eeitrage zur Pali-Grammatik", p. 6.
५. द्र०—"Pali und Sanskrit", p. 131.
६. द्र०—"Z. D. M. G", 64, "The home of Paiśācī, p. 103, 114, 118.
७. द्र०—"Asiatic Society Monographs", Vol. VIII, 1906, "The Paiśācī Languages of North-Western India."
८. द्र०—"P. T. S. Dictionary", Introduction, p. 56.
९. द्र०— 'Sprache und Helmat des Palikanons", p. 56.
१०. द्र०—गायगर, "Pali Literature and Language", p. 4.
११. इन मतों पर विस्तृत विचार तथा खण्डन-मण्डन के लिए द्र०—लक्ष्मीनारायण तिवारी, "कच्चायन व्याकरण", भूमिका, पृ० ३३–३८।
१२. द्र०—"विनयपिटक", हिन्दी अनुवाद, भूमिका, पृ० ६-७।
१३. द्र०—"पुरातत्त्व निबन्धावली", पृ० २२०।

वास्तव में उत्तरी भारत में मध्यदेश की बोली ही सदा प्रभावशाली रही है, अतः यही पालि की आधारभूता भाषा है। डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या ने इसी मत का प्रतिपादन करते हुए कहा है कि "बुद्ध भगवान् के उपदेशों का प्रणयन सर्वप्रथम इसी पूर्वी बोली में होकर बाद में उनका अनुवाद पालि भाषा में, जो कि मध्यदेश की प्राचीन भाषा पर आधारित एक साहित्यिक भाषा थी, हुआ'''बौद्ध धर्मग्रन्थों का अनुवाद बुद्ध की मूल पूर्वी बोली से जिन-जिन अन्य प्राचीन भारतीय प्रादेशिक बोलियों में हुआ, उन्ही में से पालि भी एक थी। इस पालि भाषा को गलती से मगध या दक्षिण-बिहार की प्राचीन भाषा मान लिया जाता हैं; वैसे यह उज्जैन से मथुरा तक के मध्यदेश के भूभाग की भाषा पर आधारित साहित्यिक भाषा है; वस्तुतः इसे पश्चिमी हिन्दी का एक प्राचीन रूप कहना ही उचित होगा।[1]

डा० सुकुमार सेन के इस सन्दर्भ में विचार ये हैं—"इसमें हम मध्यदेशीय और प्राच्य बोली का पूर्ण तथा क्रुत्रिम विवेचन पाते हैं, यद्यपि इसमें मध्यदेशीय बोली का ही प्राधान्य है"।[2]

पालि की भाषागत विशेषताएँ तथा संस्कृत

मध्य भारतीय आर्यभाषा की प्रथम कड़ी होने से पालि भाषा संस्कृत से उतनी दूर नही हैं जितनी कि अन्य मध्य भारतीय आर्यभाषाएँ; किन्तु लौकिक संस्कृत की अपेक्षा वैदिक संस्कृत की विशेषताएँ यहाँ विशेष रूप से विद्यमान हैं, उदाहरणार्थ— सुबन्त एवं तिङन्त प्रत्ययों का व्यत्यय; वर्ण, काल, लिङ्ग आदि का व्यत्यय; 'देवासे, धम्मासे, बुद्धासे, देवेभि, गोनं, पतिना' आदि शब्द-रूपों की वैदिक से समानता; परस्मै एवं आत्मने पद का व्यत्यय; 'सुणुहि, सुणोथ, भवामसे' आदि वैदिक के समान ही धातु-रूपों का होना; लुङ् लकार का अधिक मात्रा में प्रयोग; 'दातवे, गन्त्वान, कातून' आदि कृदन्त-रूपों का प्रयोग। रूप-सम्बन्धी यह विविधता लौकिक संस्कृत की शिष्ट भाषा में तो नियमित कर दी गयी थी, किन्तु बोलचाल की भाषा में वे प्रचलित रहे होंगे और इस कारणवश वे पालि में सुरक्षित मिलते हैं। इसके अतिरिक्त मध्य भारतीय आर्यभाषा ने जिन परिवर्तनों के द्वारा इस काल में प्रवेश किया, वे पूर्णरूपेण पालि में प्राप्त हैं।

भाषागत विशेषताओं के आधार पर गायगर ने पालि के विकास-क्रम को परिलक्षित करते हुए इसका यह वर्गीकरण प्रस्तुत किया है—(१) गाथा की भाषा (इसमें आर्ष प्रयोगों का बाहुल्य तथा वैदिक संस्कृत से साम्य आदि हैं); (२) पिटक

१. द्र०—"भा० आ० हि०", पृ० १७४–१७५।

२. द्र०—"Comparative Grammar of M. I. A., p. 4.

साहित्य के गद्यभाग की भाषा; (३) अनुपिटक साहित्य के गद्य-भाग की भाषा; (४) बाद के कृत्रिम पद्य की भाषा।[1]

पालि से सम्बन्धित म० भा० आ० की अन्य कड़ियाँ

अशोक के अभिलेखों की भाषा तथा अन्य प्राकृतें

प्रारम्भ में अशोक के अभिलेखों को लोगों ने पालि मान लिया और बाद में इसे पालि का एक विकृत रूप माना गया। परन्तु पालि इनसे भिन्न होने के कारण मागधी पर आधारित नहीं मानी जाती। इसको स्पष्ट रूप से हम अशोक के मागधी क्षेत्र के किसी अभिलेख को लेकर पालि में उसका क्या अनुवाद होगा, इसे प्रस्तुत करके देख सकते हैं। उदाहरणार्थ—अशोक के शिलालेख—"उपतिस्पसिने लाघुलोवादे मुसावादं अधिगिच्च विनयसमुकसे" का पालि-रूपान्तर होगा—"उपतिस्सपञ्हो राहुलोवादो मुसावादं अधिकिच्च विनयसमुकसो"।

अशोक के अभिलेखों की भाषा का विश्लेषण करने पर इनमें हमें भारतीय आर्यभाषा की तीन बोलियाँ प्राप्त होती हैं, परन्तु अन्य दो पर भी प्राच्या का विशेष प्रभाव दीखता है—(१) उत्तर-पश्चिम की बोली (शाहबाज़गढ़ी और मानसेरा के अभिलेखों में प्राप्त), (२) मध्यदेश की बोली (गिरनार तथा कालसी के अभिलेखों में प्राप्त), (३) प्राच्या बोली (भाब्रू, रामपुरवा, धौली, जौगड़ के अभिलेखों में प्राप्त)। अशोक के अभिलेखों का भाषागत अध्ययन प्रो० ज्यूल ब्लाख[1] तथा डा० मधुकर अनन्त मेहन्दले[2] द्वारा प्रस्तुत हुआ है।

अशोक के अभिलेखों की भाषा के अतिरिक्त अर्द्धमागधी, मागधी, शौरसेनी, महाराष्ट्री तथा पैशाची आदि साहित्यिक प्राकृतें हैं, जो संस्कृत नाटकों, जैन धार्मिक एवं अन्य ग्रन्थों तथा काव्य-ग्रन्थों में व्यवहृत हुई हैं। इनकी काफी विवेचनाएँ हुई हैं, जो तत्तत् स्थलों पर द्रष्टव्य हैं।

बौद्ध संस्कृत

इन उपरिवर्णित प्राकृतों के अतिरिक्त मध्य भारतीय आर्यभाषा की एक और संस्कृतबहुला भाषा प्राप्त है, जिसे महायान शाखा के बौद्धों ने व्यवहृत किया है। जिस प्रकार स्थविरवादियों ने अपने ग्रन्थों के लिए पालि भाषा अपनायी, उसी प्रकार महायानियों ने संस्कृत का आश्रयण ग्रहण किया, किन्तु उनकी यह संस्कृत सामान्य संस्कृत थी। एडगर्टन द्वारा इस भाषा का नामकरण 'मिश्रित बौद्ध संस्कृत' किया गया हैं और

---

१. द्र०—गायगर, "Pali Literature and Language", Introduction, p. 1–2.

१. द्र०—ज्यूल ब्लाख, " Les Inscription des As'oka."

२. द्र०—एम० ए० मेहन्दले,"Historical Grammar of Inscriptional Prakrits".

इसका व्याकरण एवं शब्दकोश लिखकर उन्होंने इसकी विवेचना की है।[१] इस भाषा में प्रयुक्त पद्य-भाग को 'गाथा' अभिहित किया जाता है, अतः मैक्समूलर, राजेन्द्रलाल मित्र, वेबर तथा बर्नफ आदि विद्वानों ने इसे 'गाथा संस्कृत' की संज्ञा से विभूषित किया था[२]। बर्नफ द्वारा विश्लेषण के आधार पर यह संस्कृत तथा पालि के बीच की भाषा मानी गयी है[३], परन्तु इकार तथा उकारबहुला होने के कारण यह अपभ्रंश की प्रवृत्ति को दर्शाती है, अतः यह पालि से प्राचीन नहीं हो सकती; इसीलिए आधुनिक भाषाविद् इसे संस्कृत-प्राकृत-मिश्रित, पूर्ण कृत्रिम तथा साहित्यिक प्राकृतों के समकालीन स्थित भाषा मानते हैं। एडगर्टन के नामकरण का खण्डन करते हुए विन्टरनित्स ने इसे सामान्य संस्कृत अभिहित किया है[४] तथा प्रो० राघवन के विचार से साधु एवं शिष्ट संस्कृत के स्थान पर सामान्य होने के कारण यह भाषा समाज में बहुप्रचलित थी, अतः पुराण के प्रणेताओं, बौद्धों तथा जैनों सभी ने सामान्य रूप से इसका प्रयोग किया[५]। इसी कारणवश कीलहार्न[६] तथा कीथ[७] प्रभृति विद्वानों ने यह स्थापना की थी कि पुराणों का पालि अथवा अन्य किसी प्राकृत से संस्कृत में रूपान्तर किया गया हैं। साथ ही पुराणों के अतिरिक्त संस्कृत में लिखे गये अन्य तकनीकी विषयों के वाङ्मय की भी भाषा ऐसी ही है। बरो ने भी पुराणों की भाषा को जनसामान्य भाषा माना है।[८] जैकोबी के विचार में यह भाषा निरन्तर ही पाणिनि के नियमों का उल्लङ्घन करती है, जिन्हें पालन करना धार्मिक तथा साहित्यिक रूढ़िवादी समाज में आवश्यक माना जाता था।[९] यह इससे भी स्पष्ट है कि पुराणों तथा आख्यानों आदि का प्रचार ब्राह्मणों की अपेक्षा सूतों आदि ने अधिक किया। इनकी भाषा जनसामान्य की होने के कारण अधिक सरल थी और आगे चलकर इनका संस्कृतीकरण किया गया, किन्तु इस कार्य में भाषा-सम्बन्धी बहुत से व्यत्यय इसमें अवशिष्ट रह गये। इस प्रकार इस

---

१. द्र०—एडगर्टन,"Buddhist Hybrid Sanskrit Grammar and Dictionary'.
२. द्र०—विन्टरनित्स, "Indian Literature", Vol. I, p. 47; उदयनारायण तिवारी, "भोजपुरी भाषा और साहित्य", पृ० ४३।
३. द्र०—उदयनारायण तिवारी, "हि० भा० उ० वि", पृ० १११।
४. द्र०—"Indian Literature, Vol. I, p. 44.
५. द्र०—"Indian Linguistics", Vol. 16. Chatterji Jubilee Vol., pp. 313-322.
६. द्र०—J. R. A. S., 1898, p. 18.
७. द्र०—वहीं, 1906, pp. 2-3.
८. द्र०—"The Sanskrit Language", pp. 51-53.
९. द्र०—"Das Ramayana".

स्थापना के अनुसार पुराणों की भाषा के समकक्ष ही यह बौद्ध संस्कृत है, अतः यही उपयुक्त है कि 'बौद्ध मिश्रित संस्कृत' के स्थान पर इसे बोलचाल की संस्कृत अथवा सामान्य संस्कृत अभिहित किया जाय।

डा० सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या की इस सन्दर्भ में यह स्थापना है कि आगे चलकर बौद्ध तथा जैन इन दोनों पन्थों ने 'गाथा' नामक एक मिश्रित संस्कृत विकसित की, जिसमें हमें प्राकृत का अत्यन्त कृत्रिम संस्कृतीकरण प्राप्त होता है। एक प्रकार से यह मध्य भारतीय आर्यभाषा के द्वारा प्राचीन भारतीय आर्यभाषा की भावना एवं प्रत्नता के प्रति अर्पित की हुई श्रद्धाञ्जलिमात्र थी।[1] इसके सम्बन्ध में डा० सुकुमारसेन के विचार हैं—"पालि तथा अशोक के अभिलेखों से स्पष्टतया यह ज्ञात होता है कि प्रथम शताब्दी के अन्त में निर्विवाद-रूप से मध्य भारतीय आर्यभाषा का अखिल भारतीय रूप वाङ्मय तथा शासन में प्रतिष्ठित हो गया था। यह साहित्यिक रूप ही संस्कृत के परिधान को ग्रहण करके बौद्धों द्वारा विकसित की गयी बौद्ध संस्कृत के रूप में दृष्टिगोचर हुआ। यही बात पुराणादि की भाषा के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है।"[2] एडगर्टन द्वारा भी इसे मध्य भारतीय आर्यभाषा की किसी अज्ञात बोली पर ही आधारित माना गया है।

इस भाषा की विशेषताएँ हैं—ह्रस्व के स्थान पर दीर्घ, दीर्घ के स्थान पर ह्रस्व, स्वरों का समीकरण, अनुनासिकीकरण, अघोष के स्थान पर सघोष, 'ज' के स्थान पर 'य' तथा 'य' के स्थान पर 'ज', 'ड' के स्थान पर 'ट', दन्त्य के स्थान पर मूर्धन्य, स ष स का आपस में परिवर्तन, व्यञ्जनों का समीकरण तथा उनमें विभिन्न परिवर्तन, पदयोजना में बहुवचन के लिये एकवचन का प्रयोग, लिङ्ग के प्रयोग में स्वच्छन्दता तथा विभिन्न कारकों का एक ही वाक्य में पदयोजनागत सम्बन्ध का व्यवहार।

पालि व्याकरण

पालि भाषा में जब त्रिपिटक का सङ्ग्रह हो गया और कालान्तर में इस पर अट्ठकथाएँ रची गयीं तो इसके पश्चात् टीकाओं तथा अनुटीकाओं के युग का क्रमशः प्रादुर्भाव हुआ और टीका-अनुटीका के युग में पालि विद्वानों का ध्यान काव्य, व्याकरण, छन्दःशास्त्र तथा अलङ्कारशास्त्र आदि विषयों की ओर आकृष्ट हुआ। किसी भी शास्त्रीय भाषा पर अधिकार प्राप्त करने हेतु उसके व्याकरण का पूर्ण ज्ञान अधिगत करना परमावश्यक होता है। इसी दृष्टि से विद्वानों का ध्यान पालि-व्याकरण-रचना की ओर गया और इस शास्त्र की अभिवृद्धि प्रारम्भ हुई। आचार्य कच्चायन ने अपने व्याकरण

---

१. द्र०—"भा० आ० हि०", पृ० ७०।

२. द्र०—"Comparative Grammar of M. I. A.", p. 4.

के प्रयोजन को स्पष्ट करते हुए मङ्गल-गाथाओं में ही कहा है—"शास्ता के उपदेशों के सुष्ठु अर्थ को सम्यक् रूप से हृदयङ्गम करने हेतु ही मैं इस व्याकरण का व्याख्यान प्रस्तुत करता हूँ...."[१] आदि। आगे चलकर संस्कृत व्याकरण से प्रभावित होकर पालि वैयाकरणों ने भी रक्षा, ऊहन, आगम, लघूपाय तथा सन्देह-निवारणादि इसके अनेक प्रयोजनों को परिगणित किया—

"सद्दानुसासनस्स किं पयोजनं ति चे वदे।
रक्खोहागमलहुपा यासन्देहत्वमेव च" ॥[२]

संस्कृत व्याकरण

यद्यपि पालि व्याकरण की अपनी स्वतन्त्र परम्परा है तथापि इसका पूर्ण ज्ञान अधिगत करने हेतु संस्कृत व्याकरण का ज्ञान परमावश्यक है। भारत में व्याकरण शास्त्र की परम्परा अविच्छिन्न रूप से प्रवाहित रही है। इसकी परिभाषा महाभाष्य में दी गई है—"व्याक्रियते अनेन इति व्याकरणम्"।[३] भारत में व्याकरण शास्त्र की उत्पत्ति कब हुई, यह निश्चित करना अत्यन्त कठिन है, पर यह सत्य है कि पदपाठ के निर्माण के पूर्व इसकी स्थिति हो चुकी थी।[४] इसका व्यवहार गोपथ ब्राह्मण में विद्यमान है। कालान्तर में संस्कृत में अनेक व्याकरण रचे गये। काल के क्रम में संस्कृत के व्याकरणों का विभाग पाणिनि से प्राचीन तथा पाणिनि से अर्वाचीन, इन दो प्रमुख विभागों में किया जाता है। प्रथम के अन्तर्गत इन्द्र, वायु, भारद्वाज, भागुरि, आपिशलि, काश्यप, गार्ग्य, गालव, शाकटायन तथा स्फोटायन आदि आते हैं और द्वितीय वर्ग में सर्ववर्मन्, चन्द्रगोमिन्, पाल्यकीर्ति, भोजदेव, हेमचन्द्र, अनुभूतिस्वरूप, बोपदेव, क्रमदीश्वर तथा पद्मनाभ आदि हैं। इन सभी के अलग-अलग व्याकरण हैं। कातन्त्र व्याकरण के कर्त्ता के सम्बन्ध में निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता, फिर भी इसे पाणिनि से अर्वाचीन ही माना जाता है। अपनी मौलिकता के साथ ही पाणिनि ने 'अष्टाध्यायी' की रचना में पूर्ववर्ती आचार्यों से पर्याप्त सामग्री ली है। उनसे अर्वाचीन आचार्यों ने अपने-अपने व्याकरणों में पाणिनि तथा उनसे पूर्ववर्ती आचार्य, इन दोनों से ही सामग्री प्राप्त की है। इनमें से कुछ के व्याकरण पूर्ववर्ती आचार्यों के व्याकरण-सम्प्रदाय पर ही आधारित हैं, जैसा कि बर्नेल ने कातन्त्र व्याकरण के सम्बन्ध में स्थापना की है कि वह ऐन्द्र व्याकरण सम्प्रदाय पर आधारित है।[५] पालि वैयाकरण भी संस्कृत वैयाकरणों के प्रति ऋणी हैं।

---

१. द्र०—मूल, पृ० ३।
२. द्र०—"कारिकापालि", २८ कारिका।
३. द्र०—आह्निक १, वार्तिक १२।
४. द्र०—युधिष्ठिर मीमांसक, "संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास," भा० १, पृ० ४२-५६।
५. वि० द्र०—"On the Aindra School of Sanskrit Grammarians".

पालि व्याकरण पर संस्कृत व्याकरण का प्रभाव

पालि व्याकरण में संस्कृत व्याकरण की बहुत सी संज्ञाएँ ले ली गयी हैं, यथा—अक्खर, अघोस, अपादान, आगम, आदेस, उत्तमपुरिस, उपसग्ग, कारक, कत्ता, धातु, नाम, परिभासा, पाटिपदिक, ब्यञ्जन, योगविभाग, लिङ्ग, विभत्ति, विभासा, वुद्धि, सब्बनाम, समास, सम्पदान आदि। संस्कृत व्याकरणों के इस ऋण को स्वीकार करते हुए ही कच्चायन ने 'परसमञ्ञा पयोगे' (९) सूत्र की रचना की है, जिसकी वृत्ति का स्पष्ट उद्घोष है—"संस्कृत-ग्रन्थों में घोष, अघोष आदि जो संज्ञाएँ हैं, वे प्रयुक्त होने होने पर यहाँ भी ग्रहण की जाती हैं। न्यासकार ने इस सूत्र का व्याख्यान दिया है—"परेसं समञ्ञा परसमञ्ञा, वेय्याकरणानं समञ्ञा ति अत्थो; परस्मिं वा समञ्ञा परसमञ्ञा, सक्कतगन्थे समञ्ञा ति अत्थो"। 'कच्चायनवण्णना' में भी इस सूत्र की व्याख्या में संस्कृत वैयाकरणों द्वारा दी गयी संज्ञाओं की स्वीकृति की ओर इङ्गित किया गया है।[1]

सूत्रों की विधि तथा व्याख्यान आदि में पालि व्याकरण में संस्कृत व्याकरण से बहुत सा ऋण-स्वरूप लिया गया है। 'नामानं समासो युत्तत्थो' (३१८) सूत्र की व्याख्या में न्यासकार ने महाभाष्य में समासवृत्ति के सन्दर्भ में आये हुए व्याख्यान का ही पालि रूपान्तर कर दिया है। यही स्थिति 'मोग्गल्लानपञ्चिका' की भी है। न्यास में आया है—"किं तेसं ते युत्तत्थभावमुपगच्छन्ता पजहित्वावत्तनो अत्थे युत्तत्थभावमुपगच्छेय्युं....एवं हि लोके दिस्सति—कोचि भिक्खु दुतीयं भिक्खं लभित्वा न पुब्बं जहाति...." आदि। साथ ही यह सूत्र भी कातन्त्र व्याकरण से लिया है। ऐसे सभी सूत्रों तथा अन्य सामग्री की मूल ग्रन्थ के सम्पादन में तत्तत् स्थलों पर पाणिनि तथा कातन्त्र आदि से तुलना करते हुए पादटिप्पणियों द्वारा उन्हें इङ्गित कर दिया गया है। कारकों के 'व्याख्यान' में भी न्यास तथा 'कच्चायनवण्णना' में संस्कृत व्याकरण का प्रभाव स्पष्ट है।

कच्चायन सम्प्रदाय के अतिरिक्त मोग्गलान तथा सद्दनीति व्याकरणों पर भी संस्कृत व्याकरण का प्रभाव सुस्पष्ट है। मोग्गल्लान में भी पाणिनि, कातन्त्र तथा चन्द्रगोमिन् के व्याकरणों से प्रभूत सामग्री ली गयी है। सद्दनीति में तो शैली, भाषा तथा विवेचन-प्रक्रिया, सभी पर संस्कृत का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। स्थान-स्थान पर सद्दनीति में व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए संस्कृत भाषा से पालि भाषा की तुलना भी प्रस्तुत की गयी है।[2] व्याकरण के विभाग भी संस्कृत व्याकरण से पूर्णतया प्रभावित हैं और इसके धातुपाठों की भी यही स्थिति है।

---

१. द्र०—मूल, पृ० २७–२८।

२. द्र०—सद्द०, भा० २, पृ० ३२१, ३२६।

पालि व्याकरण के सम्प्रदाय

पालि के पाँच व्याकरण-सम्प्रदायों का उल्लेख मिलता है—(१) बोधिसत्त व्याकरण, (२) कच्चायन व्याकरण, (३) सब्बगुणाकर व्याकरण, (४) मोग्गल्लायन अथवा मोग्गल्लान व्याकरण, (५) सद्दनीति व्याकरण। इन पाँचों में से प्रथम तथा तृतीय प्राप्त नहीं है और शेष तीनों में प्राचीनता की दृष्टि से कच्चायन व्याकरण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, साथ ही इसका अवलम्बन लेकर व्याख्यात्मक अनेक ग्रन्थों का प्रणयन हुआ है।[1] इसके अतिरिक्त अट्ठकथाओं में भी व्याकरण-सम्बन्धी सामग्री प्राप्त होती हैं।

अट्ठकथाओं में व्याकरण

परम्परा के अनुसार पालि व्याकरण की उत्पत्ति के विषय में कहा जाता है कि जब श्रोताओं को बुद्ध के उपदेशों को समझने के सम्बन्ध में कठिनाई हुई और लोगों ने इसे व्यक्त किया तो तथागत के प्रधान शिष्य महाकच्चायन समाधि के पश्चात् अपने व्याकरण के प्रथम सूत्र, 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' को लेकर प्रकट हुए।[2] यदि यह सत्य हैं तो बुद्धदत्त, बुद्धघोष तथा धर्मपाल आदि आचार्यों द्वारा रची गयी अट्ठकथाओं में इसे उद्घृत होना आवश्यक था। किन्तु इनकी अट्ठकथाओं में विभिन्न पदों की निरुक्तियाँ, नियम तथा पारिभाषिक शब्दावली आदि इस व्याकरण के अनुसार नहीं हैं। इनमें से कुछ पाणिनि के अनुसार है[3], कुछ निरुक्ति-पद्धति पर अवलम्बित हैं[4] तथा कुछ अन्य व्याकरण-सम्प्रदायों से लिए गये हैं। पाणिनि द्वारा 'आपत्ति' शब्द का प्रयोग 'प्राप्ति' के अर्थ में हुआ है, और इसी अर्थ में बुद्धघोष भी इसका प्रयोग करते हैं[5]। आचार्य बुद्धघोष ने परम्परया संस्कृत व्याकरण का अध्ययन अवश्य किया होगा। इसका तो प्रमाण प्राप्त होता है, किन्तु उनके द्वारा कहीं भी कच्चायन का आश्रय नहीं लिया गया है। धम्मपद में महाप्रज्ञ भिक्षु को निरुक्ति-पदों का ज्ञाता बताया गया हैं।[6] इन सबसे स्पष्ट है कि अतीत में पालि में शब्दों की निरुक्ति तथा व्याकरण-सम्बन्धी-

---

१. द्र०—धर्मकीर्ति श्री धर्माराम, "कच्चायनवुत्ति", भूमिका।

२. द्र०—फ्रान्सिस मैसन, "Kachchayana's Pali Grammar" p. 14.

३. द्र०—तु० द्र०—"को पन नेसं इन्द्रियट्ठो नामा ति? इन्दलिङ्गट्ठो इन्द्रियट्ठो, इन्द-देसितट्ठो इन्द्रियट्ठो...."—विसु०, पृ० ४९१–४९२; पा० सू० ५.२.९३।

४. तु० द्र०—"तत्थ 'वण्णागमो वण्णविकारलोपो' ति एतं निरुत्ति-लक्खणं गहेत्वा, सद्दनयेन वा पिसोदरादिपक्खे लक्खणं गहेत्वा...."—सु० नि० अ०, भा० १, पृ० १०७, १०८।

५. द्र०—B. C. Law, "A History of Pali Literature," Vol. II, p. 633.

६. धम्म०, २४ : १९।

नियमों की कच्चायन व्याकरण से भिन्न परम्परा विद्यमान थी और यह कालान्तर में पालि व्याकरण सम्प्रदायों के अभ्युदय के पश्चात् समाप्त हो गयी।

अनेक व्याकरण-संज्ञाओं का प्रयोग भी स्थान-स्थान पर अट्ठकथाओं में हुआ है, जो किसी पूर्व परम्परा की ओर सङ्केत करता है।[1] यथा—सन्धि, ब्यञ्जन, अनुनासिक, रस्स, लोप, आदेस, विपल्लास, विपरिणाम, आमेण्डित, उपसग्ग, निपात आदि।

कारक-नामों अथवा विभक्ति-नामों का अन्य प्रकार से उल्लेख अट्ठकथाओं में हुआ है। निरुक्ति का आश्रय लेकर वहाँ विभक्ति-नामों को क्रमशः पच्चत्तवचन[2], उपयोगवचन[3], करणवचन[4], सम्पदानवचन[5], निस्सकवचन[6], सामिवचन[7], भुम्मवचन[8] तथा आमन्तणवचन[9] कहा गया है, किन्तु इनका व्यवहार कच्चायन तथा मोग्गलान आदि के द्वारा पूर्णरूप से नहीं किया गया है, यद्यपि बाद के ग्रन्थों तथा अन्य टीका ग्रन्थों में इनका व्यवहार हुआ है। भुम्मवचन का प्रयोग अधिकरण, समीप, निर्धारण, भाव द्वारा भावलक्षण-कथन, कारण तथा निमित्त के अर्थों में हुआ है। इसके प्रयोग-व्याख्यान हेतु दीघनिकाय की अट्ठकथा द्रष्टव्य है।[10] कच्चायन में सामिवचन प्राप्त है।[11] कच्चायन के अतिरिक्त कातन्त्र में भी स्वामिवचन का उल्लेख षष्ठी विभक्ति के लिए हुआ है।[12] भुम्मवचन भूमि अथवा आधार का द्योतक है।

पाणिनि के सूत्रों पर कात्यायन द्वारा लिखे गये वार्तिकों में प्रत्यातमवचन तथा उपयोगवचन का व्यवहार प्राप्त है।[13] यह व्यक्त करता है कि अतीत से ही इन संज्ञाओं का प्रयोग कारक-सम्बन्धों की अभिव्यक्ति हेतु हो रहा था, अतः अट्ठकथाकारों ने इसे ग्रहण किया। बर्नेल के विचार से इसके आधार पर कुछ निष्कर्ष नहीं निकलता। इस सन्दर्भ में उनका कथन है—'कच्चायन व्याकरण की प्राचीनता के विषय में जेम्स

---

१. वि० वि० द्र० R. O. Franke "Geschtiche und Kritik Der Einheimischen Pali-Grammatik und Lexicographic", p. 3.

२. सु० नि० अ०, भा० १, पृ० ३०३।

३. वहीं, भा० २, पृ० ३८६।

४. पेत० अ०, पृ० ३३।

५. सु० नि० अ०, भा० २, पृ० ४९९।

६. जा० अ०, भा० ५, पृ० ४९८।

७. वहीं, भा० १, पृ०, १८५।

८. सु० नि० अ०, भा० १, पृ० १४०।

९. वहीं, भा० २, पृ० ४३५।

१०. द्र०—दी० नि० अ०, भा० १, पृ० ३३।

११. सूत्र २८५।

१२. कातन्त्र, सूत्र ३.१.५।

१३. पा० सू० १. १. ५० पर छठवाँ वार्तिक तथा सूत्र १.४.२९ पर दूसरा वार्तिक।

एलविस ने दूसरा प्रश्न यह उठाया हैं कि आचार्य बुद्धघोष ने अपनी अट्ठकथाओं में कच्चायन व्याकरण में प्रयुक्त संज्ञाओं का उल्लेख न करके उनके स्थान पर अन्य संज्ञाओं का उल्लेख किया है, पर इससे कोई निष्कर्ष नहीं प्राप्त होता। कच्चायन की बहुत सी संज्ञाएँ पाणिनीय व्याकरण में प्राप्त हैं। कुछ पतञ्जलि में मिलती हैं और इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि वे चतुर्थ शताब्दी से पूर्व प्राप्त किसी आधार पर आधारित हैं। ये संज्ञाएँ कारकों के नाम आदि हैं। 'प्रथमा' आदि का व्यवहार पाणिनि ने किया है, पर इसके स्थान पर 'पच्चत्त' आदि बुद्धघोष द्वारा व्यहृत हैं; किन्तु जैसा कि इन व्याख्यानों से स्पष्ट है, ये कारकों के नाम होकर उनके द्वारा व्यक्त होनेवाले पदयोजनागत सम्बन्ध को ही व्यक्त करते हैं।[1]

परन्तु इनसे यह निष्कर्ष तो प्राप्त ही होता है कि अट्ठकथाकारों के पूर्व कच्चायन व्याकरण की रचना नहीं हुई थी और कच्चायन बुद्ध के समकालीन थे, इस परम्परागत विचार का भी खण्डन इससे हो जाता है।

इन संज्ञाओं की चर्चा सद्दनीति में स्थान-स्थान पर विद्यमान है और वहाँ इनका व्याख्यान भी दिया गया है—"इदमेत्थ निरुत्तिलक्खणं दट्ठब्बं—पच्चत्तवचने पठमा विभत्ति भवति····आमन्तणवचने अट्ठमी विभत्ति भवति। तत्र उद्दानं—

पच्चत्तमुपयोगञ्च करणं सम्पदानियं।
निसक्कं सामिवचनं भुम्मालपनट्ठमं॥

तत्र पच्चत्तवचनं नाम तिविधलिङ्गववत्थानगतानं इत्थि-पुम-नपुंसकानं पच्चत्त-सभावनिद्देसत्थो; उपयोगवचनं नाम यो यं करोति तेन तदुपयुत्तपरिदीपनत्थो; करण-वचनं नाम तञ्ञापकतन्निब्बत्तकपरिदीपनत्थो; सम्पदानवचनं नाम तदनुप्पदानपरि-दीपनत्थो; निस्सक्कवचनं नाम तन्निस्सततदपगमपरिदीपनत्थो; सामिवचनं नाम तदिस्सरपरिदीपनत्थो; भुम्मवचनं नाम तप्पतिट्ठापरिदीपनत्थो; आमन्तणवचनं नाम तदामन्तणपरिदीपनत्थो····"[२]।

अट्ठकथाओं में प्राप्त व्याकरण की चर्चा के पश्चात् कच्यायन व्याकरण की ही चर्चा समीचीन है, क्योंकि प्राप्त तीनों पालि व्याकरण सम्प्रदायों में यह प्राचीन तथा महत्त्वपूर्ण है और इसी को आधार बनाकर इस सम्प्रदाय में सबसे अधिक ग्रन्थ लिखे गये हैं।

---

१. द्र०—"On the Aindra School of Sanskrit Grammarians", p. 61.
२. द्र०—सद्द०, भा० १, पृ० ६०-६१।

कच्चायन व्याकरण

कच्चायन व्याकरण को 'कच्चायनगन्ध' अथवा 'सन्धिकप्प' की भी संज्ञा प्रदान की गयी है। 'सन्धिकप्प' इस नाम से कुछ लोग भ्रमित हो जाते हैं, क्योंकि इस व्याकरण में 'सन्धिकप्प' नाम का एक काण्ड (अध्याय) भी है। यह नाम इस ग्रन्थ की मङ्गलगाथाओं में ही आया है, और इसका अर्थ यह ग्रन्थविशेष अथवा इस नाम का एक काण्ड-विशेष दोनों ही किया जाता है। प्रथम काण्ड अथवा अध्याय के नाम पर पालि के अनेक ग्रन्थों का नामकरण हुआ है और यह इसकी अपनी शैली है—यथा विनयपिटक में पाराजिक काण्ड के प्रथमतः स्थित होने से इसके एक ग्रन्थ का नामकरण 'पाराजिकपालि' किया गया है। इसी का उदाहरण देते हुए न्यास में इसके 'सन्धिकप्प' नाम की व्याख्या दी गयी है[१]। 'कच्चायन' नाम भी वहीं व्याख्यात है[२]। इस सन्दर्भ में 'कच्चायनभेद' की स्पष्ट उक्ति है—

"इति कच्चोसपुत्तो तु तस्स कच्चायनो मतो।
तेनेव कतसत्थम्पि कच्चायनन्ति ञायति।
कच्चायनस्सिदं सत्थं तिमिना वचनत्थतो[३] ॥

सम्प्रति यह शास्त्र सूत्र, वृत्ति तथा उदाहरणों के रूप में उपलब्ध है। इस सन्दर्भ में परम्परया कहा जाता है—

"कच्चानेन कतो योगो वुत्ति च सङ्घनन्दिनो।
पयोगो ब्रह्मदत्तेन न्यासो विमलबुद्धिना"[४] ॥

अर्थात् कच्चायन ने सूत्र की रचना की थी, वृत्ति सङ्घनन्दी द्वारा रची गयी, प्रयोगों की रचना ब्रह्मदत्त द्वारा हुई और न्यास को विमलबुद्धि ने रचा। इससे यह प्रकट होता है कि सूत्र, वृत्ति तथा उदाहरणों से युक्त यह व्याकरण एक व्यक्ति की कृति नहीं है। 'कच्चायनवण्णना' में तो इसके प्रथम सूत्र 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' को बुद्धभाषित कहकर 'महाकच्चायन' को इसी से अपने व्याकरण का प्रणयन करने की प्रेरणा प्राप्त हुई, ऐसी स्थापना की गयी है[५]। इसके अनुसार सम्पूर्ण प्रकरण के रचयिता महाकच्चायन

---

१. द्र०—"अस्स पन कच्चायनं ति सामञ्ञनामं, सन्धिकप्पादीनं साधारणत्ता....अथ वा सन्धिकप्पं ति सामञ्ञनामं; तथा हि कोचि आदिवसेन नामं लभति पाराजिककण्डो ति, कोचि अन्तवसेन तिकनिपातादि; अयं पन आदिवसेन लद्धनामो ति वेदितब्बो"।

२. द्र०—"इदं हि कच्चायनस्स इदं ति कच्चायनं ति वुच्चति।"

३. कारिका, ३-४।

४. द्र०—जेम्स एलविस द्वारा "Introduction to Kaccāyana's Grammar" में उद्धृत।

५. द्र०—मूल, पृ० १०-११।

ही हैं। 'रूपसिद्धि' तथा 'न्यास' इसी परम्परा को पुष्ट करते हैं। 'कच्चायनभेदटीका' में भी उपरिस्थित परम्परा के अतिरिक्त आगे चलकर यह भी उल्लेख प्राप्त होता है कि लक्षण वृत्ति तथा उदाहरण के सहित सम्पूर्ण प्रकरण के रचयिता 'महाकच्चायन' ही हैं[१]। इस प्रकार से यहाँ परम्परा से प्राप्त दोनों मत उद्धृत हैं। लगता है कि एक सम्प्रदाय में विकसित यह शास्त्र इस शाखा के प्रवर्तक आदि-आचार्य के नाम से आगे चलकर प्रचलित हो गया।

कच्चायन

अब प्रश्न उठता है कि कच्चायन कौन हैं। इसके सम्बन्ध में न्यास में प्रारम्भ में ही व्याख्यान है—

"कच्चायनञ्च मुनिवण्णितबुद्धिमस्स।
कच्चायनस्स मुखमत्तमहं करिस्सं" ॥

आगे यहीं पर यह व्यक्त किया गया है कि बुद्ध के प्रमुख शिष्य 'महाकच्चायन' ही इसके कर्त्ता थे[२]। इसके अतिरिक्त 'सुत्तनिद्देस', 'अङ्गुत्तरटीका' तथा 'कच्चायनवण्णना' के अनुसार इसके रचयिता 'महाकच्चायन' ही हैं[३]।

'कच्चान' अथवा 'कच्चायन' गोत्र-नाम है और यह 'कच्च' शब्द में 'णान' अथवा 'णायन' प्रत्यय लगाने से निष्पन्न होता है[४]। यह एक प्रसिद्ध गोत्र है और इस गोत्र-नाम के कई व्यक्तियों का उल्लेख पालि वाङ्मय में हुआ है, जिनमें महाकच्चायन, पकुधकच्चायन पुब्बकच्चायन, सम्बुलकच्चान तथा सभियकच्चान मुख्य हैं और इनमें परम्परा के अनुसार कच्चायन व्याकरण के रचयिता महाकच्चायन ही माने जाते हैं। ये बुद्ध के प्रमुख ८० शिष्यों में से एक थे और 'अङ्गुत्तरनिकाय' के 'एतदग्गसुत्त' में इनका विवरण आया है[५] तथा इसकी अट्ठकथा भी इनके सम्बन्ध में विवरण प्रस्तुत करती है। ये बुद्ध द्वारा संक्षिप्त रूप से कहे गये उपदेश का विस्तार करने में सर्वसमर्थ थे; अन्य शिष्यों के पास यह सामर्थ्य नहीं था[६]। इस प्रकार परम्परा इन्हें सिद्धान्तों के व्याख्याता तथा उत्तम

१. द्र०—सुभूति, "नाममाला", भूमिका, पृ० १२।

२. द्र०—"कत्ता नाम एतदग्गं, भिक्खवे, मम सावकानं भिक्खूनं सङ्खित्तेन भासितस्स वित्थारेन अत्थं विभजन्तानं, यदिदं महाकच्चायनो ति भगवता एतदग्गे ठपितो आयस्मा महाकच्चायनो"—क० न्या०, पृ० ६।

३. द्र०—सुभूति, "नाममाला", भूमिका, पृ० ११।

४. द्र०—"णायनणानवच्छादितो"—क० सु० ३४७।

५. द्र०—अ० नि०, भा० १, पृ० २४।

६. द्र०—"अञ्ञे फिर तथागतस्स सङ्खेपवचनं अत्थवसेन वा पूरेतुं सक्कोन्ति ब्यञ्जनवसेन वा, अयं पन थेरो उभयवसेना पि सक्कोति, तस्मा अग्गो ति"—अ० नि० अ०, भा० १, पृ० २०५।

वैयाकरण के रूप में स्वीकार करती है। इससे तथा नाम-साम्य से प्रभावित होकर लगता है कि इनको इस व्याकरण का कर्त्ता मान लिया गया।

इनके जीवन के सम्बन्ध में जो विवरण प्राप्त हैं, उनके अनुसार 'महाकच्चायन' का जन्म 'उज्जेनी' अथवा उज्जैनी में हुआ था तथा अवन्ती के सम्राट 'चण्डपज्जोत' (चण्डप्रद्योत) के ये मन्त्री-पुत्र थे। 'कच्चान' अथवा 'कच्चायन' उनका गोत्र-नाम था, अथवा यह नाम उनके स्वर्ण-वर्ण होने के कारण था। 'महावस्तु' के अनुसार वे 'असित' अथवा 'कालदेवल' के भतीजे थे और उनके निर्देशानुसार अपने साथियों के साथ वे बुद्धदर्शन के लिए गये और बुद्धोपदेश से प्रभावित हो भिक्षु होकर अपने साथियों के साथ अर्हत् पद की प्राप्ति की। इस घटना के पश्चात् वे अवन्ति देश में लौट आये और वहाँ 'कुररघरपपात' तथा 'मक्करकत' नामक स्थानों में उनके द्वारा विहार स्थापित किये गये। इस प्रकार से एक अवन्ति-सङ्घ स्थापित हुआ, जिसके भिक्षु तथा भिक्षुणियों की गाथाएँ 'थेर' तथा 'थेरीगाथा' में प्राप्त होती हैं। 'महाकच्चान' ने 'मधुपिण्डिक', 'कच्चायन' एवं 'परायण' सुत्तों का उपदेश भी किया था। इन सब योग्यताओं से प्रभावित होकर बाद में उन्हें इस व्याकरण का कर्त्ता मान लिया गया[१]।

जेम्स एलविस इस परम्परा को सत्य मानते हुए कहते हैं—"मेरा इस मत की ओर झुकाव है कि 'सन्धिकप्प' नामक व्याकरण (कच्चायन व्याकरण) को 'महाकच्चायन' ने छठी शताब्दी ई० पू० के उत्तरार्द्ध में लिखा था"[२]। इस सन्दर्भ में उनके द्वारा 'अङ्गुत्तरनिकाय' की अट्ठकथा की टीका का भी उल्लेख किया गया है— "महा-कच्चायनत्थेरो पुब्बपत्थनावसेन कच्चायनपकरणं महानिरुत्तिपकरणं नेत्तिपकरणं चा ति पकरणत्तयं सङ्घमज्झे पकासेसि"[३]। किन्तु विचारणीय है कि 'अङ्गुत्तरनिकाय' की अट्ठकथा में जहाँ 'महाकच्चायन' के बारे में विस्तृत विवरण आया है, उन्हें इस व्याकरण का रचयिता नहीं कहा गया है और इससे यह सिद्ध होता है कि यह बाद में जोड़ा गया है।

इसे 'महाकच्चायन' द्वारा रचित मानकर यह भी कहा गया है कि यद्यपि इसकी रचना बुद्ध के समय में ही हो गयी थी, किन्तु त्रिपिटक के समान यह भी बहुत समय तक मौखिक-परम्परया स्थित रहा और त्रिपिटक के साथ ही प्रथम शताब्दी में यह लिपिबद्ध हुआ[४]। मह मान्यता भी प्रचलित है कि आचार्य बुद्धघोष द्वारा यह ग्रन्थ

१. द्र०—G. P. Malalasekera, "Dictionary of Pali Proper Names", Vol. II, pp. 468–470; "Pali Literature of Ceylone", p. 181.

२. द्र०—"Introduction to Kaccāyana's Grammar", p. 72.

३. द्र०—वहीं, पृ० २२।

४. द्र०—Francis Mason, "Kachchayana's Pali Grammar", Introduction, p. 2.

बर्मा में ले जाया गया था और उन्होंने इसका बर्मी अनुवाद तथा बर्मी भाषा में एक टीका भी प्रस्तुत की थी[1]।

पर ये स्थापनाएँ सत्यता की कसौटी पर खरी नहीं उतरतीं। यदि बुद्ध के प्रधान शिष्य 'महाकच्चायन' द्वारा इसकी रचना हुई होती तो आचार्य बुद्धघोष आदि अट्ठकथाकार इसे अपनी अट्ठकथाओं में स्थान अवश्य देते। किन्तु अट्ठकथाओं में तो व्याकरण-सम्बन्धी दूसरे आश्रय ग्रहण किये गये हैं, जिन्हें पूर्व में दर्शाया जा चुका है[2]। इन तर्कों से बचने के लिए जेम्स एलविस ने यह स्थापित करने का प्रयत्न किया है कि सम्भवतः बुद्धघोष कच्चायन व्याकरण से परिचित नहीं थे, अथवा उनके समय तक यह प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं था, किन्तु यदि उनके समय में कोई ऐसी परम्परा प्रचलित रही होती तो 'अङ्गुत्तरनिकाय' की अट्ठकथा में 'महाकच्चायन' के सन्दर्भ में लिखते समय वे इसका उल्लेख अवश्य करते ; परन्तु ऐसा नहीं हुआ है। अतः जेम्स एलविस का उपर्युक्त तर्क सत्यता से परे ज्ञात होता है। यही खण्डन उनके द्वारा इसे बर्मा में ले जाने के सम्बन्ध में भी उपस्थित होता है और यह उल्लेख मात्र कपोलकल्पित प्रतीत होता है। प्रारम्भ में यह मौखिक-परम्परया स्थित रहा और बाद में इसे लिपिबद्ध किया गया, इस तर्क का भी अवकाश इस व्याकरण के सूत्र 'पुब्बमधोठितमस्सरं सरेन वियोजये' (सूत्र १०) में उल्लिखित प्रक्रिया द्वारा नहीं रह जाता, जो प्रारम्भ से ही इसे लिखितरूप में स्थित रहने की ओर इङ्गित करती है।

पूर्व में उल्लिखित 'अङ्गुत्तरटीका' के अनुसार 'नेत्तिपकरण' के रचयिता 'महाकच्चायन' माने जाते हैं। इस ग्रन्थ के सम्पादक एडमन्ड हार्डी ने इस सन्दर्भ में विस्तृत रूप से विचार करते हुए यह निष्कर्ष निकाला है कि 'महाकच्चायन' इसके रचयिता नहीं हैं। संक्षेप में उनके इस सम्बन्ध में विचार इस प्रकार हैं—'नेत्ति' के रचयिता को कालान्तर में विस्मृत कर दिया गया और उनके स्थान पर एक काल्पनिक नाम प्रतिष्ठित हो गया, अथवा उनका वास्तविक नाम ही 'कच्चायन' था और आगे चलकर बाद में इसे 'महाकच्चायन' कर दिया गया, जो तथागत के एक प्रधान शिष्य का नाम था। ये 'कच्चायन' वैयाकरण 'कच्चायन' से सर्वथा भिन्न हैं, जिन्हें भी 'महाकच्चायन' ही माना जाता है। उत्तरी बौद्ध परम्परा में भी एक 'कात्यायनीपुत्र' हुए, जिन्होंने 'ज्ञानप्रस्थान' नामक ग्रन्थ प्रस्तुत किया है और जिसका उल्लेख वसुबन्धु ने अपने 'अभिधर्मकोश' में किया है। युवान्-च्वाङ् ने भी 'कात्यायन' द्वारा रचित 'ज्ञानप्रस्थान' अथवा 'अभिधर्मज्ञानप्रस्थान' का उल्लेख किया है, और इस सम्बन्ध में यह भी कहा है कि इसकी रचना बुद्ध-निर्वाण के ३०० वर्ष बाद हुई। इस प्रकार से इस काल की स्थिति ईस्वी सदी के प्रारम्भ में ही हो जाती है। 'नेत्तिपकरण' के लेखक स्थविरवादी

१. द्र०—वहीं।

२. द्र०—पृ० २६-२८।

हैं, अतः ये 'ज्ञानप्रस्थान' के भी रचयिता नहीं हो सकते, क्योंकि वे तो सर्वास्तिवादी हैं। जेम्स एलविस ने भी 'ज्ञानप्रस्थान' के प्रणेता तथा पालि वैयाकरण 'कच्चायन' के एक होने का खण्डन किया है। इससे यही निष्कर्ष प्राप्त होता है कि 'महाकच्चायन' 'नेत्तिपकरण' के प्रणेता नहीं हैं[1]। यही उनके कच्चायन व्याकरण के रचयिता न होने को भी सिद्ध करता है।

आर० ओ० फ्रैन्क के अनुसार बुद्धघोष तथा धर्मपाल के पूर्व पालि व्याकरण का कोई सम्प्रदाय अवश्य ही विद्यमान रहा होगा। यह 'कच्चायन' से भिन्न सम्भवतः बोधिसत्त व्याकरण सम्प्रदाय पर आधारित था[2]। गायगर के अनुसार कच्चायन व्याकरण द्वारा पालि तथा संस्कृत के मध्य ऐतिहासिक सम्बन्ध को व्यक्त करने की चेष्टा नहीं की गयी है तथा इस व्याकरण के लेखक 'कच्चायन' तथा बुद्ध के प्रधान शिष्य 'महाकच्चायन' में कोई सम्बन्ध नहीं है। कच्चायन वार्तिककार कात्यायन तथा 'नेत्तिपकरण' एवं 'पेटकोपदेस' के रचयिता कच्चायन से भिन्न हैं और वे बुद्धघोष के बाद हुए होंगे, यतः उनकी अट्ठकथाओं में इनके उद्धरण विद्यमान नहीं है। विंडिश की भी यही मान्यता है[3]।

बुद्ध के प्रधान शिष्य 'महाकच्चायन' ने जिस अवन्ति-सम्प्रदाय की स्थापना की थी, वह अल्पसंख्यक होते हुए भी धार्मिक सिद्धान्तों तथा विनय-सम्बन्धी विवादों के निर्णय-प्रदान में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता था और यहाँ के भिक्षु वैशाली की द्वितीय सङ्गीति में विवादनिर्णय हेतु आमन्त्रित किये गये थे[4] तथा ये धुताङ्ग-नियमों के पालन पर विशेष बल देते थे। ऐसी सम्भावना है कि इस शाखा ने व्याकरण-क्षेत्र में भी विकास किया हो और यह भी सम्भव है कि इसके संस्थापक 'महाकच्चायन' ने भाषानियमन हेतु व्याकरण-सम्बन्धी कुछ सूत्रों की रचना भी की हो, जो बाद में अन्य शिष्यों—सङ्घनन्दि—आदि के द्वारा विकसित किया गया होगा और संस्थापक के प्रति गौरवबुद्धि प्रकट करने के लिए इस विकसित व्याकरण का नामकरण इस शाखा के संस्थापक 'महाकच्चायन' के नाम पर कर दिया गया होगा। भारत में यह परम्परा रही है कि शिष्य अपना सब कुछ गुरु-परम्परा के नाम पर न्योछावर कर देता है और लगता है कि इस नामकरण के सम्बन्ध में भी ऐसा ही हुआ होगा। इस दृष्टि से इसके सम्बन्ध में 'कच्चायनभेदटीका' के कथन पर विचार करने से भी यही निष्कर्ष प्राप्त होता है। इस टीका में सूत्र, वृत्ति तथा उदाहरण के तीन कर्त्ताओं को अलग-अलग बताकर बाद में

---

१. द्र०—E. Hardy, "Nettipakaraṇa," Introduction, pp. 32–34.

२. द्र०—"Geschichte und Kritik Dev Einheimischen Pali-Grammatik und Lexicographic", p. 2.

३. द्र०—"Pali Literature and Language," p. 37.

४. द्र०—"चुल्लवग्ग", पृ० ४२१।

सम्पूर्ण शास्त्र के कर्त्ता को 'कच्चायन' कह दिया गया है[१], जो उपरिवर्णित अनुमानात्मक विचार को पुष्ट करता है।

वार्तिककार कात्यायन के अतिरिक्त दूसरे कात्यायन 'सर्वानुक्रमसूत्र' आदि के रचयिता हैं। 'कात्यायन-संहिता' नामक धर्मशास्त्रीय ग्रन्थ के प्रणेता कात्यायन का भी उल्लेख प्राप्त होता है। विक्रमादित्य के नव रत्नों में से एक वररुचि को भी कात्यायन कहा जाता है। वार्तिककार कात्यायन द्वारा वर्णित कुछ संज्ञाएँ यद्यपि कच्चायन व्याकरण में प्राप्त होती हैं, पर उनके सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि दोनों का मूल स्रोत एक रहा हो, जैसा कि बर्नल ने इन दोनों को ऐन्द्र शाखा का प्रतिनिधि माना है और ऊपर वर्णित किया जा चुका है कि इस पालि व्याकरण के रचयिता बुद्धघोष से पूर्व के नहीं हो सकते। यही बात अन्य कात्यायनों के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है।

महामहोपाध्याय सतीशचन्द्र विद्याभूषण की धारणा है कि "जिन कात्यायन ने सर्ववर्मा के कातन्त्र व्याकरण में 'कृत' तथा 'उणादि' भाग का समावेश किया, वे ही इस प्रथम पालि व्याकरण के भी प्रणेता हैं"।[२] परन्तु प्रमाणों के अभाव में और प्राप्त स्थिति के भिन्न होने से इसे स्वीकृत करना दुस्साहस-मात्र होगा[३], क्योंकि 'कृत' तथा 'उणादि' भाग का ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण कातन्त्र व्याकरण का प्रभाव कच्चायन व्याकरण पर दृष्टिगोचर होता है।

कच्चायन का काल

जेम्स एलविस ने बुद्ध के प्रधान शिष्य 'महाकच्चायन' को इसका कर्त्ता मानते हुए कच्चायन का काल निर्धारण छठी शताब्दी ई० पू० किया है[४]। परन्तु पूर्व में इस स्थापना का विस्तार से खण्डन किया जा चुका है और यह आचार्य बुद्धघोष के पूर्व का कथमपि नहीं हो सकता, इसे प्रदर्शित किया जा चुका है।

कथासरित्सागर में आयी हुई वररुचि की कथा को लेकर कुछ विद्वानों द्वारा इनका समय प्रथम शताब्दी ई० पू० निश्चित किया गया है;[५] परन्तु पूर्व में व्यक्त तर्कों

---

१. द्र०—पृ० ३०।

२. द्र०—Kaccayana's Pali Grammar, Introduction, pp. 37–38.

३. डा० रामअवध पाण्डेय, रीडर, का० हि० वि० वि०, द्वारा ज्ञात हुआ है कि कातन्त्र का उणादि-प्रकरण दुर्गसिंह-विरचित है, कात्यायन-विरचित नहीं। इसे उन्होंने उणादि-सूत्रों पर लिखे गये अपने शोध-प्रबन्ध में दिग्दर्शित किया है।

४. द्र०—E. Hardy, "Nettipakaraṇa", Introduction, p. 17, fn. 1,

५. द्र०—S. C. Vidyabhusana, "Kaccayana's Pali Grammar", Introduction, p. 27.

द्वारा इस मत का भी खण्डन हो जाता है। विंडिश के अनुसार समस्त परिस्थितियों पर विचार करने से चतुर्थ शताब्दी के पश्चात् ही इनका काल निर्धारित होता है[१]।

कच्चायन व्याकरण पर लिखे गये 'न्यास' का काल बारहवीं शताब्दी से पूर्व अवश्य ही होना चाहिए, क्योंकि इसी शताब्दी के प्रारम्भ में बर्मी भिक्षु छपद ने इस पर 'न्यासप्रदीप' नामक टीका लिखी थी। अतः बुद्धघोष के पश्चात् तथा 'न्यास' की रचना के पूर्व मध्य-स्थित काल ही इसका रचना-काल ठहरता है। इस सन्दर्भ में गायगर का स्पष्ट मत है कि "इनके समय की अन्तिम सीमा इस तथ्य द्वारा भी निर्धारित होती है कि पाणिनि तथा सर्ववर्मन् के (कातन्त्र) व्याकरणों के अतिरिक्त सातवीं शताब्दी में पाणिनि-सूत्रों पर लिखी गयी प्रसिद्ध 'काशिका-वृत्ति' से भी इसमें सहायता ली गयी है"[२]। आर० ओ० फैन्क की भी यही धारणा है[३]।

महामहोपाध्याय सतीशचन्द्र विद्याभूषण द्वारा इस सन्दर्भ में यह अभिव्यक्त किया गया है कि 'परसमञ्ञा पयोगे' (९) सूत्र द्वारा कच्चायन ने संस्कृत व्याकरणों के पूर्व होने की स्थिति को स्वीकार कर लिया है तथा इसके 'कारककण्ड' के सूत्र 'यो करोति स कत्ता' (२८३) तथा 'नामकण्ड' के सूत्र 'किस्मा वो च' (२५३) में क्रमशः कच्चायन ने 'उपगुत्त' (उपगुप्त) तथा 'देवानम्पिय तिस्स' (देवानाम्प्रिय तिष्य) का नामोल्लेख किया है और ये दोनों अशोक के समकालीन थे। ये उदाहरण तथा चन्द्रकीर्ति की 'माध्यमिकवृत्ति' में उल्लिखित 'कात्यायनाववादसूत्र' हमें कात्यायन को तृतीय शताब्दी ई० पू० में होने के लिए इङ्गित करते हैं[४]।

किन्तु ये दोनों नाम सूत्र में न आकर वृत्ति में उदाहरणस्वरूप आये हैं, जिसे परम्परा के अनुसार ब्रह्मदत्त की रचना माना जाता है और इस काल को स्वीकार करने में वे ही सब विरुद्ध में जानेवाले तर्क उपस्थित हो जायेंगे, जिनका दिग्दर्शन पूर्व में किया जा चुका है।

उपर्युक्त सम्पूर्ण तथ्यों के आधार पर यही कहा जा सकता है कि यतः कच्चायन द्वारा व्यवहृत संज्ञाओं का प्रयोग ग्यारहवीं शताब्दी के पश्चात् लिखे गये टीका ग्रन्थों में हुआ है, अतः इस ग्रन्थ की प्रतिष्ठा बुद्धघोष के पश्चात् और इस काल के मध्य कभी हुई। थेरवाद के अध्ययन हेतु दक्षिण भारत के लोग जब अधिक संख्या में बुद्धघोष के काल के पश्चात् सिंहल गये, तभी कच्चायन व्याकरण तथा 'नेत्तिपकरण' आदि का प्रचार वहाँ हुआ होगा और सम्प्रति यह सिद्धान्त सर्वमान्य है कि इसका प्रचलन लगभग सातवीं ईसवीय शताब्दी में सिंहल में हुआ[५]।

१. द्र०—Gieger, "Pali Literature and Language", p. 37, fn. 1.

२. द्र०—वहीं।

३. द्र०—वहीं।

४. द्र०—Kaccayana's Pali Grammar", Introduction p. 28.

५. द्र०—G. P. Malalasekera, "Pali Literature of Ceylone" .p. 184.

कच्चायन व्याकरण का वर्गीकरण

इस व्याकरण को मुख्य रूप से चार 'कप्पों' (कल्पों) और २३ परिच्छेदों में विभाजित किया गया है। 'कप्प' ४ ये हैं—(१) सन्धिकप्प, (२) नामकप्प (३) आख्यातकप्प (४) किब्बिधानकप्प। सञ्ञाविधान 'सन्धिकप्प' के ही अन्तर्गत है तथा 'नामकप्प' का विभाजन कई कण्डों में है और इसी के अन्तर्गत कारक, समास तथा तद्धितकप्प रखे गये हैं। 'उणादिकप्प' के स्वतन्त्र होते हुए भी इसे 'किब्बिधानकप्प' के ही अन्तर्गत रखा गया है। इसका वर्गीकरण 'न्यास' मैं पूर्णतया वर्णित है[1]।

'रूपसिद्धि' कच्चायन के सूत्रों पर प्रक्रियानुसार लिखा गया ग्रन्थ है। इसमें इसके सात काण्डों की चर्चा है—

"सन्धि नामं कारकञ्च समासो तद्धितं तथा।
आख्यातं कितकं कण्डा सत्तिमे रूपसिद्धियं[2] ॥

कच्चायन व्याकरण की सूत्र-संख्या

सम्प्रति प्राप्त इस व्याकरण के समस्त प्रामाणिक संस्करणों में इसकी सूत्र-संख्या ६७५ है। किन्तु 'न्यास' में यह सूत्र-संख्या ७१० बतायी गयी है[3]। वहाँ पर सूत्र २४४ तथा २४५ को २४३ (क) तथा २४३ (ख) करके रखा गया है। सूत्र २४५ के सम्बन्ध में 'न्यास' में कहा गया है—"अनन्तरसुत्ते तुग्गहणेन सिज्झनतो निरत्थको चेसो, न चेसो पुरिमपाठो"[4]। इसी प्रकार 'न्यास' में सूत्र संख्या २८५ एवं ३०० के बाद वार्तिकों के रूप में एक-एक और उपसूत्र दे दिए गए हैं। वहाँ पर सूत्र-संख्या ३१५ के पश्चात् २९ अतिरिक्त सूत्र भी वार्तिकरूपेण विद्यमान हैं और सूत्र-संख्या ३१८ के पश्चात् भी ऐसा ही एक सूत्र दिया गया है। परन्तु वहाँ पर इन सभी वार्तिकों की स्वतन्त्र गणना न करके इन्हें तत्सम्बन्धी सूत्रों के साथ रखा गया है। यदि इन सभी को स्वतन्त्र सूत्र मान भी लिया जाय तब भी यह संख्या ७१० नहीं हो पाती है। ऐसा प्रतीत होता है कि 'न्यास' में यह गणना सूत्रों का योगविभाग करके ही प्रस्तुत की गई है।

---

१. द्र०—"तत्थ परिच्छेदपमाणवसेन तेवीसति परिच्छेदा—तथा हि पञ्च सन्धिपरिच्छेदा, अट्ठ नामपरिच्छेदा, चत्तारो आख्यातपरिच्छेदा, छ कितब्बिधानपरिच्छेदा ति एतानिं येव चत्तारि पकरणानी ति वुच्चन्ति। पञ्च सन्धिपरिच्छेदा सन्धिप्पकरणं, अट्ठ नामपरिच्छेदा नामप्पकरणं, चत्तारो आख्यातपरिच्छेदा आख्यातप्पकरणं, छ कितब्बिधानपरिच्छेदा कितब्बिधानप्पकरणं ति"—क० न्या०, पृ० ६।

२. रूप०, अन्त में।

३. द्र०—"सुत्तानि पन दसाधिकानि सत्त सत्तानि होन्ति"—क० न्या०, पृ० ६।

४. द्र०—क० न्या०, सु० २४५।

'कारिकापालि' में इन सूत्रों की संख्या ६७२ बतायी गई है[१]। इन सबसे स्पष्ट होता है कि 'न्यास' के समय से लेकर ही इस व्याकरण की सूत्र-संख्या पर विवाद रहा है। १६वीं शताब्दी में बर्मा में लिखी गयी टीका 'कच्चायनवण्णना' में, जो मूल सूत्र, वृत्ति के साथ प्रस्तुत इस ग्रन्थ में प्रकाशित है, यह सूत्र-संख्या ६७५ ही है और यही हमारे द्वारा स्वीकार की गई है। आधुनिक विद्वानों ने भी सूत्र-संख्या के सम्बन्ध में प्रचलित मत-वैभिन्य की ओर इङ्गित किया है[२]।

कच्चायन, पाणिनि, कातन्त्र एवं ऐन्द्र व्याकरण

कच्चायन व्याकरण में कुछ पाणिनि-सूत्रों को अपना लिया गया है। इनमें से अधिकतर सूत्र कारक तथा समास से सम्बन्धित हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ के सम्पादन में तत्तत् सूत्रों की पाणिनि के सूत्रों से तुलना की गयी है, जो स्थल-स्थल पर द्रष्टव्य है। इस दृष्टि से उदाहरणार्थ समान-सूत्र हैं—२७६, २९३, २९५, २९७, २९९, ३००, ३०१, ३२३ आदि। अन्य सूत्रों की भी यथासम्भव तुलना प्रस्तुत की गई है। जब यह ग्रन्थ अपने दोनों खण्डों में प्रकाशित हो जायेगा, तो अन्त में पाणिनि से सूत्र-तुलना सम्बन्धी अनुक्रमणिका भी प्रस्तुत कर दी जायेगी। इस आधार पर जेम्स एलविस ने इसे पाणिनि पर आधारित करने का प्रयत्न किया है[३]। किन्तु बहुसंख्यक विद्वानों की धारणा है कि कच्चायन व्याकरण कातन्त्र पर आधारित है और पाणिनि से साम्य के सम्बन्ध में उनका मत है कि ये या तो बाद में संशोधन-स्वरूप जोड़े गये होंगे, अथवा इन दोनों का कोई मूल स्रोत रहा होगा।[४] रचना-विधान की दृष्टि से कच्चायन व्याकरण पाणिनि की अपेक्षा कातन्त्र पर आधारित प्रतीत होता है।

जो विद्वान् इस व्याकरण को कातन्त्र से प्रभावित मानते हैं, उनमें वेबर[५], मेक-

---

१. द्र०—"सन्धिम्हि एकपञ्ञासं नामम्हि द्विसतं भवे।
अट्ठारसाधिकञ्चेव कारके पञ्चतालीसं॥
समासे अट्ठवीसञ्च द्वासट्ठि तद्धिते मतं।
अट्ठारससताख्याते किते सुत्तसतं भवे॥
उणादिम्हि च पञ्ञासं सुत्तमेतं पकासितं।
कच्चायनेन थेरेन तिलोकतिलकेतुना॥"—का० ५०-५२।

२. द्र०—गुणरत्नथेर, "कच्चायन व्याकरण", भूमिका।

३. द्र०—"Introduction to Kaccayana's Grammar", p. 11.

४. द्र०—A. C. Burnel, "On the Aindra School of Sanskrit Grammarians", p. 61.

५. द्र०—A Weber, "The History of Indian Literature", p. 227, fn. 239.

डानेल[1], तथा बर्नेल[2] आदि प्रमुख हैं। गहराई से देखने पर कच्चायन तथा कातन्त्र में अधिक साम्य प्राप्त होता है। प्रकरणों का विभाग दोनों में एक समान ही प्राप्त होता है, साथ ही कच्चायन के अधिक सूत्रों का साम्य पाणिनि की अपेक्षा कातन्त्र से है और इसे प्रस्तुत ग्रन्थ के सम्पादन में पाद-टिप्पणियों में प्रदर्शित करते हुए कातन्त्र के तत्सम्बन्धी सूत्र को दे दिया गया है। उदाहरण हेतु इनमें से कुछ द्रष्टव्य हैं—सूत्र ७, १०, ११, ३१, ५४, ५७, १३३, १६५, १६६, १६७ आदि। प्रस्तुत ग्रन्थ के द्वितीय खण्ड में सम्पूर्ण ग्रन्थ की अनुक्रमणिका प्रस्तुत करते हुए विस्तार से इनकी भी अनुक्रमणिका दी जायेगी। सूत्रों के अतिरिक्त इसकी वृत्ति का भी कातन्त्र से साम्य है और इसे भी पाद-टिप्पणी में प्रदर्शित किया गया है। ये सब यही सिद्ध करते हैं कि पाणिनि की अपेक्षा कातन्त्र से इसका अधिक साम्य है।

इस साम्य का अध्ययन करके बर्नेल ने यह स्थापना की है कि ये दोनों प्राचीन ऐन्द्र व्याकरण पर आधारित हैं। बर्नेल के अनुसार ऐन्द्र व्याकरण प्राचीनतम व्याकरण था, पाणिनि इससे परिचित थे तथा इसकी परम्परा प्रातिशाख्यों, कातन्त्र तथा इसी प्रकार की अन्य कृतियों में प्राप्त है, यद्यपि इनमें परिवर्तन तथा संशोधन भी हुआ है। प्रमाणस्वरूप उन्होंने कथासरित्सागर, बृहत्कथामञ्जरी, युवान-च्वाङ्, अवदानशतक, बुस्तोन तथा तारनाथ आदि के इतिहासों का उल्लेख किया है। तारनाथ के अनुसार कलाप व्याकरण (कातन्त्र) का ऐन्द्र से साम्य है तथा षण्णमुख कार्तिकेय ने सप्तवर्मन् नामक ब्राह्मण को ऐन्द्र व्याकरण का व्याख्यान देते हुए 'सिद्धो वर्णसमाम्नायः' इस सूत्र का प्रारम्भ किया था। बर्नेल ने यह भी प्रदर्शित करने का प्रयास किया है कि 'प्राञ्चः' नाम से पाणिनि द्वारा यही सम्प्रदाय उल्लिखित है[3]।

यद्यपि ऐन्द्र व्याकरण की कोई प्रति अभी तक प्राप्त नहीं हुई है, तथापि प्राचीन तमिल व्याकरण 'तोलकाप्पियम्' के तुलनात्मक अध्ययन से बर्नेल को ऐन्द्र व्याकरण-सम्बन्धी समस्या का कुछ हल प्राप्त हो गया। इस व्याकरण के प्रारम्भ में ही उल्लेख है—"ऐन्दिर-निरैन्द-तोलकाप्पियम्"—अर्थात् ऐन्द्र व्याकरण से ओतप्रोत तोलकाप्पियम्। इसका लेखक सम्भवतः बौद्ध अथवा जैन था[4]।

कातन्त्र, कच्चायन तथा प्रातिशाख्यों से 'तोलकाप्पियम्' की तुलना करके बर्नेल इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि इन सभी के प्रकरण-विभाग समान तथा स्वाभाविक हैं

---

१. द्र०—A. Mackdonel, Article "Sanskrit Literature" in the "Imperial Gazetteer of India" (The Indian Empire), Vol. II, p. 251.

२. द्र०—"On the Aindra School of Sanskrit Grammarians". p. 62.

३. द्र०—वहीं, पृ० १–६।

४. वहीं, पृ० ८।

तथा ये पाणिनि के कृत्रिम विभाग से पूर्णतया भिन्न हैं। इस सन्दर्भ में उनके द्वारा प्रस्तुत तुलनापरक चार्ट द्रष्टव्य है। कातन्त्र, कच्चायन तथा तोलकाप्पियम् में प्रयुक्त संज्ञाओं में पाणिनि से अधिक साम्य विद्यमान है। साथ ही शब्दों का प्रायः समान वर्गीकरण भी यास्क के निरुक्त, प्रातिशाख्य तथा कातन्त्र एवं कच्चायन में प्राप्त होता है[1]। बर्नेल के अनुसार ऐन्द्र व्याकरण से सम्बन्धित रचनायें हैं—विभिन्न शिक्षा-ग्रन्थ, प्रातिशाख्य, यास्क का निरुक्त, शान्तनव के फिट्सूत्र, व्याडि का जटापटल, कातन्त्र अथवा कलाप व्याकरण तथा इस पर लिखी गई वृत्तियाँ, कच्चायन व्याकरण तथा इस सम्प्रदाय के अर्वाचीन ग्रन्थ, तमिल का तोलकाप्पियम्, कन्नड़भाषा के व्याकरण, संस्कृत से तिब्बती भाषा में अनूदित और 'तञ्जूर' नामक संग्रह में विद्यमान व्याकरण तथा बर्मी भाषा के व्याकरण आदि[2]।

बर्नेल की स्थापना में केवल यही न्यूनता प्रदर्शित की जा सकती है कि प्राप्त आधारों में केवल कल्पना का पुट देकर ही उन्होंने अपनी स्थापना करने की चेष्टा की है। यतः ऐन्द्र व्याकरण की कोई प्रति प्राप्त नहीं है, यह कहना कठिन है कि जिन उपर्युक्त व्याकरण से सम्बन्धित रचनाओं में साम्य का अन्वेषण करके उन्हें ऐन्द्र सम्प्रदाय से विकसित होना उन्होंने प्रदर्शित किया है, वे सभी ऐन्द्र के ही कारण हैं, क्योंकि पाणिनि से पूर्व ऐन्द्र के अतिरिक्त अन्य व्याकरण सम्प्रदाय भी स्थित थे, जिनका पाणिनि के द्वारा उल्लेख प्राप्त है, और जो अधुना प्राप्त नहीं हैं। इनका भी तो प्रभाव हो सकता है, ऐसी कल्पना की जा सकती है। कीलहार्न के अनुसार तो ऐन्द्र सम्प्रदाय पाणिनि के बाद का है, यद्यपि इसमें प्राक्पाणिनीय तत्त्व समाविष्ट हैं[3]।

भट्टारक हरिश्चन्द्र की 'चरकव्याख्या' तथा दुर्गाचार्य की 'निरुक्तिवृत्ति' में ऐन्द्र व्याकरण के नाम से उद्धृत होनेवाले 'अथ वर्णसमूहः' तथा 'अर्थः पदम्' इन दो सूत्रों का सन्दर्भ देते हुए कि यतः ये दोनों कातन्त्र व्याकरण में उपलब्ध नहीं होते, अतः 'कातन्त्र ही प्राचीन ऐन्द्र तन्त्र है', इसका खण्डन युधिष्ठिर मीमांसक ने प्रस्तुत किया है।[4] परन्तु बर्नेल ने यह व्यक्त नहीं किया है कि कातन्त्र में जो कुछ प्राप्त है, वही ऐन्द्र तन्त्र है। उनकी तो यह स्थापना है कि कातन्त्र भी ऐन्द्र सम्प्रदाय का ही प्रतीत होता है। अतः मीमांसक का खण्डन इस सन्दर्भ में अधिक युक्तियुक्त नहीं प्रतीत होता।

कच्चायन व्याकरण सम्प्रदाय के अन्य ग्रन्थ

इस सम्प्रदाय को आधार बनाकर कालान्तर में बहुत से ग्रन्थों की रचना हुई। उनमें से 'कच्चायनवण्णना', जो प्रस्तुत इस ग्रन्थ में समाविष्ट है और जिसका

१. वहीं, पृ० ९-१२।
२. वहीं, पृ० ४५-६५।
३. द्र०—S. K. Belvalkar, "Systems of Sanskrit Grammar", p. 11.
४. द्र०—"संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास", भा० १, पृ० ६०-६३।

विवरण अलग से प्रस्तुत किया जायेगा, को छोड़कर शेष मुख्य ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है :—

(१) कच्चायन न्यास अथवा मुखमत्तदीपनी—आचार्य विमलबुद्धि द्वारा 'कच्चायनयोग' (कच्चायन के सूत्रों) पर यह न्यास लिखा गया है। न्यास व्याख्या की एक पद्धति है। इसके अनुसार मूल ग्रन्थ के सिद्धान्तों के स्थापना की अधिक चेष्टा व्याख्या में की जाती है। यह कच्चायन की शास्त्रीय व्याख्या है और इसके सूत्रों के सम्बन्ध में अनेक प्रकार के पूर्वपक्षों की उद्भावना करके आचार्य ने उनका परिहार प्रस्तुत किया है। इसकी भाषा तथा शैली भी प्रौढ़ है। प्रस्तुत इस ग्रन्थ में 'कच्चायन-वण्णना' में आये हुए स्थलों को अधिक स्पष्ट करने के लिए स्थान-स्थान पर न्यास से टिप्पणियाँ दी गयी हैं।

कुछ विद्वानों के अनुसार इसके लेखक सिंहल निवासी थे और कुछ के अनुसार बर्मा के 'पगन' के[1]। बारहवीं शताब्दी के अन्तिम भाग में बर्मा के आचार्य 'सद्धम्म-जोतिपाल' अथवा 'छपद' ने न्यास पर 'न्यास-प्रदीप' नामक टीका लिखी थी और इसी के आधार पर इनका काल कच्चायन के पश्चात् तथा ग्यारहवीं शताब्दी के मध्य निश्चित किया जाता है। कालान्तर में बर्मा के भिक्षु 'दाठानाग' ने सत्रहवीं शताब्दी के मध्य में 'निरुत्तिसारमञ्जूसा' नामक इस पर अपनी टीका लिखी थी[2]।

(२) सुत्तनिद्देस—इस ग्रन्थ के रचयिता बर्मा के आचार्य छपद हैं। यह भी कच्चायन-सूत्रों की व्याख्या है और इसमें कहीं-कहीं विस्तृत शास्त्रार्थ भी विद्यमान हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ में 'कच्चायनवण्णना' के मन्तव्यों को स्पष्ट करने के लिए इससे भी टिप्पणियाँ प्रस्तुत की गयीं हैं, जो इसके महत्त्व को प्रतिपादित करती हैं और इस सन्दर्भ में द्रष्टव्य हैं। इसका रचना-काल ११८१ ई० निश्चित किया गया है[3]।

(३) सम्बन्धचिन्ता—पालि के शब्दयोजना अथवा पदयोजना सम्बन्ध को यह ग्रन्थ व्यक्त करता है तथा इसके प्रणेता स्थविर 'सङ्घरक्खित' हैं। इनका भी समय उपर्युक्त 'सुत्तनिद्देस' के ही समान है। क्रिया-कारक-योग का व्याख्यान इसमें प्रस्तुत किया गया है। यह ग्रन्थ गद्य-पद्य-मय है।

(४) कारिका—इसके प्रणेता 'धम्मसेनापति' हैं और बर्मा के राजा 'अनोरत्त' के पुत्र के राज्यकाल में इन्होंने इस ग्रन्थ का प्रणयन किया था। इस राजा के राज्य-काल में पालि के अध्ययन की दिशा में प्रगति हुई थी। 'धम्मसेनापति' ने इस पर एक टीका भी प्रस्तुत की थी। कच्चायन व्याकरण पर आधारित इस ग्रन्थ में इसके विभिन्न काण्डों के सन्दर्भ में ५६८ कारिकाएँ हैं, जो उनके विषयवस्तु को स्पष्ट करती

---

१. द्र०—M. H. Bode, "Pali Literature of Burma", p. 21.

२. द्र०—Gieger "Pali Literature and Language", p. 38.

३. द्र०—सुभूति, "नाममाला", भूमिका, पृ० १५।

हैं। ग्रन्थ के प्रारम्भ में शब्दविनिश्चय, शब्दानुशासनविनिश्चय, कारिकाविनिश्चय, सूत्रसंख्या विनिश्चय आदि दिये गये हैं, जिनके द्वारा सम्बन्धित विषयों का व्याख्यान उपस्थापित किया गया है। कच्चायन के 'आख्यातकण्ड' में विद्यमान 'आख्यात-सागरमथज्जतनीतरङ्ग.....' यह गाथा आख्यात के व्याख्यान के अन्त में यहाँ भी है।

(५) सद्दत्थभेदचिन्ता—यह भी कारिकाओं में प्रस्तुत किया गया ग्रन्थ है। इसके रचयिता बर्मा के स्थविर 'सद्धम्मसिरि' हैं और इसका रचना-काल बारहवीं शताब्दी का अन्तिम भाग है। इसमें शब्द, अर्थ तथा शब्दार्थ चिन्ताओं का व्याख्यान किया गया है।

(६) रूपसिद्धि—इस ग्रन्थ के रचयिता 'बुद्धप्पिय दीपङ्कर' हैं और इनका समय तेरहवीं शताब्दी का अन्तिम भाग है। ये भारत के 'चोळ' प्रदेश के निवासी थे, अतः 'चोळिय दीपङ्कर' के नाम से भी ये प्रसिद्ध हैं। इनके गुरु सिंहल द्वीप के 'आनन्द-वनरतन थेर' थे और उन्हीं से इन्होंने बौद्ध शास्त्रों का अध्ययन किया था, यह इस ग्रन्थ के निगमन अंश से स्पष्ट है। ये वनवासी सम्प्रदाय के थे तथा इन्होंने 'पियदस्सी' के 'पदसाधन' नामक ग्रन्थ का सिंहली भाषा में अनुवाद भी किया था। रूपसिद्धि के अतिरिक्त प्रसिद्ध पद्य-ग्रन्थ 'पज्जमधु' के भी यही प्रणेता कहे जाते हैं। इस ग्रन्थ को 'पदरूपसिद्धि' अथवा विशेष महत्त्व प्रदान करते हुए 'महारूपसिद्धि' भी कहा जाता है। इस पर एक टीका भी प्राप्त है, जिसके लेखक यही बताये जाते हैं।

भाषा तथा शैली की दृष्टि से 'रूपसिद्धि' ग्रन्थ अति गम्भीर, विस्तृत तथा प्रौढ़ है और इसमें कच्चायन के सूत्रों को प्रक्रियानुसार भिन्न क्रम में रखा गया है। इसमें सात काण्ड हैं। इसके लेखक के समय में पालि व्याकरण शास्त्र जिस प्रौढ़ता को प्राप्त हो चुका था, उसे इसमें समाविष्ट किया गया है और कच्चायन व्याकरण के सूक्ष्मतर अध्ययन में यह ग्रन्थ दिशा प्रदान करता है। प्रस्तुत ग्रन्थ में 'कच्चायनवण्णना' की विषय-वस्तु को स्पष्ट करने हेतु इससे उद्धरण दिये गये हैं; साथ ही इसमें आये हुए इसके सन्दर्भों की ओर भी संकेत किया गया है, जो स्थान-स्थान पर द्रष्टव्य है। इसके सूत्रक्रम के भिन्न होने के कारण अगले द्वितीय खण्ड में कच्चायन के साथ इसकी अलग से अनुक्रमणिका देने का विचार है।

(७) बालावतार—सात अध्यायों से युक्त प्रारम्भिक छात्रों की दृष्टि से 'धम्मकित्ति थेर' द्वारा रचित यह ग्रन्थ कच्चायन व्याकरण को संक्षिप्त करते हुए लिखा गया है। इसका रचना-काल चौदहवीं शताब्दी है। पाणिनीय परम्परा के 'लघुसिद्धान्तकौमुदी' की ही भाँति कच्चायन परम्परा में इसका स्थान है।

(८) सद्दसारत्थजालिनी—यह व्याकारण-शास्त्र का प्रौढ़ ग्रन्थ है तथा इसमें ५१६ कारिकाएँ है। इसके रचयिता 'भदन्त नागित थेर' हैं तथा इसका रचना-काल

चौदहवीं शताब्दी है। इसमें व्याकरण के विषयों—'युत्तसिलेस', 'अयुत्तसिलेस', 'दब्बविच्छावचन', 'गुणविच्छावचन' आदि का व्याख्यान करके क्रमशः 'सद्द', 'अत्थ', 'सन्धि', 'नाम', 'कारक', 'समास', 'तद्धित', 'आख्यात' तथा 'कित' आदि का व्याख्यान है। स्थान-स्थान पर इसमें व्याकरण-शास्त्र की संज्ञाओं की भी व्याख्या प्रस्तुत है। इस पर 'सारमञ्जूसा' नामक एक टीका भी लिखी गयी है। 'कच्चायन-वण्णना' के प्रस्तुत सम्पादन में इससे भी उद्धरण दिये गये हैं।

(९) कच्चायनभेद—कच्चायन व्याकरण को आधार बनाकर यह ग्रन्थ १७८ कारिकाओं में प्रस्तुत हुआ है तथा इसके प्रणेता 'थाटोन' (बर्मा) के 'महायस' हैं। इसका भी रचना-काल चौदहवीं शताब्दी ही है। इस पर 'सारत्थविकासिनी' तथा 'कच्चायनभेद-महाटीका' नामक दो टीकाएँ लिखी गयी हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ के सम्पादन में विषय स्पष्टीकरण हेतु इससे भी उद्धरण दिये गये हैं।

(१०) कच्चायनसार—७२ कारिकाओं में यह ग्रन्थ भी 'महायस' द्वारा ही विरचित है। इसमें क्रमशः सामान्य, आख्यात, कृत, कारक, समास तथा तद्धितनिर्देश आदि वर्णित हैं। 'गन्धवंस' में इसके लेखक का नाम 'भिक्खु धम्मानन्द' बताया गया है[1] तथा इसमें 'बालावतार', रूपसिद्धि', 'चूलनिरुत्ति' तथा 'सम्बन्धचिन्ता' आदि ग्रन्थों के उद्धरण विद्यमान हैं[2]। ऐसी प्रसिद्धि है कि स्वयं 'महायस' ने इस पर एक टीका भी की थी और गायगर के मतानुसार यह सम्प्रति उपलब्ध 'कच्चायनसार-पोराण-टीका' है[3]। 'सम्मोहविनासिनी' नामक दूसरी टीका इस पर 'भिक्खु सद्धम्मविलास' द्वारा लिखी गयी है। प्रस्तुत ग्रन्थ में इसके भी उद्धरण दिये गये हैं।

(११) सद्दबिन्दु—बर्मा के राजा 'क्यच्च्वा' ने कच्चायन व्याकरण को आधार बनाकर २० कारिकाओं में इसे प्रस्तुत किया है। इस प्रकार इसका रचना-काल पन्द्रहवीं शताब्दी का मध्य भाग होता है। इसमें क्रमशः सन्धि, नाम, कारक, समास, तद्धित, आख्यात तथा कृतक का व्याख्यान प्रस्तुत है।

(१२) वाचकोपदेस—'कच्चायनवण्णना' के रचयिता 'महाविजितावी थेर' ने इसकी भी रचना की है और इन पर आगे 'कच्चायनवण्णना' के विवरण के प्रसङ्ग में प्रकाश डाला जायेगा। इसमें वाचक को दस प्रकार का बताकर क्रमशः उनका व्याख्यान किया गया है। यह ग्रन्थ गद्य-पद्य-मिश्रित है।

(१३) अभिनवचूळनिरुत्ति—कच्चायन सूत्रों के अपवादों की व्याख्या प्रस्तुत करनेवाले इस ग्रन्थ के प्रणेता 'सिरिसद्धम्मालङ्कार' हैं।

---

१. द्र०—गन्धवंस, ७४।

२. द्र०—M. H. Bode, "Pali Literature of Burma", p. 37.

३. द्र०—Gieger, "Pali Language and Literature, p. 52.

(१४) धातुमञ्जूसा—यह धातुओं का पद्य-बद्ध-संग्रह है और इसकी प्रस्तुति 'सीलवंस' के द्वारा हुई है। इस पर बोपदेव के 'कविकल्पद्रुम' तथा पाणिनीय धातुपाठ का पर्याप्त प्रभाव परिलक्षित होता है। यह धातु-संग्रह कच्चायन-व्याकरणानुसार है।

मोग्गल्लान तथा सद्दनीति व्याकरण सम्प्रदाय

मोग्गल्लान सम्प्रदाय

कच्चायन सम्प्रदाय के सदृश ही यह भी विकसित, प्रौढ़ एवं महत्त्वपूर्ण सम्प्रदाय है और इसके रचयिता 'मोग्गल्लान' अथवा 'मोग्गलायन' कहे जाते हैं। 'मोग्गल्लान' ने अपने इस व्याकरण में ८१७ सूत्र रखे हैं और इन सूत्रों पर इनकी अपनी वृत्ति तथा इस पर अपनी 'पञ्चिका' है। व्याकरण के ऐसे सम्प्रदाय अत्यल्प हैं, जिनमें सूत्र, वृत्ति तथा 'पञ्चिका' आदि सभी आदि-आचार्य द्वारा ही विरचित हों और इस दृष्टि से इसका अपना विशेष महत्त्व है। इनकी इस 'पञ्चिका' का नामकरण 'मोग्गल्लानवुत्ति-विवरण-पञ्चिका' है। इसके अन्त में निगमन-अंश में अपना परिचय इन्होंने स्वयं दिया है—

''परक्कमभुजे तस्मिं सद्धाबुद्धिगुणोदिते।
मनुवंसद्धजाकारे लङ्कादीपं य सासति॥
मोग्गल्लानेन थेरेन धीमता सुचिवुत्तिना।
रचितं यं सुविञ्जेय्यमसन्दिद्धमनाकुलं॥
असेसविसयव्यापि जिनव्यप्पथनिस्सयं।
सद्दसत्थमनायासा धियं बुद्धिविवद्धनं॥''....

इससे प्रकट है कि इसकी रचना राजा 'परक्कमभुज' के शासन-काल में हुई थी और यह काल ११५३-११८६ ई० का है। इनका निवास-स्थान 'अनुराधपुर' का 'थूपाराम' नामक विहार था। मोग्गल्लान ने अपनी इस कृति में पाणिनि तथा कातन्त्र के अतिरिक्त चन्द्रगोमिन् से भी पर्याप्त सहायता ली है और महाभाष्यकार के वाक्यों का पालि रूपान्तर स्थित विषय को स्पष्ट करने के लिए दिया है[1]। इससे इनकी 'पञ्चिका' में पर्याप्त प्रौढ़ता विद्यमान है, जिसकी ओर पूर्व में (पालि व्याकरण पर) संस्कृत व्याकरण के प्रभाव शीर्षक में इङ्गित किया जा चुका है[2]। सूत्रों के साथ ही इसमें धातुपाठ, गणपाठ, 'ण्वादिवुत्ति' आदि भी सङ्कलित हैं, जिससे इसमें पूर्णता का समावेश है। प्रस्तुत ग्रन्थ के सम्पादन में इससे भी टिप्पणियाँ दी गयी हैं।

अन्य ग्रन्थ

इस सम्प्रदाय के विशिष्ट अन्य ग्रन्थ निम्नाङ्कित हैं :—

(१) पदसाधन—यह 'बालावतार' की भाँति मोग्गल्लान व्याकरण का संक्षेप

१. द्र०—सूत्र—''स्यादिस्यादिनेकत्थं''—३.१. पर 'पञ्चिका'।

२. द्र०—पृ० २५।

है और इसके रचयिता मोग्गल्लान के शिष्य 'पियदस्सी थेर' हैं। इस पर अनेक टीकाएँ लिखी गयीं हैं।

(२) पयोगसिद्धि—यह ग्रन्थ प्रक्रियानुसार 'रूपसिद्धि' की ही भाँति मोग्गल्लान व्याकरण पर प्रस्तुत किया गया है और इसमें प्रक्रिया के सन्दर्भ में सूत्र भिन्न क्रम में दिये गये हैं। इसका रचना-काल तेरहवीं शताब्दी के लगभग माना जाता है।

(३) मोग्गल्लानपञ्चिकाप्रदीप—'मोग्गल्लान-वुत्ति-विवरण-पञ्चिका' की सिंहली भाषा में प्रस्तुत की गयी यह एक अत्यन्त प्रौढ़ तथा पाण्डित्यपूर्ण व्याख्या है और इसके प्रणेता सिंहल के प्रसिद्ध महास्थविर 'राहुल वाचिस्सर' हैं। जब तक 'पञ्चिका' नहीं प्राप्त थी, तब तक मोग्गल्लान व्याकरण की व्याख्या का साधन-स्वरूप मात्र यही ग्रन्थ था। सम्प्रति 'पञ्चिका' प्राप्त होकर प्रकाशित है और उसके व्याख्या-कार्य में इसका अपना विशेष महत्त्व है। राहुल 'षड्भाषापरमेश्वर' की उपाधि से विभूषित थे और 'वाचिस्सर' अथवा वागीश्वर की उपाधि उनके भाषाज्ञान के पाण्डित्य को ही प्रकाशित करती है। इस ग्रन्थ में अनेक व्याकरणों से उद्धरण उद्धृत हैं तथा इसका रचना काल १४५७ ई० है।

(४) धातुपाठ—कच्चायन सम्प्रदाय की 'धातुमञ्जूसा' की अपेक्षा यह संक्षिप्त तथा गद्य में है। इसके रचयिता का नाम अभी तक अज्ञात है।

सद्दनीति

यह पालि व्याकरण के तृतीय सम्प्रदाय का प्रमुख ग्रन्थ है। इसकी रचना बर्मा के 'अरिमद्दन' नगर निवासी[1] भिक्षु 'अग्गवंस' द्वारा ११५४ ई० में हुई थी। 'अग्गवंस' बर्मा के राजा 'नरपति सिथु' के गुरु थे। ये राजा बहुत शक्तिशाली सम्राट् थे और इनका शासन-काल 'पगन' (बर्मा) राज्य के इतिहास में गौरवशाली वैभव का प्रतीक है। 'गन्धवंस' के अनुसार 'अग्गवंस' 'जम्बुदीप' के निवासी थे, और बर्मी लोग 'जम्बुद्वीप' से बर्मा का भी अर्थ ले लेते हैं[2]। विपुल पाण्डित्य के कारण इन्हें 'अग्गपण्डित' की उपाधि से विभूषित किया गया था। ऐसी परम्परा है कि 'सद्दनीति' ग्रन्थ के पूर्ण होने के कुछ वर्ष पश्चात् 'थेर उत्तरजीव' इसकी एक प्रति समुद्र मार्ग से सिंहल के 'महाविहार' में ले गये। वहाँ इसका अवलोकन कर उपस्थित भिक्षुओं ने अत्यधिक उत्साह तथा प्रशंसा सहित इसका स्वागत किया तथा सिंहल में व्याकरण पर लिखे गये अन्य ग्रन्थों से इसका श्रेष्ठत्व स्वीकार किया[3]।

---

१. द्र०—सद्द०, भा० ३, पृ० ९२८।

२. द्र०—M. H. Bode "Pali Literature of Burma", p. 16–17.

३. द्र०—वहीं, पृ० १७।

यह ग्रन्थ तीन भागों अथवा मालाओं में विभक्त है—पदमाला, धातुमाला तथा सुत्तमाला। पदमाला भी १४ विभिन्न परिच्छेदों में विभक्त है, जिनमें पदों का विभिन्न दृष्टियों से व्याख्यान प्रस्तुत किया गया है और इसकी शैली गद्य-पद्य-मिश्रित है। धातुमाला में ५ परिच्छेद हैं, जिनमें धातुओं की सूची और उनके अर्थ के साथ उनके रूप तथा उनसे निष्पन्न होनेवाले शब्दों का विवेचन प्राप्त है। सुत्तमाला में ९ परिच्छेद हैं, जिनमें १३९१ सूत्र दिये गये हैं और इसके माध्यम से सम्पूर्ण पालि व्याकरण का व्याख्यान प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार सद्दनीति में १ से लेकर २७ तक परिच्छेद दिये हुए हैं, जो पदमाला, धातुमाला तथा सुत्तमाला में विद्यमान हैं।

'अग्गवंस' ने इस ग्रन्थ की मङ्गल-गाथाओं के अनन्तर तथा अन्त के निगमन-वाक्य में इसकी रचना का मूल उद्देश्य 'परियत्ति' का ज्ञान प्राप्त कर 'पटिपत्ति' को प्राप्त करना तथा बुद्धशासन की चिरस्थिति बताया है[1]। इस ग्रन्थ में कच्चायन तथा मोग्गल्लान की अपेक्षा अधिक सूत्र हैं, जिससे इनकी पूर्णता तथा प्रौढ़ता की अभिव्यक्ति होती है तथा इस तथ्य का भी प्रदर्शन होता है कि सिंहली परम्परा से अलग बर्मा ने पालि व्याकरण के अध्ययन के विकास में कैसा अपूर्व योगदान दिया है। यद्यपि यह ग्रन्थ एक प्रकार से कच्चायन को अपना आधार मानता है तथापि सूत्रों की अलग रचना से इसके द्वारा एक स्वतन्त्र सम्प्रदाय का प्रतिनिधित्व होता है। इसकी भाषा तथा शैली अत्यन्त उत्कृष्ट एवं ओजस्वी है और प्रधान रूप से व्याकरण का ग्रन्थ होने के अतिरिक्त थेरवाद के विभिन्न विषयों का यह अक्षय-भण्डार भी है। इसमें सर्वत्र ही व्याख्येय विषय को शास्त्रार्थ की प्रणाली में उपस्थापित करते हुए उसकी विशद विवेचना प्रस्तुत की गयी है और उसकी पुष्टि में पदे-पदे त्रिपिटक से उद्धरण प्रस्तुत किये गये हैं। कच्चायन के अतिरिक्त विद्वान् लेखक द्वारा पाणिनीय परम्परा विशेषकर महाभाष्य तथा कातन्त्र आदि से भी सहायता ली गयी है और पालि भाषा की व्याकरण की दृष्टि से विवेचना करते हुए इसके प्रयोगों की संस्कृत भाषा के प्रयोगों से स्थान-स्थान पर तुलना भी प्रस्तुत की गयी है। प्रस्तुत इस ग्रन्थ के सम्पादन में कच्चायन व्याकरण तथा 'कच्चायनवण्णना' में व्याख्यात विषयों की तुलना सद्दनीति से करते हुए इसके उद्धरणों को पृष्ठ-संख्या सहित उल्लिखित कर दिया गया है। रोमन लिपि में तीन भागों में इसके मूल का बहुत ही सुन्दर, वैज्ञानिक तथा प्रामाणिक संस्करण हेल्मर स्मिथ द्वारा सम्पादित होकर प्रकाशित हुआ है और अलग से उसी क्रम में अनुक्रमणिका के भी दो भाग प्रकाश में आये हैं।

अन्य ग्रन्थ

(१) धात्वत्थदीपनी—इसमें 'सद्दनीति' की धातुमाला में वर्णित धातुओं का पद्यबद्ध संकलन है। इसके रचयिता बर्मी भिक्षु 'हिंगुलवल जिनरतन' कहे जाते हैं, जिनके काल के विषय में सम्यक् रूप से कुछ ज्ञात नहीं है।

---

१. द्र०—सद्द०, भा० १, पृ० १; भा० ३, पृ० ९२७-९२८।

पालि व्याकरण के फुटकर ग्रन्थ

व्याकरण सम्प्रदायों में समाहित उपरि वर्णित ग्रन्थों के अतिरिक्त पालि के व्याकरण-सम्बन्धी अन्य फुटकर ग्रन्थों की भी रचना हुई है, जिनमें मुख्य हैं—'वच्चवाचक', 'गन्धट्ठि', 'गन्धाभरण', 'विभत्त्यत्थप्पकरण', 'संवण्णनानयदीपनी', 'सद्दवुत्ति', 'कारकपुप्फमञ्जरी', 'सुधीरमुखमण्डन' तथा 'नयलक्खणविभावनी'। आँग्ल, जर्मन, फ्रेंच, सिंहली, बर्मी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में भी पालि व्याकरण-सम्बन्धी अनेक ग्रन्थ आधुनिक युग में रचे गये हैं।

कच्चायनवण्णना

इस ग्रन्थ का प्रणयन बर्मा के प्रसिद्ध भिक्षु 'महाविजितावी' स्थविर द्वारा हुआ है, जैसा कि 'सासनवंस' में उल्लेख है—"कच्चायनवण्णनं पन विजयपुरे येव अभयगिरिपब्बते निसिन्नो महाविजितावी नाम थेरी अकासि"[1]। अर्थात् विजयपुर के अभयगिरि पर्वत पर निवास करते हुए 'महाविजितावी थेर' ने 'कच्चायनवण्णना' की रचना की। इस ग्रन्थ के निगमन अंश में लेखक ने इसका रचनाकाल भी उद्धृत किया है और इसके अनुसार यह सत्रहवीं शताब्दी का प्रारम्भिक काल ही सिद्ध होता है—

"नवसते सकराजे अट्ठहिसीतिया पि च।
पत्ते कत्तिकमासस्स सुक्कपक्खपठमे दिने।
नातिसंखेपवित्थारा सिद्धा कच्चायनवण्णना॥"

निगमन अंश से यह स्पष्ट होता है कि बर्मा के 'पंय' नगर के समीप अभयगिरि नामक सुविख्यात पर्वत था। यहीं निवास करते हुए स्थविर ने इस ग्रन्थ की रचना की थी। यह यही संकेत करता है कि इस पर्वत पर कोई विहार स्थित था और उसी में निवास करते हुए इनके द्वारा इस ग्रन्थ-रत्न की रचना हुई।

श्री मललशेखर ने इन्हें सिंहली भिक्षु बताया है और यह लिखा है कि यह कच्चायन व्याकरण के 'सन्धिकप्प' अंश की व्याख्या है[2]। उनका यह कथन यह भ्रम उत्पन्न करता है कि इस व्याख्या में इस व्याकरण के मात्र 'सन्धिकप्प' अंश का व्याख्यान प्रस्तुत किया गया है और इसी के आधार पर बाद में पालि साहित्य के इतिहास पर लेखनी चलानेवाले विद्वान् भी भ्रमित हो गये हैं। किन्तु 'सन्धिकप्प' सम्पूर्ण कच्चायन व्याकरण का नाम है, यह पूर्व में प्रदर्शित किया जा चुका है[3]।

इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में कच्चायन व्याकरण की उत्पत्ति तथा इसके रचयिता आदि के सम्बन्ध में प्रकाश डाला गया है[4]। प्रत्येक सूत्र की व्याख्या में उसके प्रणयन

---

१. द०—पृ० ८५।
२. द्र०—"Dictionary of Pali Proper Names,', Vol. I, p. 478.
३. द्र०—पृ० २९।
४. द्र०—मूल, पृ० १०-११।

के कारण, उसके कार्य तथा किस सूत्र के कारण उसका निर्माण हुआ एवं संज्ञा, अधिकार, परिभाषा तथा विधि—इन पाँच प्रकार के सूत्रों में से वह किस प्रकार का सूत्र है, इसे उपस्थापित किया गया है। तत्पश्चात् उस सूत्र का पदच्छेद प्रदर्शित करते हुए उनकी गणना भी प्रस्तुत कर दी गयी है। इसके बाद यदि उस सूत्र के सम्बन्ध में सूक्ष्म विचार हैं, तो उन्हें दिया गया है और इस सन्दर्भ में पूर्वपक्ष देकर उसका परिहार भी दिया गया है। सूत्रों की वर्णना विधि छ प्रकार की है, इसे दर्शाते हुए कहा गया है[1]—

"सम्बन्धो च पदं चेव पदत्थो पदविग्गहो।
चोदना परिहारो च छब्बिधा सुत्तवण्णना"।

और व्याख्या में इसका अनुसरण किया गया है।

सूत्र में विद्यमान पदों के अर्थ का भी व्याख्यान यहाँ दिया गया है और अधिक स्थलों पर पारिभाषिक शब्दों की व्युत्पत्तियाँ व्याख्यान के साथ प्रदर्शित की गयी हैं[2]। वर्णों के उच्चारण-स्थान की अभिव्यक्ति में लेखक ने सामग्री संस्कृत वैयाकरणों से ली है,[3] साथ ही 'न्यास', 'रूपसिद्धि', 'रूपसिद्धिटीका' आदि का भी उल्लेख व्याख्यान प्रस्तुत करते हुए किया गया है। ऐसे अनेक उद्धरण इस ग्रन्थ में विद्यमान हैं[4]। कारिका आदि ग्रन्थों के उद्धरण भी स्थान-स्थान पर दिये गये हैं और वे तत्तत् स्थलों पर द्रष्टव्य हैं।

इस 'वण्णना' की प्रमुख विशेषता है वृत्ति में आये हुए प्रयोगों की सिद्धि प्रस्तुत करना और इसमें क्रमशः सभी सूत्रों को नामोल्लेखपूर्वक दिया गया है। पाठ-सम्बन्धी विचार भी इसमें स्थान-स्थान पर प्रस्तुत हैं। पाणिनीय परम्परा में आदि मङ्गल, मध्य मङ्गल तथा अन्त्य मङ्गल का जो कथन है, उसे यहाँ भी अपना लिया गया है। साथ ही इसकी शैली ओजस्वी एवं सुबोध है तथा इसके द्वारा प्रस्तुत किये गये व्याख्यान बोझिल नहीं ज्ञात होते। इस प्रकार कच्चायन व्याकरण को हृदयङ्गम कराने के कार्य में यह बेजोड़ है।

प्रस्तुत ग्रन्थ के द्वितीय खण्ड में इसकी विशेषताओं पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला जायेगा। स्थालीपुलाक न्याय से यहाँ संक्षेप में ही इसे प्रस्तुत किया गया है।

---

१. द्र०—वहीं, पृ० १२ आदि।

२. द्र०—वहीं, पृ० १५-१६ आदि।

३. द्र०—वहीं, पृ० १५।

४. द्र०—वहीं, पृ० १२० आदि।

प्रस्तुत संस्करण

मूल एवं क्रम

प्रस्तुत इस संस्करण में कच्चायन के सूत्रों की १ से लेकर अन्त तक लगातार संख्या दी गयी है। साथ ही एक 'कप्प', जो विभिन्न 'कण्डों' में विभक्त है, उसके अनुसार भी प्रत्येक सूत्र के पश्चात् संख्या उल्लिखित कर दी गयी है। सूत्रों के बाद उनकी वृत्ति रखी गयी है और तत्पश्चात् सूत्र की लगातार दी गयी संख्या तथा उस सूत्र का उल्लेख करते हुए उसकी 'वण्णना' दी गई है। कच्चायन सूत्र तथा वृत्ति के पाठों के निर्धारण हेतु निम्नाङ्कित संस्करणों का उपयोग किया गया है और उनको सङ्केतित करते हुए ही पादटिप्पणियों में पाठभेद प्रस्तुत किए गए हैं—

१. से० = सेनार्ट द्वारा मूल सूत्र, वृत्ति, उसका फ्रेंच अनुवाद तथा टिप्पणियों के साथ सम्पादित तथा १८७१ ई० में 'जुर्नल एशियाटिक' में प्रकाशित संस्करण।

२. सी० १ = कच्चायन-सूत्र-वृत्ति का श्री धर्माराम, प्रिंसिपल, विद्यालङ्कार कालेज, सीलोन, द्वारा सम्पादित एवं सिंहली लिपि में १९०४ ई० में प्रकाशित संस्करण।

३. सी० २ = श्री गुणरत्न थेर द्वारा सम्पादित तथा १९१३ ई० में सिंहली लिपि में प्रकाशित संस्करण।

कच्चायन के सूत्र तथा वृत्ति के मूल का इन्हीं उपरिस्थित संस्करणों से मिलान कर प्राप्त उपयुक्त पाठ को स्वीकार करके शेष पाठभेदों को पाद-टिप्पणी में उल्लिखित कर दिया गया है और इनके उल्लेख हेतु देवनागरी के अङ्कों के सङ्केत का प्रयोग किया गया है। इस पाठभेद निर्धारण में 'रूपसिद्धि' तथा 'कच्चायनवण्णना' आदि ग्रन्थों से भी सहायता ली गई है।

कच्चायनवण्णना

कच्चायन सूत्र तथा वृत्ति के अतिरिक्त प्रस्तुत ग्रन्थ में इनके ऊपर व्याख्या-स्वरूप लिखी गयी 'कच्चायनवण्णना' भी दी गयी है और इसके पाठ का मूलाधार है सिंहल के प्रसिद्ध विद्वान् एच० सुमङ्गल के तीन शिष्यों—बी० पञ्ञालङ्कार थेर, एच० सुमनसार थेर तथा यू० पियतिस्स यति द्वारा सम्पादित तथा सिंहली लिपि में १९०५ ई० में प्रकाशित इसका संस्करण। सम्पादन की दृष्टि से यह बहुत वैज्ञानिक संस्करण नहीं है, अतः इसके अशुद्ध प्रतीत पाठों में संशोधन करके इसे मूल में तथा अन्य को पाद-टिप्पणी में रखा गया है और सिंहली संस्करण में व्यक्त पाठभेद का भी यहाँ उल्लेख किया गया है। प्रयोगों की सिद्धि में वण्णनाकार ने जिन सूत्रों का उल्लेख किया है, उन्हें देते हुए ( ) में उनकी क्रमागत सूत्रसंख्या का उल्लेख कर दिया गया है।

'कच्चायनवण्णना' में प्रस्तुत किये गये सूत्रों एवं व्याख्यानों पर सन्दर्भपरक तथा तुलनात्मक टिप्पणियाँ भी विस्तारपूर्वक दी गयी हैं और इनके लिए अरबी १, २, ३ आदि अङ्कों का प्रयोग किया गया है। इसके सूत्रों की तुलना पाणिनि, कातन्त्र तथा सद्दनीति के सूत्रों से तथा कहीं-कहीं मोग्गल्लान के सूत्रों से यथासम्भव करते हुए इनका उद्धरण-सहित उल्लेख कर दिया गया है तथा समान भावाभिव्यक्ति एवं व्याख्यानपरक स्थलों की तुलना इस सम्प्रदाय के अन्य ग्रन्थों—उदाहरणार्थ—कच्चायनन्यास, कारिका रूपसिद्धि, कच्चायनसार, कच्चायनभेद सद्दसारत्थजालिनी, सुत्तनिद्देस आदि से करते हुए इनके उद्धरण दिये गये हैं। मोग्गल्लान व्याकरण तथा सद्दनीति से भी इनकी तुलना प्रस्तुत करते हुए उद्धरण उल्लिखित किये गये हैं। इसके अतिरिक्त इस कार्य में 'समन्तपासादिका' आदि अट्ठकथाओं तथा 'मणिसारमञ्जूसा' आदि टीका-ग्रन्थों से भी सहायता ली गयी है और इनका उल्लेख कर दिया गया है।

'कच्चायनवण्णना' के व्याख्यानों के सन्दर्भ में पाणिनीय परम्परा के अन्य ग्रन्थ, यथा—महाभाष्य, काशिकावृत्ति, सिद्धान्तकौमुदी आदि तथा कातन्त्र वृत्ति एवं स्वतन्त्र ग्रन्थों, यथा— वाक्यपदीय एवं आधुनिक ग्रन्थों, यथा—'टेकनिकल टर्म्स आफ संस्कृत ग्रामर' आदि से भी उल्लेखपूर्वक उद्धरण दिये गये हैं और सम्पूर्ण ग्रन्थ के पूर्ण होने पर इनकी सूची आदि देने का विचार है। इसी प्रकार द्वितीय खण्ड के अन्त में कई दृष्टियों से इनकी विस्तृत अनुक्रमणिका भी देने की योजना है।

भूतपूर्व कुलपति प्रो० बदरीनाथ शुक्ल के हम अत्यन्त आभारी हैं, जिनकी अध्यक्षता में बनी समिति ने पुस्तकालय की दुर्लभ ग्रन्थ-प्रकाशन-योजना में इसके प्रकाशन को सम्मिलित करने की स्वीकृति प्रदान की है।

इस ग्रन्थ के मुद्रण में रत्ना प्रेस के सञ्चालक श्री विनयशङ्कर पण्ड्या तथा अन्य कर्मचारीगण ने उत्साहपूर्वक एवं सावधानी से कार्य किया है और एतदर्थं वे धन्यवादार्ह हैं।

१४-१-८५ लक्ष्मीनारायण तिवारी

वाराणसी

विसय-सूची

पिट्ठङ्का

भूमिका १–४९

१. सन्धिकप्पो **१-८८**

(१) पठमो कण्डो १–३२
(२) दुतियो कण्डो ३३–५०
(३) ततियो कण्डो ५१–५९
(४) चतुत्थो कण्डो ६०–७५
(५) पञ्चमो कण्डो ७६–८८

२. नामकप्पो **८९-३६०**

(१) पठमो कण्डो ८९–१७५
(२) दुतियो कण्डो १७६–२१०
(३) ततियो कण्डो २११–२५१
(४) चतुत्थो कण्डो २५२–२७६
(५) पञ्चमो कण्डो २७७–२९१
(६) छट्ठो कण्डो (कारककण्डो) २९२–३६०

महाविजितावित्थेरविरचित-

कच्चायनवण्णनासंवलितं

कच्चायनव्याकरणं

नमो तस्स भगवतो अरहतो सम्मासम्बुद्धस्स

कच्चायनवण्णनासंवलितं

कच्चायनब्याकरणं

१. सन्धिकप्पो

(१) पठमो कण्डो

सेट्ठं तिलोकमहितं अभिवन्दियग्गं,
बुद्धञ्च धम्ममललं गणमुत्तमञ्च।
सत्थुस्स तस्स वचनत्थवरं सुबोद्धुं
वक्खामि सुत्तहितमेत्थ सुसन्धिकप्पं॥१॥
सेय्यं जिनेरितनयेन बुधा लभन्ति,
तञ्चा पि तस्स वचनत्थसुबोधनेन।
अत्थञ्च अक्खरपदेसु अमोहभावा,
सेय्यत्थिको पदमतो विविधं सुणेय्य॥२॥

कच्चायनवण्णना

अविसुद्धस्स जनस्स सुद्धिसम्पापकं जिनं।
मोहस्स धंसकं धम्मं नत्वा सङ्घं निरङ्गणं॥
ठपितमेतदग्गम्हि एसो अग्गो ति तादिना।
नत्वा तञ्च महाथेरं न्यासादिकारकम्पि च॥
बुद्धप्पियाचरियञ्च रूपसिद्धिविधायकं।
सद्दनीतिकारकञ्च ततियमग्गपण्डितं॥
निस्सयकारकञ्चा पि निद्देसकारकम्पि च।
वन्दित्वा तेसमालम्ब निच्छयं सुविनिच्छितं।
यतिपोतानमत्थाय कस्सं कच्चानवण्णनं॥

सेट्ठं तिलोकमहितं अभिवन्दियग्गं
बुद्धञ्च धम्ममममलं गणमुत्तमञ्च ।
सत्थुस्स तस्स वचनत्थवरं सुबोद्धुं
वक्खामि सुत्तहितमेत्थ सुसन्धिकप्पं ॥१॥
सेय्यं जिनेरितनयेन बुधा लभन्ति
तञ्चा पि तस्स वचनत्थसुबोधनेन ।
अत्थञ्च अक्खरपदेसु अमोहभावा
सेय्यत्थिको पदमतो विविधं सुणेय्या ॥२॥ ति ।

तत्थ 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' ति अवत्वा 'सेट्ठं तिलोकमहितं' त्यादि-गाथाद्वयं कच्चायनाचरियेन कस्मा वुत्तन्ति ? रतनत्तयपणामपुब्बङ्गमं पुब्बपञ्चकं दस्सेतुं गाथाद्वयमाह[1] । वुत्तञ्च––

"अन्तरायविघातत्थं मङ्गलादीनमत्थाय ।
तेसं गन्थानमारम्भे पणामादीनि वुच्चरे ॥" ति च[2] ।
"सञ्ञा निमित्तं कत्ता च परिमाणं पयोजनं ।
सब्बागमस्स पुब्बेव वत्तब्बं वत्तुमिच्छता ॥" ति च ।

––अयमेत्थ सामञ्ञानुसन्धि ।

तत्थ रतनत्तयपणामो कस्सा वुत्तो ति ? यं किञ्चि गन्थं समारभितुकामेन तावाचरियेन रतनत्तयस्स पणामं कत्वा तब्बिहतन्तरायेन समारभितब्बन्ति बत्तिस-महापुरिसलक्खणसब्बञ्ञुतादिगुणसम्पत्तिसमङ्गिताय बुद्धस्स, स्वाक्खाततादि-भावेन धम्मस्स, सुप्पटिपन्नतादिभावेन सङ्घस्स च सब्बलोकाभिवन्दनीयस्स अत्तनो सत्थुनो पणामं दस्सेन्तो 'सेट्ठं तिलोकमहितं अभिवन्दियग्गं' त्यादिमाह[3] ।

तत्थ सञ्ञा कस्मा वुत्ता ? अविञ्ञातवोहारस्स वोहारसुखत्थं सञ्ञा

---

1. तु०–"आचरियानं गन्थारम्भो तिविधो––आसिसपुब्बको, वत्थुपुब्बको, पणामपुब्बको ति"–सङ्खेप०, पि० २१४; "आचरियो पञ्च गुणे वड्ढेन्तो ताव रतनत्तयप्प-णाममारभते . . रतनत्तयप्पणामेन हि आचरियस्स अन्तरायाभावो, तदभावेन च आयुवण्णसुखबल-पटिभानसङ्खाता पञ्च गुणा वड्ढन्ति, तब्बड्ढनेन च कारियसन्निट्ठानं ति"––मणि० १, पि० १ ।

2. तु०–"मङ्गलादीनि मङ्गलमध्यानि मङ्गलान्तानि च शास्त्राणि प्रथन्ते वीरपुरुषाणि भवन्त्यायुष्मत्पुरुषाणि च, अध्येतारश्च वृद्धियुक्ता यथा स्युः"––महा०, पि० २ ।

3. तु०–"पकरणारम्भे रतनत्तयप्पणामवचनं रतनत्तयस्स यथाभूतगुणमाख्यापनेन पकरणे

वुत्ता त्यादि विसेसानुसन्धि। तत्थ 'सेट्ठं तिलोकमहितं··गणमुत्तमञ्चा' ति इमिना पणामं दस्सेति; सन्धिकप्पं ति इमिना नामं दस्सेति; बुधा ति इमिना निमित्तं दस्सेति; वक्खामी ति इमिना कत्तारं दस्सेति; सुसन्धिकप्पं ति एत्थ सुन्दरत्थवाचकेन सुसद्देन परिमाणं दस्सेति; सुबोद्धुं सेय्यं त्यादिना पयोजनं दस्सेति। वुत्तञ्च––

"सन्धिकप्पन्ति सञ्ञा च सुसद्देन पमाणिकं।
वक्खामि इति कत्ता च बुधा निमित्तमुच्चते।
पयोजनं सुबोद्धुं ति सेय्यं ति पदमुच्चते॥" ति।

––अयमेत्थ पुब्बपञ्चकदस्सनं।

इदानि पदच्छेदादीनं नयो होति। तत्थ सेट्ठं ति एकं पदं, तिलोकमहितं ति एकं पदं, अभिवन्दिया ति एकं पदं, अग्गं ति एकं पदं, बुद्धं ति एकं पदं, चा ति एकं पदं, धम्मं ति एकं पदं, अमलं ति एकं पदं, गणं ति एकं पदं, उत्तमं ति एकं पदं, चा ति एकं पदं, सत्थुस्सा ति एकं पदं, तस्सा ति एकं पदं, वचनत्थवरं ति एकं पदं, सुबोद्धुं ति एकं पदं, वक्खामी ति एकं पदं, सुत्तहितं ति एकं पदं, एत्था ति एकं पदं, सुसन्धिकप्पं ति एकं पदं, सेय्यं ति एकं पदं, जिनेरितनयेना ति एकं पदं, बुधा ति एकं पदं, लभन्ती ति एकं पदं, तं ति एकं पदं, चा ति एकं पदं, अपी ति एकं पदं, तस्सा ति एकं पदं, वचनत्थसुबोधनेना ति एकं पदं, अत्थं ति एकं पदं, चा ति एकं पदं, अक्खरपदेसू ति एकं पदं, अमोहभावा ति एकं पदं, सेय्यत्थिको ति एकं पदं, पदं ति एकं पदं, अतो ति एकं पदं, विविधं ति एकं पदं, सुणेय्या ति एकं पदं––अयमेत्थ पदच्छेदो।

पसत्थानं विसेसेन पसत्थो ति सेट्ठो, पसत्थो विसेसेना ति वा सेट्ठो; तद्धितविग्गहोयं, सामञ्ञब्ययीभाववसेन तीसु तद्धितेसु सामञ्ञतद्धितं, गोत्त-तरति-राग-जात्यादिसु पण्णरससु सेट्ठतद्धितं। वुत्तञ्च––

"गोत्त-तरति-राग-जात्यादि-समूहट्ठानकं।
उपमानिस्सितं बहु सेट्ठपकति-पूरणं।
विभागं च तदस्सत्थि सङ्ख्यान तद्धितं इती"॥ ति।

गारवुप्पादनत्थं, तस्स स्वाख्यातभावेन रतनत्तये गारवुप्पादनत्थं वा; अथ वा रतनत्तयप्पणामवचनं सदाचारवोक्कमनत्थं, तं विञ्ञूनं चित्ताराधनत्थं, तं पकरणस्सुग्गाहणत्थं, तं वचनत्थावबोधनत्थं, तं सब्बसम्पत्तिनिप्फादनत्थं ति"––क० न्या०, पि० १; "अट्ठकथाचरिया रतनत्तयप्पणामकरणेन अन्तरायनिवारणं विसेसतो पच्चासीसन्ति"––मणि० १, पि० ३२।

अथ वा सुन्दरे सतिपट्ठानादिभेदे धम्मे एसति गवेसती ति सेट्ठो, कितक-विग्गहोयं, कत्तुकम्मकरणसम्पदानापदानाधिकरणभावसाधनेसु कत्तुसाधनं। वुत्तञ्च–

"कत्ता कम्मं च करणं सम्पदानमथापरं।
अपादानाधिकरणं सत्तमं भावसाधनं"॥ ति च।
"यो वाक्ये कारको कत्ता पसिद्धो सो व लब्भति।
कत्तुसाधनमीरन्ति सेसेस्वपि अयं नयो"॥ ति च।

सुद्धहेतुकत्तुसु सुद्धकत्तुसाधनं। वुत्तञ्च––

"कारितपच्चयायोगा सुद्धकत्ता ति वुच्चती" ति च।

वुत्तावुत्तेसु पि वुत्तकत्तुसाधनं; वुत्तञ्च––"वुत्ते कम्मादिसामिस्मिं" ति च; सुपुब्ब-इसुधातु कत्तरि तप्पच्चयवसेन, बुद्धं ति पट्ठानपदमपेक्खायेतं सेट्ठं ति दुतियन्तं; लुज्जति पलुज्जती ति लोको, चुतिक्खणे लुज्जति पटिसन्धिक्खणे पलुज्जति पुन निब्बत्तति, पकारयुत्तत्ता लूजधातु णप्पच्चयो, जकारस्स गकारो गकारस्स ककारो, यथा कुलूपको; लोको च लोको च लोको च लोका, द्वन्दवाक्यं एकसेसतद्धितपदं; कामरूपारूपवसेन तयो लोका, सत्तलोक-सङ्खारलोक-ओकास-लोकवसेन तयो लोका; वुत्तञ्च––"पगेव सत्तलोकस्स पूजाकरणे सङ्खारलोकस्स मेदिनीकम्पनादिवसेन ओकासलोकस्स ठान्युपचारवसेन पवत्तत्ता" ति; तयो लोका तिलोकं; समासविग्गहोयं, अब्ययीभावसमासादिसु छब्बिधसमासेसु दिगुसमासो, समाहारासमाहारेसु एकत्ता नपुंसकत्ता च समाहारो; वुत्तञ्च––

"अब्ययीभावो दिगु द्वन्दो कम्मधारयमेव च।
तप्पुरिसो बहुब्बीहि समासो छब्बिधो मतो"॥ ति च।
"सङ्ख्यापुब्बनपुंसकवसेना पि दिगुमता ति च।
समाहारेकवचनं बहुवचनमितरे ति च"॥

महीयते पूजीयते ति महितो, तप्पच्चयस्स कालत्तयाभिहितत्ता महीयते महीयित्थ महीयिस्सती ति वा महितो (बुद्धो), तिलोकेन महितो तिलोकमहितो, तं तिलोकमहितं; अभिवन्दिया ति अभिपुब्बो वन्दधातु वन्दने, अभि आदरेन वन्दित्वा ति अभिवन्दिय, अभिवन्दितूना ति वा अभिवन्दिय; अग्गं ति उत्तमं सुन्दरं निब्बाणं अजति गच्छती ति वा अग्गो (बुद्धो), तं अग्गं; सम्मा[1] सामं च

सब्बधम्मे बुज्झती ति बुद्धो, चत्तारि सच्चानि बुज्झती ति वा बुद्धो,[२] तं यथानुसिट्ठं पटिपज्जमाने सत्ते चतुसु अपायेसु अपतमाने कत्वा धारयती ति धम्मो (सपरियत्तिको नवलोकुत्तरधम्मो); नत्थि मलमेतस्सा ति अमलो, तं अमलं; गणितब्बो सङ्ख्यातब्बो ति गणो (अरियसमूहो), तं गणं; ;उद्धतो तमो येन सो उत्तमो, उग्गतानं विसेसेन उग्गतो ति वा उत्तमो, उग्गततमो ति वत्तब्बे निरुत्तिनयेन उत्तमो ति वुत्तं, उत्तमानं विसेसेन उत्तमो ति वा उत्तमो, उत्तमतमो ति वत्तब्बे सरूपेकसेसवसेन उत्तमो ति वुत्तं, सेट्ठत्ता वा उत्तमो, तं उत्तमं, गणं ति इमिना सम्बन्धो; सदेवके लोके सासति अनुसासती ति सत्था, किलेसादयो ससति हिंसती ति वा सत्था (भगवा), तस्स सत्थुस्स; वचीयते अनेना ति वचनं, वुच्चते ति वा वचनं; अरीयते ञायते ति अत्थो, असति भवती ति वा अत्थो, अरति ञाणाभिमुखा पवत्तती ति वा अत्थो; वचनस्स अत्थो वचनत्थो; वरितब्बो पत्थेतब्बो ति वरो, उत्तमत्थेन वा वरो, वचनत्थो च सो वरो चा ति वचनत्थवरो, तं वचनत्थवरं; सुट्ठु बोद्धुं बुज्झितुं ति सुबोद्धुं; वक्खामी ति भासिस्सामि––'करस्स सप्पच्चयस्स काहो' ति (४८३) एत्थ सप्पच्चयगहणेन स्सामिविभत्तिया खामिआदेसं कत्वा, 'को खे चे' ति (४७५) धात्वन्तस्स चकारस्स ककारादेसो; अत्थे सुचेती ति सुत्तं, सट्ठु वुत्तं ति वा सुत्तं, अत्थे अभिसवेती ति वा सुत्तं, अत्थे पग्घरापेती ति वा सुत्तं, सुट्ठु अत्थे तायती ति वा सुत्तं, सुत्तसदिसत्ता वा सुत्तं; हिनोति अनुरूपं पवत्तती ति हितो, सुत्तस्स हितो सुत्तहितो (सन्धिकप्पो), तं सुत्तहितं; एत्था ति एतस्मिं; द्विन्नं पदानं अन्तरं अदस्सेत्वा सम्मापकारेन धीयति घटीयती ति सन्धि; समोधानं वा सन्धि, सन्धि च सन्धि च सन्धि च सन्धि, नाना-भेदभिन्ना ति अत्था; कप्पीय परिच्छिज्जीयति एत्था ति कप्पो, सुन्दरो सन्धिकप्पो, तथा, तं सुसन्धिकप्पं।

1-2.तु०–"यथा लोके अवगन्ता 'अवगन्तो' ति वुच्चति एवं बुज्झिता सच्चानी ति बुद्धो...को बुद्धो ति? अनन्तगुणाधिवासो खन्धसन्तानो, तस्स सह सब्बञ्ञुतञाणस्स पटिलाभा 'बुद्धो' ति पञ्ञत्तत्ता। तथा हि वुत्तं सीलक्खन्धटीकादीसु––'अत्थतो पन पारमितापरिभावितो सयम्भुञाणेन सह वासनाय विहतविद्धस्तनिरवसेसकिलेसो महाकरुणासब्बञ्ञुतञाणादिअपरिमेय्यगुणगणाधारो खन्धसन्तानो बुद्धो' ति...सम्मा हेतुना उपायेन अनञ्ञसाधारणारहत्तमग्गञाणेन चत्तारि सच्चानि अबुज्झी ति सम्बुद्धो भगवा"––मणि० १, पि० ३-४।

पसत्थो विसेसेना ति सेय्यो, पसत्थानं विसेसेन पसत्थो ति वा सेय्यो (लोकुत्तरधम्मो), तं सेय्यं; पापके अकुसले धम्मे जिनाति अजिनि जिनिस्सती ति जिनो (भगवा); इरीयते ति ईरितो, जिनेन ईरितो जिनेरितो; नीयति अत्थो एतेना ति नयो (सद्दनयो), नेतब्बो ति वा नयो (अत्थनयो), जिनेरितो च सो नयो चा ति, तथा, तेन; बुज्झन्ती ति बुधा (भब्बपुग्गला); लभन्ती ति पटिपज्जन्ति[1]; तञ्चा पी ति तं जिनेरितनयं अपि; वचनस्स अत्थो वचनत्थो; सुट्ठु बुज्झीयते ति सुबोधनं, वचनत्थस्स सुबोधनं वचनत्थसुबोधनं, तेन; वाचकभावेन अनन्तमभिधेय्यं पत्वा नक्खरन्ती ति अक्खरा (वण्णा), नत्थि खरत्तं खयं वा एतेसं ति अक्खरा; पदीयन्ति गमीयन्ति एतेही ति पदानि; अक्खरानि च पदानि च, तथा, तेसु अक्खरपदेसु; मोहेती ति मोहो, मुय्हनमत्तं वा, मुय्हती ति वा मोहो, नत्थि मोहो एतेसं ति अमोहो; भवनं भावो, अमोहानं भावो अमोहभावो, तम्हा, करणत्थे पञ्चमी; अमोहभावकरणा ति वुत्तं होति, अमोहभावेना ति वुत्ते ततियत्थे पञ्चमी, तेन अमोहभावेन; सेय्येन अत्थो सेय्यत्थो, मणिना अत्थो ति यथा, सेय्यत्थो अस्स अत्थी ति सेय्यत्थिको; अथ वा पसत्थानं पसत्थो विसेसेना ति सेय्यो; अत्थे नियुत्तो अत्थिको, सेय्येनत्थिको सेय्यं अत्थिको वा सेय्यत्थिको; अक्खरं च पदं च अक्खरपदन्ति वत्तब्बे छन्दानुरक्खणवसेन एवं वुत्तं; अतो ति तस्मा; विविधा पकारा एतस्सा ति विविधं, अक्खरपदं; सुणेय्या ति सिक्खेय्य। वुत्तञ्च—

"पठमं करे पदच्छेदं समासादिं ततो करे।
समासादो कते पच्छा अत्थं नीयाथ पण्डितो" ॥ ति।

इदानि क्रियाकारकतब्बिसेसनादियोजनक्कमो होति—

तत्थ अभिवन्दिया ति च वक्खामी ति च सुणेय्या ति च क्रियानिद्देसा, अहं ति अभिवन्दिय वक्खामी ति पदानं कत्तुनिदस्सनं, सेय्यत्थिको तिदं सुणेय्या तिमस्स कत्तुनिदस्सनं, बुद्धं धम्मं गणन्तिदं अभिवन्दिया तिमस्स कम्मनिदस्सनं, सेट्ठं तिलोकमहितं अग्गन्तिदं बुद्धन्तिमस्स तब्बिसेसननिदस्सनं, अमलन्तिदं धम्मन्तिमस्स तब्बिसेसननिदस्सनं, उत्तमन्तिदं गणन्तिमस्स तब्बिसेसननिदस्सनं, सत्थुस्सा तिदं तस्स बुद्धस्सा तिमस्स तब्बिसेसननिदस्सनं, तस्सा तिदं वचनत्थन्तिमस्स सम्बन्ध-

---

१. पटिविज्झन्ति-म०।

निदस्सनं, वचनत्थवरन्तिदं सुबोद्धुन्तिमस्स कम्मनिदस्सनं, सुबोद्धुन्तिदं वक्खामी तिमस्स सम्पदाननिदस्सनं, सुसन्धिकप्पन्तिदं वक्खामी तिमस्स कम्मनिदस्सनं, सुत्तहितन्तिदं सुसन्धिकप्पन्तिमस्स तब्बिसेसननिदस्सनं, एत्थादितं सेय्यन्तिमस्स निद्धारणनिदस्सनं, सेय्यन्तिदं लभन्ती तिमस्स कम्मनिदस्सनं, जिनेरितनयेना तिदं लभन्ती तिमस्स करणनिदस्सनं, तञ्चा पी तिदं लभन्ती तिमस्स कम्मनिदस्सनं, तस्सा तिदं वचनत्थन्तिमस्स सम्बन्धनिदस्सनं, वचनत्थसुबोधनेना तिदं लभन्ती तिमस्स करणनिदस्सनं, अत्थञ्चा तिदं लभन्ती तिमस्स कम्मनिदस्सनं, अक्खरपदेसू तिदं अमोहभावा तिमस्स आधारनिदस्सनं, अमोहभावा तिदं लभन्ती तिमस्स करणनिदस्सनं, अमोहभावेना ति वुत्तं होति, पदं तिदं सुणेय्या तिमस्स कम्मनिदस्सनं, अक्खरपदं ति वुत्तं होति, विविधन्तिदं पदन्तिमस्स तब्बिसेसननिदस्सनं। वुत्तञ्च––

"आदो क्रिया ततो कत्ता ततो कम्मकरणादिकं।
तब्बिसेसनमञ्ञं च बुधो योजे यथारहं"।। ति।

एवं गाथद्वयानुसन्धिनयञ्च, "पठमं करे पदच्छेदं" त्यादिना पदच्छेदादिनयञ्च, "आदो क्रिया" त्यादिना क्रियाकारककम्मयोजनानयञ्च दस्सेत्वा, इदानि चतुब्बिधमत्थयोजनमारभीयते––

सेट्ठं पसत्थतरं, तिलोकमहितं तिलोकेन पूजितं, अग्गं उत्तमं, बुद्धं, अभिवन्दिय आदरेन वन्दित्वा च; न केवलमेव बुद्धमभिवन्दिय, अमलं मलपटिपक्खं, धम्मं अभिवन्दिय, आदरेन वन्दित्वा च; न केवलमेव धम्ममभिवन्दिय, उत्तमं उद्धततमं उग्गततमं उत्तमतमं गणं च अभिवन्दिय, आदरेन वन्दित्वा; सत्थुस्स सदेवकस्स लोकस्सानुसासकस्स, तस्स तादिसस्स बुद्धस्स, वचनत्थवरं पाल्यत्थवरं, सुबोद्धुं सुट्ठु ञातुं, सुत्तहितं पिटकत्तयानुकूलं, सुसन्धिकप्पं सुन्दरं सन्धिकप्पं, अहं वक्खामी ति––अयमेत्थ पदानुसारि नाम।

सेट्ठं चातुद्दीपिकेहि मनुस्सेहि पसत्थो चक्कवत्तिराजा विय देवमनुस्सेहि पसत्थतरं, तिलोकमहितं सब्बदेवेहि पूजितो सक्को देवराजा विय तिलोकेन पूजितं, अग्गं सब्बब्रह्मेहि अग्गो महाब्रह्मा विय कोटिप्पत्तं, बुद्धमभिवन्दिय; चकारत्थो वुत्तनयो व; अमलं अब्भादिमलरहितो सुरियो विय मलपटिपक्खं, धम्मं चाभिवन्दिय; चकारत्थो वुत्तनयो व; उत्तमं सङ्गामे उद्धतसल्लो महायोधो विय

१. अत्थो अक्खरसञ्ञातो ।१. १. १।

सब्बवचनानमत्थो अक्खरेहेव सञ्ञायते। अक्खरविपत्तियं हि सति[1] अत्थस्स दुन्नयता होति, तस्मा अक्खरकोसल्लं बहूपकारं सुत्तन्तेसु।

उद्धततमं, गणं चाभिवन्दिय, सत्थुस्स सदेवकस्स लोकस्सानुसासकस्स, तस्स तादिसस्स बुद्धस्स...पे०...कप्पमहं वक्खामी ति—अयमेत्थ उपमासम्बन्धो नाम।

सेट्ठं गुणमहन्तताय पसत्थतरं, तिलोकमहितं पुञ्ञमहन्तताय तिलोकेन पूजितं, अग्गं जातिमहन्तताय कोटिप्पत्तं, बुद्धमभिवन्दिय; अमलं रागादिमल-रहितत्ता मलपटिपक्खं धम्ममभिवन्दिय; उत्तमं उद्धततमत्ता उग्गततमत्ता उत्तमत-मत्ता सेट्ठत्ता च उत्तमं गणं चाभिवन्दिय; सत्थुस्स सदेवकस्स लोकस्सानुसासकस्स तस्स तादिसस्स बुद्धस्स....पे०....कप्पमहं वक्खामी ति—चायमेत्थ हेतुसम्बन्धो नाम।

सेट्ठं चातुद्दीपिकेहि मनुस्सेहि पसत्थो चक्कवत्ति राजा विय गुणमहन्तताय देवमनुस्सेहि पसत्थतरं, तिलोकमहितं सब्बदेवेहि पूजितो सक्को देवराजा विय पुञ्ञमहन्तताय तिलोकेन पूजितं, अग्गं सब्बब्रह्मेहि अग्गो महाब्रह्मा विय जाति-महन्तताय कोटिप्पत्तं, बुद्धञ्चाभिवन्दिय, आदरेन वन्दित्वा; चकारत्थो वुत्तनयो व; अमलं अब्भादिमलरहितो सुरियो विय रागादिमलरहितत्ता मलपटिपक्खं, धम्मम-भिवन्दिय, आदरेन वन्दित्वा; चकारत्थो वुत्तनयत्थो; उत्तमं सङ्गामे उद्धतसल्लो महायोधो विय उद्धततमत्ता उग्गततमत्ता उत्तमतमत्ता उत्तमं, गणञ्चाभिवन्दिय, आदरेन वन्दित्वा; सत्थुस्स....पे०....तस्स तादिसस्स....पे०....वचनत्थवरं....पे०.. ञातुं सुत्तहितं...कप्पमहं वक्खामी ति—अयमेत्थ उपमाहेतुसम्बन्धो। वुत्तञ्च—

"पदानुसारि[2] सम्बन्धो सम्बन्धो उपमाय च।
हेतुना पि च सम्बन्धो उपमाहेतुना पि च।
सम्बन्धभेदा विञ्ञेय्या चत्तारो ति विभाविना"॥ ति।

एवं द्वीहि गाथाहि पणामपुब्बङ्गमं पुब्बपञ्चकं दस्सेत्वा, इदानि पठमं मूलकारणभूतं अक्खरकोसल्लं सम्पादेतब्बन्ति दस्सेन्तो—

१. अत्थो अक्खरसञ्ञातो ति आदिमाह। इदं सुत्तं केन वुत्तं? भगवता

---

१. से० पोत्थके नत्थि। २. पाठानुसारि–कत्थचि।

1. तु०—"सिद्धो वर्णसमाम्नायः—का० १. १. १।

वुत्तं। कदा वुत्तन्ति? यमउप्पलनामका द्वे ब्राह्मणा खयवयकम्मट्ठानं गहेत्वा गच्छन्ता नदीतीरे खयवयं खयवयन्ति[१] कम्मट्ठाने कयिरमाने एको उदके मच्छं गण्हितुं चरन्तं बकं दिस्वा 'उदकबको' ति विरज्झति, एको घटे पटं दिस्वा 'घटपटो' ति विरज्झति; तदा भगवा ओभासं मुञ्चित्वा "अत्थो अक्खरसञ्ञातो" ति वाक्यं ठपेति, तेसं च कम्मट्ठानं पतिट्ठति, तस्मा भगवता वुत्तन्ति वुच्चति। तं ञत्वा महाकच्चायनो भगवन्तं याचित्वा हिमवन्तं गत्वा मनोसिलातले दक्खिणदिसाभागं सीसं कत्वा पुरत्थिमदिसाभिमुखो हुत्वा "अत्थो अक्खरसञ्ञातो" त्यादिकं कच्चायनपकरणं विरचि[1]; तस्मा "पुब्बवाक्यं" ति वुत्तं; "परिभासासुत्तं", थेरेन ठपितत्ता परिभासा ति पि वुत्तं। वुत्तञ्च--

"पुब्बवाक्यन्तिदं सुत्तं वदन्ताचरियापरे।
सुत्तनामानुरूपेन परिभासा ति नो मती" ॥ ति।

अनोतत्ततीरे सालरुक्खमूले निसिन्नं एकं बुड्ढपब्बजितं सन्धाय वुत्तन्ति पि वदन्ति--अयमिमस्स अड्ढुप्पत्ति।

इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? सुणेय्या तिमस्स कम्मप्पभवं कम्मनिदानं कम्मतो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तं? "अक्खरपदं सुणेय्या" ति वुत्तं; अक्खरं वा पठमं सोतब्बं उदाहु पदं वा ति चिन्ताय पदस्स अक्खरमूलकत्ता पठमं अक्खरं सोतब्बन्ति दस्सेतुं 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' ति वुत्तं; अथ वा अक्खरकोसल्लपदकोसल्लेसु कतरं कोसल्लं सम्पादेतब्बन्ति चिन्ताय पदकोसल्लस्स अक्खरकोसल्लमूलकत्ता अक्खरकोसल्लं पठमं सम्पादेतब्बन्ति दस्सेन्तो 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' ति वुत्तं--अयमिमस्स सुत्तनिक्खन्ति; सुत्तानुसन्धी ति पि वत्तब्बं।

'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' ति किमिदन्ति चे? सुत्तं। केनत्थेन सुत्तं? अत्थानं सूचनतो सुत्तं नाम[2]। किं सुत्तस्स लक्खणन्ति चे?

---

१. खयवयन्ति दस्सेन्ता--कत्थचि।

1. तु०-"कत्ता नाम 'एतदग्ग, भिक्खवे, मम सावकानं भिक्खूनं सङ्खित्तेन भासितस्स वित्थारेन अत्थं विभजन्तानं यदिदं महाकच्चायनो' ति भगवता एतदग्गे ठपितो आयस्मा महाकच्चायनो"--क० न्या०, पि० ६।

2. समन्त० १, पि० १८।

"अप्पक्खरमसन्देहं सारत्थं गुळ्हनिन्दियं।
अक्खोभमनवज्जं च सुत्तमिच्चाहु पण्डिता"।। ति।

वत्तब्बं यं वाक्यपदं अप्पक्खरं अप्पक्खरं च, असन्देहं सन्देहविरहितं च, सारत्थं सुन्दरत्थं च, गुळ्हं पटिच्छन्नं च, अनिन्दियं निन्दाविरहितं च, अक्खोभं खोभविरहितं च, अनवज्जं वज्जविरहितं च, तं वाक्यपदं सुत्तं सुत्तं इति पण्डिता आहु कथेसू त्यत्थो; इति सब्बसुत्तं छब्बिधं संवण्णेतब्बं। वुत्तञ्च--

"सम्बन्धो च पदं चेव पदत्थो पदविग्गहो।
चोदना परिहारो च छब्बिधा सुत्तवण्णना"[1]।। ति।

तत्थ किमत्थमिदमुच्चते ? लोकियलोकुत्तरसङ्खातवचनत्थञापको अक्खर-पभेदो पठमं सिक्खितब्बो ति ञापनत्थमिदमुच्चते ति–अयमिह सम्बन्धो।

अत्थो ति एकं पदं, अक्खरसञ्ञातो ति एकं पदं, विभत्त्यन्तपदविभागवसेन द्विपदमिदं सुत्तन्ति दट्ठब्बं--अयमिह पदच्छेदो।

अत्थो ति कम्मत्थनिद्देसो, अक्खरसञ्ञातो ति क्रियानिद्देसो--अयमिह पदचिन्ता।

यो कोचि लोकियलोकुत्तरसङ्खातो वचनत्थो सो सब्बो अक्खरेहेव सञ्ञायते, न अक्खरेन विना, अक्खरेहेवा ति वा सरूपवसेन नियमितक्खरेहेव सञ्ञायते, न अनियमितक्खरेही त्यत्थो--अयमिह पदत्थो।

अरीयते ञायते ति अत्थो, अरति ञाणाभिमुखं पवत्तती ति वा अत्थो, लोकियलोकुत्तरसङ्खातत्थो; नक्खरन्ती ति अक्खरा, नत्थि खरं खरत्तमेतेसन्ति वा अक्खरा, वाचकभावेन अनन्तमभिधेय्यं[१] पत्वा नक्खरन्ति न नस्सन्ती ति वा अक्खरा वण्णा; सञ्ञायते सञ्ञायित्थ सञ्ञायिस्सती ति सञ्ञातो, यथावुत्तत्थो, अक्खरेहि सञ्ञातो अक्खरसञ्ञातो--अयमिह पदविग्गहो।

'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' ति कस्मा वुत्तं, 'अत्थो पदसञ्ञातो' ति वत्तब्बन्ति --अयमिह चोदना। अक्खरं विना पदाभावतो पदस्स अक्खरमूलकत्ता, पदमक्खर पक्खिपित्वा 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' ति वुत्तं--अयमिह परिहारो।

१. अनन्तमभिधेय्यम्पि--म०।

1. "तं पन सुत्तं छब्बिधा संवण्णेतब्बं; तेनेतं वुच्चति--सम्बन्धो...सुत्तवण्णना"--क० न्या०, पि० ८।

अथ वा 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' ति कस्मा वुत्तं, 'अक्खरसञ्ञातो अत्थो' ति वत्तब्बन्ति चोदना ? अत्थे असति अक्खरं ठपेतुं न सक्का, अत्थे सति येव अक्खरं ठपेतुं सक्का, तस्मा 'अक्खरसञ्ञातो अत्थो' ति अवत्वा 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' ति वुत्तं; पटिसम्भिदाक्कमेन वा एवं वुत्तं। वुत्तञ्च--

''अविज्जमानके अत्थे न तं सक्का ठपेतवे।
विज्जमाने पनत्थम्हि सक्काक्खरे ठपेतवे''।। ति च।
''पटिसम्भिदानमेतासं चतुन्नं चादिसम्भवा।
अत्थो सो गहितो तेन जिनवुत्तानुसारिना''।। ति च।

--अयमिह परिहारो।

'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' तिदं सुत्तन्ति वुत्तं, 'सब्बवचनानमत्थो' त्यादि किन्ति चे ? वुत्ति। कस्मा वुत्ती ति ? सुत्तत्थो वुच्चति विवरीयति एताया ति वुत्ति; एताय संवण्णनाया त्यत्थो। यदि सुत्तत्थविवरणत्थेन वुत्ति, सुत्तेन संसन्देती ति चे ? सुत्ते अत्थो ति वुत्तत्ता वुत्तियं अत्थो ति वत्तब्बं, सब्बवचनानन्तिदं कस्मा वुत्तन्ति चे ? अत्थसद्दस्स सम्बन्धापेक्खत्ता सम्बन्धत्थं वुत्तं, अक्खरसञ्ञातो ति वुत्तत्ता अक्खरेहि सञ्ञायते ति वत्तब्बं; अक्खरेहेवा ति एत्थ एवकारो कस्मा वुत्तो ति चे ? अवधारणत्थं वुत्तो। सो सन्निट्ठानत्थ-अनुञ्ञातत्थ-निवत्तनत्थवसेन तिविधो। तत्थ अक्खरेहि अत्थस्स ञातब्बभावो सन्निट्ठानत्थो, पदेहि अत्थस्स ञातब्बभावो अनुञ्ञातत्थो, तेहि विना ञातब्बाभावो निवत्तेतब्बत्थो। अथ वा अक्खरेहेवा ति सरूपसङ्ख्यानियमितेहि एकचत्तालीसक्खरेहि न सरूप-सङ्ख्याअनियमितेहि एकादसक्खरेहि। अथ वा अक्खरेहेवा ति सम्पत्तिअक्खरेहेव न विपत्त्यक्खरेहि। वुत्तञ्च कारिकाटीकायं--''अक्खरेहेवा ति एकचत्तालीसक्खरेहेव। एत्थ एवसद्दो अवधारणत्थो; तेन न विना अक्खरेही ति दीपेती'' ति। रूपसिद्धि-टीकायम्पि वुत्तं--''अक्खरा ति ञापकहेतुत्ता विञ्ञातसरूपसम्बन्धानि एवं विञ्ञापेन्ती'' ति। तत्थ 'सरूपसम्बन्धानी' ति अकारादयो निग्गहीतन्ता वण्णा ति सरूपेन पनेसं सम्बन्धानि; एकचत्तालीसक्खरानि एवेत्यत्थो। 'अक्खरविपत्तियं ही' त्यादि किमत्थं वुत्तं ? अनुरूपवुत्तताय वुत्तं। तत्थ 'उदयवयं' ति एत्थ उप्प-ज्जनभिज्जनसभावो अक्खरसमुदायसङ्खातेन पदेनेव सञ्ञातो न अवयवसङ्खातेन अक्खरेन, अथ कस्मा 'अक्खरेहेवा' ति वुत्तन्ति चोदनं मनसि कत्वा वुत्तं--''अक्खर-

२. अक्खरापादयो एकचत्तालीसं[1] ।१.१.२।

ते च खो अक्खरा पि अकारादयो एकचत्तालीसं सुत्तन्तेसु सोपकारा होन्ति[2], तं यथा––अ आ इ ई उ ऊ ए ओ। क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ। ट ठ ड ढ ण। त थ द ध न। प फ ब भ म। य र ल व स ह ळ अं इति[3] अक्खरा नाम होन्ति।

तेन क्वत्थो? 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' (१)।

विपत्तियं ही" ति आदि। हि यस्मा मूलकारणभूतस्स अवयवसङ्खातस्स अक्खरस्स विपत्तियं अत्थस्स समुदयत्थस्स दुन्नयता होति, तस्मा अवयवभूतक्खरस्सेव मूलकारणत्ता 'अक्खरेहेव सञ्ञायते' ति वुत्तं; 'तस्मा अक्खरकोसल्लं सुत्तन्तेसु बहुपकारं' ति च योजनीयं, उभयापेक्खत्ता।

एवं पुब्बवाक्यभूतेन परिभासासुत्तेन सिस्सानं बलवुस्साहं जनेत्वा, अविञ्ञातसञ्ञस्स वोहारासिज्झनतो पठमं सञ्ञाविधानं दस्सेन्तो, द्वीसु च सञ्ञासु सामञ्ञसञ्ञा येव पठमं वत्तब्बत्ता पठमं सामञ्ञसञ्ञाविधानं दस्सेतुं––

२. अक्खरापादयो एकचत्तालीसं[1] ति सामञ्ञसञ्ञासुत्तमाह। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' ति सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' ति सुत्ते अक्खरं तिदं करणभावेन वुत्तं। करणभूतं तमक्खरं कतमन्ति पुच्छाय सति, अकारादयो एकचत्तालीसमत्ता वण्णा तत्थ सुत्ते करणभूता अक्खरा नामा ति दस्सेन्तो, 'अक्खरापादयो एकचत्तालीसं' ति सुत्तं वुत्तं। अयमिमस्स निक्खन्ति। तं पन सुत्तं छब्बिधा संवण्णेतब्बं। तेन वुत्तं––

"सम्बन्धो च पदं चेव पदत्थो पदविग्गहो।
चोदना परिहारो च छब्बिधा सुत्तवण्णना"॥ ति।

किमत्थमिदमुच्चते? 'अक्खरेहि कारं' (६०६) इच्चेवमादिसु अक्खरा

---

१. ० चत्तालीसं-सी० २। २. सी० १, सी० २ पोत्थकेसु नत्थि। ३. ति- से०।

1. द०—"अआदयो तितालीस वण्णा"—मो० १.१। "अप्पभूतेकतालीस सद्दा वण्णा"; "अक्खरा च ते"—सद्द० १, २।

नाम कतमे ति सन्देहो जायेय्य, तन्निवत्तनत्थमिदमुच्चते[1]––अयमिह सम्बन्धो। किमत्थन्ति एत्थ किंसद्दतो चतुत्थेकवचनस्स 'आयचतुत्थेकवचनस्स तू" ति (१०९) एत्थ तुग्गहणेनत्थमादेसं कत्वा, किस्स अत्थाय किमत्थन्ति वा छट्ठीतप्पुरिससमासं कत्वा, तस्स तदत्थसम्पदानसञ्ञं कत्वा, 'आलपने चे' ति (२८७) चसद्देन तदत्थे सिवचनं कत्वा, तस्स अमादेसो, इदञ्च विकप्पद्वयं वुच्चते ति इमिना सम्बन्धं कत्वा, किरियासम्बन्धन्ति वत्तब्बं; बहुब्बीहिसमासं कत्वा, ततो 'लिङ्गत्थे पठमा' ति (२८६) सिविभत्तिं कत्वा, इदन्ति इमिना तुल्याधिकरणवसेन सम्बन्धं कत्वा सुत्तसम्बन्धन्ति वेदितब्बं। वुत्तञ्च––

"किस्सत्थाय किमत्थन्ति क्रियासम्बन्धमुच्चते।
को अत्थो यस्स किच्चा ति सुत्तसम्बन्धमुच्चते"॥ ति।

अक्खरा ति एकं पदं, अपी ति एकं पदं, आदयो ति एकं पदं, एकचत्तालीसन्ति एकं पदं, विभत्त्यन्तपदविभागवसेन चतुप्पदमिदं सुत्तन्ति दट्ठब्बं। विभत्त्यन्तपदविभागवसेना ति इमिना विसेसनेन नामाख्यातवसेन द्विधा भिन्नं, नामाख्यातोपसग्गनिपातवसेन च चतुधा भिन्नं,[2] नामाख्यातोपसग्गनिपातकम्मप्पवचनियवसेन पञ्चधा भिन्नं च पदच्छेदं निवत्तति। वुत्तञ्च–––

"भिन्दन्तेके पदं द्विधा चतुधा पञ्चधा पि वा।
विसुं कत्वान वाक्येहि पकतिपच्चयादिही"॥ ति।

अक्खरा ति सञ्ञानिद्देसो, अपी ति हेट्ठापक्खनिद्देसो, आदयो ति सञ्ञिनिद्देसो, एकचत्तालीसन्ति तब्बिसेसननिद्देसो; सञ्ञाधिकारपरिभासाविधिसुत्तेसु सञ्ञासुत्तन्ति वेदितब्बं। इदं हि सुत्तत्थकोसल्लहेतुत्ता सुत्तत्थे सङ्गहो कातब्बो। अकारादयो एकचत्तालीस सरब्यञ्जना, ते च खो हेट्ठावुत्तक्खरा नामा त्यत्थो––अयमिह पदत्थवण्णना।

खरन्ति विनस्सन्ती ति खरा; सङ्खता; खरधातु अकारप्पच्चयो; न खरा अक्खरा; खरसद्दस्स खकारस्स 'वग्गे घोसाघोसानं...' ति (२९) इमिना ककारकरणं

1. द०–क० न्या०, पि० १०-११।

2. तु०–"तत्थ नामिकपदं, आख्यातपदं, उपसग्गपदं, निपातपदं ति चत्तारि वाचोगधपदानि नाम होन्ति"—सद्द०, भा० ३, पि० ८७८।

च परनयनं च; कारिकारियभावतो। अपिसद्दो अपेक्खत्थे निपातो। अआदि येसन्ते आदयो, तग्गुणसंविञ्ञाणबहुब्बीहि, चतुब्बिधेसु तग्गुणसंविञ्ञाणबहुब्बीहिसु पयोगतग्गुणोयं बहुब्बीहि[1]। वुत्तञ्च--

"ञेय्यो अञ्ञपदत्थेन तस्स योगवसेन वा।
पयोगकिरियादीहि तग्गुणो सो चतुब्बिधो॥
लम्बकण्णं च भो नीलवत्थं नरञ्च आनय।
आदयो बुद्धपमुखं सङ्घभोजनयादिकं"॥ ति।

एकेन अधिका चतालीसं एकचत्तालीसं--अयमस्स पदविग्गहसंवण्णना।

यथा 'अघो' ति (६०) आदिसु 'घो' ति एकक्खरेनेव सञ्ञा ठपिता, एवमिहा पि अकत्वा कस्मा गरुसञ्ञा कता ति--अयमिह चोदना। रुळ्हिअन्वत्थ-

1. वु०--"नक्खरन्ती ति अक्खरा, पमाणतो एकचत्तालीसमत्ता, पिटकत्तयं पि पत्वा न खीयन्ती ति अत्थो। असद्दो आदि येसं ते ति आदयो ति बहुब्बीहिसमासो होति। आदिसद्दो ताव चतूसु अत्थेसु दिस्सति--

मरियादे पकारे च समीपेवयवे पि च।
चतुब्बिधप्पकारोयं आदिसद्दस्स लक्खयते॥

तथा हि भूवादयो धातवो त्यादीसु मरियादे दिस्सति; ब्राह्मणादयो भुञ्जन्ति त्यादीसु पकारे; दधितो जनमत्तस्सादी त्यादीसु समीपे; मूलं रुक्खस्सादी त्यादीसु अवयवे। इध पन यदि अकार-पकारा अक्खरा ति अत्थो भवेय्य, अकारस्स रस्ससरानमेव वा अक्खरत्तमापज्जेय्य, एवं च सति 'डो ढकारे' ति सुत्ते ढकारग्गहणमयुत्तं सिया। कस्मा? 'अक्खरेहि कारं' इति कारपच्चयस्सा-सम्भवतो। यदि पन अकारसमीपा अक्खरा ति अत्थो भवेय्य आकारस्सेव अक्खरत्तमापज्जेय्य, एवं हि सति वुत्तदोसो व सिया। यदि पन अकारावयवा अक्खरा ति अत्थो भवेय्य अकारावयवस्स कस्सचि अभावतो निरत्थकं सिया, वुत्तदोसो च; तस्मा तं सब्बमग्गहेत्वा अकारमरियादा अक्खरा ति अत्थे गहिते वुत्तदोसाभावतो मरियादत्थो वेत्थादिसद्दो ति अवगन्तब्बो"--क० न्या०, पि० ९; "अक्खरा ति केनट्ठेन अक्खरा? अक्खयट्ठेन अक्खरट्ठेन च; यं हि खयं गच्छति परिहायति, तं खयं ति वुच्चति; यं पन खरं होति थद्धं, तं खरं ति वुच्चति--इमे पन वण्णा संखार-विकार-लक्खण-निब्बान-पञ्ञत्तिसंखातेसु पञ्चसु ञेय्यपथेसु वत्तमाना पि नेव खयं गच्छन्ति न परिहायन्ति, उपरूपरि दिस्सन्ति, अतिसुखुमगम्भीरसङ्केतेसु परिवत्तमाना पि खरत्तं थद्धभावं न गच्छन्ति, अतिविय मुदू हुत्वा अत्थवसेन न खरन्ति, तस्मा अक्खरा ति वुच्चन्ति..." सद्द० वु०, सु० २।

सञ्ञासु अन्वत्थसञ्ञा वोहारसुखं च साधेति, सभावत्थं च दीपेती ति——अयमिह परिहारो[1]।

अपिसद्दस्स अधिप्पायेन सह अत्थं दस्सेतुं 'ते च खो' आदि वुत्तं। सुत्तन्तेसु सोपकारा एकचत्तालीसं, ते च खो अक्खरा ति हेट्ठा वुत्ता अकारादयो निग्गहीतन्ता वण्णा अक्खरा नाम अपि होन्ती ति योजना। अपिसद्दस्स हेट्ठावुत्तं अपेक्खभावं पाकटतरं कातुं खोसद्दं पक्खिपति। चकारो उभयत्थसम्पिण्डनत्थो। 'तं यथा' ति सरूपपुच्छा, ते कतमे त्यत्थो। 'अ आ···पे०···अं' इति सरूपविस्सज्जना। 'अक्खरमिच्चनेन क्वत्थो' ति विसयपुच्छा। 'अत्थो अक्खरसञ्ञातो' ति विसयविस्सज्जना। 'अ आ' त्यादि अयमनुक्कमो कस्मा वुत्तो, कतीहि च कारणेहि अक्खरा जायन्ती ति?

"पञ्चन्नं पन ठानानं पटिपाटिवसा पि च[2]।
निस्सयादिप्पभेदेहि वुत्तो तेसमनुक्कमो॥
अवण्णो चेव कवग्गो हकारो त्यट्ठ कण्ठजा।
इवण्णो चेव चवग्गो यकारो त्यट्ठ तालुजा॥
टवग्गरळकारा ति सत्त मुद्धम्हि जायरे।
तवग्गलसकारा ति सत्त दन्तेसु जायरे॥
उवण्णो च पवग्गो च सत्त ओट्ठेसु जायरे।
कण्ठतालुभवेकारो, ओकारो कण्ठओट्ठजो॥
दन्तोट्ठजो वकारो ति सिद्धो तेसमनुक्कमो।
निग्गहीतं पनेकन्तु नासिका ति पवुच्चति॥
हकारं पञ्चमेहेव यवलेहि च संयुतं।
ओरसन्ति वदन्तेत्थ कण्ठजं तदसंयुतं॥
उप्पटिपाटिया चेव उप्पज्जन्ती ति दीपितुं।
हकारेहेव थेरेन परं कत्वान ईरितं॥
ठाने ळस्सेव लकारं वकारं केचिकेचिति।
पठन्ती ति च दीपेतुं लकारो चीरितो परं॥

1. तु०—क० न्या०, पि० ९। 2. द०—पा० शि०।

३. तत्थोदन्ता सरा अट्ठ ।१.१.३।

तत्थ अक्खरेसु अकारादिसु ओदन्ता अट्ठ अक्खरा[1] सरा नाम होन्ति, तं यथा—अ आ इ ई उ ऊ ए ओ इति सरा नाम।

तेन क्वत्थो? 'सरा सरे लोपं' (१२)।

जिव्हामज्झं तालुजानं मुद्धजानं जिव्होपग्गं।
जिव्हग्गं करणं दन्तजानं सेसा सकट्ठानिका ॥
संवट्टतादिकरण-विसोपयतनीयतो।
संवट्टत्तमकारस्सं विवट्टञ्च सहा न च ॥
सम्फुट्ठत्तं च वग्गानं ईसं यरलवानि च।
एवं ठानकरणप्पयतने ह्यक्खरा सियुं"॥ ति।

एवं ठानकरणपयतनसङ्खातेहि तीहि कारणेहि अक्खरुप्पत्ति होति। तत्थ ठानं न्यासे पञ्चधा वुत्तं[1], रूपसिद्धियं छधा वुत्तं[2], निरुत्तियं अट्ठधा वुत्तं; कण्ठतालुमुद्धओट्ठदन्तवसेन पञ्च, कण्ठतालुमुद्धओट्ठदन्तनासिकवसेन छ, कण्ठतालुसिरउरजिव्हामूलदन्तनासिकओट्ठवसेन अट्ठा ति। करणं तिविधं—जिव्हामज्झजिव्होपग्ग-जिव्हग्गवसेन। पयतनं चतुब्बिधं—संवट्ट-विवट्ट-फुट्ठ-ईसम्फुट्ठवसेन। एत्थ च तालुमुद्धदन्तठानेसु येव विसुं ठानञ्च करणं भवति। किम्भवति? तालुट्ठानं जिव्हामूलस्स उपरितलं, तस्स मज्झिमट्ठानं करणं भवति; मुखब्भन्तरं मुद्धा मुद्धट्ठानं, तस्स जिव्हाय अग्गस्स समीपं, उपरितलं करणं, तं जिव्होपग्गन्ति वुत्तं; उपरिदन्तट्ठानस्स पन्तिया अब्भन्तरं दन्तट्ठानं, तस्स जिव्हाय अग्गं करणं। एवं तीसु ठानेसु ठानं च करणं च विसुं लब्भति। सेसट्ठानेसु करणं विसुं न लब्भति। पयतनं नाम वण्णमुच्चारणुस्साहो। संवट्टतादि संवट्टतादि येव। वुत्तञ्च कारिकायं—

"वण्णमुच्चारणुस्साहो पयतनमुदीरितो"[3]। ति।

रूपसिद्धिटीकायम्पन "तिट्ठन्ति एत्थ वण्णा तदायत्तवुत्तिताया ति ठानं; करणं ति करीयन्ते उच्चारीयन्ते एतेना ति करणं, जिव्हामज्झादि; पयतनं पन यथारहं ठानकरणानं सपरियत्तादिगुणो" ति वुत्तं[4]।

एवं सामञ्ञवसेन अक्खरसञ्ञं दस्सेत्वा, विसेसवसेन सरसञ्ञं दस्सेतुं—

---

१. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि।

1. क० न्या०, पि० ११। 2. रूप०, सु० २। 3. का०, १३२।

4 द०—"तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्"—पा० १.१.९; अस्स सुत्तस्सुपरि अञ्ञा च टीकायो।

३. तत्थोदन्ता सरा अट्ठा[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'अक्खरपादयो एकचत्तालीसं' ति (२) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? 'अक्खरपादयो एकचत्तालीसं' ति इमिना एकचत्तालीसवण्णानं अक्खरसञ्ञा कता; किन्ते अक्खरसञ्ञका[१] येव होन्ती ति पुच्छाय सति, तेसं वण्णानं अक्खरसञ्ञा येव न होन्ति; ओदन्तानं अट्ठअक्खरानं सरसञ्ञा पि होन्ती ति दस्सेन्तो, 'तत्थोदन्ता सरा अट्ठा' ति वुत्तं—अयमस्स निक्खन्ति। किमत्थमिदमुच्चते? 'सरा सरे लोपं' ति (१२) आदिसु सरा नामिमे ति ञापनत्थमिदमुच्चते—अयमिह सम्बन्धो।

तत्था ति एकं, ओदन्ता ति एकं, अट्ठा ति एकं, सरा ति एकन्ति विभत्यन्त··· पे०···चतुप्पदमिदं सुत्तन्ति दट्ठब्बं।

तत्था ति निद्धारणसमुदायनिद्देसो, ओदन्ता ति निद्धारणीयभूतसञ्ञि-निद्देसो[२], सरा ति सञ्ञानिद्देसो, अट्ठा ति तब्बिसेसननिद्देसो, सञ्ञाधिकारपरिभासा-विधिसुत्तेसु सञ्ञासुत्तन्ति वेदितब्बं; चतुब्बिधेसु निद्धारणेसु जातिनिद्धारणन्ति दट्ठब्बं, सरजातिया निद्धारितत्ता गुणनिद्धारणं वा। अट्ठा ति सङ्ख्या, गुणेन निद्धारितत्ता। तत्थ तेसु अक्खरेसु अकारादयो ओदन्ता अट्ठ अक्खरा सरा नाम होन्ती ति—अयमिमस्स पदत्थो।

तत्था ति एत्थ तसद्दो सब्बनामिकपदं, ततो थप्पच्चयो; तस्स 'वग्गे घोसाघोसानं...' ति (२९) इमिना पच्चयभूतस्स थकारस्स तकारो, परनयनञ्च। ओ अन्तो येसन्ते ओदन्ता, तग्गुणसंविञ्ञाणोयं। सरन्ती ति सरा, गच्छन्ति पवत्तन्ती त्यत्थो[2]; राजन्ति विलसन्ति वासूयमानतं गच्छन्ती ति वा, ब्यञ्जनानि सरापेन्ती ति वा सरा[3]। अट्ठा ति पठमाबहुवचनन्तं सङ्ख्यासब्बनामिकपदं—अयमिह पदविग्गहो।

---

१. अक्खरसञ्ञा—म०।

२. ०नीय०—सी०।

1. तु०—"तत्र चतुर्दशादौ स्वराः"—का० १.१.२; "तत्थ अट्ठादो सरा"—सद्द० सु० ३।

2-3. तु०—"सरन्ति गच्छन्ति पवत्तन्ती ति सरा, ब्यञ्जनानि सरापेन्ती ति वा सरा..."—क० न्या०, पि० १६; "स्वयं राजन्त इति स्वरा, एकाकिनोऽप्यर्थ-प्रतिपादने समर्था इति"—दुर्ग०, का० १.१.२; सद्द० वु० सु० ३; महा०, १, पि० २०६।

४. लहुमत्ता तयो रस्सा ।१.१.४।

तत्थ अट्ठसु सरेसु अकारादिसु[१] लहुमत्ता तयो सरा[१] रस्सा नाम होन्ति, तं यथा—अ इ उ इति तयो[१] रस्सा नाम ।

तेन क्वत्थो ? 'रस्सं' (२६) ।

चोदना सुविञ्ञेय्या व। 'तं यथा' त्यादि सरूपपुच्छा। 'अ आ' त्यादि सरूपविस्सज्जना।

एवं अट्ठन्नं सरानं सामञ्ञसञ्ञं दस्सेत्वा, तेसु विसेसभूतं रस्ससञ्ञं दस्सेतुं—

४. लहुमत्ता तयो रस्सा[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति ? 'तत्थोदन्ता सरा अट्ठा' ति (३) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति ? 'तत्थोदन्ता सरा अट्ठा' तिमिना ओदन्तानं अट्ठन्नं अक्खरानं सरसञ्ञा कता; ते किं सरसञ्ञा येव होन्ती ति पुच्छाय सति, ते सरसञ्ञा येव न होन्ति; अट्ठसु सरेसु तिण्णं सरानं रस्ससञ्ञा पि होन्ती ति दस्सेन्तो, 'लहुमत्ता तयो रस्सा' ति वुत्तं—अयमिमस्स निक्खन्ति। किमत्थमिदमुच्चते ? 'अघो रस्समेकवचनयो...' (८४) त्यादिसु रस्सा नामिमे ति ञापनत्थमिदमुच्चते। लहुमत्ता ति एकं, तयो ति एकं, रस्सा ति एकन्ति तिपदमिदं; लहुमत्ता ति सञ्ञि, तयो ति तब्बिसेसनं, रस्सा ति सञ्ञा; सञ्ञाधिकार... पे०...सञ्ञासुत्तन्ति वेदितब्बं। तत्थसद्दो वत्तते; तेन तत्थ अट्ठसु सरेसु लहुमत्ता तयो सरा रस्सा नाम होन्ती त्यत्थो—अयमिह पदत्थो।

लहुका मत्ता येसन्ते लहुकमत्ता ति वत्तब्बे ककारलोपं कत्वा लहुमत्ता ति वुत्तं; अतग्गुणसंविञ्ञाणोयं, यदि तग्गुणो भवेय्य लहुभूता मत्ता पि रस्सा भवेय्युन्ति। मत्तासद्दो पनेत्थ अच्छरासङ्घातअक्खिनिमीलनसङ्घातं कालं वदति। तेन मत्तेन एकमत्ता रस्सा, द्विमत्ता दीघा, अड्ढमत्ता ब्यञ्जना। लहुग्गहणं छन्दसि दियड्ढमत्तस्सा पि सब्यञ्जनस्स सरस्स गहणत्थं[2]। तयो ति पठमा बहुवचनन्तं

---

१. से०, सी०१ पोत्थकेसु नत्थि।

1. तु०—"पूर्वो ह्रस्वः"—का० १.१.५; "एकमत्ता आदिततियपञ्चमा रस्सा"—सद्द० सु० ४; "ह्रस्वं लघु"—पा० १.४.१०।

५. अञ्ञे दीघा।१.१.५।

तत्थ अट्ठसु सरेसु रस्सेहि अञ्ञे पञ्च सरा दीघा नाम होन्ति, तं[1] यथा आ ई ऊ ए ओ इति दीघा नाम[1]।

तेन क्वत्थो ? 'दीघं' (१५)।

सङ्ख्यासब्बनामिकपदं। रस्सकाले नियुत्ता रस्सा। कस्मा गरुसञ्ञा कता त्यादिका चोदना च, वोहारसुखसभावत्थदीपनादिको परिहारो च सुविञ्ञेय्यो व[3]। 'तं यथा' त्यादिका सरूपपुच्छा; 'अ इ उ' त्यादिका सरूपविस्सज्जना। 'तेन क्वत्थो' त्यादिका विसयपुच्छा, 'रस्सं' ति विसयविस्सज्जना च सुविञ्ञेय्या व।

एवं अट्ठसु सरेसु तिण्णं सरानं विसेससञ्ञं दस्सेत्वा अञ्ञेसं पञ्चन्नम्पि सरानं विसेससञ्ञं दस्सेतुं—

५. अञ्ञे दीघा[4] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति ? 'रस्सं' ति (२६) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति ? 'लहुमत्ता तयो रस्सा' ति (४) इमिना अट्ठसु सरेसु तिण्णं सरानं रस्ससञ्ञा कता; ततो अञ्ञेसं पञ्चसरानं कतरसञ्ञा ति पुच्छाय सति, अञ्ञे पञ्च सरा दीघा नामा ति दस्सेन्तो, 'अञ्ञे दीघा' ति वुत्तं—अयमस्स निक्खन्ति। किमत्थमिदमुच्चते ? 'दीघं' (१५, २५) इच्चेवमादिसु दीघा नामिमे ति ञापनत्थमिदमुच्चते—अयमिह सम्बन्धो। अञ्ञे ति एकं, दीघा ति एकन्ति द्विपदमिदं। अञ्ञे ति सञ्ञि, दीघा ति सञ्ञा, सञ्ञाधिकार...पे०...सुत्तेसु सञ्ञासुत्तन्ति वेदितब्बं। अञ्ञसद्दस्स सब्बनामत्ता पठमाबहुवचने एकारो—अयमस्स पदच्छेदो। तत्थ अट्ठसु सरेसु रस्सेहि अञ्ञे द्विमत्ता पञ्च सरा दीघा नाम होन्ती ति अत्थो—अयमिह पदत्थो। अञ्ञे ति पठमाबहुवचनन्तसब्बनामिकपदं; दीघकालमेतेसन्ति दीघा,[5]

१-१. से० पोत्थके नत्थि।

2-3. तु०—न्या०, पि० १६-१७।

4. तु०—"परो दीर्घः—का० १.१.६; "अञ्ञे द्विमत्ता दीघा"—सद्द० सु० ५; "दीघं च"—पा० १.४.१२।

5. "दीघं कालं दीघं; इहा पि तक्कालिका पन तब्बोहारेन दीघा ति वुत्ता; तमेतेसमत्थी ति वा दीघा...द्विमत्ता दीघा ति अवत्वा अञ्ञे दीघा ति वचनं तियड्ढमत्तिकानं पि सङ्गहणत्थं ति वेदितब्बं"—क० न्या०, पि० १७।

६. सेसा ब्यञ्जना।१.१.६।

ठपेत्वा अट्ठ सरे, सेसा अक्खरा ककारादयो निग्गहीतन्ता ब्यञ्जना नाम होन्ति, तं यथा--क ख ग घ ङ। च छ ज झ ञ। ट ठ ड ढ ण। त[१] थ द ध न[१]। प फ ब भ म। य र ल व स ह ळ अं इति ब्यञ्जना नाम[२]।

तेन क्वत्थो? 'सरा पकति ब्यञ्जने' (२३)।

पञ्च सरा--अयमिह पदविग्गहो। कस्मा गरुसञ्ञा कता त्यादिका चोदना च, गरुसञ्ञा वोहारसुखभावत्थञ्च दीपेती त्यादिको परिहारो च, सरूपपुच्छा विस्सज्जना च सुविञ्ञेय्या व। अञ्ञग्गहणं दियड्ढमत्तिकानम्पि सङ्गहणत्थं। क्वचि संयोगपुब्बा एकारोकारा रस्सा ति वुच्चन्ते[1]। एत्थ सेय्यो ओट्ठो सोत्थि। क्वचिग्गहणं "मञ्चे त्वं निखणं वने" त्यादिसु रस्सनिवत्तनत्थं। 'एत्था' त्यादि सुद्धसरवसेन वुत्तं; 'सेय्यो' त्यादि ब्यञ्जनपटिबद्धवसेन वुत्तं। सरूपपुच्छा विस्सज्जना च सुविञ्ञेय्या व।

एवं ओदन्तानं अक्खरानं सामञ्ञसञ्ञासङ्खातं सरसञ्ञञ्च विसेससञ्ञासङ्खातं रस्सदीघसञ्ञञ्च सन्दस्सेत्वा ककारादिनिग्गहीतन्तानं अक्खरानं सामञ्ञसञ्ञं दस्सेतुं--

६. **सेसा ब्यञ्जना**[2] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'तत्थोदन्ता सरा अट्ठा' ति (३) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? 'तत्थोदन्ता सरा अट्ठा' तिमिना आदितो अट्ठन्नं ओदन्तक्खरानं सरसञ्ञा कता; ततो सेसानं ककारादिनिग्गहीतन्तानं वण्णानं किं अक्खरसञ्ञा येवा ति पुच्छाय सति, सेसानं ककारादीनं निग्गहीतन्तानं अक्खरानं ब्यञ्जनसञ्ञा पि होती ति दस्सेन्तो, सेसा ब्यञ्जना ति वुत्तं--अयमस्स निक्खन्ति। किमत्थमिदमुच्चते? 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' (३०) इच्चेवमादिसु ब्यञ्जना नामिमे ति ञापनत्थमिदमुच्चते--अयमिह सम्बन्धो।

१-१. से०, सी०२ पोत्थकेसु नत्थि। २. नाम होन्ति-से०।

1. द०-"अआदयो तितालीस वण्णा"-मो० १.१।

2. तु०-"कादीनि ब्यञ्जनानि"-का० १.१.९; "सेसा अड्ढमत्ता ब्यञ्जना"-सद्द० सु० ६।

७. वग्गा पञ्चपञ्चसो मन्ता।१.१.७।

तेसं खो ब्यञ्जनानं ककारादयो मकारन्ता पञ्च-पञ्चसो अक्खरवन्तो वग्गा नाम होन्ति, तं यथा--

क ख ग घ ङ।

च छ ज झ ञ।

ट ठ ड ढ ण।

त थ द ध न।

प फ ब भ म। --इति वग्गा नाम[1]।

तेन क्वत्थो ? 'वग्गन्तं वा वग्गे' (३१)।

सेसा ति एकं, ब्यञ्जना ति एकन्ति द्विपदं। सेसा ति सञ्ञिनिद्देसो, ब्यञ्जना ति सञ्ञानिद्देसो। ये यथावुत्तेहि सरेहि रस्सेहि दीघेहि वा सेसा, ते ब्यञ्जना नामे त्यत्थो--अयमिमस्स पदत्थो। सिसन्ती ति सेसा; सिस-असब्बप्पयोगे 'विसरुजपदादितो णो' ति (५३०) णप्पच्चयो, ततो योवचनस्साकारो। ब्यञ्जीयति अत्थो एतेही ति ब्यञ्जना, विपुब्ब-अञ्जु-ब्यत्तिगतीसु युप्पच्चयो, योवचनस्साकारो। सरानं पटिलद्धविसेसना मत्ता नेव ब्यञ्जना, यथा अस्सो ति[1]।

एवं ककारादीनं निग्गहीतन्तानं अक्खरानं सामञ्ञभूतं ब्यञ्जनसञ्ञं दस्सेत्वा, तेसं विसेसभूतं वग्गसञ्ञं दस्सेतुं--

७. वग्गा पञ्चपञ्चसो मन्ता[2] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति ? 'सेसा ब्यञ्जना' ति (६) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति ? 'सेसा ब्यञ्जना' तिमिना सरतो सेसानं तेत्तिसक्खरानं

---

१. नाम होन्ति–से०।

1. तु०–"सेसन्ती ति सेसा...ब्यञ्जीयति अत्थो एतेही ति ब्यञ्जना...सरा पन किञ्चा पि अत्थं ब्यञ्जयन्ति"–क० न्या०, पि० १८; "...ससरं वण्णसमुदायं निस्साय अत्थं ब्यञ्जयन्ति पाकटं करोन्ती ति ब्यञ्जना; सद्धम्मनेरुत्तिका पन 'सरं जनेन्ती ति ब्यञ्जनानी' ति वदन्ति, 'सरे अनुगच्छन्ती ति ब्यञ्जनानी' ति वेदविदू"–सद्द० सु० ७; महा०, भा० १, पि० २०६।

2. तु०–"ते वर्गाः पञ्च पञ्च पञ्च"–का० १.१.१०; "कादी मन्ता वग्गा"–सद्द० सु० ७।

ब्यञ्जनसञ्ञा कता; ते तेत्तिसक्खरा किं ब्यञ्जनसञ्ञा चे ति पुच्छाय सति, तेसं तेत्तिसक्खरानं वग्गसञ्ञा पि अवुत्तसिद्धिनयतो अवग्गसञ्ञा पी ति दस्सेन्तो, 'वग्गा पञ्चपञ्चसो मन्ता' ति वुत्तं। वुत्तञ्च कारिकायं--

"वग्गसञ्ञकसुत्तेन अवग्गा पि कथीयते"। ति।[1]

अयमस्स निक्खन्ति। किमत्थमिदमुच्चते ? 'वग्गे घोसाघोसानं ततियपठमा' (२९) इच्चेवमादिसु 'वग्गा नामिमे' ति ञापनत्थमिदमुच्चते ति--अयमिह सम्बन्धो।

वग्गा ति एकं, पञ्चपञ्चसो ति एकं, मन्ता ति एकन्ति तिपदमिदं। वग्गा ति सञ्ञा, पञ्चपञ्चसो ति तब्बिसेसनं, मन्ता ति सञ्ञी। मकारपरियन्ता ब्यञ्जना पञ्चपञ्चविभागेन वग्गा नामा त्यत्थो। मकारपरियन्ता पञ्चपञ्चसो अक्खरवन्तो वग्गा नामा ति वा अत्थो। पुरिमपक्खे पञ्चपञ्चसो ति इदं वग्गा तिमस्स विसेसनं, पञ्चपञ्चविभागेना त्यत्थो; पच्छिमपक्खे पञ्चपञ्चसो तिदं ब्यञ्जना तिमस्स विसेसनं, पञ्चपञ्चसो अक्खरवन्तो ब्यञ्जना वग्गा नामा त्यत्थो। पदत्थस्स पच्चयत्थस्स च भेदाभावे पि अभेदोपचारेन पञ्चपञ्चएतेसमत्थी ति वुत्तं, यथा अट्ठङ्गिको मग्गो ति--अयमिह पदत्थो।

पठमन्तो वग्गसद्दो समूहवाचको; अथ वा वग्गीयन्ती ति वग्गा, वग्गधातु उच्चारणे अप्पच्चयो, सकसकट्ठाने उच्चारीयन्ते त्यत्थो। पञ्चपञ्चविभागेन पञ्चपञ्चसो, विभागत्थे सोप्पच्चयो, पञ्चपञ्चमेतेसमत्थी ति वा पञ्चपञ्चसो, अत्थ्यत्थे चसद्देन सोप्पच्चयो, मो अन्तो येसं ते ति मन्ता, पञ्चवीसति ब्यञ्जना; ते पन सामञ्ञवसेन वुत्ते पि पठमक्खरादिवसेन कवग्गादिवोहारं लभन्ति; एकेकक्खरा पि च कवग्गचवग्गादिवोहारं लभन्ति, पञ्चवग्गी-छब्बग्गी-पण्डकलोहितकादयो विय। तेसु हि एकेको पि पञ्चवग्गी ति च छब्बग्गी ति च पण्डकलोहितका ति च वुच्चति। तथा हि वुत्तं- "'वग्गन्तं वा वग्गे' ति च, 'कवग्गस्स चवग्गो' ति च 'पञ्चपञ्चा' ति तीसु वीच्छास गुणवीच्छा, वग्गनामसङ्खातगुणेन ब्यापितत्ता" ति[2]।

---

1. का०, १०१।

2. तु०-"एत्थ च पञ्चपञ्चा ति विच्छावचनं, यथा गामो गामो रमणीयो तिमिना पञ्च हुत्वा वग्गसञ्ञं पटिलभन्तानं बहुतं दस्सेति..."-क० न्या०, पि० १९; "वग्गन्ति पञ्च-

८. अं इति निग्गहीतं । १. १. ८।

अं इति निग्गहीतं नाम होति[१]।

तेन क्वत्थो ? 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' (३०)।

एवं ब्यञ्जनानं वग्गावग्गसञ्ञं दस्सेत्वा, अट्ठसु अवग्गेसु अं इति वत्तब्बस्स बिन्दुनो निग्गहीतसञ्ञं दस्सेतुं––

८. अं इति निग्गहीतं[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति ? 'वग्गा पञ्चपञ्चसो मन्ता' ति (७) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति ? 'वग्गा पञ्चपञ्चसो मन्ता' ति सुत्तेन मकारन्तानं पञ्चवीसतिब्यञ्जनानं वग्गसञ्ञा च, यकारादीनं अट्ठन्नं ब्यञ्जनानं अवग्गसञ्ञा च कता; अट्ठसु अवग्गेसु अं इति वत्तब्बबिन्दु किं अवग्गा ति येव वत्तब्बा ति पुच्छाय सति, अं इति वत्तब्बबिन्दु अवग्गा ति येव न वत्तब्बं, निग्गहीतन्तं ति पि वत्तब्बन्ति दस्सेन्तो 'अं इति निग्गहीतं' ति वुत्तं।

किमत्थमिदमुच्चते ? 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' (३०) इच्चेवमादिसु निग्गहीतं नामिदन्ति ञापनत्थमिदमुच्चते। अकारो इह उच्चारणत्थो। अं ति एकं, इती ति एकं, निग्गहीतं ति एकन्ति तिपदमिदं। अन्ति सञ्ञि, इती ति अनन्तरत्थे निपातो, निग्गहीतन्ति सञ्ञानिद्देसो। अं इति यं वुत्तं तं निग्गहीतन्नाम होती त्यत्थो। 'निग्गय्ह गय्हती' ति निग्गहीतं। किं निग्गय्ह गय्हती ति ? करणं निग्गय्ह गय्हति। करणन्ति नासिकसङ्खातं करणं; निग्गय्हा ति निग्गण्हित्वा। वुत्तञ्च––

"करणं निग्गहेत्वान मुखेनाविवटेन यं।
वुच्चते निग्गहीतन्ति वुत्तं बिन्दुसरानुगं"॥ ति।

पञ्चविभागेन गच्छन्ति पवत्तन्ती ति वग्गा, वग्गीयन्ति वा पञ्चपञ्चविभागेन इमे ठिता ति गमीयन्ति ञायन्ती ति वग्गा; अपि च समूहत्थो वग्गसद्दो–सद्द० वु० सु० ७।

१. नत्थि से० पोत्थके।

1. तु०–"अं इत्यनुस्वारः"–का० १.१.१९; "अंइउमिति यं सरतो परं सुय्यति, तं निग्गहीतं"–सद्द० सु० ८।

९. परसमञ्ञा पयोगे।१.१.९।

या च पन सक्कतगन्थेसु[१] समञ्ञा घोसा ति वा अघोसा ति वा ता पयोगे सति एत्था पि युज्जन्ते[२]।

तत्थ घोसवन्तो नाम––ग, घ, ङ; ज, झ, ञ; ड, ढ, ण; द, ध, न; ब, भ, म; य, र, ल, व, ह, ळ इति घोसा नाम।

अघोसा नाम––क, ख; च, छ; ट, ठ; त, थ; प, फ; स इति अघोसा नाम।

तेन क्वत्थो? 'वग्गे घोसाघोसानं ततियपठमा' (२९)।

'निस्साय गय्हती' ति वा निग्गहीतं। किं निस्साय? रस्ससरं निस्साया ति[1]।

"पदमज्झे पदन्ते वा ठितं बिन्दुसरानुगं।
ञत्तियं कम्मवाचायं भनने निग्गहीतकं॥
दुतियातो मकारन्तं उपज्झं गहणादिसु।
वग्गन्तं निग्गहीतन्तं यथारहमुदीरये॥
सरणागमने दाने बिन्दवन्तमत्तकं तथा।
अवग्गेसु हकारन्तं ङादेसो नत्थि सासने"॥ ति।

चोदनापरिहारसरूपपुच्छाविस्सज्जनादिका सुविञ्ञेय्या व।

एवं एकचत्तालीसवण्णानं सामञ्ञविसेसभूतं सकसञ्ञं विधाय, पयोगे सति इधा पि तेसं परसमञ्ञा योजेतब्बा ति अनुजानन्तो––

९. परसमञ्ञा पयोगे ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? अट्ठविधसकसञ्ञासुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? 'अक्खरापादयो एकचत्तालीसं' (२)...पे०...'अं इति

---

१. ० गन्धेसु–से०। २. पयुज्जन्ते–से०।

1. तु०–"निस्साय गय्हती ति निग्गहीतं; किं निस्साया ति चे? सरं निस्साया ति ...अं निग्गहीतं ति वुत्ते पि सिद्धे इति सद्देन तमेव अत्थं पकासेति, सद्दाधिका अत्थाधिको होती ति–क० न्या०, पि० १९; "एत्थ च निग्गहीतं ति सासने वोहारो, सद्दसत्थे पन तं अनुस्वारो ति वदन्ति"–सद्द० वु० सु० ८।

निग्गहीतं' (८) त्यादीहि अट्ठहि सुत्तेहि एकचत्तालीसवण्णानं सामञ्ञविसेससङ्खाता सकसञ्ञा विहिता; किं इध तेसं सकसञ्ञा येव योजेतब्बा ति पुच्छाय सति तेसं घोसाघोसूपधादयो परसमञ्ञा पि इध पयोगे सति योजेतब्बा ति दस्सेन्तो 'परसमञ्ञा पयोगे' ति वुत्तं--अयमस्स निक्खन्ति। किमत्थमिदमुच्चते? 'वग्गे घोसाघोसानं ततियपठमा' (२९), 'गहस्सुपधस्सेवा' ति (६३१) एवमादिसु घोसाघोसूपधादयो इमे ति ञापनत्थमिदमुच्चते ति। परसमञ्ञा ति एकं, पयोगे ति एकन्ति द्विपदमिदं। परसमञ्ञा ति कम्मत्थो, पयोगे ति भावसत्तमी, सञ्ञा...पे०...सुत्तेसु परिभासासुत्तन्ति वेदितब्बं। परेसम्पि समञ्ञा युत्तट्ठाने इध योजेतब्बा त्यत्थो। परेसं समञ्ञा परसमञ्ञा, वेय्याकरणानं समञ्ञा ति अत्थो; परस्मिं वा समञ्ञा परसमञ्ञा, सक्कतगन्थे समञ्ञा ति वा अत्थो। पयुज्जनं पयोगो; तस्मिं पयोगे सती ति सम्बन्धो[1]। परसमञ्ञा नाम घोसाघोसलोपसवण्णसमानसंयोगलिङ्ग-पदनिपातोपसग्गपच्चयादयो। सरूपा ति एत्थ समानं रूपं सभावो एतेसन्ति सरूपा, सवण्णा एव[2]; तत्थ वग्गानं पठमदुतिया सकारो च अघोसा[3], वग्गानं ततियचतुत्थपञ्चमा यरलवहळा च घोसा नाम[4]; एत्थ च वग्गदुतियचतुत्थपञ्चमा धनिता ति पि वुच्चन्ति[5], इतरे सिथिला ति वुच्चन्ति[6]; विनासो लोपो[7]; रस्ससरा सकसकदीघेहि अञ्ञमञ्ञं सवण्णा नाम, सरूपा ति पि वुच्चन्ति; सरानन्तरितानि ब्यञ्जनानि संयोगो[8]; धातुप्पच्चयविभत्तिवज्जितमत्थवल्लिङ्गं[9]; विभत्त्यन्तं पदं[10]; इच्चेवमादीनं सुखग्गहणत्थं सिथिलादीनं सङ्गहगाथा--

1. तु०-क० न्या०, पि० २०।

2. तु०-"तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम्"-पा० १.१.९; "अ आ अवण्णो इ ई इवण्णो उ ऊ उवण्णो, ते एव युगळा सवण्णा, एकारोकारा असवण्णा"-सद्द० सु० ८ अ।

3. तु०-"पठमदुतियानि सो च अघोसा"-त०, सु० १७।

4. तु०-"ततियचतुत्थपञ्चमा यरलवहळा घोसवन्तो"-त०, सु० १८।

5. तु०-"वग्गेसु पठमततियं सिथिलं"-त०, सु० १४।

6. तु०-"दुतियचतुत्थं धनितं"-त०, सु० १५।

7. तु०-'अदर्शनं लोपः-"-पा० १.१.६०।

8. तु०-"हलोऽनन्तराः संयोगः"-पा० १.१.७।

9. तु०-"धातुविभक्तिवर्जमर्थवल्लिङ्गम्"-का० २.१.१; "अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्"-पा० १.२.४५।

10. तु०-"सुप्तिङन्तं पदम्"-त०, १.४.१४; "पूर्वपरयोरर्थोपलब्धौ पदम्"-का० १.१.२०; "विभत्यन्तमविभत्यन्तं वा अत्थजोतकं पदं"-सद्द० सु० २७।

१०. पुब्बमधोठितमस्सरं सरेन वियोजये ।१.१.१०।

तत्थ सन्धिं कत्तुकामो पुब्बब्यञ्जनं अधोठितमस्सरं कत्वा, सरञ्च उपरि कत्वा, सरेन वियोजये । तत्रायमादि ।

"एत्थ पञ्चसु वग्गेसु वग्गानं पठमा परा।
वग्गानं दुतिया पि च सकारो च तथा परो॥
अब्यत्तनादयुत्तत्ता अघोसा ति पकासिता।
वग्गानं ततिया चेव चतुत्थपञ्चमा तथा॥
यरलवा च हळा चेव एकवीसति ब्यञ्जना।
ब्यत्तनादेन युत्तत्ता घोसा इति पकासिता॥
पञ्चवग्गेसु यं वुत्तं पठमं ततियं तथा।
दसधा ब्यञ्जनं एतं सिथिलन्ति पकासितं॥
पञ्चवग्गेसु दुतियं चतुत्थं धनितव्हयं।
गाळ्हवचिपयोगेन वत्तब्बक्खरभावतो"॥ ति ।

कस्मा इहेतं वुत्तन्ति चोदना, अत्तनो सञ्ञं वत्वा परस्स सञ्ञा[1] वत्तब्बतो इहेतं वुत्तन्ति परिहारो । सरूपपुच्छा-विस्सज्जनादयो सुविञ्ञेय्या व ।

एवं अक्खरादिवसेन अनेकविधं सकसञ्ञाविधानञ्च घोसाघोसादिवसेन अनेकविधं परसञ्ञाविधानञ्च विधाय, मुख्योपचारवसेन दुविधं सन्धिं कत्तुकामो पुब्बभागे अक्खरवियोगं कातब्बन्ति दस्सेतुं–

१०. पुब्बमधोठितमस्सरं सरेन वियोजये[1] ति विध्यङ्गपरिभासमाह। दुविधो सन्धि—मुख्यत्थसन्धि-उपचारसन्धिवसेन। एत्थ च मुख्यत्थसन्धि-समोधानं सन्धी ति वुत्तं; एकीभावुपगमनं। वुत्तञ्च कारिकायं—

---

१. पच्छा–म० ।

1. तु०–"अनतिक्रमयन् विश्लेषयेत्"–का० १.१.२२; "एङः पदान्तादति"–पा० ६.१.१०९; "सरा वियोजये ब्यञ्जनं तं चस्स पुब्बे ठपेय्य"–सद्द० सु० २८; "तत्थ सन्धिं कत्तुकामो, यस्मा ब्यञ्जनेन सरे पटिच्छन्ने कोसिया पटिच्छन्ने असिम्हि असिकिच्चं व सन्धिकिच्चं न सिज्झति, तस्मा 'तत्रायं' ति आदिसु पदसन्धिविसयेसु 'तत्र–अयं' ति आदिना छेदं कत्वा, साहु, एकसतं खत्या त्यादिसु पन वण्णसन्धिविसयेसु 'साधु, एकसतं, खत्तिया' इति आदीनि पदरूपानि पतिट्ठपेत्वा, सरतो ब्यञ्जनं वियोजये, तञ्च ब्यञ्जनं तस्स सरस्स पुब्बे ठपेय्य"–त० ।

"पदभेदो पदच्छेदो पदसन्धि च संहिता"[1]। ति।

उपचारसन्धि नाम––आगमलोपआदेसविकारपकतिदीघरस्सवसेन सत्तविधो। वुत्तञ्च निरुत्तियं––

"आगमालोपदेसा च विकारो पकती पि च।
दीघरस्सवसेना पि सन्धि सत्तविधो भवे"।। ति।

इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? वक्खामी ति पदस्स कम्मभूतसुसन्धिकप्पन्ति पदप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? सुसन्धिकप्पं वक्खामी ति वुत्तं; सन्धिं कत्तुकामेन पुब्बभागे किं कातब्बन्ति पुच्छाय सति, सन्धिं कत्तुकामो पठमं सरतो ब्यञ्जनं वियोजये, तं कातब्बन्ति दस्सेन्तो 'पुब्बमधोठितमस्सरं सरेन वियोजये' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? सन्धिं कत्तुकामो पदच्छेदे कते पुब्बब्यञ्जनं अधोठितं अस्सरं कत्वा, सरञ्च उपरि कत्वा, सरतो वियोजये ति ञापनत्थं। पुब्बन्ति एकं, अधोठितन्ति एकं, अस्सरन्ति एकं, सरेना ति एकं, वियोजये त्येकन्ति पञ्चपदमिदं। पुब्बन्ति कम्मत्थनिद्देसो, अधोठितन्ति तब्बिसेसननिद्देसो कम्मत्थनिद्देसो वा, अस्सरन्ति तब्बिसेसननिद्देसो कम्मत्थनिद्देसो वा, सरेना ति अवधिनिद्देसो, वियोजये ति क्रियानिद्देसो; सञ्ञाधिकारपरिभासाविधिसुत्तेसु विध्यङ्गपरिभासासुत्तन्ति वेदितब्बं। तत्था ति तेसु नवसु सञ्ञाविधानेसु। वुत्तञ्च––

"अक्खरञ्च सरो चेव रस्सदीघञ्च ब्यजनं।
वग्गो च निग्गहीतञ्च घोसाघोसेहि नवमं"।। ति

अथ वा तेसु सरब्यञ्जनेसु तत्रायमादी त्यादिसु वा सन्धिं कत्तुकामो आचरियो पुब्बब्यञ्जनं अधोठितं कत्वा, अस्सरं कत्वा, सरञ्च उपरि कत्वा, सरतो वियोजये वियोजेय्या त्यत्थो। 'सो-सीलवा' त्यादिसु किं वियोजेय्या ति सन्देहनिवत्तनत्थं पुब्बन्ति वुत्तं। वुत्तञ्च––

"ससीलवादिके पादे छेदे सो सीलवादिके।
सरतो किं वियोजेय्य सन्देहो पुब्बमादिसे"।। ति।

पुब्बब्यञ्जनं वियोजेत्वा कुहिं ठपेय्या ति सङ्काय निवत्तनत्थं अधोठितं ति वुत्तं। वुत्तञ्च––

---

१. का०, १३७।

"सरतो ब्यञ्जनं पुब्बं वियोजेत्वा कुहिं ठपे।
इति सङ्कानिसेधत्थमादिसे पुनधोठितं"[1]।। ति।

अधोठितं कत्वा ति एत्थ अनागतत्थे त्वाप्पच्चयो, 'पिदहित्वा निक्खमती' त्यादिसु विय; अस्सरं कत्वा ति एत्थ त्वाप्पच्चयो समानकाले पवत्तति, 'तमं हन्त्वान उग्गच्छती' त्यादिसु विय; वुत्तियं सरञ्च उपरि कत्वा ति च अनागतत्थे। पुब्बे जातो ति पुब्बो ब्यञ्जनो, तं ब्यञ्जनं; अधोभागे तिट्ठती ति अधोठितो, ब्यञ्जनो येव, तं ब्यञ्जनं; नत्थि सरो एतस्सा ति अस्सरो, तं अस्सरं; सरेना ति सरतो त्यत्थो। एत्थ च न्यासे सरेना ति स्मावचनस्स नादेसं कत्वा तस्स एनादेसवसेन वुत्तं; रूपसिद्धियं पन पञ्चम्यत्थे ततियावसेन च सहत्थे ततियावसेन च वुत्तं; 'पियेहि विप्पयोगो' त्यादिसु विय[2]। कस्मा सरेन सह ब्यञ्जनवियोगस्स युज्जनतो

---

1. तु०—"पुब्बभूतं ब्यञ्जनं अधोठितमस्सरं कत्वा सरतो वियोजये ति अत्थो...'सरतो ब्यञ्जनं वियोजये' ति अवत्वा कस्मा एवं वुत्तं ति ? यदि पनेवं वुत्तं भवेय्य 'ससीलवा' त्यादिसु सो-सीलवा ति पदच्छेदे कते कतरं ब्यञ्जनं सरतो वियोजये ति सन्देहो जायेय्य, पुब्बापरं ति नियमाभावा, तं सन्देहनिवत्तनत्थं पुब्बग्गहणं कतं। पुब्बे ठितं ब्यञ्जनं सरतो वियोजेत्वा कत्थ ठपेतब्बं ति सन्देहो जायेय्य, तं सन्देहनिवत्तनत्थं अधोठितग्गहणं कतं। आह च वुत्तियं—'पुब्बब्यञ्जनं अधोठितमस्सरं कत्वा' ति। अयं हेत्थत्थो—अधोठितं कत्वा अस्सरं कत्वा ति। अस्सरग्गहणं पन कस्मा कतं, असति पि अस्सरग्गहणे सरेन वियोजये ति वुत्तत्ता व तदत्थो विञ्ञायती ति ? सच्चं; उत्तरसुत्तत्थमस्सरग्गहणं; अयं हेत्थत्थो—'अधोठितं अस्सरं ब्यञ्जनं परक्खरं नये' ति। एवं हि सति 'कस्मा तत्थेव न वुत्तं' ति चोदना। इहा पि किञ्चि मत्तत्था सम्भवतो। असति हि अस्सरग्गहणे सरेने ति एव पठितत्ता किं पुब्बब्यञ्जनं अधोठितं कत्वा सरेन सह वियोजेतब्बं ति सन्देहो जायेय्य, अस्सरग्गहणे सति अस्सरं कत्वा सरेन सहा ति अत्थस्स अयुत्तत्ता; सरेने ति एत्थ सरतो ति अत्थो लब्भति। किं नामेतं, वियोजये ति वुत्तत्ता व तदत्थो पि लब्भती ति ? न लब्भति; बन्धुस्सेव समागमो त्यादिसु बन्धुस्स-इवा ति छेदे कते परपदं पटिच्च परसकारस्स पुब्बब्यञ्जनत्ता पुरिमसकारतो अधोठितं कत्वा परपदं पटिच्च तं पुब्बब्यञ्जनं सरेन सह वियोजेतब्बं ति अत्थस्स सम्भवतो। कस्मा पनेत्थ सरतो ति अवत्वा एवं वुत्तं ति ? येन केनचि आकारेन सिस्सानं परिणतुप्पादनत्थं, पञ्चम्यन्तस्सा पि एवरूपं रूपं भविस्सती ति... अयं पन करुणायेवापराधो नाचरियस्स यथायेवमकासी ति। अस्सरं ति एत्थ अकारो विरहत्थो"—क० न्या०, पि० २०-२१; द०— M.Mason, Kachchapana's Pali grammar, भूमिका, पि० ७।

२. क० न्या०, पि० २१; रूप० सु० १२।

११. नये परं युत्ते। १.१.११।

अस्सरं खो ब्यञ्जनं अधोठितं परक्खरं नये युत्ते। तत्राभिरतिमिच्छेय्य।

युत्ते ति कस्मा? 'अक्कोच्छि मं अवधि मं अजिनि मं अहासि मे' एत्थ पन युत्तं न होति।

–इति सन्धिकप्पे पठमो कण्डो।

ति चोदनादयो सुविञ्ञेय्या व। पुब्बब्यञ्जनं अधोठितं कत्वा, अस्सरं कत्वा, सरञ्च उपरि कत्वा, वियोजये ति वुत्तं। कथमेवं वियोजनं कातब्बन्ति पुच्छाय सति 'तत्रायमादी' ति वुत्तं। तत्थ 'जिनवचनयुत्तं ही' ति (५२) सुत्तं अधिकारं कत्वा, 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ति (५३) सुत्तेन तत्र–अयं ति छेदं कत्वा, तं ठपेत्वा, 'अक्खरापादयो एकचत्तालीसं ति (२) इमिना बिन्दुना सह 'तत्र' त्यादीनं सत्तन्नं वण्णानं अक्खरसञ्ञं कत्वा, 'तत्थोदन्ता सरा अट्ठा' ति (३) इमिना अकारचतुक्कस्स च आकारिकाराणञ्च सरसञ्ञं कत्वा, तेसु अकारचतुक्कस्स च पच्छिम-इकारस्स च 'लहुमत्ता तयो रस्सा' ति (४) इमिना रस्ससञ्ञं कत्वा, 'अञ्ञे दीघा' ति (५) इमिना आकारस्स दीघसञ्ञं कत्वा, 'सेसा ब्यञ्जना' ति (६) इमिना सेसानं सह बिन्दूनं पञ्चन्नं अक्खरानं ब्यञ्जनसञ्ञं कत्वा, 'अं इति निग्गहीतं' ति (८) इमिना बिन्दुनो निग्गहीतसञ्ञं च कत्वा, 'पुब्ब...वियोजये' ति (१०) इमिना अकारतो त्रब्यञ्जनं वियोजेत्वा, तं अधोभागे कमतो ठितं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति (१२) इमिना सरे पुब्बभूतस्स त्रकारावयवस्स अकारस्स लोपं कत्वा, 'सरा सरे लोपं', 'वा परो असरूपा' (१३), 'क्वचासवण्णं लुत्ते' (१४) त्यधिकिच्च 'दीघं' ति (१५) इमिना परसरस्स दीघं कत्वा परक्खरं नेतब्बं। इतरपक्खे 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' (३०), 'वग्गन्तं वा वग्गे' (३१) त्यधिकिच्च यथावुत्तनिग्गहीतस्स 'मदा सरे' ति (३४) अकारस्मिं परे मकारादेसं कत्वा, 'नये परं युत्ते' ति (११) इमिना परक्खरं नेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं सन्धिं कत्तुकामस्स वियुज्जनपरिभासासुत्तं दस्सेत्वा, संयोजनपरिभासासुत्तं दस्सेतुं––

११. नये परं युत्ते[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? वक्खामी ति पदस्स कम्मभूतसन्धिकप्पन्ति पदप्पभवं तन्निदानं ततो

---

1. तु०–"ब्यञ्जनमस्वरं परं वर्णं नयेत्"–का० १.१.२१; "नेतब्बं असरं परक्खरं नये"–सद्द० सु० २९; "अज्झीनं परेण संयोज्यम्"–परि०, पा० २.१.१३।

निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति। सन्धिकप्पं वक्खामी ति वुत्तं। किं सन्धिं कत्तुकामो वियुज्जनमेव कातब्बन्ति पुच्छाय सति, वियुज्जनमेव न कातब्बं, परनयनञ्च कातब्बन्ति दस्सेन्तो, 'नये परं युत्ते' ति वुत्तन्ति; अथ वा 'पुब्बमधो... वियोजये' ति (१०) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति? 'पुब्बमधो... वियोजये' तिमिना सरतो वियोगं करोति; किं वियोजेत्वा व सन्धिं कातब्बन्ति पुच्छाय सति, सरतो वियोजेत्वा, युत्तट्ठाने परक्खरं नेत्वा, सन्धि कातब्बन्ति दस्सेन्तो, 'नये परं युत्ते' ति सुत्तं वुत्तं ति—अयमस्स निक्खन्ति। किमत्थमिदमुच्चते? सन्धिं कत्तुकामो सरतो वियोजितक्खरं वा आगमादेससङ्खातक्खरं वा अस्सरं युत्तट्ठाने परक्खरं नेतब्बन्ति ञापनत्थं। नये ति एकं, परन्ति एकं, युत्ते ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। नये ति क्रियानिद्देसो, परन्ति कम्मत्थनिद्देसो, युत्ते ति भावसत्तमीनिद्देसो, सञ्ञा...पे०... परिभासासुत्तं ति वेदितब्बं। अस्सरं ब्यञ्जनं युजितब्बट्ठाने परक्खरं नये त्यत्थो। वियोगानन्तरं संयोगस्स वत्तब्बतो इहेतं वुत्तं।

तत्राभिरतिमिच्छेय्या ति उदाहरणं। तत्र-अभिरतिं-इच्छेय्या ति छेदं कत्वा, वुत्तनयेन अक्खरसञ्ञञ्च सरसञ्ञञ्च रस्सदीघसञ्ञञ्च ब्यञ्जनसञ्ञञ्च निग्गहीतसञ्ञञ्च कत्वा, पुब्बपक्खे 'सरा सरे लोपं' ति (१२) पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, 'सरा सरे लोपं', 'वा परो असरूपा' (१३), 'क्वचासवण्णं लुत्ते' (१४) त्यधिकिच्च 'दीघं' ति (१५) दीघं कत्वा, इमिना परक्खरं नेतब्बं। इतरपक्खे पन 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' (१३) 'वग्गन्तं वा वग्गे' (३१) त्यधिकिच्च 'मदा सरे ति (३४) निग्गहीतस्स मकारं कत्वा, इमिना परनयनं कातब्बं।

युत्ते ति किमत्थं? 'अक्कोच्छि मं' त्यादिसु निग्गहीतस्स परनयननिसेधनत्थं। वुत्तञ्च रूपसिद्धियं—"एत्थ युत्तग्गहणं निग्गहीतनिसेधनत्थं" ति[1]। तट्टीकायञ्च वुत्तं—"निग्गहीतनिसेधनत्थं ति निग्गहीतस्स परनयननिसेधनत्थं। तस्सा पि अस्सरत्ता ब्यञ्जनसञ्ञापटिलाभा ब्यञ्जनत्ता च मकारादि-आदेसानन्तरभावे 'नये परं युत्ते' ति परनयनं कातब्बन्ति सन्देहो भवेय्य। ततो तं निवत्तनत्थं युत्तग्गहणं कतन्ति दट्ठब्बं" ति। सुत्तनिद्देसे पि वुत्तं—"अक्कोच्छि मं अवधि मं ति एत्थ पयोगे मकारस्स परअकारनयनं वा, निग्गहीतस्स परअकारनयनं वा 'मदा सरे' ति (३४) इमिना मकारं कत्वा परअकारनयनं वा युत्तं न होति, वण्णकाल-

1. रूप० सु० १४।

(२) दुतियो कण्डो

१२. सरा सरे लोपं।१.२.१।

सरा खो सब्बे पि सरे परे लोपं पप्पोन्ति। यस्सिन्द्रियानि समथं गतानि, नोहेतं भन्ते, समेतायस्मा सङ्घेन।

ब्यवहितत्ता सन्धि न होती ति ञापनत्थन्ति वुत्तं"। एत्थायमधिप्पायो—'अक्कोच्छि मं अवधि मं' ति एत्थ निग्गहीतस्स परसरत्ता परनयनं न युत्तं, मकारसहितस्स अकारस्स 'सरा सरे लोपं' ति (१२) सरलोपं कातुम्पि न युत्तं, बिन्दुसङ्खातेन वण्णेन ब्यवहितत्ता; मकारं कत्वा परनयनम्पि कातुं न युत्तं, वण्णकालब्यवहितत्ता ति।

"अप्पमत्तो पमत्तेसु सुत्तेसु बहु जागरो।
अबलस्सं व सीघस्सो हित्वा याति सुमेधसो"[1]॥ ति।

एत्थ कालब्यवधानं, इध वण्णब्यवधानं ति च वदन्ति।

इति कच्चायनवण्णनायं
सन्धिकप्पस्स पठमकण्डवण्णना।

---

(२) दुतियो कण्डो

एवं अट्ठहि सुत्तेहि सकसञ्ञा-परसञ्ञञ्च वियुज्जनसंयुज्जनपरिभासा-सुत्तञ्च विधाय, इदानि पदसन्धिवण्णसन्धीनं वसेन द्विन्नं सन्धीनं विधिकारकसुत्तं दस्सेतुं—

१२. सरा सरे लोपं[2] ति आदिमाह। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'पुब्बमधो...वियोजये' (१०), 'नये परं युत्ते' ति (११) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। क्विन्निक्खन्तन्ति? यस्सिन्द्रियानी त्यादिसु यस्स-इन्द्रियानी ति छेदे कते 'पुब्ब...वियोजये' तिमिना सरतो वियुज्जनं

---

1. ध० प० २०।

2. तु०—"एङः पदान्तादति"—पा० ६.१.१०९; "सरा लोपं पप्पोन्ति सरे"—सद्द० सु० ३०।

वुत्तं; 'नये परं युत्ते' तिमिना संयुञ्जनञ्च वुत्तं; किं सरतो वियोजेत्वा व संयुज्जनसङ्खातं परनयनं कातब्बन्ति पुच्छाय सति, सरतो ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, सरस्मिं परे पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, परक्खरं नेतब्बन्ति दस्सेन्तो, 'सरा सरे लोपं' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? सरस्मिं परे पुब्बसरानं लोपो होती ति ञापनत्थं। सरा ति एकं, सरे ति एकं, लोपन्ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। सरा ति कारिनिद्देसो, सरे ति निमित्तसत्तमीनिद्देसो, लोपन्तिकारियनिद्देसो, सञ्ञा...पे०...सुत्तेसु विधिसुत्तन्ति वेदिब्बं।

"लोपादेसञ्च दीघञ्च रस्सं पच्चयमेव च।
विभत्त्यागमो पटिसेधो विधिनामट्ठधा सियुं"॥ ति।

वुत्तेसु विधिसुत्तेसु लोपविधी ति वेदितब्बं।

"पुब्बविधि परविधि अन्तरङ्गबाहिरा पि च।
विधिभेदो चतुब्बिधो दीपेय्य मतिमा नरो"॥ ति।

वुत्तेसु विधिभेदेसु पुब्बविधी ति वेदितब्बं। सरा खो सरे परे लोपं पप्पोन्ती ति अत्थो; सरन्ती ति सरा, कारिभूता अट्ठ सरा, तथा निमित्तभूता सरा, तस्मिं सरे; लुप्पनं लोपो, पदच्छेदे विज्जमानस्स पदसन्धिवसेन कथनकाले अनुपलद्धी ति वुत्तं होति।

सरेसू ति अवत्वा सरे ति कस्मा वुत्तन्ति? एकेकस्मिं सरे परे बहुन्नं सरानं लोपञापनत्थं[1]। 'नसि राजभटो' ति एत्थ एकस्मिं सरे परे एकस्स सरस्स लोपो, न-असी ति छेदो। 'यन्ती' ति एत्थ द्विन्नं सरानं एकक्खणे लोपो, या-अ-अन्ती ति छेदो; याधातुया अवयवो आकारो च, 'भुवादितो अ' (४४७) इति इमिना पवत्तो अप्पच्चयो च, अन्तिप्पच्चयस्स आदिभूतो अकारो चा ति तयो सरा तस्मा अन्तिप्पच्चयस्स आदिभूतअकारस्मिं परे द्विन्नं पुब्बसरानं आकारअकारानं इमिना एकक्खणे लोपो होति। 'उपेय्यासी' ति एत्थ तिन्नं सरानं एकक्खणे लोपो, उप-इ-अ-एय्यासी ति छेदो; उपसद्दो उपसग्गो, इ धातु, अकारो पच्चयो, एय्यासि विभत्ति चा ति एत्थ चत्तारो सरा तस्मा एकारस्मिं परे तिन्नं पुब्बभूतानं पकारावयवभूतअकार-

1. तु०-"एत्थ च सरेसू ति अवत्वा सरे ति वचनं एकेकस्मिं येवा ति ञापनत्थं। यदि एवं, सरो ति अवत्वा कस्मा सरा ति वुत्तं ति? एक-द्वि-ति-चतुन्नम्पि लोपो होती ति ञापनत्थं-क० न्या०, पि० २२।

धातुभूतइकार-अपच्चयभूत-अकारानं इमिना एकक्खणे लोपो सद्दनीतियं वुत्तो[1]। न्यासे पन 'सखातो गस्से वा' ति (११३) सुत्ते अ आ इ ई ए ति ठिते एकारस्मिं परे एकक्खणे चतुन्नं लोपो वुत्तो[2]। सद्दनीतियं उद्धटउदाहरणानि विचारेतब्बानि। तेसं उदाहरणानं 'लोपञ्चेत्थ मकारो' (५१२), 'सरलोपो...' (८३) त्यादिलक्खणविसेसेन युत्तत्ता। रूपसिद्धियं पन "बहुवचनं पनेत्थ एकेकस्मिं सरे परे बहुन्नं लोपञापनत्थं" ति वुत्तं; "'सखातो गस्से वा' ति (११३) एत्थ च अ आ इ ई ए ति ठिते चतुन्नं सरानं कमेन लोपो" ति वुत्तं[3]। तट्टीकायञ्च "'सरो सरे' ति अवत्वा 'सरा' ति बहुवचनग्गहणं एकेकस्मिं सरे परे पि अन्तसरानं अकारादीनं सब्बेसम्पि लोपो होति 'तेसं बहुभावञापनत्थं'" ति वुत्तं। इदं वुत्तं होति--नेमित्तवण्णा सरा बहवो होन्ति, चतुसट्ठिमत्ता; निमित्ता अप्पका अट्ठेवे ति; तस्मा सरा ति बहुवचनं वुत्तन्ति। वुत्तञ्च--

"सरेहेव सरा पुब्ब-लुत्ता वाचि परा रमा" ॥ ति।

चतुसट्ठी ति वुत्तं होति। न्यासे वुत्तनयञ्च तादिसस्स पयोगस्स जिनवचने अदस्सनतो कारणं वत्वा पटिक्खित्तं।

यस्सिन्द्रियानि, नोहेतं, समेतायस्मा ति उदाहरणानि। तेसं पन यस्स-इन्द्रियानि, नो-हि-एतं, समेतु-आयस्मा ति छेदं कत्वा, सरतो ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इमिना पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

इध कारिकारियनिमित्तानि परिपुण्णानि; कारिकारियानि हि तिविधानि--पठमाकारिपठमाकारिय-पठमाकारिदुतियाकारिय - छट्ठीकारिपठमाकारियवसेन। वुत्तञ्च--

"पठमा पठमा येव पठमा दुतिया तथा।
छट्ठी पठमा चेव कारियञ्ञूहि भासिता॥
यदा च पठमाकारि पठमा दुतिया पि वा।
कारियं होति कारिम्हि छट्ठियोगे तु पठमा॥
देवदत्तो राजा होति सो रज्जं पापुणाति च।
देवदत्तस्स तं होति इच्चादिकं निदस्सनं"॥ ति।

---

1. सद्द० सु० वु० ३०।
2. क० न्या०, पि० २२।
3. रूप० सु० १३।

१३. वा परो असरूपा।१.२.२।

सरम्हा असरूपा परो सरो लोपं पप्पोति वा। चत्तारोमे भिक्खवे धम्मा, किन्नुमाव समणियो।

वा ति कस्मा? पञ्चिन्द्रियानि, तयस्सु धम्मा जहिता भवन्ति।

तेसु इदं सुत्तं पठमाकारि-दुतियाकारियवसेन वुत्तं। इमानि हि कारिकारियनिमित्तानि उपरि यथारहं लब्भमानवसेन वुत्तन्ति। वुत्तञ्च––

"वा परोच्चादिके सुत्ते वत्तते च सरा सरे।
तब्बिसेसकावेन कारियं कारियत्ततो॥
निमित्तं कारियं कारि-सुत्तेनेवत्तियत्थहि।
वत्तन्ति तत्थ निमित्तं कारिकारियभावतो॥
यत्थ पनत्थि तत्थेव तब्बिसेसकभावतो।
वत्तन्ति वा न वा एवं लक्खणं धारये बुधो"॥ ति।

एवं एकेकस्मिं सरे परे सरूपासरूपवसेन अट्ठन्नं सरानं लोपं विधाय, इदानि अकारादिसु ऊकारपरियन्तेसु सरेसु एकेकम्हा असरूपसरा छन्नं छन्नं असरूपसरानं द्वीसु ओकारेकारेसु एकेकम्हा असरूपसरा अट्ठन्नं अट्ठन्नं असरूपसरानं लोपं दस्सेतुं––

१३. वा परो असरूपा[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'पुब्बमधोठित...' (१०), 'नये परं युत्ते' (११), 'सरा सरे लोपं' ति (१२) सुत्तत्तयप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? किन्नुमाव समणियो त्यादिसु किन्नु-इमाव समणियो ति छेदे कते, 'पुब्ब... वियोजये' तिमिना सरतो ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'सरा सरे लोपं' तिमिना पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, 'नये परं युत्ते' तिमिना परनयनं कातब्बन्ति वुत्तं; किं सरतो वियोजेत्वा पुब्बसरलोपं कत्वा व परं नेतब्बन्ति पुच्छाय सति, असरूपम्हा सरा परस्स लोपं कत्वा पि परं नेतब्बन्ति दस्सेन्तेन, 'वा परो असरूपा' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? असरूपम्हा सरा परो सरो लोपं पप्पोती ति ञापनत्थं। वा ति एकं, परो ति एकं, असरूपा ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। वा ति ववत्थित-

---

1. तु०–"परो व असरूपा"–सद्द० सु० ३१।

विभासानिद्देसो, परो ति कारिनिद्देसो, असरूपा ति अवधिनिद्देसो, निमित्तपञ्चमीनिद्देसो वा। अनन्तरसुत्ते कारिभूतो सरासद्दो विभत्तिविपरिनामवसेन एकवचनन्तेन परोसद्देन सम्बन्धो होति, निमित्तभूतो सरोसद्दो पञ्चम्यन्तेन असरूपसद्देन सम्बन्धो होति; तेन असरूपम्हा सरा परो सरो लोपं पप्पोती ति अत्थो। वासद्दो निपातो। समानं रूपं यस्स सो सरूपो, न सरूपो असरूपो, सरूपतो अञ्ञो असरूपो ति वुत्तं होति, तस्मा असरूपा ति। इमिना अकारादिसु उकारपरियन्तेसु छसु परेसु एकेकम्हा छ छ सरा लोपा होन्ति, एकारोकारेसु एकेकम्हा अट्ठ अट्ठ सरा लोपा होन्ती ति द्वेपञ्ञास होन्ती ति। वुत्तञ्च--"'परा रमा' ति द्वेपञ्ञासा ति वुत्तं होति"। इध सुत्ते कस्मा परोग्गहणं कतन्ति? पुब्बलोपनिवत्तनत्थं[1]।

चत्तारोमे त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ चत्तारो-इमे, किन्नु-इमावा ति छेदं कत्वा, सरतो ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति (१२) पुब्बसरस्स लोपे सम्पत्ते, तं निवारेत्वा, तमधिकिच्च इमिना परसरस्स लोपं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। वासद्दो पनेत्थ निच्चमनिच्चमसन्तञ्च विधिं दीपेति--चक्खुन्द्रियं ति एवमादिसु इमिना निच्चविधानं दीपेति; चत्तारोमे त्यादिसु इमिना अनिच्चविधानं दीपेति; चत्तारोसे ति च चत्तारि इमानी ति च उदाहरणद्वयस्स निद्दिट्ठत्ता पञ्चिन्द्रियानी ति एवमादिसु असन्तविधिं दीपेति। इमिना सुत्तेन विधानाभावा पञ्चिन्द्रियानी त्यादि किमुदाहरणं? तस्स पन पञ्च-इन्द्रियानि, तयो-अस्सू ति छेदं कत्वा, सरतो ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इमिना परसरस्स लोपे सम्पत्ते, वाग्गहणेनाकत्वा, अनन्तरसुत्तेन पुब्बसरानं लोपं कत्वा, परक्खरं नेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा। इदं सुत्तं "वा परो" ति योगविभागं कत्वा "पमंलानं" आदयो त्यादिसु प-आ पन-अ लं-अ आदयो ति छेदं कत्वा, परभूतानं सरूपसरानं लोपो वुत्तो। वुत्तञ्च--

"वा परो ति विभागेन सरूपे पि परलोपो।
तत्थ विदु पमंलानं आदयो इति आदिसू"॥ ति।

---

1. तु०-"किमत्थं परोगहणं कतं ति, पुब्बस्सा ति पि अत्थस्स सम्भवतो, तन्न; यदि हि तं सन्धाय वुत्तं, पुब्बसुत्तेव सिज्झनतो सुत्तमेव न वत्तब्बं सिया ति? न न वत्तब्बं। कस्मा? पुरिमसुत्तेनेव सिद्धे असरूपम्हा सरम्हा पुब्बसरो विकप्पेन लोपं पप्पोती ति ञापनत्थं वुत्तं ति वत्तुं सक्कुणेय्यत्ता, तस्मा पुब्बस्स निवत्तनत्थं ति यं वुत्तं, तं सुवुत्तं"--क० न्या०, पि० २३।

१४. क्वचासवण्णं लुत्ते ।१.२.३।

सरो खो परो पुब्बसरे लुत्ते क्वचि असवण्णं पप्पोति। सङ्केच नोपेति वेदगू, बन्धुस्सेव समागमो।

क्वची ति कस्मा? यस्सिन्द्रियानि, तथूपमं धम्मवरं अदेसयी[1]।

एवं द्वीहि सुत्तेहि सरानं लोपसन्धिविधानं विधाय, सरानं विकारसन्धिविधानं दस्सेतुं—

१४. क्वचासवण्णं लुत्ते[2] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'सरा सरे लोपं' (१२), 'नये परं युत्ते' ति (११) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? नोपेती त्यादिसु न-उपेती ति छेदे कते, 'सरा सरे लोपं' तिमिना पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, 'नये परं युत्ते' ति परं इमिना नेतब्बन्ति वुत्तं; किं तत्थ पुब्बसरस्स लोपं कत्वा व परं नेतब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ पुब्बसरस्स लोपं कत्वा व परं न नेतब्बं, पुब्बसरस्स लोपे कते परसरस्स विकारं कत्वा पि परं नेतब्बन्ति दस्सेन्तेन, 'क्वचासवण्णं लुत्ते' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? पुब्बसरे लुत्ते परो सरो क्वचि असवण्णं पप्पोती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। क्वची ति एकं, असवण्णन्ति एकं, लुत्ते ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। क्वची ति क्वचत्थनिद्देसो, असवण्णन्ति कारियनिद्देसो, लुत्ते ति भावसत्तमीनिद्देसो, सञ्ञा...पे०... विधिसुत्तन्ति वेदितब्बं। पुब्बसुत्ततो सरग्गहणञ्च अनन्तरसुत्ततो परग्गहणञ्च वत्तते। आदिसुत्ते सरासद्दो च विभत्तिविपरिनामवसेन एकवचनन्तेन सम्बन्धो होति, सरे ति सत्तम्यन्तो च सत्तम्यन्तेन लुत्तसद्देन सम्बन्धो होति; तेन पुब्बसरे लुत्ते परो सरो क्वचि असवण्णं पप्पोती ति अत्थो। समानो वण्णो सवण्णो, नत्थि सवण्णं रूपं एतस्सा ति असवण्णो, तं असवण्णं, एकारोकारा; तेन नेत्था ति एत्थ इमिना परलोपो। अनन्तरसुत्ते वासद्दे सति कस्मा क्वचिग्गहणं कतन्ति? भिन्नत्थत्ता। अनन्तरसुत्ते वासद्दो ववत्थितविभासत्थो, निच्चमनिच्चमसन्तदीपको; क्वचिसद्दो पनेत्थ असन्तविधिमेव

---

1. अदेसयि–से०।
2. तु०–"लुत्ते असवण्णं"–सद्द० सु० ३४।

दीपेति, वासद्दो पन येभुय्येन रूपद्वयुप्पादको, क्वचिसद्दो पन येभुय्येन एकरूपमेव जनेति[1]। वुत्तञ्च--

"क्वचि नवा च एकत्था येभुय्येनेकरूपता।
वाविभासासमानत्था पायेनोभयरूपका" ।।ति।

एत्थ लोपग्गहणे वत्तमाने पि लुत्ते ति वचनं अधिकं होति, सद्दाधिका च अत्थाधिको होति, तस्मा लुत्तग्गहणेन परलोपे पि पुब्बसरस्स विकारो होति, इसेलयो, मुनेलयो, रथेसभो त्यादिसु। वुत्तञ्च निरुत्तियं--

"पुब्बविकारो अपरो विकारो दुविधो मतो।
क्वची त्यादिना सुत्तेन विकारो अपरो मतो।।
तत्थेव लुत्तसद्देन पुब्बविकारो विधीयते।
इसेलयो मुनेलयो रथेसभो ति आदिसू"।। ति।

सङ्ख्यं नोपेती त्यादीनि उदाहरणानि । तेसं पन सङ्ख्यं न-उपेति, बन्धुस्स-इवे ति छेदं कत्वा, अनन्तरसुत्तेन परसरस्स लोपे सम्पत्ते वाग्गहणेनाकत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति (१२) पुब्बसरानं लोपं कत्वा, अनन्तरसुत्तद्वयमधिकिच्च इमिना असवण्णमोकारं कत्वा, इतरस्मिं इकारस्सेकारञ्च कत्वा, परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा[2]।

यस्सिन्द्रियानी त्यादीनि किमुदाहरणानि । तेसं पन यस्स-इन्द्रियानि, तथा-उपमं ति छेदं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति (१२) पुब्बसरानं लोपं कत्वा, इमिना असवण्णे सम्पत्ते, क्वचिग्गहणेनाकत्वा, पच्छिमस्स 'सरा सरे लोपं', 'वा परो असरूपा' (१३) 'क्वचासवण्णं लुत्ते' (१४) त्यधिकिच्च 'दीघं' ति (१५) दीघं कत्वा, परक्खरं नेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा। रूपसिद्धियं पन "सरे असरूपा ति च वत्तते; तथा 'इवण्णो यन्नवा' ति (२१) इतो इवण्णग्गहणञ्च, 'वमोदुदन्तानं ति' (१८) इतो उग्गहणञ्च सीहगतिया इहानुवत्तेतब्बन्ति" च वुत्तं; "ठाना-सन्नवसेन इवण्णुवण्णानमेकारोकारा होन्ती ति च इमिना सुत्तेन अवण्णे लुत्ते येवा ति च" वुत्तं[3]।

1. तु०–क० न्या०, पि० २४।
2. तु०–त०।
3. रूप० सु० १५।

१५. दीघं ।१.२.४।

सरो खो परो पुब्बसरे लुत्ते क्वचि दीघं पप्पोति। सद्धीध वित्तं पुरिसस्स सेट्ठं, अनागारेहि चूभयं।

क्वची ति कस्मा? पञ्चहुपालि अङ्गेहि समन्नागतो, नत्थञ्ञं किञ्चि नेत्थ।

एवं सरानं विकारसन्धिं विधाय, इदानि पुब्बापरदीघवसेन दुविधं दीघसन्धिविधानं दस्सेतुं, 'दीघं' ति, 'पुब्बो चा' ति सुत्तद्वयं वुत्तं।

१५. दीघं[1] ति सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'सरा सरे लोपं' (१२), 'नये परं युत्ते' ति (११) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? सद्धीध वित्तं त्यादिसु सद्धा-इधा ति छेदे कते, 'सरा सरे लोपं' तिमिना पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, 'नये परं युत्ते' तिमिना परं नेतब्बन्ति वुत्तं; किं पुब्बसरानं लोपं कत्वाव नेतब्बन्ति पुच्छाय सति, पुब्बसरस्स लोपं कत्वा व परं न नेतब्बं, परसरस्स दीघं कत्वा पि परं नेतब्बन्ति दस्सेन्तेन 'दीघं' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? पुब्बसरे लुत्ते परो सरो क्वचि दीघं पप्पोती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। दीघन्ति एकपदमेव। दीघन्ति कारियनिद्देसो, सञ्ञा ...पे०... विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। कारियस्स अत्थिताय निमित्तकारिनो च क्वचिग्गहणञ्च वत्तते; तेन पुब्बसरे लुत्ते परो सरो क्वचि दीघं पप्पोती ति अत्थो। दीघकाले नियुत्तो दीघो, तं दीघं।

सद्धीध वित्तं पुरिसस्स सेट्ठं त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन सद्धा-इध वित्तं, अनागारेहि च-उभयं ति छेदं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, अनन्तरसुत्तत्तयमधिकिच्च इमिना परसरानं दीघं कत्वा, परक्खरं नेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा। पञ्चहुपाली त्यादीनि किमुदाहरणानि? तेसं पन पञ्चहि-उपालि, नत्थि-अञ्ञं ति छेदं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति पुब्बसरानं लोपं कत्वा, इमिना दीघे सम्पत्ते क्वचिग्गहणेनाकत्वा, परक्खरं नेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा।

---

1. तु०–"समानः सवर्णे दीर्घो भवति परश्च लोपम्"–का० १.२.१; पुब्बस्मिं दीघं"– सद्द० सु० ३६।

१६. पुब्बो च।१.२.५।

पुब्बो च सरो परसरलोपे[1] कते क्वचि दीघं पप्पोति। किंसूध वित्तं पुरिसस्स सेट्ठं, साधूति पटिस्सुणित्वा[2]।

क्वची ति कस्मा ? इतिस्स मुहुत्तम्पि।

---

१६. **पुब्बो च**[1] तिदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति ? 'वा परो असरूपा' (१३), 'नये परं युत्ते' ति (११) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति ? किंसूध वित्तं त्यादिसु किंसु-इधा ति छेदे कते, 'वा परो असरूपा' तिमिना परसरस्स लोपो वुत्तो; किं परसरानं लोपं कत्वा परं नेतब्बन्ति पुच्छाय सति, परसरानं लोपं कत्वा व न नेतब्बं, पुब्बसरानं दीघं कत्वा पि परं नेतब्बन्ति दस्सेन्तेन 'पुब्बो चा' ति वुत्तं। पुब्बो ति एकं, चा ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। पुब्बो ति कारिनिद्देसो, चा ति अनुकड्ढननिद्देसो, सञ्ञा...पे०...विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। चसद्दो चेत्थ निमित्तकारिनो आकड्ढति। वुत्तञ्च—

"पुब्बो चेत्यत्थ चसद्दो दीघलुत्तानुकड्ढनो।
चानुकड्ढितमुत्तरत्र नानुवत्तनलक्खणं"[2]॥ ति।

इध पन कारिनो अत्थिताय कारियनिमित्तानि एव वत्तन्ति, परोसद्दो लुत्ते ति निमित्तमेव विसेसेति, सरा ति च सरे ति च यथासम्भवं तब्बिसेसका व होन्ति; तेन परस्मिं सरे लुत्ते पुब्बो सरो क्वचि दीघं पप्पोती ति अत्थो।

किंसूध वित्तं त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन किंसु-इध वित्तं, साधु-इति पटिस्सुणित्वा ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'सरा सरे लोपं' (१२) त्यधिकिच्च 'वा परो असरूपा' ति (१३) परसरानं लोपं कत्वा, अनन्तरसुत्तचतुक्कमधिकिच्च पुब्बसरानं इमिना दीघं कत्वा, परक्खरं नेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा।

---

१. परलोपे–से०। २. पटिसुणित्वा–से०।

1. तु०–"सरे पुब्बो"–सद्द० सु० ३५।

2. "चसद्दग्गहणं पन लुत्तदीघग्गहणानुकड्ढनत्थं; अधिकतत्ता व वत्तमाने पि चानुकड्ढितमुत्तरत्र नानुवत्तते इति दस्सनत्थं"–क० न्या०, पि० २५।

१७. यमेदन्तस्सादेसो।१.२.६।

एकारस्स अन्तभूतस्स सरे परे क्वचि यकारादेसो होति। आधगतो खो म्यायं धम्मो, त्याहं एवं वदेय्यं, त्यस्स[१] पहीना[२] होन्ति।

क्वची ति कस्मा? तेनागता इति नेत्थ।

इतिस्सा ति किमुदाहरणं? तस्स पन इति-अस्सा ति छेदं कत्वा, वुत्त-नयेन परसरस्स लोपं कत्वा, इमिना पुब्बसरस्स दीघे सम्पत्ते क्वचिग्गहणेनाकत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं पुब्बपरदीघवसेन दुविधं दीघसन्धिं विधाय, इदानि सरस्मिं सरादेस-विधानसन्धिं दस्सेतुं––

१७. यमेदन्तस्सादेसो[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'सरा सरे लोपं' ति (१२) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? खो म्यायं त्यादिसु खो मे-अयं ति छेदे कते, 'सरा सरे लोपं' ति-मिना सरस्मिं परे सरानं लोपो वुत्तो; किं सब्बस्मिं सरे परे सब्बे पि सरा लोपा येव होन्ती ति पुच्छाय सति, सब्बस्मिं सरे परे सब्बे सरा लोपा व न होन्ति, अकारस्मिं परे पुब्बभूतो एकारो यकारम्पि पप्पोती ति दस्सेन्तेन 'यमेदन्तस्सादेसो' ति वुत्तं। वुत्तञ्च रूपसिद्धियं––"अकारे परे ते-मे-ये सद्दन्तादिस्वयन्ति"[2]। किमत्थमिदमुच्चते? एकारस्स अन्तभूतस्स सरे परे क्वचि यकारादेसो होती ति ञापनत्थं। यन्ति एकं, एदन्तस्सा ति एकं, आदेसो ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। यन्ति कारियनिद्देसो, एदन्तस्सा ति आदेसापेक्खाछट्ठि-कारिनिद्देसो, आदेसो ति तब्बिसेसननिद्देसो, सञ्ञा ... पे० ... विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। आदिसुत्ततो सरेग्गहणस्स च ततियसुत्ततो क्वचिग्गहणस्स चानुवत्तनतो एकारस्स पदन्तभूतस्स सरे परे क्वचि यकारादेसो होती ति अत्थो। यो ति वत्तब्बे यन्ति वचनं

---

१. त्यास्स–सी०१, सी०२। २. पहीणा–सी०२।

1. तु०–"इवर्णो यमसवर्णे न च परो लोप्यः"–का० १.२.८; "तेमेपब्बत्यादीनमेस्स यो विना येकारेन–सद्द० सु० ४३।

2. रूप० सु० १९।

१८. वमोदुदन्तानं ।१:२.७।

ओकारुकारानं अन्तभूतानं सरे परे क्वचि वकारादेसो होति। अथ खवस्स, स्वस्स होति, वव्हाबाधो, वत्थ्वेत्थ विहितं निच्चं, चक्खवापाथमागच्छन्ति।

क्वचीति कस्मा? चत्तारोमे भिक्खवे धम्मा, किन्नुमाव समणियो।

सुखुच्चारत्थं सन्धिवसेन वुत्तं, यन्ति वचनं रूपन्ति वा सम्बन्धो। ए एव अन्तो एदन्तो, पदन्तभूतो एकारो, तस्स एदन्तस्स; वुत्तञ्च—"इमना पदन्तेयेवे"[1] ति।

अधिगत्तो खो म्यायं त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन खो मे-अयं, ते-अहं, ते-अस्सा ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा 'सरा सरे लोपं' (१२), 'क्वचासवण्णं लुत्ते' (१४) त्यधिकिच्च इमिना पदन्तभूतस्स एकारस्स यकारं कत्वा, 'दीघं' ति (१५) ब्यञ्जने परे दीघं कत्वा, परक्खरं नेत्वा रूपसद्धि वेदितब्बा।

तेनागता त्यादीनि किमुदाहरणानि? तेसं पन ते-अनागता, न-एत्था ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इमिना यकारे सम्पत्ते क्वचिग्गहणेनाकत्वा, 'सरा सरे लोपं' (१२) त्यधिकिच्च 'वा परो असरूपा' ति (१३) परसरानं लोपं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा[2]। "एत्थ च एकारद्वयस्स सति समानभावे पि असमाना ति कलापसुत्तं निस्साय असमानभावतो 'वा परो असरूपा' ति सुत्तेन परस्स एकारस्स लोपो" ति सुत्तनिद्देसे वुत्तं'। एकारो च ओकारो च सभावेनेव असरूपा, एकारो हि एकारेन च अञ्ञेहि च असरूपो, तथा ओकारो चा ति; सभावतो एकारोकारा क्वचि सरूपा ति वेदितब्बा।

एवं अकारस्मिं परे पुब्बभूतस्स एकारस्स क्वचि यकारादेसं विधाय, इदानि सरस्मिं परे ओकारुकारानं क्वचि वकारादेसम्पि दस्सेतुं—

१८. वमोदुदन्तानं[3] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'सरा सरे लोपं' ति (१२) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति।

---

1. तु०—"एयेव अन्तो एदन्तो, तस्य एदन्तस्स; दकारो मिस्सकदोसापगमनत्थं सन्धिवसेनागतो। इध पन कम्मधारयो व मन्तब्बो, न ए अन्तो यस्स सो एदन्तो ति बहुब्बीहि..."—क० न्या०, पि० २५-२७।

2. तु०—त०, पि० २६।

3. तु०—"वमुवर्णः"—का० १.२.९; "ओ अव्"—का० १.२ १४; "एचोऽयवायावः"—पा० ६.१.७७; "क-ख-त-थ-द-न-य-स-हानं वोवुदन्तानं"—सद्द० सु० ४४।

किन्निक्खन्तन्ति ? स्वस्स त्यादिसु खो-अस्सा ति छेदे कते, 'सरा सरे लोपं' ति इमिना सरस्मि परे सरानं लोपो वुत्तो। किं सरस्मि परे सब्बे सरा लोपा व होन्ती ति पुच्छाय सति, सरस्मि परे सब्बे सरा लोपा व न होन्ति, सरस्मि परे ओकारुकारा वकारं पप्पोन्ती ति दस्सेन्तेन 'वमोदुदन्तानं' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? ओकारुकारानं अन्तभूतानं सरे परे क्वचि वकारादेसो होती ति ञापनत्थं। वन्ति एकं, ओदुदन्तानन्ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। वन्ति कारियनिद्देसो, ओदुदन्तानन्ति सम्बन्धछट्ठिकारिनिद्देसो, सञ्ञा...पे० . विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। आदिसुत्ततो सरग्गहणस्स च, ततियसुत्ततो क्वचिग्गहणस्स च, अनन्तरसुत्ततो आदेसग्गहणस्स चानुवत्तनतो ओकारुकारानं अन्तभूतानं सरे परे क्वचि वकारादेसो होती त्यत्थो। ओ च उ चा ति ओउ, ओउ येव अन्ता ति ओदुदन्ता, दकारागमो, तेसं ओदुदन्तानं[1]।

अथ स्वस्स त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन अथ खो अस्स, सो-अस्स, बहु-आबाधो, वत्थु-एत्थ, चक्खु-आपाथं ति छेदं कत्वा ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'सरा सरे लोपं' (१२), 'क्वचासवण्णं लुत्ते' (१४), 'यमेदन्तस्सादेसो' (१७) त्यधिकिच्च इमिना ओकारुकारानं वकारं कत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा।

चत्तारोमे ति किमुदाहरणं ? तस्स पन चत्तारो-इमे ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इमिना पुब्बसरस्स वकारे सम्पत्ते क्वचिग्गहणेनाकत्वा, 'वा परो असरूपा' ति (१३) परसरस्स लोपं कत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा।

'यमेदन्तस्सादेसो' ति (१७) इतो अन्तग्गहणे वत्तमाने पि पुन इध अन्तग्गहणकरणं अनुवत्तमानअन्तग्गहणेन असमानत्थतं दीपेति। पुब्बसुत्तेन हि पदन्ते येव यकारं विदधाति, इमिना पन पदन्ते पि पदमज्झे पि विदधाति; अथ वा इध अन्तग्गहणकरणं "इत्वेवं स्वज्जमती" त्यादिसु अञ्ञसरानं वकारादेसत्थं वुत्तञ्च—

"वमोदुदन्ता ति सुत्तम्हि अन्तसद्दग्गहणेन च।
स्वज्जमत्यादिके पाठे रूपसिद्धी ति वुच्चते' ॥ ति।

1. "ओदुदन्ता ति कम्मधारयं कत्वा, ततो आदेसापेक्खं कत्वा, छट्ठयन्तवसेन ओदुदन्तानं ति सम्बन्धनीयं; दकारो मिस्सकदोसापगमकरणत्थं सन्धिवसेनागतो"—क० न्या०, पि० २६-२७।

१९. सब्बो चन्ति।१.२.८।

सब्बो ति इच्चेसो सद्दो[1] सरे परे क्वचि चकारं पप्पोति। इच्चेतं कुसलं, इच्चस्स वचनीयं[2], पच्चुत्तरित्वा, पच्चाहरति।

क्वची ति कस्मा? इतिस्स मुहुत्तम्पि।

एवं सरिस्मं सरादेसं विधाय, इदानि सरस्मिं ससरादेसं विधातुं 'सब्बो चन्ति', 'दो धस्स चे' ति वुत्तं। वुत्तञ्च––

"सरादेसो ससरो च निग्गहीतादेसवसा तयो।
आदेसा होन्ति तेसम्पि उदाहरणदीपये।।
यमे-वमोत्यादि-सुत्तेहि सरादेसो विधीयते।
यथा म्यायं बव्हाबाधो इदं तेसं निदस्सनं।।
सब्बो-दोधादि-सुत्तेहि ससरादेसो विधीयते।
यथा इच्चेतं कुसलं एकमिदाहन्ति निदस्सनं"।। ति।

१९. सब्बो चन्ती[1] ति सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? हेट्ठा 'सरा सरे लोपं' (१२), 'वा परो असरूपा' ति (१३) च, उपरि 'इवण्णो यन्न-वा' ति (२१) च सुत्तत्तयप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? अच्चन्तं त्यादिसु अति-अन्तं ति छेदे कते, 'सरा सरे लोपं' तिमिना च सरस्मिं पुब्बसरलोपो वुत्तो; 'वा परो असरूपा' तिमिना च असरूपा सरम्हा परसरस्स लोपो वुत्तो; 'इवण्णो यन्नवा' तिमिना च असरूपसरस्मिं परे इवण्णस्स यकारादेसो वुत्तो; किं तत्थ तेहि सुत्तेहि वुत्तविधीहि एव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तेहि सुत्तेहि वुत्तविधानेहेव न भवितब्बं; सरस्मिं परे 'सब्बो चन्ती' ति इमिना पि तिसद्दस्स सब्यञ्जनस्स चकारादेसो च होती ति दस्सेन्तेन, 'सब्बो चन्ती' ति वुत्तं। वुत्तञ्च रूपसिद्धियं––"इवण्णो यन्नवा' ति यकारे सम्पत्ते 'सब्बो चन्ती' ति किमत्थमिद-मुच्चते? तिसद्दो सब्बो सरे परे क्वचि चकारं पप्पोती ति ञापनत्थं"[2]। सब्बो ति एकं, चन्ति एकं, ती ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। सब्बो ति तब्बिसेसनं, चन्ति कारियं, ती ति कारि, सञ्ञा...पे०...विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। सरेग्गहणक्वचि-

---

१. तिसद्दो ब्यञ्जनो–सी०१, सी०२। २. वचनियं–से०।

1. तु०–"अतिपतितीनं ति च"–सद्द० सु० ४६। 2. रूप० सु० २२।

२०. दो धस्स।१.२.९।

ध इच्चेतस्स सरे परे क्वचि दकारादेसो होति । एकमिदाहं भिक्खवे समयं ।

क्वची ति कस्मा ? इधेव मरणं भविस्सति ।

चसद्दग्गहणेन धकारस्स हकारादेसो होति । साहु दस्सनमरियानं । सुत्तविभागेन बहुधा पि सिया––तो दस्स; यथा––सुगतो; टो तस्स,

---

ग्गहणानमनुवत्तनतो तिसद्दो सब्बो सरे परे क्वचि चकारं पप्पोती ति अत्थो। सब्बो ति पठमन्तसब्बनामपदं, चन्ति रुळ्हिपदं, ती ति च रुळ्हिपदन्ति दट्ठब्बं। ती ति इमिना अति-इति-पतीनं तिकारस्सेव गहणं। वुत्तञ्च रूपसिद्धियं––"ती ति निद्देसतो अति-इति-पतीनं तिकारस्सेवायं विधि, ती ति निद्देसतो अकतयकारस्सेवायं विधी ति च; इतरथा क्वचिग्गहणस्स च, 'अतिस्स चान्तस्सा' ति (४७) सुत्तस्स च निरत्थकता सिया"[1] ति। कस्मा 'सब्बो चन्ती' ति वुत्तं, चन्ती ति एत्तकमेव वत्तब्बन्ति चोदना। सब्बादेसत्थं सब्बग्गहणं कतन्ति परिहारो[2]।

इच्चेतं त्यादीनि उदाहरणानि । तेसं पन इति-एतं, इति-अस्स, पति-उत्तरित्वा, पति-आहरती ति छेदं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' (१२) 'क्वचासवण्णं लुत्ते' (१४) त्यधिकिच्च इमिना सब्बस्सेव तिसद्दस्स चकारं कत्वा, 'परद्वेभावो ठाने' ति (२८) द्वेभावं कत्वा, परक्खरं नेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा ।

इतिस्स, मुहुत्तम्पी ति किमुदाहरणं ? तस्स पन इति-अस्सा ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इमिना तिकारस्स चकारादेसे सम्पत्ते क्वचिग्गहणेनाकत्वा 'सरा सरे लोपं' त्यधिकिच्च 'वा परो असरूपा' ति (१३) परसरस्स लोपं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा[3]।

२०. दो धस्स चे[4] ति सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति ? 'सरा सरे लोपं' (१२), 'दीघं' ति (१५) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति।

---

1. त०।

2. तु०–"इमस्स पन 'चन्ती' ति वत्तब्बे 'सब्बो चन्ती' ति वचनं तिकारप्पटिबद्धस्स यकारस्सा पि आपज्जनत्थं; तेनाह–'तिसद्दो ब्यञ्जनो' ति। इकारस्स हि यकारे कते तिसद्दो ब्यञ्जनो नाम होती ति"–क० न्या०, पि० २७।

3. त०।

4. तु०–"एकस्मा इधस्स धस्स दो निच्चं"–सद्द० सु० ५०।

यथा––दुक्कटं; धो तस्स, यथा––गन्धब्बो; त्रो त्तस्स[१], यथा––अत्रजो; को गस्स, यथा––कुलूपको; लो[२] रस्स, यथा––महासालो[३]; जो यस्स, यथा––गवजो; बो वस्स, यथा––कुब्बतो; को यस्स, यथा––सको[४]; यो जस्स, यथा––नियं पुत्तं; को तस्स, यथा––नियको[५]; चो तस्स, यथा––भच्चो; फो पस्स, यथा––निप्फत्ति; बो[६] पस्स, यथा––निब्बत्ति; खो कस्स, यथा––निक्खमति[६] इच्चेवमादयो।

किन्निक्खन्तन्ति? एकमिदाहं त्यादिसु एकं-इध-अहं ति छेदे कते, 'सरा सरे लोपं' ति इमिना पुब्बसरस्स लोपो वुत्तो; 'दीघं' ति इमिना च पुब्बसरस्स लोपे कते परस्स दीघं वुत्तं; एवं सति एकमिदाहं ति रूपं कथं सिज्झेय्या ति पुच्छाय सति, 'दो धस्स चे' ति इमिना सरस्मिं परे धकारस्स दकारादेसं कत्वा रूपं सिज्झती ति दस्सेन्तेन, 'दो धस्स चे' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? सरस्मिं परे धकारस्स क्वचि दकारादेसो होती ति ञापनत्थं। दो ति एकं, धस्सा ति एकं, चा ति एकन्ति, तिपदमिदं सुत्तं। सरेग्गहणक्वचिग्गहणानुवत्तनतो धकारस्स सरे परे क्वचि दकारादेसो होती ति अत्थो।

इदाहं ति उदाहरणं। तस्स पन इध-अहं ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजत्वा, 'सरा सरं लोपं' (१२), 'क्वचासवण्णं लुत्ते' (१४) त्यधिकिच्च, इमिना धकारस्स दकारं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, 'दीघं' ति (१५) परसरस्स दीघं कत्वा, परक्खरं नेत्वा, न्यासमतेन रूपसिद्धि वेदितब्बा[1]। निरुत्तियं पन द्वे सुत्तानि सरादेसभावेन वुत्तानि। तस्मा सरतो अवियोजेत्वा व आदेसो कतो। इतरं क्वचिग्गहणफलं। तस्स पन इध-एवा ति छेदं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति पुब्बसरस्स लोपो व विसेसो। सेसं सुविञ्ञेय्यमेव।

साहुदस्सनमरियानं ति चग्गहणफलं। तस्स पन साधु-दस्सनमरियानं ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजत्वा, इध चग्गहणेन धकारस्स हकारं कत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा।

---

१. तस्स–से०। २. ळो–सी० २। ३. महासाळो–सी० २। ४. सके–सी० १।
५. निको–से०। ६-६. से०, सी०१ पोत्थकेसु नत्थि।

1. तु०–क० न्या०, पि० २८।

"सुत्तविभागेन बहुधा पि सिया" ति एत्थ 'तो दस्सा' ति एकं विभागसुत्तं, सुगतो ति तस्सुदाहरणं; 'टो तस्सा' ति एकं, दुक्कटं ति तस्सुदाहरणं; 'धो तस्सा' ति एकं, गन्धब्बो ति तस्सुदाहरणं; 'त्रो तस्सा' ति एकं, अत्रजो ति तस्सुदाहरणं; 'को गस्सा' ति एकं, कुलूपको ति तस्सुदाहरणं; 'ळो रस्सा' ति एकं, महासाळो ति तस्सुदाहरणं; 'जो यस्सा' ति एकं, गवजो ति तस्सुदाहरणं; 'बो वस्सा' ति एकं, कुब्बतो ति तस्सुदाहरणं; 'को यस्सा' ति एकं, सके ति तस्सुदाहरणं; 'यो जस्सा' ति एकं, नियं पुत्तं ति तस्सुदाहरणं; 'को तस्सा' ति एकं, नियको ति तस्सुदाहरणं; 'चो तस्सा' ति एकं, भच्चो ति तस्सुदाहरणं; 'फो पस्सा' ति एकं, निप्फत्ती ति तस्सुदाहरणं; 'बो पस्सा' ति एकं, निब्बत्ती ति तस्सुदाहरणं; 'खो कस्सा' ति एकं, निक्खमती ति तस्सुदाहरणं। एवं बहुधा विभागो कातब्बो ति।

एवं कच्चायने सुत्तञ्च तस्सुदाहरणञ्च चग्गहणञ्च योगविभागञ्च तस्सुदाहरणञ्च विसुं येव वुत्तं। न्यासे पन चग्गहणेनेव सब्बपयोगसिद्धि वुत्ता[1]। सद्दनीतियम्पन योगविभागविधाने बहूनि सुत्तानि आगतानि[2]। तेसु कच्चानिके सुविञ्ञेय्यसभागानि पाकटसुत्तुदाहरणानि येव कथेस्साम—

'द्रो दस्स', यथा—इन्द्रियं, दुद्रि, भद्रो; 'घो गस्स', यथा—निग्गन्धं; 'दो धस्स', यथा—पसेनदि; 'णो ञस्स', यथा—पण्णत्ति, पञ्ञत्ति वा, पण्णासं पञ्ञासं वा; 'पञ्चस्स पण्णो', यथा—पण्णवीसति, पञ्चवीसति वा; 'णो नस्स', यथा—पणिधि, पणिहितो; 'णो नस्स', यथा—कसिणो, करुणो वा, कलूणं परिदेवयुं; 'वो यस्स', यथा—आवुधं, आयुधं वा; 'यस्स वो पण्णत्तियं', यथा—दीघावु कुमारो; 'दो कस्स', यथा—सदत्थपसुतो; 'पो मस्स', यथा—चिरप्पवासिं; 'पो वस्स', यथा—पच्चेस्सति, विच्चेस्सति वा; 'णो नस्स', यथा—पच्चवेक्खणा, पच्चवेक्खना वा। सद्दनीतियं हि एवमादीनि बहूनि सुत्तुदाहरणानि आगतानि। मया पन यतिपोतानं पञ्ञापाटवत्थाय पाकटानि सुविञ्ञेय्यरूपानियेव उद्धटानि।

'वुत्तानं ब्यञ्जनानं अञ्ञब्यञ्जनत्तं'[3] ति च लक्खणं ठपेत्वा, जलापुसद्दसिद्धि च, सन्निसीवसद्दसिद्धि च, एळमूगसद्दसिद्धि च वुत्ता; तत्थ जलापू ति

1. "चग्गहणफलं सयमेव वक्खति...इमिना नयेन यस्स यस्स यस्मिं यस्मिं कतेन विरुज्झति तस्स तस्स तं तं कातब्बन्ति"—क० न्या०, पि० २८-३३।

2. तु०—सद्द० सु० ७२-१०२।

3. तु०—त०, सु० १०२।

२१. इवण्णो यन्न वा।१.२.१०।

पुब्बो इवण्णो सरे परे यकारं पप्पोति न वा। पटिसन्थारवुत्यस्स, सब्बा वित्यनुभूयते।

न वा ति कस्मा? पञ्चहङ्गेहि समन्नागतो, मुत्तचागी अनुद्धतो।

जरायुसद्दं ठपेत्वा रकारस्स लकारं कत्वा यकारस्स पकारं कत्वा जलापुसद्दसिद्धि च, सन्निसीदसद्दं ठपेत्वा सन्निसीवसद्दसिद्धि च, एळमुखसद्दं ठपेत्वा एळमूगसद्दसिद्धि च वुत्ता। जरं जीरणभेदं याति उपेती ति जलापु, सन्निसीवेसु पक्खिसु, एळमूगो ति च पालि; 'एवं ख्वन्तरे वियस्स ब्या ति[1]' लक्खणं कत्वा 'एवं ब्याखो' ति पदसिद्धि च वुत्ता। एवं ब्याखो ति एवं विय-खो ति छेदो। 'वाचाय ब्यो पथे' ति[2] च लक्खणं वत्वा ब्यापथो ति सद्दसिद्धि च वुत्ता, ब्यापथो वाचा-पथो ति छेदो। एवं सद्दनीतियं बहूनि सुत्तुदाहरणानि वुत्तानि; वित्थारो तत्थ ओलोकेत्वा जानितब्बो।

एवं कच्चायनवुत्तिअनुसारेन योगविभागं कत्वा वा न्यासाचरियमतानुसारेन चसद्दग्गहणेन वा वण्णसन्धिनिप्फादनं कातब्बं।

एकारुकारोकारानं यवकारादेसञ्च, निकार-धकारादीनं चकार-दकारादेसादिञ्च विधाय, इदानि इवण्णस्स यकारादेसं विधातुं—

२१. **इवण्णो यन्न वा**[3] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'सरा सरे लोपं' (१२), 'वा परो असरूपा' ति (१३) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं, ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? वुत्यस्स त्यादिसु वुत्तिअस्सा ति छेदे कते, 'सरा सरे लोपं' ति सुत्तेन सरस्मिं सरानं लोपो वुत्तो; 'वा परो असरूपा' ति सरतो परेसं असरूपसरानं लोपो वुत्तो; एवं सति वुत्यस्सा ति रूपं कथं सिज्झेय्या ति पुच्छाय सति, तत्थ सरस्मिं परे पुब्बसरानं वा सरतो परे वा सरानं लोपो एव न होति, सरस्मिं परे इवण्णस्स यकारं कत्वा तं रूपं सिज्झती ति दस्सेन्तेन 'इवण्णो यन्नवा' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? इवण्णो सरे परे यकारं पप्पोति न वा ति ञापनत्थमिदमुच्चते। इवण्णो ति एकं, यन्ति एकं, नवा ति

1-2. तु०–त०, सु० १२७ १८।

3. तु०–"इवर्णो यमसवर्णे च परो लोप्यः"–का० १.२.८; पा० ६. १.७७; "यमिवण्णो न वा"–सद्द०, सु० ५१।

२२. एवादिस्स रि पुब्बो च रस्सो ।१.२.११।

सरम्हा परस्स एवस्स एकारस्स आदिस्स रिकारो होति, पुब्बो च सरो रस्सो होति न वा। यथरिव वसुधातलञ्च सब्बं, तथरिव गुणवा सुपूजनीयो।

न वा ति कस्मा? यथा एव, तथा एव।

इति सन्धिकप्पे दुतियो कण्डो।

एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। इवण्णो ति कारी, यन्ति कारियं, न वा ति क्वचत्थनिद्देसो, सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। असरूपग्गहणस्स मण्डूकगतियानुवत्तनतो सरेग्गहणस्स च निमित्तभावेनानुवत्तनतो इवण्णो असरूपे सरे परे यकारं पप्पोति न वा त्यत्थो। वुत्तञ्च रूपसिद्धियं—

"इवण्णो यन्नवा तीध असरूपाधिकारतो।
इवण्णस्स सरूपस्मिं यादेसो व न सम्भवे"[1]॥ ति।

इ एव वण्णो इवण्णो, समानरूपवसेनेत्थ ईकारो पि सङ्गहितो; 'इवण्णो यं क्वची' ति अवत्वा कस्मा एवं वुत्तन्ति? उभिन्नं क्वचि न-वा-सद्दानं समानत्थत्ता एवं वुत्तन्ति परिहारो[2]।

पटिसन्थारवुत्यस्सा त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन पटिसन्थारवुत्ति-अस्स, सब्बा वित्ति-अनुभूयते ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'सरा सरे लोपं' (१२) त्यधिकिच्च इमिना इवण्णस्स यकारं कत्वा, 'ब्यञ्जनो च विसञ्ञोगो' ति (४१) एत्थ चसद्देन एकस्स तकारस्स लोपं कत्वा, परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। किमुदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव।

एवं पञ्चहि सुत्तेहि सरादेसं च विधाय, इदानि अञ्ञम्पि सरादेसविधानं विधातुं—

२२. एवादिस्स रि पुब्बो च रस्सो[3] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं, किन्निदानं, कुतो निक्खन्तन्ति? 'सरा सरे लोपं' (१२), 'वा परो असरूपा' ति (१३) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? यथरिव,

---

1. रूप०, सु० २१।
2. तु०–क० न्या०, पि० ३३।
3. तु०–"एवसेस्स रि पुब्बो च रस्सो"–सद्द०,५ सु० २।

(३) ततियो कण्डो

२३. सरा पकति ब्यञ्जने।१.३.१।

सरा खो ब्यञ्जने परे पकतिरूपा[1] होन्ति। मनोपुब्बङ्गमा धम्मा, पमादो मच्चुनो पदं, तिण्णो पारगतो अहु।

तथरिव त्यादिसु यथा-एव तथा-एवे ति पदच्छेदे कते, किं तेहि सुत्तद्वयेहि वुत्तविधानेहि एव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तेहि सुत्तद्वयेहि वुत्तविधानेहि एव न भवितब्बं, यथान्तभूतसरम्हा परस्स एवसद्दस्स आदिस्स रिकारो, पुब्बो यथान्तसरो च रस्सो होती ति दस्सेतुं, 'एवादिस्स रि पुब्बो च रस्सो' ति वुत्तं— अयमस्स निक्खन्ति। किमत्थमिदमुच्चते? सरम्हा परस्स एवस्स आदिभूतस्स एकारस्स रिकारो होति, पुब्बो च यथान्तसरो रस्सो होति न वा ति ञापनत्थ-मिदमुच्चते। एवादिस्सा ति एकं, री ति एकं, पुब्बो ति एकं, चा ति एकं, रस्सो त्येकन्ति पञ्चपदमिदं सुत्तं। एवादिस्सा ति सम्बन्धछट्ठी, री ति कारियं, पुब्बो ति कारि, चा ति सम्पिण्डनं, रस्सो ति कारियं, सञ्ञा ::पे० ···: विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। सरेग्गहणस्सानुवत्तनतो सरम्हा परस्स पदादिभूतस्स एकारस्स रिकारो होति, पुब्बो च सरो रस्सो होती त्यत्थो। एवस्सादि एवादि, ए एव आदि वा, तस्स एवादिस्स; री ति रूळ्हिपदं; पुब्बे भवो पुब्बो, सरो; एकारो निपातो रस्सकाले नियुत्तो तब्बन्तो वा रस्सो, सरो; चकारो दुतियत्थसम्पिण्डनत्थो।

यथरिव त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन यथा-एव वसुधा तलं, तथा-एव गुणवा ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'सरासरे लोपं' (१२), 'इवण्णो यन्नवा' (२१) त्यधिकिच्च इमिना एकारस्स रिकारं कत्वा, पुब्बसरस्स रस्सं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। किमुदाहरणानि, सुविञ्ञेय्यानेव।

इति कच्चायनवण्णनायं
सन्धिकप्पस्स दुतियकण्डवण्णना।

---

(३) ततियो कण्डो

एवं 'यमेदन्तस्सादेसो' (१७) त्यादीहि छहि सुत्तेहि आदेससन्धिं विधाय इदानि पकतिसन्धिं विधातुं—

---

[1] रूपानि—सी० २।

२३. सरा पकति ब्यञ्जने[1]; **२४. सरे क्वचि**[2] **ति** सुत्तद्वयं वुत्तं। तेसु पठमं पकतिसुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति ? 'दीघं' (१५), 'रस्सं' (२६), 'लोपञ्च तत्राकारो' (२७) ति सुत्तत्तयप्पभवं तन्निदानं तेहि निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति ? मनोपुब्बङ्गमा त्यादिसु मनो-पुब्बङ्गमा ति ठपेत्वा, सरतो वियोजिते, 'दीघं', 'रस्सं' ति सुत्तेहि ब्यञ्जनस्मिं परे पुब्बसरस्स दीघत्तरस्सत्तं वुत्तं; 'लोपञ्च तत्राकारो' ति सुत्तेन ब्यञ्जनस्मिं परे ओकारस्स लोपं कत्वा अकारागमो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि सुत्तविधानेहि एव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति तेहि सुत्तविधानेहि एव न भवितब्बं, ब्यञ्जनस्मिं परे पुब्बो सरो पकतिभावो होती ति दस्सेतुं 'सरा पकति ब्यञ्जने' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? सरा खो ब्यञ्जने परे पकतिरूपानि होन्ति न विकारमापज्जन्ती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। सरा ति एकं, पकती ति एकं, ब्यञ्जने ति एकन्ति तिपदमिदं। सरा ति कारि, पकती ति कारियं, ब्यञ्जने ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा ... पे० ... विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। सरा खो ब्यञ्जने परे पकतिरूपानि होन्ती ति अत्थो। सरसद्दस्स च ब्यञ्जनसद्दस्स च विग्गहो हेट्ठा वुत्तो व। पठमं करीयते ति पकति, पठमं ठपीयते त्यत्थो। असति इमस्मिं तेन विकारमापज्जेय्या ति 'दीघं', 'रस्सं', 'लोपञ्च तत्राकारो' ति सुत्तेहि विकारमापज्जेय्या ति चोदनापरिहारो।

मनोपुब्बङ्गमा त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन मनो-पुब्बङ्गमा, पमादो-मच्चुनो पदं, तिण्णो-पारगतो अहू ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, मनसद्दादितो ओकारस्स 'लोपञ्च तत्राकारो' ति (२७) वा, 'दीघं' (१५), 'रस्सं' ति (२६) वा वुत्तविधिम्हि सम्पत्ते, पारं-गतो अहू ति एत्थ पन 'वा परो असरूपा' ति (१३) परसरस्स लोपे सम्पत्ते, तं बाधेत्वा इमिना पकतिभावं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। पारं गतो अहू ति एत्थ पन पुरिमओकारस्स पच्छिमसुत्तेन पकतिभावं कत्वा, परभूतस्स अकारस्स इमिना पकतिभावो कातब्बो। कारिम्हि बहुवचनेन निद्दिट्ठे निमित्तस्स एकवचनेन निद्दिट्ठत्ता ओकार-अकारानं इमिना पकतिभावो कातब्बो ति पि वदन्ति।

---

1. तु०-"सरा पकतिका ब्यञ्जने"—सद्द०, सु० ६२।
2. तु०-"क्वचि सरे"-त०, सु० ६३।

२४. सरे क्वचि।१.३.२।

सरा खो सरे परे क्वचि पकतिरूपा[1] होन्ति। को इमं पठविं विजेस्सति।

क्वची ति कस्मा? अप्पस्सुतायं पुरिसो।

दुतियपकतिसुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'सरा सरे लोपं' (१२), 'वा परो असरूपा' ति (१३) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। को इमं त्यादिसु को-इमं ति पदच्छेदे कते, 'सरा सरे लोपं' ति पुब्बसरस्स, 'वा परो असरूपा' ति परसरस्स वा लोपो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि सुत्तविधानेहि एव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति तेहि सुत्तविधानेहि एव न भवितब्बं, सरस्मिं परे इमिना पुब्बसरस्स पकतिभावो पि होती ति दस्सेतुं 'सरे क्वची' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? सरानं सरे परे क्वचि पकतिभावो होती ति ञापनत्थं। सरे ति एकं, क्वची ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। सरे ति निमित्तसत्तमी, क्वची ति क्वचत्थनिद्देसो, सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। सरग्गहणस्स च पकतिग्गहणस्स चानुवत्तनतो सरा खो सरे परे क्वचि पकतिरूपानि होन्ती त्यथो। सरसद्दस्स विग्गहो वुत्तनयो व। कस्मा पनेत्थ क्वचिग्गहणं कतं, वाग्गहणमेवेत्थ कातब्बन्ति? क्वचिग्गहणस्स वात्थदीपनत्थं कतन्ति चोदनापरिहारो।

को इमं पठविं विजेस्सती ति उदाहरणं। तस्स पन को-इमं ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, ओकारस्स 'सरा सरे लोपं' (१२), 'वमोदुदन्तानं' (१८) ति लोपादेसे सम्पत्ते अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना पकतिभावं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। एत्थ च को इमं त्यादिसु पुरिमओकारस्स सरस्मिं परे इमिना पकतिभावो वुत्तो, पच्छिमइकारस्स ब्यञ्जनस्मिं परे पुरिमसुत्तेन पकतिभावो कातब्बो; 'दीघं' ति (१५) वा, 'वा परो असरूपा' ति (१३) वा दीघत्तलोपत्तसम्भवा। एवं सेसेसु 'सरे क्वची' ति (२४) सुत्तस्स उदाहरणेसु। एत्थ च "कतमा चानन्द, अनिच्चसञ्ञा; सारिपुत्त, इधेकच्चे; एहि सीवक, उट्ठेही" त्यादिसु आलपनन्तेसु च; "आयस्मा आनन्दो गाथा अभासि, देवा आभस्सरा यथा, तेविज्जा इद्धिप्पत्ता च, भगवा एतदवोच" त्यादिसु असमासनामपदन्तेसु च; "गाथाहि अज्झभासि,

---

१. ०रूपानि–सी० २।

२५. दीघं।१.३.३।

सरा खो ब्यञ्जने परे क्वचि दीघं पप्पोन्ति। सम्मा धम्मं विपस्सतो, एवं गामे मुनी चरे, खन्ती परमं तपो तितिक्खा।

क्वची ति कस्मा? इध मोदति पेच्च मोदति, पतिलीयति, पतिहञ्ञति।

सत्थु अदासी" त्यादिसु इकारुकारनामपदन्तक्रियादिम्हि च एवमादिसु बहुपकतिठानं रूपसिद्धियं आगतं।[1]

अप्पस्सुतायं ति किमुदाहरणं? तस्स पन अप्पस्सुतो-अयं ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इमिना पकतिभावे सम्पत्ते, क्वचिग्गहणेनाकत्वा, पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' (१२), 'वा परो असरूपा (१३), 'क्वचासवण्णं लुत्ते' (१४) त्यधिकिच्च 'दीघं' ति (१५) परसरस्स दीघं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं पकतिसुत्तद्वयं विधाय, इदानि ब्यञ्जनस्मिं दीघरस्सानि विधातुं--

२५ दीघं[2]; २६ रस्सं[3] ति सुत्तद्वयं वुत्तं। इदं सुत्तद्वयं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'सरा पकति ब्यञ्जने' ति (२३) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति। 'मुनो चरे, भोवादि नाम' त्यादिसु ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'सरा पकति ब्यञ्जने' ति ब्यञ्जनस्मिं पुरिमसरस्स पकतिभावो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि विधानेहेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तेहि विधानेहेव न भवितब्बं; मुनी चरे त्यादिसु ब्यञ्जनस्मिं दीघत्तम्पि, भोवादी त्यादिसु पि ब्यञ्जनस्मिं रस्सत्तम्पि होती ति दस्सेतुं 'दीघं', 'रस्सं' ति सुत्तद्वयं वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? ब्यञ्जने परे पुब्बसरा क्वचि दीघं पप्पोन्ती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। 'दीघं' ति एकपदमेव। कारियनिद्देसो, सञ्ञा···पे०··· विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। सरा ब्यञ्जने क्वचिग्गहणानमनुवत्तनतो सरा खो ब्यञ्जने परे क्वचि दीघं पप्पोन्ती त्यत्थो। पदविग्गहो वुत्तनया व। रस्सं दीघं ति वत्तब्बं; एवमवत्वा दीघं रस्सन्ति वचनं ब्यञ्जनग्गहणानुवत्तनभावसञ्ञापनत्थन्ति चोदनापरिहारो।

---

1. रूप०, सु० ३५।
2. तु०–"सरा ब्यञ्जने दीघं"–सद्द०, सु० ६४।
3. "रस्सं"–त०, सु० ६५।

२६. रस्सं ।१.३.४।

सरा खो ब्यञ्जने परे क्वचि रस्सं पप्पोन्ति। भोवादिनाम सो होति, यथाभाविगुणेन सो।

क्वची ति कस्मा? सम्मासमाधि, सावित्ती[1] छन्दसो मुखं, उपनीयति[2] जीवितमप्पमायु।

२७. लोपञ्च तत्राकारो।१.३.५।

सरा खो ब्यञ्जने परे क्वचि लोपं पप्पोन्ति, तत्र च लोपे कते अकारागमो होति। स सीलवा, स पञ्ञवा, एस धम्मो सनन्तनो, स वे कासावमरहति, स मानकामो पि भवेय्य, स वे मुनी जातिभयं अदस्सी।

सम्मा धम्मं त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन सम्म-धम्मं, मुनि-चरे, खन्ति-परमं ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजत्वा, अनन्तरसुत्तद्वयमधिकिच्च इमिना दीघं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। सम्मसद्दो अकारन्तनिपातो। किमुदाहरणानि, सुविञ्ञेय्यानेव।

रस्सं। किमत्थमिदमुच्चते? सरा खो ब्यञ्जने परे क्वचि रस्सं पप्पोन्तो ति ञापनत्थमिदमुच्चते। रस्सन्ति एकपदमेव। कारियनिद्देसो, सञ्ञा ··· पे० ··· विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। सरब्यञ्जनक्वचिग्गहणानुवत्तनतो सरा खो ब्यञ्जने परे क्वचि रस्सं पप्पोन्ती त्यत्थो।

भोवादी त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन भोवादी-नाम सो, यथा भावी-गुणेन सो ति छेदं कत्वा, आदिसुत्तद्वयमधिकिच्च इमिना रस्सं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। दीघसरानं रस्सभावो ठानेन आसन्नत्ता ठानासन्नवसेन वेदितब्बो।

एवं दीघरस्ससन्धिं विधाय, इदानि सरागमब्यञ्जनागमवसेन द्वीस आगमसन्धिसु सरागमसन्धिं विधातुं--

२७. लोपञ्च तत्राकारो[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'सरा पकति ब्यञ्जने ति (२३) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो

---

१. सा वित्ति–से०। २. उपनियति–से०, सी० २।

1. तु०–"लोपं तत्राकारो च"–सद्द०, सु० ६६।

क्वची ति कस्मा ? सो मुनि[१], एसो धम्मो पदिस्सति, न सो कासावमरहति ।

२८. परद्वेभावो ठाने ।१.३.६।

सरम्हा परस्स ब्यञ्जनस्स द्वेभावो होति ठाने । इधप्पमादो[२]

निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति ? स सीलवा त्यादिसु सो-सीलवा ति छेदे कते, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'सरा पकति ब्यञ्जने' ति (२३) सुत्तेन पकतिभावो वुत्तो; एवं सति किमेत्थ वुत्तविधानेनेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेन वुत्तविधानेनेव न भवितब्बं; ब्यञ्जनस्मिं परे ओकारस्स लोपं कत्वा अकारागमो कातब्बो ति पि दस्सेन्तेन, 'लोपञ्च तत्राकारो' ति वुत्तं--अयमस्स निक्खन्ति। किमत्थमिद-मुच्चते ? सरा खो ब्यञ्जने परे क्वचि लोपं पप्पोन्ति, तेसं लुत्ते ठाने अकारागमो च होती ति ञापनत्थं। लोपन्ति एकं, चा ति एकं, तत्रा ति एकं, अकारो ति एकन्ति चतुप्पदमिदं। लोपन्ति कारियं, चा ति सम्पिण्डनं, तत्रा ति विसयो, अकारो ति विसयि, सञ्ञा ··· पे० ··· विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । सरब्यञ्जनक्वचिग्गहणानं चानुवत्तनतो सरा खो ब्यञ्जने परे क्वचि लोपं पप्पोन्ति, तेसं लुत्तट्ठाने अकारागमो च होती ति अत्थो। चग्गहणं दुतियत्थं सम्पिण्डेति।

ससीलवा त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन सो-सीलवा, सो-पञ्ञवा, एसो-धम्मो, सो-वे कासावमरहति, सो-मानकामो, सो-वे मुनी ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, आदिसुत्तद्वयमधिकिच्च इमिना ओकारस्स लोपं कत्वा, तस्स लुत्तट्ठाने इमिना व अकारागमं कत्वा, परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा । सुत्त-निद्देसे एत्थ चसद्देन कथं जानेमू ति एत्थ उकारागमो वुत्तो। रूपसिद्धियं पन इमिना सुत्तेन "'एततसद्दन्तोकारस्सेवायं लोपो' ति च", "'चसद्देन एस अत्थो, एस आभोगो' त्यादिसु एतसद्दन्तस्स सरस्मिं परे ओकारलोपो अकारागमो च" वुत्तो[1]।

एवं सरागमं विधाय, इदानि अञ्ञं ब्यञ्जनादेसं विधातुं--

२८. परद्वेभावो ठाने[2] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति ? 'सरा पकति ब्यञ्जने' (२३), 'दीघं' ति (२५) सुत्तद्वयप्पभवं

---

१. मुनि; तेन सो मुनि-से० । २. इधप्पमोदो-से० ।

1. रूप०, सु० ३९ ।

2. तु०-"परस्स द्वित्तं ठाने"--सद्द०, सु० ६७ ।

पुरिसस्स जन्तुनो, पब्बज्जं कित्तयिस्सामि, चातुद्दसी[1], पञ्चद्दसी, अभिक्कन्ततरो च पणीततरो च।

ठाने ति कस्मा? इध मोदति पेच्च मोदति।

तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? इधप्पमादो त्यादिसु इध-पमादो ति पदच्छेदे कते, 'सरा पकति ब्यञ्जने' ति सुत्तेन ब्यञ्जनस्मिं पुब्बसरस्स पकतिभावो वुत्तो; 'दीघं' ति च ब्यञ्जनस्मिं पुब्बसरस्स दीघत्तं वुत्तं; किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेह्वेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेहि वुत्तविधानेहि एव न भवितब्बं, पुब्बसरम्हा परस्स अन्तो सरम्हा पुब्बस्स ब्यञ्जनस्स द्वेभावो होती ति दस्सेन्तेन, 'परद्वेभावो ठाने' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? पुब्बसरम्हा परस्स अन्तो सरम्हा पुब्बस्स ब्यञ्जनस्स द्वेभावो होति युत्तट्ठाने ति ञापनत्थमिदमुच्चते। परद्वेभावो ति एकं, ठाने ति एकन्ति द्विपदमिदं। परद्वेभावो ति कारियं, ठाने ति भावसत्तमी, सञ्ञा ... पे० ... विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। सरब्यञ्जनग्गहणानुवत्तनतो परसद्दं दिस्वा सरासद्दस्स पञ्चम्यन्तवसेन सम्बन्धितब्बतो च ब्यञ्जनसद्दस्स च छट्ठन्तेन परसद्देन सम्बन्धितब्बतो च सरम्हा परस्स ब्यञ्जनस्स द्वेभावो होती ति अत्थो। ठानसद्दो युत्तत्थवाचको, अधिप्पायत्थवसेन क्वचिसद्दत्थो क्वचिसद्दट्ठाने वुत्तत्ता; परस्स द्विभावो परद्विभावो, सो येव द्वेभावो।

इधप्पमादो त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन इध-पमादो, प—वज्जं, चातु-दसी, पञ्च-दसी, अभि-कन्ततरो ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, आदिसुत्तद्वयमधिकिच्च इमिना पुब्बसरम्हा परस्स अन्तो सरम्हा पुब्बस्स ब्यञ्जनस्स द्वेभावं कत्वा, परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

ठाने ति चेत्थ रस्ससरतो चाकारतो च परं दिस्सति। तत्थ प-पति-पटि-कमु-कुस-कुध-की-गह-जूत-ञा-सी-सु-सर-सम्भु-ससादीनमादिब्यञ्जनानं द्वेभावो, यथा, प-पति-पटिसु ताव—इधप्पमादो, अप्पमादो, सम्मप्पधानं (रस्सत्तं), अधिपतिप्पच्चयो, सुप्पतिट्ठितो, अप्पटिपुग्गलो, सुप्पटिपत्ति।

कमादिधातुसु—पक्कमो, पटिक्कमो, हेतुक्कमो ति रस्सत्तयतो; अक्कमति, यथाक्कमति, आकारतो; पक्कोसति, पटिक्कोसति, अनुक्कोसति, अक्कुट्ठो, अतिक्कुट्ठो, धनक्कीतो, विक्कयो, अनुक्कयो, पग्गहो, विग्गहो, अनुग्गहो,

---

१. चतुद्दसी—से०।

निग्गहो, चन्दग्गाहो, दिट्ठिग्गाहो, पज्जोतो, विज्जोतो, उज्जोतो, कतञ्ञू, विञ्ञू, पञ्ञाणं, विञ्ञाणं, अनुञ्ञा, समञ्ञा, अवस्सयो, समुस्सयो, निस्सयो, सुस्सयो, अप्पस्सुतो, विस्सुतो, बहुस्सुतो, अस्सुतवा, पस्सम्भवतो, विस्सम्भति, अट्टस्सरो, विस्सरति, अनुस्सरति, पस्ससन्तो, विस्ससन्तो, मुहुस्ससन्तो, अस्सासो एवमादि कमादिधातूनं उदाहरणं।

अविस्सज्जेन्तो, विस्सज्जेन्तो, अभिक्कन्ततरो, परिच्चजन्तो, उपद्दवो, उपक्किलिट्ठो त्यादि आदिग्गहणफलं।

तिक-तय-तिंस त्यादीनमादिम्हि च द्वेभावो, यथा––कुसलत्तिकं, पीतित्तिकं, लोकत्तयं, वत्थुत्तयं, एकत्तिंसद्वत्तिंसचतुत्तिंस; वतु-वट्टु-दिसानमन्ते द्वेभावो–– वत्तति, वट्टति, दस्सनं त्यादि। उ-दु-नि-उपसग्गादितो––उक्कंसो, दुक्करं, निक्कङ्खो, उग्गतं, दुच्चरितं त्यादि। चतु-छ-सन्तसद्दादेसतो च द्वेभावो––चतुद्दिसा, चतुक्कं, चतुप्पादो, छक्कं, छन्नवुति, छप्पदिको, छब्बस्सानि, सक्कारो, सक्कतो, सप्पुरिसो त्यादि।

यकारादिम्हि च––निय्याति, सुय्यति, अभिभुय्यति, विचेय्य, नेय्यं, सेय्यो, जेय्यो, वेय्याकरणो त्यादि। यवतमादेसे––जाति-अन्धो, विपळि-आसो, यदि-एवं, अपि-एकच्चे, अपि-एकदा इच्चत्र 'इवण्णो यन्नवा' ति (२१) यकारे कते, 'यवतं तलनदकारानं ब्यञ्जनानि चलञजकारत्तं' ति (२७१) सुत्तेन यवतो तकारस्स चकारं कत्वा, इमिना चकारस्स द्वेभावो––जच्चन्धो; परिसद्दस्स रकारस्स ळकारं कत्वा, इकारस्स यकारं कत्वा, यवतो ळकारस्स 'यवतं··जकारत्तं' ति लकारो, इमिना व द्वेभावो––विपल्लासो; यवतो नकारस्स च ञकारो, इमिना द्वेभावो––अञ्ञायो। एवं यञ्ञेवं, अप्पेकदा।

तपादितो सिप्पच्चयस्स च द्वेभावो––तपस्सी, यसस्सी। छन्दानुरक्खणे–– न पज्जहे वण्णबलं पुराणं, उज्जुगतेसु सेय्यो, गच्छन्ति सुग्गतिं त्यादि।

एवं रूपसिद्धियं बहूनि द्वेभावट्ठानानि आगतानि, वित्थारो तत्थ ओलोकेत्वा जानितब्बो[1]।

एवं पुब्बसरम्हा परस्स अन्तो सरम्हा पुब्बस्स ब्यञ्जनस्स यथारहं सदिसवसेन द्वेभावं विधाय, इदानि पुब्बसरम्हा परस्स अन्तो सरम्हा पुब्बस्स

1. रूप०, सु० ४०।

२९. वग्गे घोसाघोसानं ततियपठमा ।१.३.७।

वग्गे खो[1] ब्यञ्जनानं घोसाघोसभूतानं सरम्हा यथासङ्ख्यं ततियपठमक्खरा द्वेभावं गच्छन्ति ठाने । एसो वतज्झानफलो[2], यत्रट्ठितं नप्पसहेय्य मच्चु, सेले यथा पब्बतमुद्धनिट्ठितो, चत्तारिट्ठानानि नरो पमत्तो ।

ठाने ति कस्मा ? इध चेतसो दळ्हं गण्हति थामसा ।

इति सन्धिकप्पे ततियो कण्डो ।

घोसाघोसभूतस्स वग्गदुतियचतुत्थस्स सदिसभावेन द्वेभावे सम्पत्ते, यथारहं असदिसवसेन द्वेभावं नियमेत्वा विधातुं--

२९. **वग्गे घोसाघोसानं ततियपठमा**[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति ? 'परद्वेभावो ठाने' ति (२८) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति ? एसो वतज्झानफलो त्यादिसु एसो वतज्झानफलो ति छेदे कते, 'परद्वेभावो ठाने' ति सुत्तेन सदिसवसेन द्वेभावो वुत्तो; किं तत्थ तेन विधानेनेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेन वुत्तविधानेनेव न भवितब्बं, पुब्बसरम्हा परस्स अन्तो सरम्हा पुब्बस्स घोसाघोसभूतस्स दुतियचतुत्थसङ्खातस्स ब्यञ्जनस्स इमिना पठमततियक्खरा असदिसवसेन पि द्वेभावा होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'वग्गे···पठमा' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? वग्गे घोसाघोसानं अन्तो सरम्हा पुब्बभूतानं पुब्बसरम्हा परभूतानं द्वेभावे करीयमानेन तं सदिसा होन्ति, अथ खो वग्गे ततियपठमा व होन्ती ति ञापनत्थं। वग्गे ति एकं, घोसाघोसानन्ति एकं, ततियपठमा ति एकन्ति तिपदमिदं। वग्गे ति आधारसत्तमी, घोसाघोसानन्ति सम्बन्धछट्ठी, ततियपठमा ति कारियं; घोसाघोसानन्ति वा भावयोगछट्ठिकारि, ततियपठमा ति कारियं, सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। द्वेभाव-सद्दस्स च ठानसद्दस्स चानुवत्तनतो वग्गे घोसाघोसानं वग्गे ततियपठमा यथासङ्ख्यं द्वेभावं गच्छन्ति ठाने त्यत्थो।

---

१. खो पुब्बेसं--सी० १, सी० २। २. वचज्झानफलो--सी० १, से०।

1. तु०--"वग्गे घसाघोसानं सवग्गे ततियपठमा"--सद्द०, सु० ६८।

(४) चतुत्थो कण्डो

३०. अं ब्यञ्जने निग्गहीतं ।१.४.१।

निग्गहीतं खो ब्यञ्जने परे अं इति होति। एवं वुत्ते तं साधू ति पटिस्सुणित्वा।

एसो वतज्झानफलो त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन एसो वत–झानफलो, यत्र-ठितं, मुद्धनि-ठितो, चत्तारि-ठानानी ति छेदं कत्वा, 'परद्वेभावो ठाने' ति (२८) सदिसद्वेभावे सम्पत्ते, इमिना यथानुरूपं ततियपठमं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। किमुदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव।

इधा पि ठानधिकारतो प-उ-दु-नि आदिसु चतुत्थक्खरेसु पग्घरति, उग्घरति, दुब्भिक्खं, निग्घोसो त्यादि।

यवतमादेसादिसु––बोज्झङ्गो, सब्भं, बुज्झती त्यादि; रस्सत्तयतो च आकारतो च वग्गदुतियेसु––पञ्चक्खन्धा, रूपक्खन्धो, अक्खमो, अभिक्खणं, अविक्खेपो, जातिक्खेत्तं, धातुक्खोभो, आयुक्खयो इच्चादि; आकारतो–– अक्खातो, तण्हक्खयो, ञाणक्खेत्तं, सञ्ञाक्खन्धो, अच्छादेति, अच्छिन्दती त्यादि; एवं बहुपयोगा आगता; वित्थारत्थिके हि वित्थारो रूपसिद्धियं ओलोकेतब्बो।

इति कच्चायनवण्णनायं
सन्धिकप्पस्स ततियकण्डवण्णना।

(४) चतुत्थो कण्डो

एवं सरादेसञ्च ससरादेसञ्च विधाय, इदानि निग्गहीतादेसविधानं विधातुं––

३०. अं ब्यञ्जने निग्गहीतं[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति? 'ब्यञ्जने चे' ति (३९) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति? एवं वुत्ते, तं साधू त्यादिसु 'ब्यञ्जने चे' ति ब्यञ्जनस्मिं निग्गहीतस्स लोपो वुत्तो; किं तत्थ तेनेव निग्गहीतस्स लोपेनेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेन निग्गहीतस्स लोपेनेव न भवितब्बं, इमिना ब्यञ्जनस्मिं निग्गहीतस्स

---

1. तु०–"अं इत्यनूस्वारः"––का० १.१.१९; "मोऽनुस्वारः"—पा० ८.३.२३; "ब्यञ्जने निग्गहीतं अं"–सद्द०, सु० १५३।

३१. वग्गन्तं वा वग्गे ।१.४.२।

वग्गभूते ब्यञ्जने परे निग्गहीतं खो वग्गन्तं वा पप्पोति। तन्निब्बुतं, धम्मञ्चरे सुचरितं[१], चिरम्पवासिं पुरिसं, सन्तन्तस्स मनं होति, तङ्कारुणिकं, एवङ्खो भिक्खवे सिक्खितब्बं ।

वाग्गहणेन[२] निग्गहीतं खो लकारादेसो होति । पुल्लिङ्गं[३] ।

वा ति कस्मा ? न तं कम्मं कतं साधु ।

अमादेसो पि होती ति दस्सेन्तेन, 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' ति वुत्तं। किमत्थमिद-मुच्चते ? निग्गहीतं खो ब्यञ्जने परे अं इति होती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। अं ति एकं, ब्यञ्जने ति एकं, निग्गहीतन्ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। अं इति कारियं, ब्यञ्जने ति निमित्तसत्तमी, निग्गहीतन्ति कारि, सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। निग्गहीतं खो ब्यञ्जने परे अं इति होती ति अत्थो। विग्गहो वुत्तनयो व।

एवं वुत्ते, तं साधू त्यादीनि उदाहरणानि । तेसं पन एवं वुत्ते, तं-साधू ति ठपेत्वा, इमिना निग्गहीतस्स ब्यञ्जनस्मिं परे अं-आदेसं कत्वा, 'सरलोपो··· पकती' ति (८३) पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, परसरस्स पकतिभावं च कत्वा, परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं निग्गहीतस्स अं-आदेसं विधाय, इदानि अञ्ञम्पि निग्गहीतादेसं विधातुं--

३१. वग्गन्तं वा वग्गे[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति ? 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' ति (३०) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति । किन्निक्खन्तन्ति ? तन्निब्बुतं, चिरम्पवासिं त्यादिसु तं-निब्बुतं, चिरं-पवासिं ति छेदे कते, 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' ति इमिना निग्गहीतस्स अं-आदेसो वुत्तो; किन्तेन तत्थ अं-आदेसेनेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तेन तत्थ वुत्तविधानेनेव न भवितब्बं; 'वग्गन्तं वा वग्गे' ति इमिना निग्गही-

---

१. सुचरितं, न नं दुच्चरितञ्चरे-सी० २। २. वाग्गहणेन-से०। ३. पुग्गलं-सी० १।

1. तु०-"वर्गे तद्वर्गपञ्चमं वा"--का० १.४.१६, "वर्गे वर्गान्तः"--का० २.४.४५; "अनुस्वारस्य ययि परसवर्णः" पा० ८.४.५८, "वा पदान्तस्य" पा० ८.४.४९; "निग्गहीतं वग्गे वग्गन्तं वा"—सद्द०, सु० १३८।

तस्स वग्गम्पि होती ति दस्सेन्तेन, 'वग्गन्तं वा वग्गे' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? वग्गभूते ब्यञ्जने परे निग्गहीतं खो वग्गन्तं वा पप्पोती ति ञापनत्थं। वग्गन्तन्ति एकं, वा ति एकं, वग्गे ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। वग्गन्तन्ति कारियं, वा ति विकप्पनसमुच्चयनिद्देसो, वग्गे ति निमित्तसत्तमी। निग्गहीतब्यञ्जनग्गहणानमनुवत्तनतो वग्गभूते ब्यञ्जने परे निग्गहीतं वग्गन्तं पप्पोती ति अत्थो। वग्गस्स अन्तो वग्गन्तो, तं वग्गन्तं। ङ-ञ-ण-न-मावग्गन्तानं बहुत्ते सति पि जात्यपेक्खवसेन 'वग्गन्तं' ति एकवचनं कतं[1]। इमस्मिं वग्गे इदं वग्गन्तं ति नियमाभावा सब्बेसु वग्गेसु सब्बे वग्गन्ता कस्मा न पापुणन्ती ति चोदना। पठमवग्गसद्दोपात्तत्ता ति परिहारो। एत्थ च पठमवग्गसद्दो सम्बन्धत्थो, दुतियवग्गसद्दो निमित्तत्थो, तस्मा दुतियवग्गसद्दमेव निमित्तसम्बन्धवसेन वग्गन्तं वा ति वत्तब्बं। वग्गन्तं चा ति पि पाठो। इदं च न-समासपदं 'वग्गे । अन्तं वा' ति छेदं कत्वा, अकारस्मिं पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, सन्धिवसेन वग्गन्तं वा ति वत्तब्बं; इतरस्मिं परलोपवसेन वग्गेन्तं वा ति वत्तब्बं। नसमासवसेन कस्मा? 'वग्गे अन्तं वा' ति पदच्छेदे कते वग्गे-सद्दो वग्गे अन्तन्ति च वग्गस्स अन्तन्ति च निमित्तञ्च सम्बन्धत्थं च साधेति; एवं सिद्धे निमित्तभूतं दुतियवग्गमेव निमित्तत्थसम्बन्धत्थवसेन अवत्वा, पठमवग्गं सम्बन्धवसेन तप्पुरिससमासं कत्वा, दुतियवग्गं निमित्तभावेन विसुं कत्वा, 'वग्गन्तं वा वग्गे' ति वुत्तं; तस्मा समासभूतो पठमवग्गो अधिको एत्थ च निमित्तभूतं सत्तम्यन्तं वग्गे ति पदं सन्धिवसेन वग्गन्तं वा ति वुत्ते वग्गे अन्तं वग्गस्स अन्तन्ति अत्थो सिद्धो; कस्मा पठमवग्गसद्दो अधिको ति अधिप्पायो—इदं न्यासकारकस्स मतिं[2]। रूपसिद्धियं पन "निमित्तानुस्सरानं ठानासन्नवसेन तब्बग्गपञ्चमो होती"[3] ति वुत्तं; "तस्सत्थो वग्गे" ति वुत्तं। कवग्गा ति निमित्तस्स च कारिनो अनुस्सारनामधेय्यस्स निग्गहीतस्स च कण्ठादिट्ठानेन नासिकट्ठानेन च वग्गपञ्चमेसु पि तब्बग्गहणस्स च आसन्नत्ता कवग्गादिम्हि परे यथाक्कमं ङ-ञ-ण-न-मा व निग्गहीतस्स आदेसत्तमापज्जन्ती ति इदं हि पठमवग्गसद्दो पात्तत्ता ति वचनस्स पटिक्खेपवचनं।

तन्निब्बुतं त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन तं-निब्बुतं, धम्मं-चरे, चिरं-पवासिं, सन्तं-तस्स, तं-कारुणिकं, एवं-खो ति छेदं कत्वा, आदिसुत्तमधिकिच्च इमिना निग्गहीतस्स वग्गन्तं कत्वा, परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

1-2. तु०—क० न्या०, पि० ४५-४६। 3. रूप०, सु० ४९।

३२. एहेञ्ञं ।१.४.३।

एकारे हकारे च परे निग्गहीतं खो ञकारं पप्पोति वा। पच्चत्तञ्ञेव परिनिब्बायिस्सामि, तञ्ञेवेत्थ पटिपुच्छिस्सामि, एवञ्हि वो भिक्खवे सिक्खितब्बं, तञ्हि तस्स मुसा होति।

वा ति कस्मा? एवमेतं अभिञ्ञाय, एवं होति सुभासितं।

वासद्दो ववत्थितविभासत्थो। तेन तण्हङ्करो, रणञ्जहो, सण्ठितो, जुतिन्धरो, सम्पत्तो त्यादिसु निच्चं; तं करोति, तं खणं, सं गतो, तं धनं, धम्मं चरे, तं ञाणं, तं ठानं, तं गतो, दातुं गतो त्यादिसु अनिच्चं; न तं कम्मं कतं साधू त्यादिसु असन्तं दीपेति। सवि च उपरि वाग्गहणे विज्झन्तरे वा इध वाग्गहणं अत्थन्तरविञ्ञापनत्थं; तेन निग्गहीतस्स लकारादेसो होति[1]। पतिसल्लीनो, पटिसल्लानो, सल्लक्खणा, सल्लेखो, सल्लापो, पुल्लिङ्गं त्यादि वाग्गहणफलवसेन रूपसिद्धियं वुत्तो[2]। कच्चायने पन "निग्गहीतं खो लकारादेसो होती ति पुग्गलं" ति वुत्तं[3]। तत्थ च लकारो आदेसो यस्सा ति लकारादेसो; किं तं? निग्गहीतं। पुग्गलं तीध पुग्ग इति ठपेत्वा, नामसञ्ञं कत्वा, ततो अं विभत्तिं कत्वा, "निग्गहीतञ्चे" ति (३७) पुल्लिङ्गे निग्गहीतागमं कत्वा, वाग्गहणेन निग्गहीतागमस्स लकारं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

वासद्दस्स विकप्पनत्थं दस्सेतुं "वा ति कस्मा? नं तं कम्मं कतं साधू" ति वुत्तं। तस्स पन न तं-कम्मं कतं-साधू ति पदच्छेदं कत्वा, वाग्गहणेनाकत्वा निग्गहीतस्स 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' ति (३०) अं-आदेसं कत्वा, 'सरलोपो ··· पकती' ति (८३) पकतिभावं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं वग्गस्मिं परे निग्गहीतस्स वग्गन्तं विधाय, इदानि एकारहकारस्मिं परे निग्गहीतस्स ञकारत्तं विधातुं—

३२. एहेञ्ञं[4] ति वुत्तं। इदं सुत्तं ····? 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' (३०), 'मदा सरे' (३४), 'ब्यञ्जने चे' ति (४१) सुत्तत्तयप्पभवं तन्निदानं····

---

1. तु०—क० न्या०, पि० ४७; रूप०, सु० ४९।
2. त०; "ले लकारं"—सद्द०, सु० १३९।
3. क० वु०, सु० ३१।
4. तु०—"ञं एहे"—सद्द०, सु० १५०; "हे मपरे वा"—पा० ८.३.२६।

किन्निक्खन्तन्ति ? पच्चत्तञ्ञेव, तञ्ञेवेत्थ, तञ्ही त्यादिसु पच्चत्तं-एव, तं-एव, तं-ही ति छेदे कते, 'मदा सरे' ति सुत्तेन सरस्मिं परे मदादेसो च वुत्तो, 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' ति ब्यञ्जनस्मिं परे निग्गहीतस्स अं-आदेसो च वुत्तो, 'ब्यञ्जने चे' ति ब्यञ्जनस्मिं निग्गहीतस्स लोपो च वुत्तो; किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव भवितब्बं ति पुच्छाय सति, एकारहकारे परे निग्गहीतस्स ञकारो पि होती ति दस्सेन्तेन, 'एहेञ्ञं' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? एकारहकारे परे निग्गहीतं खो ञकारं पप्पोति वा ति ञापनत्थं । एहे ति एकं, ञन्ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। एहे ति निमित्तसत्तमी, ञन्ति कारियं, सञ्ञा ··· पे० ···· विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। निग्गहीतग्गहणस्स च वाग्गहणस्स चानुवत्तनतो एकारहकारे परे निग्गहीतं विकप्पेन ञकारं पप्पोती ति अत्थो। ए च हो च एहं, 'तथा द्वन्दे ····' (३२४) त्यादिना एकत्तं नंपुसकलिङ्गत्तञ्च[1]। 'ञमेहे' ति अवत्वा कस्मा एहेञ्ञं ति वुत्तन्ति चोदना। 'ञमेहे' ति वुत्ते निग्गहीतं हकारे परे ञकारमकारं पप्पोती ति अत्थं गण्हेय्य, तस्मा एवं वुत्तन्ति परिहारो[2]।

पच्चत्तञ्ञेव त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन पच्चत्तं-एव, तं-एव, एवं-हि वो, तं-हि तस्सा ति छेदं कत्वा, अनन्तरसुत्तत्तयमधिकिच्च इमिना एकारहकारे परे निग्गहीतस्स ञकारं कत्वा, तस्स 'परद्वेभावो ठाने' ति (२८) द्वेभावं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवमेतं त्यादीनि किमुदाहरणानि । तेसं पन एवं-एतं, एवं-होती ति छेदं कत्वा, सति पि परस्मिं एकारहकारे वाग्गहणेनाकत्वा, पुब्बरूपे, निग्गहीतस्स 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' (३०), 'वग्गन्तं वा वग्गे' (३१) त्यधिकिच्च 'मदा सरे' ति (३४) मकारं कत्वा, इतरस्मिं निग्गहीतस्स 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' ति इमिना वुत्तविधानं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा[3]। इहानुवत्तनवासद्दस्स ववत्थितविभासत्ता एव निपाततो अञ्ञत्थ न होति, यथा––'एवमेतं, एवं होती' त्यादि।

एवं एकारहकारस्मिं परे निग्गहीतस्स ञकारादेसं विधाय, इदानि सब्बनामयकारस्मिं परे सह यकारेन ञकारत्तं विधातुं––

1. तु०–क० न्या०, पि० ४८।
2. तु०–त०।
3. तु०–त०, पि० ४९।

३३. सये[1] च।१.४.४।

निग्गहीतं खो यकारे परे सह यकारेन ञकारं पप्पोति वा। सञ्ञोगो, सञ्ञुत्तं।

वा ति कस्मा ? संयोगो, संयुत्तं।

---

३३. सये चा[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं ··· ?'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' (३०), 'ब्यञ्जने चा' ति (३९) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं··· किन्निक्खन्तन्ति? सञ्ञोगो, सञ्ञुत्तं त्यादिसु सं-योगो, सं-युत्तं ति पदच्छेदे कते 'अं ··· निग्गहीतं' ति इमिना ब्यञ्जनस्मिं परे अमादेसो वुत्तो, 'ब्यञ्जने चे' ति ब्यञ्जनस्मिं परे वा निग्गहीतस्स लोपो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहेव वुत्तविधानेहि भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेहि सुत्तद्वयेहि वुत्तविधानेहेव न भवितब्बं, यकारस्मिं परे निग्गहीतस्स सह यकारेन ञकारत्तम्पि होती ति दस्सेतुं, 'सये चा' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? यकारे परे निग्गहीतं यकारेन सह विकप्पेन ञकारं पप्पोती ति ञापनत्थं। सा ति एकं, ये ति एकं, चा ति एकन्ति तिपदमिदं। सा ति विसेसनं सहत्थनिद्देसो वा, ये ति निमित्तसत्तमी, चा ति अनुकड्ढनं, सञ्ञा ···पे०··· विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। निग्गहीतग्गहणवाग्गहणञग्गहणानमनुवत्तनतो यकारस्मिं परे निग्गहीतं सह यकारेन विकप्पेन ञकारं पप्पोती ति अत्थो। कस्मा इदं अनन्तरसुत्तेन एकयोगं न कतन्ति चोदना[2]। सहनिमित्तादेसस्स अधिप्पेतत्ता ति परिहारो। 'तेसु वुद्धी···' (४०६) त्यादिना सहसद्दस्स सादेसो हकारस्स लोपो वा[3]।

सञ्ञोगो, सञ्ञुत्तं त्यादीनि उदाहरणानि। तेसम्पन सं-योगो, सं-युत्तं ति छेदं कत्वा, 'अं ब्यञ्जने··· (३०), 'वग्गन्तं···' (३१), 'एहेञ्ञं' ति (३२) सुत्तत्तयमधिकिच्च इमिना यकारस्मिं परे सह यकारेन निग्गहीतस्स ञकारं

---

१. सये-सी० १, सी० २।

1. तु०-"ये सह"-सद्द०, सु० १४१; पा० ८.३.२६।

2-3. तु०-"अनन्तरेन सहेवेतं एकयोगाकरणं इमिना सनिमित्तस्साधिप्पेतत्ता ति दट्ठब्बं; इध पन सहसद्दस्स सोदकं कि आदीसु विय 'क्वचादिमज्झुत्तरानं दीघरस्सा पच्चयेसु चा' ति अधिकिच्च 'तेसु वुद्धिलोपागमविकारविपरीतादेसा चा' ति वा 'पच्चयादनिद्दिट्ठा निपातना सिज्झन्ती' ति वा सादेसं कत्वा, 'सह ये चा' ति वत्तब्बे 'सये चा' ति वुत्तं ति दट्ठब्बं; आह च-'सह यकारेना' ति"-क० न्या०, पि० ४९।

३४. मदा सरे।१.४.५।

निग्गहीतस्स[१] खो परे मकार-दकारादेसा होन्ति वा। तमहं ब्रूमि ब्राह्मणं, एतदवोच सत्था।

वा ति कस्मा ? अक्कोच्छि मं अवधि मं अजिनि मं अहासि मे।

कत्वा द्वेभावञ्च कत्वा नेतब्बं, नेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा। किमुदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव। वासद्दस्स ववत्थितविभासत्ता सञ्ञुत्तं, सञ्ञोगो, सञ्ञाचितो त्यादिसु सपदन्ततो निग्गहीतस्स ञकारादेसो; यञ्ञदेव, आनन्तरिकञ्ञमाहु त्यादिसु सब्बनामयकारन्तस्स निग्गहीतस्स सह यकारेन ञकारादेसो होति; ततो न अञ्ञत्थ--एवं योजनं, सरणं यन्ति त्यादिसु न होति।

एवं निग्गहीतस्स सब्बस्मिं ब्यञ्जने अमादेसत्तञ्च वग्गब्यञ्जनेसु वग्गन्तत्तञ्च एकारहकारे परे ञकारत्तञ्च यकारस्मिं परे ञकारत्तञ्च विधाय, इदानि तस्स सरस्मिं परे मकारदकारत्तं विधातुं--

३४. मदा सरे[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं ··· ? 'क्वचि लोपं' ति (३८) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ··· किन्निक्खन्तन्ति ? तमहं, एतदवोच त्यादिसु तं-अहं, एतं-अवोचे ति छेदे कते, 'क्वचि लोपं' तिमिना सरस्मिं परे निग्गहीतस्स लोपो वुत्तो। एवं सति किं तत्थ तेन लोपेनेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति,तत्थ तेनेव न भवितब्बं, सरस्मिं परे निग्गहीतस्स मकारदकारादेसा पि होन्ति वा ति दस्सेतुं 'मदा सरे' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? निग्गहीतस्स खो सरे परे मकारदकारादेसा होन्ती ति ञापनत्थं। मदा ति एकं, सरे ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। मदा ति कारियं, सरे ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा ··· पे० ··· विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। मो च दो च मदा; निग्गहीतग्गहणं छट्ठियन्तवसेन वत्तते; वाग्गहणञ्च वत्तते; तेन निग्गहीतस्स सरे परे मकारदकारादेसा होन्ती वा ति अत्थो।

तमहं, एतदवोचे त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन तं-अहं, एतं-अवोचा ति छेदं कत्वा, आदिसुत्तद्वयमधिकिच्च इमिना निग्गहीतस्स मकारदकारादेसं कत्वा, परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

---

१. निग्गहीतं-सी० १।

1. तु०-"सेसतो मो दो च सरे ब्यञ्जने वा"-सद्द०, सु० १४५।

३५. यवमदनतरळा[1] चागमा।१.४.६।

सरे परे यकारो वकारो मकारो दकारो नकारो तकारो रकारो ळकारो[2] इमे आगमा होन्ति वा। नयिमस्स विज्जा, यथयिदं[3] चित्तं, मिगी भन्तावुदिक्खति, सित्ता ते लहुमेस्सति, असित्ता ते गरुमेस्सति, अस्सो भद्दो[4] कसामिव, सम्मदञ्ञा[5] विमुत्तानं,[5] मनसादञ्ञा[6] विमुत्तानं,[6] अत्तदत्थमभिञ्ञाय, चिरन्नायति, इतोनायति, यस्मातिह भिक्खवे, तस्मातिह भिक्खवे, अज्जतग्गे पाणुपेतं, सब्भिरेव समासेथ, आरग्गेरिव सासपो, सासपोरिव आरग्गे, छळभिञ्ञा, छळायतनं[7]।

अक्कोच्छि मं त्यादीनि किमुदाहरणानि तानि सुविञ्ञेय्यानेव। एत्थ वासद्दाधिकारस्स ववत्थितविभासत्ता दकारो यतेत-परस्सेव[1]—यदनिच्चं, तदनत्ता, एतदवोच, एतदेवे त्यादि। 'मदा' ति योगविभागेन च ब्यञ्जनस्मिं परे पि मकार-दकारादेसा--बुद्धम् सरणम् गच्छामि, तद्धितं त्यादि। एत्थ च बुद्धं-सरणं ति च तं-हितं ति च ठपेत्वा, पुरिमपक्खे सकारस्मिं परे निग्गहीतस्स निस्सरवसेन मकारो कतो; तञ्च निस्सरभावञापनत्थं उपरिलेखवसेन लिखितं। वुत्तञ्च--"हेट्ठा वा उपरिलेखकरणं निस्सरं ब्यञ्जनं कतं" ति। पच्छिमपक्खे 'दो धस्स चे' ति (२०) एत्थ चसद्दग्गहणेन हकारस्स धकारं कत्वा, धकारस्मिं परे निग्गहीतस्स निस्सरवसेन दकारं कत्वा नेतब्बं, नेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं सरस्मिं ब्यञ्जने वा परे निग्गहीतस्स अमादेसवग्गन्तादेसादीनि विधाय, इदानि ब्यञ्जनागमं विधातुं--

३५. यवमदनतरळा चागमा[2] ति वुत्तं। इदं सुत्तं··· ? 'सरा सरे लोपं' (१२), 'वा परो असरूपा' ति (१३) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं··· किन्निक्ख-

---

१. ०तरला–से०, सी० १। २. लकारो–से०, सी० १।
३. यथायिदं–सी० १, सी० २। ४. भद्रो–से०, सी० १।
५-५. सम्मदञ्ञाविमुत्तानं–से०। ६-६. मनसादञ्ञाविमुत्तानं–से०। ७. सळायतनं–सी० १।

1. तु०–"नपुंसके यतेतेहि दो सरे पायेन"–त०, सु० १४२; "मो इतरे"–त०, सु० १४३; "समासे दो तिलिङ्गे"–त०, सु० १४४।

2. तु०–"यवमदनतरलहा वा" त०, सु० ५६।

वा ति कस्मा ? एवं महिद्धिया एसा, अक्कोच्छि मं अवधि मं अजिनि मं अहासि मे, अजेय्यो अनुगामियो।

चसद्दग्गहणेन इधेव[1] मकारस्स पकारो होति, यथा—चिरप्पवासिं पुरिसं; ककारस्स दकारो होति, यथा—सदत्थपसुतो सिया; दकारस्स च तकारो होति, यथा—सुगतो।

न्तन्ति ? यथयिदं त्यादिसु यथा-इदं ति छेदे कते 'सरा सरे लोपं' ति सुत्तेन पुब्बलोपो वुत्तो, 'वा परो असरूपा' ति परलोपो च वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव भवितब्बं ति पुच्छाय सति, तत्थ तेहि वुत्तविधानेहि एव न भवितब्बं, सरस्मिं परे यकारादयो पि आगमा वा होन्ती ति दस्सेतुं, 'यवमदनतरळा चागमा' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? सरस्मिं परे यकारादयो अट्ठ ब्यञ्जना आगमा वा होन्ती ति ञापनत्थं। यवमदनतरला ति एकं, चा ति एकं, आगमा ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। यवमदनतरळा ति विसयि, चा ति समुच्चयो, आगमा ति तब्बिसेसनं, सञ्ञा··· पे०···विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। सरग्गहणवाग्गहणानुवत्तनतो सरस्मिं परे यकारादयो अट्ठ ब्यञ्जना आगमा वा होन्ती ति अत्थो। यो च वो च मो च दो च नो च तो च रो च ळो चा ति, तथा; चकारो निपातो; आगच्छन्ती ति आगमा[1]।

नयिमस्स विज्जा, यथयिदं चित्तं त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन न-इमस्स, यथा-इदं, भन्ता-उदिक्खति, लहु-एस्सति, गरु-एस्सति, कसा-इव, सम्मा-अञ्ञा, मनसा-अञ्ञा, अत्त-अत्थं चिरं-आयति. इतो-आयति, यस्मा-इह, तस्मा-इह, अज्ज-अग्गे, सब्भि-एव, आरग्गे-इव, सासपो-इव, छ-अभिञ्ञा, छ-आयतनं ति छेदं कत्वा, 'वग्गन्तं वा वग्गे' (३१), 'मदा सरे' (३४) त्यधिकिच्च इमिना यकारादीनि आगमवसेन आनेत्वा परक्खरं नेत्वा यथानुरूपं कातब्बं, कत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं महिद्धिया एसा, अक्कोच्छि मं, अवधि मं अजिनि मं अहासि मे, अजेय्यो अनुगामियो त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तेसम्पन सति पि सरस्मिं वाग्गहणेनाकत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा।

---

१. इहेव–से०, सी० १।

1. तु०–क० न्या०, पि० ५१।

३६. क्वचि ओ ब्यञ्जने ।१.४.७।

ब्यञ्जने परे क्वचि ओकारागमो होति। अतिप्पगो खो ताव सावत्थियं पिण्डाय चरितुं, परोसहस्सं भिक्खुसतं।

चिरप्पवासिं, सद्दत्थपसुतो, सुगतो त्यादीनि चग्गहणफलानि[1]। तेसम्पन चिरं-पवासिं, सक-अत्थपसुतो, सुगद-ओ ति छेदं कत्वा, पुब्बपक्खे निग्गहीतस्स 'वग्गन्तं वा वग्गे' ति (३१) इमिना मकारं कत्वा, तस्स इध चग्गहणेन पकारं; अञ्ञत्र ककारस्स दकारं, दकारस्स तकारञ्च कत्वा नेतब्बं, नेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा। तेनेव 'अतिप्पगो खो' त्यादिसु च गकारागमो होती ति दट्ठब्बो। निरुत्तियं पन चसद्देन सेसब्यञ्जनागमो वुत्तो। वुत्तञ्च—

"यवामदादिसुत्तेन अट्ठ ब्यञ्जनमागमा।
चसद्देन पन सेसा चतुवीसति ब्यञ्जनागमा"॥ ति।

उदाहरणानि पन अत्थिकेहि निरुत्तियं ओलोकेतब्बानि; मयं पन पालि-अट्ठकथापाठस्सेव अभावतो न उद्धराम। वासद्दो ववत्थितविभासत्थो; तेन यथयिदं ति च यथा-इदं ति च पाठो; 'ब्यञ्जने चे' ति (३९) रस्सं कत्वा यथयिदं ति पाठो; एवं मायिदं, मा इदं ति च मायेवं, मा एवं ति, पाटियेक्कं ति च यकारागमे पाठो; परियत्तं, परियादानं, परियुट्ठानं, परियेसति, परियोसानं ति आदिसु यकारागमो निच्चं[2]। एवं तेसु तेसु चकारादिआगमेसु पि निच्चमनिच्चं मञ्ञितब्बं; उ-उपसग्गतो दकारागमो निच्चं—उदग्गो, उदयो, उदपादि, उदपाकं, उदीरितं, उदेती त्यादि; निपाततो पि—सकिदेव, सकदागामि; महावुत्तिना इकारस्स अकारो—केनचिदेव, किञ्चिदेव, कोचिदेव, सम्मदत्थो। रस्सत्तं—सम्मदञ्ञा, सम्मदेव, यावदत्थं, यावदेव; नामतो—यदत्थं, यदनन्तरं, तदनन्तरं, तदग्गं; एवदत्थं, सदत्थं त्यादी; संसागमेसु बहू पयोगा रूपसिद्धियं आगता; अत्थिकेहि तत्थ ओलोकेतब्बा[3]।

एवं सरस्मिं ब्यञ्जनागमं विधाय, ब्यञ्जनस्मिं सरागमं विधातुं—

३६. क्वचि ओ ब्यञ्जने[4] ति वुत्तं। इदं सुत्तं ···? 'सरा पकति ब्यञ्जने' (२३) ति सुत्तप्पभवं ··· किन्निक्खन्तन्ति ? अतिप्पगो खो त्यादिसु

---

1. द०-क० वु०; "एवं यस्मिं यस्मिं आगमवसेन आनीते यं यं रूपं सिज्झति तत्थ तत्थ तन्तं आनेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा"–क० न्या०, पि० ५२।

2–3. तु०–रूप०, सु० ३४।

4. तु०–"क्वचोकारागमो"–सद्द०, सु० १३०।

क्वची ति कस्मा ? एथ पस्सथिमं लोकं, अन्धभूतो अयं लोको।

३७. निग्गहीतञ्च ।१.४.८।

निग्गहीतञ्च आगमो होति सरे वा ब्यञ्जने वा परे क्वचि। चक्खुं उदपादि, अवंसिरो, यावंचिदं[1] भिक्खवे, पुरिमंजाति[2], अणुंथूलानि सब्बसो, मनोपुब्बंगमा धम्मा।

अतिप्प-खो ति छेदे कते, 'सरा पकति ब्यञ्जने' ति ब्यञ्जनस्मिं सरानं पकतिभावो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेन वुत्तविधानेनेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, ब्यञ्जनस्मिं परे ओकारागमो[a] च[b] होती ति दस्सेतुं 'क्वचि ओ ब्यञ्जने' ति वुत्तं। 'यव··· चागमा' ति (३५) सुत्ततो निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं। उदाहरणेहि पन संसन्दितब्बं। किमत्थमिदमुच्चते ? ब्यञ्जने परे क्वचि ओकारागमो होती ति ञापनत्थं। क्वची ति एकं, ओ ति एकं, ब्यञ्जने ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। क्वची ति क्वचत्थो, ओ ति विसयी, ब्यञ्जने ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा ··· पे० ··· विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। आगमसद्दो वत्तते; तेन ब्यञ्जने परे क्वचि ओकारागमो होती ति अत्थो[1]।

अतिप्पगो खो तावा त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन अतिप्प-खो ताव, पर-सहस्सन्ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना ब्यञ्जनस्मिं परे ओकारागमं कत्वा, पुब्बपक्खे अनन्तरसुत्ते चग्गहणेन गकारागमं कत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा। परपक्खे पन 'सरा सरे लोपं' ति (१२) पुब्बसरस्स लोपो। अतिप्पगो खो ति अतिविय पातो त्यत्थो। पासद्दो पातोसद्देन समानत्थो निपातो ति दट्ठब्बो। जीव त्वं सरदो सतं ति च ओकारागमे उदाहरणं ति वदन्ति।

एवं सरागमं विधाय, इदानि निग्गहीतागमं विधातुं—

३७. निग्गहीतञ्चा[2] ति वुत्तं। इदं सुत्त ··· पे० ··· निक्खन्तन्ति ? 'सरा सरे लोपं' (१२), 'वा परो असरूपा' (१३), 'क्वचि ओ ब्यञ्जने' ति (३६)

---

१. यावञ्चिधं–से०, सी० १। २. पुरिमंजातिं–से०।

a–b. तु०–ओकारागमो तन्निमित्तकारागामो च–कत्थचि पोत्थकेसु दिस्सति।

1. तु०–"सति पि वाग्गहणे अत्थविसेसस्सुपलब्भनतो क्वचिग्गहणं कतं"–क० न्या०, पि० ५२।

2. तु०–"क्वचि निग्गहीतागमो"–सद्द०, सु० १४६।

क्वची ति कस्मा ? इधेव नं पसंसन्ति, पेच्च सग्गे च मोदति, न हि एतेहि यानेहि[१] गच्छेय्य अगतं दिसं।

चसद्दग्गहणेन विसद्दस्स च पकारो होति वा[२]। पचेस्सति, विचेस्सति वा।

सुत्तत्तयप्पभवं तन्निदानं··· किन्निक्खन्तन्ति ? चक्खुं उदपादी त्यादिसु चक्खु-उदपादी ति छेदे कते, 'सरा सरे लोपं' ति सुत्तेन पुब्बस्स, 'वा परो असरूपा ति सुत्तेन परसरस्स वा लोपो वुत्तो, 'क्वचि ओ ब्यञ्जने ति' सुत्तेन ब्यञ्जनस्मिं परे ओकारागमो च वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव न भवितब्बं, सरस्मिं ब्यञ्जने वा परे निग्गहीतागमो पि सिज्झती ति दस्सतुं, 'निग्गहीतञ्चा' ति वुत्तं। किमत्थमिद-मुच्चते ? सरस्मिं ब्यञ्जने वा परे पि क्वचि निग्गहीतागमो होती ति ञापनत्थ! निग्गहीतं ति एकं, चा ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। निग्गहीतं ति विसयं, चा ति समुच्चयो, सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। सरागमक्वचिब्यञ्जन-ग्गहणानमनुवत्तनतो सरे वा ब्यञ्जने वा परे क्वचि निग्गहीतागमो होती ति अत्थो। निग्गहीतसद्दस्स वचनत्थो हेट्ठा वुत्तो व।

चक्खुं उदपादी त्यादीनि उदाहरणानि। तेसं पन चक्खु-उदपादि, अव-सिरो, याव-चिध, पुरिस-जाति, अणु-थूलानि, मनोपुब्ब-गमा ति छेदं कत्वा, 'मदा सरे' (३४), 'यव···' (३५), 'क्वचि ओ ब्यञ्जने' (३६) त्यधिकिच्च पुब्बपक्खे सरस्मिं सेसेसु ब्यञ्जनस्मिं परे इमिना निग्गहीतागमं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। पच्चेस्सती ति चग्गहणफलं। तं पन विच्चेस्सती ति ठिते इध चग्गहणेन विसद्दस्स पकारे कते रूपं। इतरं क्वचिग्गहणफलं, तं सुविञ्ञेय्यमेव[1]।

एवं सरस्मिं ब्यञ्जने वा परे निग्गहीतागमं विधाय, इदानि सरस्मिं ब्यञ्जने वा परे निग्गहीतलोपं विधातुं—

---

१. ठानेहि—सी०।

२. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि।

1. तु०—क०, न्या०, पि० ५३-५५।

३८. क्वचि लोपं ।१.४.९।

निग्गहीतं खो परे क्वचि लोपं पप्पोति। तासाहं सन्तिके, विदूनमग्गमिति ।

क्वची ति कस्मा ? अहमेव नून बालो, एतदत्थं विदित्वा ।

---

३८. क्वचि लोपं[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं···? 'मदा सरे' (३४), 'परो वा सरो' ति (४०) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं··· किन्निक्खन्तन्ति ? तासाहं त्यादिसु तासं-अहं ति छेदे कते 'मदा सरे' ति सरस्मिं परे मदादेसो वुत्तो, 'परो वा सरो' ति निग्गहीतम्हा परसरस्स लोपो च वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ सरस्मिं परे निग्गहीतस्स लोपो पि होती ति दस्सेतुं, 'क्वचि लोपं' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? सरे परे निग्गहीतं क्वचि लोपं पप्पोती ति ञापनत्थं। क्वची ति एकं, लोपन्ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। क्वची ति क्वचत्थो, लोपं ति कारियं, सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । सरेग्गहणनिग्गहीतग्गहणानमनुवत्तनतो सरे परे निग्गहीतं क्वचि लोपं पप्पोती ति अत्थो।

तासाहं त्यादीनि उदाहरणानि । तेसम्पन तासं-अहं, विदूनं-अग्गं ति छेदं कत्वा, 'मदा सरे' (३४), 'निग्गहीतञ्च' त्यधिकिच्च इमिना निग्गहीतस्स लोपं कत्वा, पुब्बपक्खे ब्यञ्जनस्मिं दीघं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

अहमेव नून बालो, एतदत्थं त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तेसम्पन अहं-एव एतं-अत्थं ति छेदं कत्वा, इमिना निग्गहीतस्स लोपे सम्पत्ते क्वचिग्गहणेनाकत्वा आदिसुत्तमधिकिच्च 'वग्गन्तं वा वग्गे' ति (३८) च, 'मदा सरे' ति च निग्गहीतस्स मकारदकारं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं सरस्मिं परे निग्गहीतलोपं विधाय, इदानि ब्यञ्जनस्मिं परे निग्गहीतलोपं विधातुं—

---

1. तु०–"लोपं"–सद्द०, सु० १४७; "निग्गहीतं खो सरे वा ब्यञ्जने वा परे लोपं पप्पोति"–त०, वु०; वि० द०–क० न्या०, पि० ५६-५७।

३९. ब्यञ्जने च ।१.४.१०।

निग्गहीतं खो ब्यञ्जने परे क्वचि लोपं पप्पोति । अरियसच्चानदस्सनं, एतं बुद्धानसासनं ।

क्वची ति कस्मा ? एतं मङ्गलमुत्तमं, तं वो वदामि भद्दं[1] वो[1] ।

---

३९. ब्यञ्जने च[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं··· ? 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' (३०), 'वग्गन्तं वा वग्गे' ति (३८) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं··· किन्निक्खन्तन्ति ? अरियसच्चान दस्सनं त्यादिसु अरियसच्चानं-दस्सनं ति छेदे कते 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' ति सुत्तेन ब्यञ्जनस्मिं निग्गहीतस्स अमादेसो वुत्तो, 'वग्गन्तं वा वग्गे' ति सुत्तेन च वग्गस्मिं परे वग्गन्तन्ति वुत्तं; एवं सति किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहि एव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव न भवितब्बं, ब्यञ्जनस्मिं परे निग्गहीतस्स लोपो पि होती ति दस्सेतुं, 'ब्यञ्जने चे' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? ब्यञ्जनस्मिं परे निग्गहीतं क्वचि लोपं पप्पोती ति ञापनत्थं। ब्यञ्जन ति एकं, चा ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। ब्यञ्जने ति निमित्तसत्तमी, चा ति अनुकड्ढनं, समुच्चयनिद्देसो वा ; वुत्तञ्च न्यासे—"चिरंपवासिं त्यादिसु निग्गहीतस्स पकारापज्जनत्थं वा"[2] ति। सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं।

अरियसच्चान दस्सनं त्यादीनि उदाहरणानि। तेसम्पन अरियसच्चानं-दस्सनं, बुद्धानं-सासनं ति छेदं कत्वा, 'निग्गहीतञ्च' (३७), 'क्वचि लोपं' (३६) त्यधिकिच्च इमिना ब्यञ्जनस्मिं परे निग्गहीतस्स लोपं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। किमुदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव।

एवं सरस्मिं ब्यञ्जने वा परे निग्गहीतलोपं विधाय, निग्गहीतम्हा परस्स सरस्स लोपं विधातुं—

१-१. भद्दन्ते—कत्थचि।

1. तु०—"लोपं"—सद्द०, सु० १४७।

2. तु०—"चग्गहणमुत्तरओक्वचिग्गहणनिवत्तनत्थं । ननु वाग्गहणेनेव निवत्तते ति न; 'परो वा सरो' ति एत्थ पन निवत्तते; 'ब्यञ्जनो च विसञ्ञोगो' ति एत्थ पन वाग्गहणस्सानिच्छितत्ता। मण्डूकगतिकवसेन क्वचिग्गहणं तत्थ पि वत्तेय्य, तस्मा तन्निवत्तनत्थं; चिरप्पवासिं त्यादिसु निग्गहीतस्स पकारापज्जनत्थं वा ति"—क० न्या०, पि०, ५७-५८।

४०. परो वा सरो ।१.४.११।

निग्गहीतम्हा परो सरो लोपं पप्पोति वा। अभिनन्दुन्ति[१] सुभासितं, उत्तत्तं व, यथाबीजं व धञ्ञं।

वा ति कस्मा ? अहमेव नून बालो। एतदहोसि।

४१. ब्यञ्जनो च विसञ्ञोगो ।१.४.१२।

निग्गहीतम्हा परस्मिं सरे लुत्ते यदि ब्यञ्जनो संयोगो विसञ्ञोगो होति। एवंस ते आसवा, पुप्फंसा उप्पज्जि।

---

४०. परो वा सरो[1] ति वुत्तं। इदं सुत्त···? 'मदा सरे' (३४), 'क्वचि लोपं' ति (३८) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं··· किन्निक्खन्तन्ति? अभिनन्दुन्ती त्यादिसु अभिनन्दुं-इति छेदे कते 'मदा सरे' ति सुत्तेन निग्गहीतस्स मदादेसो वुत्तो, 'क्वचि लोपं' ति सरस्मिं निग्गहीतलोपो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेहि वुत्तविधानेहि एव न भवितब्बं, निग्गहीतम्हा परो सरो लोपं वा पप्पोती ति दस्सेतुं, 'परो वा सरो' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? निग्गहीतम्हा परो सरो वा लोपं पप्पोती ति ञापनत्थं। परो ति एकं, वा ति एकं, सरो ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। परो ति तब्बिसेसनं, वा ति विकप्पनं, सरो ति कारि। निग्गहीतग्गहणं विभत्तिं विपरिनामेत्वा पञ्चम्यन्तवसेनानुवत्तते, लोपग्गहणञ्चानुवत्तते; तेन निग्गहीतम्हा परो सरो वा लोपं पप्पोती ति अत्थो।

अभिनन्दुन्ती त्यादीनि उदाहरणानि। तेसम्पन अभिनन्दुं-इति, उत्तत्थं-इव, बीजं-इवा ति छेदं कत्वा 'निग्गहीतञ्च' (३७), 'क्वचि लोपं' (३८) त्यधिकिच्च इमिना निग्गहीतम्हा परसरस्स लोपं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। किमुदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव।

एवं निग्गहीतम्हा परसरस्स लोपं विधाय, इदानि निग्गहीतम्हा परसरस्स च लोपं सञ्ञोगब्यञ्जनस्स च विसञ्ञोगत्तं विधातुं—

४१. ब्यञ्जनो च विसञ्ञोगो[2] ति वुत्तं। इदं सुत्तं···? 'मदा सरे'

---

१. अभिनन्दन्ति–से०।

1. तु०–"परो सरो वा"–सद्द०, सु० १४८।

2. तु०–"लुत्ते ब्यञ्जने विसञ्ञोगो"–सद्द०, सु० १४९।

लुत्ते ति कस्मा ? एवमस्स[१], विद्रूनमग्गमिति ।

चसद्दग्गहणेन तिण्णम्पि[२] ब्यञ्जनानमन्तरे सरूपानं क्वचि लोपो होति[२], तं[३] यथा——अग्यागारं, वुत्यस्स[४] ।

इति सन्धिकप्पे चतुत्थो कण्डो ।

---

(३४), 'क्वचि लोपं' (३८), 'परो वा सरो' ति (४०) सुत्तत्तयप्पभवं तन्निदानं ··· किन्निक्खन्तन्ति ? एवं स ते त्यादिसु एवं-अस्स-ते ति छेदे कते 'मदा सरे' ति सरस्मिं परे मकारदकारादेसो वुत्तो, 'क्वचि लोपं' ति सरस्मिं परे निग्गहीतस्स लोपो वुत्तो, 'परो वा सरो' ति निग्गहीतम्हा परसरस्स लोपो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव न भवितब्बं, निग्गहीतम्हा परसरस्स लोपो च सञ्ञोगब्यञ्जनस्स विसञ्ञोगता च होती ति दस्सेतुं, 'ब्यञ्जनो च विसञ्ञोगो' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? निग्गहीतम्हा परस्मिं सरे लुत्ते यदि पि ब्यञ्जनो सञ्ञोगो अत्थि, सो विसञ्ञोगो होती ति ञापनत्थं । ब्यञ्जनो ति एकं, चा ति एकं, विसञ्ञोगो ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं । ब्यञ्जनो ति कारि, चा ति समुच्चयं, विसञ्ञोगो ति कारियं, सञ्ञा ···पे०··· विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । निग्गहीतग्गहणञ्च परोग्गहणञ्च सरोग्गहणञ्च वत्तते; निमित्तभावा च परसद्दस्स निग्गहीतापेक्खत्ता च निग्गहीतम्हा परस्मिं सरे लुत्ते सञ्ञोगो ब्यञ्जनो च विसञ्ञोगो होती ति अत्थो[1] । संयुज्जती ति सञ्ञोगो (पुरिमो वण्णो), विगतो सञ्ञोगो अस्सा ति विसञ्ञोगो (पच्छिमो वण्णो)[2] ।

एवं स ते त्यादीनि उदाहरणानि । तेसम्पन एवं-अस्स ते, पुप्फं-अस्सा ति छेदं कत्वा, 'निग्गहीतञ्च (३७), 'क्वचि लोपं' (३८) त्यधिकिच्च 'परो वा

---

१. एवमस्स वचनियो–से० ।

२-२. तिण्णम्पि ब्यञ्जनानं सरूपानं क्वचि०–सी० १; तिण्णं ब्यञ्जनानमन्तरे ये सरूपा तेसम्पि लोपो होति–सी० २ ।

३. नत्थि से० पोत्थके ।

४. पटिसन्थारवुत्यस्स–सी० २ ।

1. तु०–क० न्या०, पि० ५८ ।

2. तु०–"विसञ्ञोगो ति इमिना पन लोपमाह, देवलोकं गतो ति वचनेन मरणं विय; तथा हि दुविधो सञ्ञोगो; संयुज्जती ति सञ्ञोगो, 'नये परं युत्ते' ति नेतब्बक्खरस्स पतिट्ठो; विगतो सञ्ञोगो यस्स सोयं विसञ्ञोगो, विनट्ठसञ्ञोगो ति अत्थो"–त०, पि० ५९ ।

(५) पञ्चमो कण्डो

४२. गो सरे पुथस्सागमो क्वचि ।१.५.१।

पुथ इच्चेतस्स सरे[१] परे क्वचि गकारागमो होति। पुथगेव। क्वची ति कस्मा? पुथएव।

सरो' ति (४०) निग्गहीतम्हा परस्मिं सरे लुत्ते, तानेवाधिकिच्च, इमिना संयोगब्यञ्जनं विसंयोगं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

विदूनग्गं ति किमुदाहरणं। तस्स पन विदूनं-अग्गं ति छेदं कत्वा, 'परो वा सरो' ति (४०) एत्थ वाग्गहणेन निग्गहीतम्हा परसरस्स लोपमकत्वा, परस्मिं सरे लुत्ते ति वुत्तत्ता तदभावा इमिना विसञ्ञोगमकत्वा, निग्गहीतस्स 'क्वचि लोपं' ति (३८) लोपं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति (१२) पुब्बसरस्स लोपं कत्वा नेतब्बं, नेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एत्थ च 'वा ति कस्मा? विदूनग्गमिति' वत्तब्बं। 'लुत्ते' ति कस्मा न वत्तब्बं? पुब्बसुत्ते च इध च लुत्तसद्दस्स अदस्सनतो विचारेतब्बमेतं। कच्चायने पन लुत्ते ति कस्मा ति वुत्तं[1]; न्यासे च तदनुरूपेन वुत्तं[2], कारणं पन न वुत्तं; आचरिया पन विचारेतब्बन्ति वदन्ति।

अग्यागारं त्यादीनि चग्गहणफलानि। तेसम्पन अग्गि-अगारं, वुत्ति-अस्सा ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'सरा सरे लोपं' त्यधिकिच्च 'इवण्णो यन्न वा' ति (२१) इकारस्स यकारं कत्वा नेतब्बं, नेत्वा तिण्णं ब्यञ्जनानं इध चग्गहणेन आदिस्स लोपं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। इध च आदिलोपं ति उपरि सरूपे ब्यञ्जने लोपमाह, 'निग्गहीतं संयोगादि।

नो (६०९) ति चेत्थ ञापनत्थं।

इति कच्चायनवण्णनायं सन्धिकप्पस्स चतुत्थकण्डवण्णना।

(५) पञ्चमो कण्डो

एवं निग्गहीतसन्धिविधिं विधाय सरस्मिं परे गकारागमवसेन सिद्धे पि ठानवसेन नियमेत्वा निपाततो गकारागमं विधातुं--

४२. गो सरे पुथस्सागमो क्वची[3] ति वुत्तं। इदं सुत्तं···? 'सरा सरे

---

१. अन्ते सरे-सी० २।

1. क० वु०, सु० ४१। 2. क० न्या०, पि० ५९।

3. तु०-"सरे पुथस्स गागमो क्वचि"-सद्द०, सु० ५३।

४३. पास्स चन्तो[१] रस्सो ।१.५.२।

पा इच्चेतस्स सरे[२] परे क्वचि गकारागमो होति, अन्तो च सरो रस्सो होति। पगेव वुत्यस्स।

क्वची ति कस्मा ? पाएव वुत्यस्स।

लोपं' (१२), 'वा परो असरूपा' (४०), 'यवमदन···' ति (३५) सुत्तत्तयप्पभवं तन्निदानं ···किन्निक्खन्तन्ति ? पुथगेवा त्यादिम्हि पुथ-एवे ति छेदे कते 'सरा सरे लोपं' ति वा पुब्बसरस्स लोपो वुत्तो, 'वा परो असरूपा' ति वा परस्स लोपो वुत्तो, 'यवमदन···' ति वा यकारादि-आगमो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ सरस्मिं परे निपातभूतपुथसद्दस्स अन्ते गकारागमो पि होती ति दस्सेतुं 'गो सरे···' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? सरस्मिं परे पुथन्ते क्वचि गकारागमो होती ति ञापनत्थं। गो ति एकं, सरे ति एकं, पुथस्सा ति एकं, आगमो ति एकं, क्वची ति एकन्ति पञ्चपदमिदं। गो ति विसयी, सरे ति निमित्तसत्तमी, पुथस्सा ति अन्तापेक्खाछट्ठी, आगमो ति तब्बिसेसनं, क्वची ति क्वचत्थो, सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तन्ति वेदितब्बं । सरस्मिं परे पुथ इच्चेतस्स अन्ते क्वचि गकारागमो होती ति अत्थो। आगच्छती ति आगमो।

पुथगेवा ति उदाहरणं। तस्स पन पुथ-एवा ति छेदं कत्वा, इमिना गकारागमं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। एत्थ च पुथसद्दो निपातो; सो च विसुंसद्दपरियायो। किमुदाहरणं सुविञ्ञेय्यमेव।

एवं पुथनिपातन्ते गकारागमं विधाय, इदानि पा-निपातन्तस्स रस्सत्तञ्च, तदन्ते गकारागमं च विधातुं—

४३. पास्स चन्तो* रस्सो[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं···? 'सरा सरे लोपं' (१२),' वा परो···' (१३), 'गो सरे···'ति (४२) सुत्तत्तयप्पभवं तन्निदानं··· किन्निक्खन्तन्ति ? पगेव त्यादिम्हि पा-एवा ति छेदे कते 'सरा सरे लोपं' ति वा पुब्बलोपो वुत्तो, 'वा परो असरूपा' ति वा परलोपो वुत्तो, 'गो

---

१. चान्तो–सी० २। * चान्तो-सी० (सब्बत्थ)।

२. अन्ते सरे–सी० २।

1. तु०–"पास्स च तदन्तो रस्सो"–सद्द०, सु० १३२।

४४. अब्भो अभि ।१.५.३।

अभि इच्चेतस्स सरे परे अब्भो[1] आदेसो[1] होति। अब्भुदीरतं[2], अब्भुग्गच्छति।

सरे…' ति वा सरस्मिं परे गकारागमो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, पानिपातस्स अन्तो सरो रस्सो होति, गकारागमो च होती ति दस्सेतुं, 'पास्स चन्तो रस्सो' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? पा इच्चेतस्स अन्ते सरस्मिं परे क्वचि गकारागमो होति, अन्तो च सरो रस्सो होती ति ञापनत्थं। पास्सा ति एकं, चा ति एकं, अन्तो ति एकं, रस्सो ति एकन्ति चतुप्पदमिदं। पास्सा ति अन्तापेक्खाछट्ठी, चा ति सम्पिण्डनं, अन्तो ति कारि, रस्सो ति कारियं, सञ्ञा…पे०…विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। अन्तग्गहणं परसरस्स रस्सत्तनिवत्तनत्थं। अनन्तरसुत्ततो सरेग्गहणञ्च आगमग्गहणञ्च क्वचिग्गहणञ्च वत्तते; तेन पा इच्चेतस्स अन्ते सरे परे क्वचि गकारागमो होति, अन्तो च सरो रस्सो होती ति अत्थो।

पगेवा ति उदाहरणं। तस्स पन पा-एवा ति छेदं कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना गकारागमं कत्वा, अन्तसरस्स रस्सत्तं च कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। किमुदाहरणं सुविञ्ञेय्यमेव।

एवं निपातन्तविधानं विधाय, इदानि सरस्मिं अभि-अधि इच्चेतेसं उपसग्गानं पदादेसं विधातुं—

४४. अब्भो अभि[1]; **४५. अज्झो अधी**[2] ति वुत्तं। इदं सुत्तं…? 'सरा सरे लोपं' (१२), 'वा परो असरूपा' (१३), 'इवण्णो यन्नवा' ति (२१) सुत्तत्तयप्पभवं तन्निदानं…किन्निक्खन्तन्ति ? अब्भोकासे त्यादिम्हि अभि-ओकासे ति छेदे कते 'सरा सरे लोपं' ति सुत्तेन पुब्बसरस्स वा, 'वा परो असरूपा' ति सुत्तेन परस्स सरस्स वा लोपो वुत्तो, 'इवण्णो यन्नवा' ति वा सरस्मिं इवण्णस्स यकारादेसो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेहि

१-१. अब्भादेसो—सी० २। २. अब्भुदिरितं—से०।

1. तु०—"अभिस्सब्भो"—सद्द०, सु० ५७।

2. तु०—"अधिस्सज्झो"—तं०, सु० ५८, १३२।

४५. अज्झो अधि।१.५.४।

अधि इच्चेतस्स सरे परे अज्झो[1] आदेसो[1] होति। अज्झोकासो, अज्झगमा।

वुत्तविधानेहि एव न भवितब्बं, अथ खो सरस्मिं परे सब्बेसं येव अभि-अधि इच्चेतेसं उपसग्गानं अब्भ-अज्झ इच्चेते आदेसा पि होन्ती ति दस्सेतुं, 'अब्भो अभि', 'अज्झो अधी' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? अभि इच्चेतस्स उपसग्गस्स सरस्मिं परे अब्भादेसो होती ति ञापनत्थं। अब्भो ति एकं, अभी ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। अब्भो ति कारियं, अभी ति कारि, सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। सरेग्गहणमनुवत्तते। अभिस्सा ति वत्तब्बे अभिसद्दस्स उपसग्गत्ता 'सब्बासमावसो ···हि चे' ति (२२१) छट्ठीविभत्तिया लोपो; तेन अभि इच्चेतस्स सरस्मिं परे अब्भादेसो होती ति अत्थो।

अब्भुदीरितं त्यादीनि उदाहरणानि। तेसम्पन अभि-उदीरितं, अभि-उग्गच्छती ति छेदं कत्वा, आदिसुत्तमधिकिच्च इमिना अब्भादेसं कत्वा, परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। असदिसद्वेभाववसेन सिद्धे सति पि निमित्तविसेस्साधिप्पेतत्ता अभी ति पुन वुत्तं।

४५. **अज्झो अधी** ति सुत्तं किम्पभवं···? यथावुत्तसुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं··· किन्निक्खन्तन्ति? अज्झोकासो त्यादिम्हि अधि-ओकासे ति छेदे कते यथावुत्तसुत्तेहि वुत्तविधीहेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेहि वुत्तविधीहि एव न भवितब्बं; तत्थ सरस्मिं परे अज्झादेसो पि होती ति दस्सेतुं 'अज्झो अधी' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? अधि इच्चेतस्स सरस्मिं परे अज्झादेसो होती ति ञापनत्थं। अज्झो ति एकं, अधी ति एकन्ति द्विपदमिदं। अज्झो ति कारियं, अधी ति कारि, सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। सरेग्गहणं वत्तते। अधिस्सा ति वत्तब्बे छट्ठिविभत्तिया लोपो; तेन अधि इच्चेतस्स सरे परे अज्झादेसो होती ति अत्थो।

अज्झोकासे त्यादीनि उदाहरणानि। तेसम्पन अधि-ओकासे, अधि-अगमा ति छेदं कत्वा, आदिसुत्तमधिकिच्च इमिना अज्झादेसं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं उपसग्गानं पदादेसं विधाय, इदानि उपसग्गन्ते निसेधविधिं विधातुं—

१-१. अज्झादेसो–सी० २।

४६. ते न वा इवण्णे ।१.५.५।

ते च खो अभि-अधि इच्चेते इवण्णे परे अब्भो अज्झो इति वुत्तरूपा न होन्ति वा । अभिज्झितं[१], अधीरितं ।

वा ति कस्मा ? अब्भीरितं, अज्झिणमुत्तो ।

---

४६. **ते न वा इवण्णे**[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं··· ? 'अब्भो अभि', 'अज्झो अधी' ति[1] सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं··· किन्निक्खन्तन्ति ? अभिज्झितं, अधीरितं त्यादिम्हि अभि-इज्झितं, अधि-ईरितं ति पदच्छेदे कते 'अब्भो अभी' ति सुत्तेन अभिस्स अब्भादेसो वुत्तो, 'अज्झो अधी' ति सुत्तेन अधिस्स अज्झादेसो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेहि वुत्तविधानेहि एव न भवितब्बं, तन्निसेधवसेना पि भवितब्बन्ति दस्सेतुं, 'ते न वा इवण्णे' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते। अभि-अधि इच्चेते इवण्णे परे अब्भो-अज्झो इति वुत्तरूपा न होन्ती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। ते ति एकं, ना ति एकं, वा ति एकं, इवण्णे ति एकन्ति चतुप्पदमिदं। ते ति कारी, ना ति पटिसेधनं, वा ति विकप्पनत्थो, इवण्णे ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा··· पे०····विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। अभि-अधिग्गहणञ्च वत्तते; तेन अभि-अधि इच्चेतेसं इवण्णे परे अब्भो अज्झो इति वुत्तरूपा न होन्ती ति अत्थो। इवण्णस्स वचनत्थो पुब्बे वुत्तो व।

'ते वा इवण्णे' ति अवत्वा 'ते न वा इवण्णे' ति कस्मा वुत्तन्ति ? इध किञ्चिमत्तं दस्सेत्वा उपरि नग्गहणमनुवत्तनत्थं। किञ्चेत्थ किञ्चि पयोजनन्ति ? अभि-अधि इच्चेते इवण्णे परे अब्भो अज्झो इति वुत्तरूपा न होन्ती ति वत्वा पुन वा ति वुत्तो; ये न लभन्ति ते येव बहुका, ये पन लभन्ति ते अप्पका ति विञ्ञायति, तदत्थमिह नग्गहणन्ति[2] ।

---

१. अभिच्छितं–से० ।

1. तु०–"ते न वा इवण्णे"–सद्द०, सु० ५९ ।

2. तु०–"ननु 'ते वा इवण्णे' ति वुत्ते पि रूपद्वयं सिज्झति, कस्मा, नग्गहणं कतं ति ? उत्तरत्थं; उत्तरओहिनग्गहणमेव वत्तते, न वाग्गहणं ति। यदि एवं, कस्मा तत्थेव न कतं ति ? इहा पि किञ्चिमत्तत्थसम्भवतो। यथा पन 'ब्राह्मणानं न दातब्बं' ति वत्वा ठपेत्वा केसञ्ची ति वुत्ते येसं न दातब्बं तेयेव बहुका, येसं पन दातब्बं ते अप्पका ति विञ्ञायति, तथा ब्राह्मणानं दातब्बं ति वत्वा ठपेत्वा केसञ्ची ति वुत्ते येसं दातब्बं तेयेव बहुका, येसं पन न दातब्बं ते अप्पका

४७. अतिस्स चन्तस्स[1] १।१.५.६।

अति इच्चेतस्स अन्तभूतस्स तिसद्दस्स इवण्णे परे 'सब्बो चन्ती' ति (१९) वुत्तरूपं[2] न होति[3]। अतिसिगणो, अतीरितं।

इवण्णे ति कस्मा ? अच्चन्तं।

अभिज्झितं, अधीरितं ति उदाहरणानि। तेसम्पन अभि-इज्झितं, अधि-ईरितं ति छेदं कत्वा, अनन्तरसुत्तवसेन सम्पत्ते आदेसे तमेव सुत्तद्वयमधिकिच्च इमिना निसेधेत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति (१२) पुब्बसरस्स लोपं कत्वा नेतब्बं, नेत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा। अभीरितं, अज्झिणमुत्तो त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तेसम्पन अभि-ईरितं, अधि-इणमुत्तो ति छेदो; सेसं वुत्तनयमेवा ति।

एवं अभि-अधि-उपसग्गानं अब्भ-अज्झ इति पदादेसानं निसेधविधिं विधाय, इदानि अति-उपसग्गन्तस्स तिकारस्स यथावुत्तविधिनिसेधनं विधातुं––

४७. अतिस्स चन्तस्सा*[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं···? 'सब्बो चन्ती' ति सुत्तप्पभवं तन्निदानं···किन्निक्खन्तन्ति ? अतिसिगणो त्यादिम्हि अति-इसिगणो, अति-ईरितं ति छेदे कते' सब्बो चन्ती' ति (१९) सुत्तेन सरस्मिं परे सब्बस्सेव तिसद्दस्स चकारादेसो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेन वुत्तविधानेनेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेन वुत्तविधानेन एव न भवितब्बन्ति निसेधविधिं दस्सेतुं, 'अतिस्स चन्तस्सा' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? अति इच्चेतस्स अन्तभूतस्स तिसद्दस्स इवण्णस्मिं परे वुत्तरूपं न होती ति ञापनत्थं। अतिस्सा ति एकं, चा ति एकं, अन्तस्सा ति एकन्ति तिपदमिदं। अतिस्सा ति अन्तापेक्खाछट्ठी, चा ति अनुकड्ढनं, अन्तस्सा ति कारि, सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तं* ति वेदितब्बं। एत्थ चग्गहणं नग्गहणानुकड्ढनत्थं, अवुत्तसमुच्चयत्थो वा; तेन इतिपतिसद्दन्तस्सा पि न होति इति, पति, इतीदं, पतीतो त्यादी। अति इच्चेतस्स उपसग्गस्स अन्तभूतस्स

ति विञ्ञायति; एवं अभि-अधि इच्चेते इवण्णे परे अब्भो-अज्झो इति वुत्तरूपा न होन्ती ति वत्वा पुन वा ति वुत्ते ये न लभन्ति तेयेव बहुका ये पन लभन्ति ते अप्पका ति विञ्ञायति; तदत्थमिह नग्गहणं कतं ति"–क० न्या०, पि० ६२।

१. चान्तस्स–सी० २। २. वुत्तरूपा–से०। ३. होति वा–सी० २।

* चान्तस्स–सी० (सब्बत्थ)। * सी० पोत्थके नत्थि।

1. तु०–"ति च चं"–सद्द०, सु० ६०।

४८. क्वचि पटि पतिस्स ।१.५.७।

पति इच्चेतस्स सरे वा ब्यञ्जने वा परे क्वचि पटि-आदेसो होति। पटग्गि दातब्बो[१], पटिहञ्ञति ।

क्वची ति कस्मा ? पच्चन्तिमेसु जनपदेसु, पतिलीयति, पतिरूपदेसवासो च ।

तिसद्दस्स इवण्णस्मिं परे 'सब्बो चन्ती' ति वुत्तविधि न होती ति अत्थो। अविस्सती ति वत्तब्बे पि एकसेसं कत्वा एवं वुत्तं[1]।

अतिसिगणो, अतीरितं त्यादीनि उदाहरणानि। तेसम्पन अति-इसिगणो, अति-ईरितं ति छेदं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' (१२), क्वचासवण्णं लुत्ते' ति (१४) सुत्तद्वयमधिकिच्च 'सब्बो चन्ती' ति (१९) वुत्तविधिम्हि सम्पत्ते, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना पटिसेधं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति पुब्बसरानं लोपं कत्वा, परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। अच्चन्तं ति किमुदाहरणं ? तस्स पन अति-अन्तं ति छेदं कत्वा, इवण्णस्साभावा इमिना पटिसेधमकत्वा, वुत्तनयेनेव रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं उपसग्गन्तस्स विधिनिसेधं विधाय, इदानि पति-उपसग्गस्स 'पटी' ति आदेसं विधातुं––

४८. क्वचि पटि पतिस्से[2] ति वुत्तं। इदं सुत्तं····? 'सरा सरे लोपं' (१२), 'वा परो असरूपा' (१३), 'ब्यञ्जने चे' ति (३९) सुत्तत्तयप्पभवं तन्निदानं···किन्निक्खन्तन्ति ? पटग्गि, पटिहञ्ञती त्यादिसु पति-अग्गि, पति-हञ्ञती ति छेदे कते, पुब्बपक्खे 'सरा सरे लोपं' ति च 'वा परो असरूपा' ति च पुब्बापरसरानं लोपो वुत्तो, परपक्खे पन 'ब्यञ्जने चे' ति ब्यञ्जनस्मिं पुब्बसरस्स दीघं वुत्तं; एवं सति किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ तेहि वुत्तविधानेहि एव न भवितब्बं, पतिसद्दस्स पटिआदेसो पि होती ति दस्सेतुं, 'क्वचि पटि पतिस्से' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? सरे वा ब्यञ्जने वा परे पतिस्स क्वचि पटि-आदेसो होती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। क्वची ति एकं, पटी

---

१. धातब्बो–से०।

1. तु०–क० न्या०, पि० ६३।

2. तु०–"क्वचि सरे व्यञ्जने वा पटि पतिस्स"–सद्द०, सु० १३७।

४९. पुथस्सु ब्यञ्जने ।१.५.८।

पुथ इच्चेतस्स अन्तो सरो ब्यञ्जने परे उकारो होति। पुथुज्जनो, पुथुभूतं ।

अन्तग्गहणेन अपुथस्सा पि सरे परे अन्तस्स उकारो होति। मनुञ्ञं ।

ति एकं, पतिस्सा ति एकन्ति तिपदमिदं। क्वची ति क्वचत्थो, पटी ति कारियं, पतिस्सा ति कारि, सञ्ञा··· पे०··· विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। 'गो सरे··· क्वची' ति (४२) इतो सरेग्गहणं मण्डूकगतिवसेन इहानुवत्तते; उपरि 'पुथस्सु ब्यञ्जने' ति (४९) सुत्ततो ब्यञ्जनेग्गहणं सीहगतिवसेन इहानुवत्तते; तेन सरे वा ब्यञ्जने वा परे पति इच्चेतस्स क्वचि पटि-आदेसो होती ति अत्थो[1]।

पटग्गि, पटिहञ्ञती त्यादीनि उदाहरणानि। तेसम्पन पति-अग्गि, पति-हञ्ञती ति छेदं कत्वा, पुब्बपक्खे सरस्मिं परे इमिना पटि-आदेसं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति पुब्बसरस्स लोपं कत्वा नेतब्बं, नेत्वा परपक्खे पन ब्यञ्जनस्मिं परे पटि-आदेसं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं पति-उपसग्गस्स पदादेसभूतं पटि-आदेसं विधाय, इदानि पुथन्तस्स अकारस्स उकारादेसं विधातुं––

४९. पुथस्सु ब्यञ्जने[2] ति वुत्तं। इदं सुत्तं···? 'सरा पकति ब्यञ्जने' ति (२३) सुत्तप्पभवं तन्निदानं··· किन्निक्खन्तन्ति? पुथुज्जनो, पुथुभूतं त्यादिसु पुथ-जनो पुथ-भूतं ति छेदे कते, 'सरा पकति ब्यञ्जने' ति सुत्तेन ब्यञ्जनस्मिं परे सरानं पकतिभावो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेन वुत्तविधानेनेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, तत्थ* तेन वुत्तविधानेनेव न भवितब्बं, ब्यञ्जनस्मिं परे अकारस्स उकारादेसेन पि भवितब्बन्ति दस्सेतुं, 'पुथस्सु ब्यञ्जने' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? पुथ इच्चेतस्स अन्तो सरो उकारो होति ब्यञ्जने परे ति ञापनत्थं। पुथस्सा ति एकं, उ इति एकं, ब्यञ्जने ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं।

---

* सी० पोत्थके नत्थि।

1. तु०–क० न्या०, पि० ६४। 2. तु०–"उ ब्यञ्जने पुथस्सन्तो"–सद्द०, सु० १२९।

पुथस्सा ति सम्बन्धछट्ठी; उ इति कारियं, ब्यञ्जने ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा··· पे०···विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। 'अतिस्स चन्तस्सा' ति (४७) इतो अन्तग्गहणं मण्डूकगतिवसेन वत्तते; तेन पुथ इच्चेतस्स अन्तो सरो उकारो होति ब्यञ्जने परे ति अत्थो। ब्यञ्जनस्स वचनत्थो हेट्ठा वुत्तो व।

पुथुज्जनो, पुथुभूतं त्यादीनि उदाहरणानि। तेसम्पन पुथ-जनो, पुथ-भूतं ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इमिना अकारस्सुकारं कत्वा, पुब्बपक्खे जकारस्स द्वेभावं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। "अन्तग्गहणेन अपुथस्सा पि सरे परे अन्तस्स उकारो होती"[1] ति एत्थ 'अतिस्स चन्तस्सा' ति इतो मण्डूकगतिवसेन वत्तमाने अन्तग्गहणेन[2]; अपुथस्सा पि पुथसद्दतो अञ्ञस्सा पि[3]; सरे परे ति सरस्मिं परे; अन्तस्सा ति सद्दन्तस्स उकारो होती ति। मनुञ्ञं ति एत्थ मनो-अञ्ञं ति छेदे कते ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, अन्तग्गहणेन सरस्मिं परे मनसद्दन्तस्स ओकारस्स उकारो, अन्तग्गहणेनेव अकारस्स लोपो च होती ति अधिप्पायो। कच्चायनपकरणस्स पोराणमहानिस्सये अयन्नयो वुत्तो। मुखमत्तसारे पि* "'पुथुस्सु ब्यञ्जने' त्येत्थ अन्तसद्दग्गहणेन च 'मनुञ्ञं' त्येत्थ उकारो होति, लोपो अकारस्सा" ति वुत्तं[4]। आचरिया पन तेनेव सरस्मिं लुत्ते ति न्यासपाठे चसद्देन आदेसभूतं उकारं परामसित्वा, तेन उकारेना ति अत्थं गहेत्वा, 'वा परो असरूपा' ति सुत्तेन लोपं वदन्ति। रूपसिद्धियं पन अन्तग्गहणेन एवुमं, इत्वेवं त्यादिसु पि अन्तभूतानं अकारइकारानं उकारं कत्वा वकारादेसो वुत्तो; एवं-इमं, इति-एवं ति छेदं कत्वा, 'क्वचि लोपं' ति (३८) निग्गहीतलोपो अकारस्स उकारो, परलोपो च इकारस्स च उकारो, तस्स 'वमोदुदन्तानं' ति (१८) वकारो च वुत्तो[5]।

एवं पुथसद्दस्स उकारं विधाय, इदानि अव-उपसग्गस्स पदादेसभूतं ओकारादेसं विधातुं——

---

*पि वुत्तं-सी०।

1. क० वु०, सु० ४९।

2-3. तु०–"अतिस्स चन्तस्सा ति इतो अन्तग्गहणं मण्डूकगतिकवसेन वत्तते; तेनाह–'अन्तो सरो' ति. . . ननु. . . पुथस्सा ति गहिते निरत्थकं व अन्तग्गहणं ति ? सच्चं निरत्थकं; पयोजनन्तरं पन सम्भवति; तेनाह–अन्तग्गहणेन अपुथस्सा पि सरे परे अन्तस्सुकारो होती ति"–क० न्या०, पि० ६४-६५।

4. त०; तु०–"ओस्सु"–सद्द०, सु० ५५। 5. तु०–रूप०, सु० ४४।

५०. ओ अवस्स १.५.९।

अव इच्चेतस्स ओकारादेसो होति क्वचि ब्यञ्जने परे। अन्धकारेन ओनद्धा।

क्वची ति कस्मा? अवसुस्सतु मे सरीरे मंसलोहितं।

५१. अनुपदिट्ठानं वुत्तयोगतो १.५.१०।

अनुपदिट्ठानं उपसग्गनिपातानं सरसन्धीहि ब्यञ्जनसन्धीहि वुत्तसन्धीहि यथापयोगं योजेतब्बं। पापनं, परायनं, उपायनं, उपाहनं[1],

---

५०. ओ अवस्सा[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं…? 'सरा पकति ब्यञ्जने' (२३), 'दीघं' ति (१५) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं… किन्निक्खन्तन्ति? ओनद्धा त्यादिम्हि अव-नद्धा ति छेदे कते 'सरा पकति ब्यञ्जने' ति सुत्तेन ब्यञ्जनस्मिं परे सरानं पकतिभावो वुत्तो, 'दीघं' ति वा ब्यञ्जनस्मिं सरानं दीघो वुत्तो; एवं सति किं तत्थ तेहि वुत्तविधानेहेव भवितब्बं ति पुच्छाय सति, तत्थ तेहि वुत्तविधानेहि एव न भवितब्बं, ब्यञ्जनस्मिं परे सब्बस्सेव अव-उपसग्गस्स ओकारादेसेन पि भवितब्बन्ति दस्सेतुं, 'ओ अवस्से' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? अव इच्चेतस्स ब्यञ्जने परे क्वचि ओकारादेसो होती ति ञापनत्थं। ओ ति एकं, अवस्सा ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। ओ ति कारियं, अवस्सा ति कारी; सञ्ञा… पे०… विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। मण्डूकगतिया क्वचिग्गहणं ब्यञ्जनग्गहणञ्चानुवत्तते; तेन अव इच्चेतस्स ब्यञ्जने परे क्वचि ओकारादेसो होती ति अत्थो।

ओनद्धा ति उदाहरणं। तस्स पन अव-नद्धा ति छेदं कत्वा, अनन्तरसुत्तद्वयमधिकिच्च इमिना अव-उपसग्गस्स ओकारं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। अवसुस्सतू ति क्वचिग्गहणफलं, तं सुविञ्ञेय्यमेव।

एवं अभि-अधी त्यादीनं उपसग्गनिपातानं सन्धिविधानं विधाय, इदानि अनुपदिट्ठानं तदञ्ञेसं उपसग्गनिपातानं सन्धिविधानं विधातुं—

५१. अनुपदिट्ठानं वुत्तयोगतो ति अतिदेससुत्तं वुत्तं। इदं सुत्तं…? 'अब्भो अभी' त्यादि (४४-५०) सत्तसुत्तप्पभवं तन्निदानं… किन्निक्खन्तन्ति?

---

१. उपाहणं–सी० २।

1. तु०–"अवस्सो"–सद्द०, पु० १२६।

न्यायोगो, निरूपधि, अनुबोधो,[1] दुवूपसन्तं,[2] सुवूपसन्तं,[3] द्वालयो, स्वालयो, दुरक्खातं,[4] स्वाक्खातो,[5] उदीरितं, समुद्दिट्ठं, वियग्गं, व्यग्गं[6] विज्झग्गं, अवयागमनं, अन्वेति, अनूपघातो,[7] अनच्छरियो,[8] परियेसना,[9] परामासो; एवं सरे च होन्ति।

ब्यञ्जने[10] च[10]--परिग्गहो, पग्गहो, पक्कमो, परक्कमो, निक्कमो, निक्कसावो, निल्लयनं, दुल्लयनं, दुब्भिक्खं, दुब्बुत्तं[11], सन्दिट्ठं, दुग्गहो, निग्गहो,[12] विग्गहो, निग्गतं[13]; एवं ब्यञ्जने च होन्ति; सेसा च सब्बे योजेतब्बा।

इति सन्धिकप्पे पञ्चमो कण्डो।
सन्धिकप्पो निट्ठितो।

'अब्भो अभी' त्यादीहि सत्तहि सुत्तेहि अभि-अधि इच्चेवमादीनं उपसग्गनिपातानं सन्धिविधानं विहितं; तदञ्ञेसं अनुपदिट्ठानं उपसग्गनिपातानं सन्धिविधानं किं कातब्बन्ति पुच्छाय सति, अनुपदिट्ठानं उपसग्गनिपातानं सन्धिविधानं वुत्तयोगतो कातब्बन्ति दस्सेतुं, 'अनुपदिट्ठानं वुत्तयोगतो' ति अतिदेससुत्तं वुत्तं। किमत्थमिद-मुच्चते? ये इहम्हेहि अनिद्दिट्ठा, ते वुत्तनयानुसारेन ञातब्बा ति ञापनत्थं। अनुपदिट्ठानं ति एकं, वुत्तयोगतो ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। अनुपदिट्ठानं ति सम्बन्धछट्ठी, वुत्तयोगतो ति विसेसनं; सञ्ञाधिकारपरिभासाविधिसुत्तेसु विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। अनुपदिट्ठानं उपसग्गादीनं वुत्तप्पकारेहि सन्धीहि योजेत्वा निप्फत्ति वेदितब्बा ति अत्थो। उपदस्सियित्था ति उपदिट्ठा, अभि-अधि-पुथ-पादयो उपसग्गनिपाता; न उपदिट्ठा ति अनुपदिट्ठा, प-परा-उ-दु-न्यादयो, तेसं अनुपदिट्ठानं। वुत्तो योगो वुत्तयोगो, ततो वुत्तयोगतो, तेन वुत्तयोगेन; सरसन्धीहि ब्यञ्जनसन्धीहि वुत्तसन्धीहि योजेतब्बं[1]। एत्थ सरानं विहिता सन्धि, सरेसु वा विहिता सन्धि सरसन्धि, सरस्मिं परे सरानं आदेसो पि सरसन्धि, यथा--तत्रायं त्यादि; ब्यञ्ज-

---

१. नत्थि से० पोत्थके। २. दुवूपसन्तं–से०, सी० २। ३. सुवुपसन्तं–से०, सी० २। ४. दुराक्खातं–सी० १; दुरक्खातो–से०। ५. स्वाखातो–से०। ६. ब्यग्गं–से०। ७. अनुपघातो–सी० १, सी०। ८. अनच्छरिया–से०। ९. परिसेसना–से०। १०-१०. नत्थि सी० १ पोत्थके। ११. दुब्भुत्तं–से०। १२. नत्थि से० पोत्थके। १३. निग्गतं, अभिक्कमो, पटिक्कमो, अतिक्कमो–सी० १।

1. तु०–क० न्या०, पि० ६५।

नस्मिं परे सरादेसो पि सरसन्धि, यथा––सम्माधम्मं त्यादि। ब्यञ्जनस्मिं परे ब्यञ्जनादेसो पि ब्यञ्जनसन्धि, यथा––पटिलीयती त्यादि; सरस्मिं परे ब्यञ्जनादेसो पि ब्यञ्जनसन्धि, यथा––पटग्गी त्यादि। गाथासु वा वुत्तीसु वा सुखुच्चारणत्थं निग्गहीतागमादिवसेन पवत्ता सन्धि वुत्तसन्धि, यथा––चक्खुं उदपादी त्यादि। एवं यथायोगं योजेतब्बं।

पापनं ति प-आपनं ति छेदो, 'सरा सरे लोपं' ति (१२) इमस्स विसयो। परायनं ति परा-अयनं ति छेदो, 'सरा सरे लोपं', 'दीघं' ति (१५) इमेसं विसयो। उपायनं ति उप-अयनं ति छेदो, वुत्तनयो व। उपाहनं* ति उप-आहनं ति छेदो, 'सरा सरे लोपं' ति इमस्सेव विसयो। न्यायोगो ति नि-आयोगो ति छेदो, 'इवण्णो यन्नवा' ति (२१) इमस्स विसयो। निरूपधी ति नि-उपधी ति छेदो, 'यवमदन-तरळा चागमा' ति (३५) इमस्स विसयो। अनुबोधो ति अनु-बोधो त्येव छेदो, 'सरा पकति ब्यञ्जने' ति (२३) इमस्स विसयो। दुवूपसन्तं ति दु-उपसन्तं ति छेदो, वकारागमस्स च ब्यञ्जनस्मिं 'दीघं' ति (२५) इमस्स च विसयो; तथा सुवूपसन्तं ति। द्वालयो ति दु-आलयो ति छेदो, 'वमोदुदन्तानं' ति (१८) इमस्स विसयो; तथा स्वालयो ति। दुराख्यातं ति दु-आख्यातं ति छेदो, रकारागमस्स विसयो। समुद्दिट्ठं ति सं-उद्दिट्ठं ति छेदो, 'मदा सरे' ति (३४) इमस्स विसयो। वियग्गं ति वि-अग्गं ति छेदो, यकारागमस्स विसयो। विज्झग्गं ति वि-अधि-अग्गं ति छेदो, 'अज्झो अधी' ति (४५) इमस्स च, 'वा परो असरूपा' ति (१३) इमस्स च विसयो। वियग्गं† ति वि–अग्गं ति छेदो, 'इवण्णो यन्नवा' ति (२१) इमस्स विसयो। अवयागमनं ति अव-आगमनं ति छेदो, यकारागमस्स विसयो। अन्वेती ति अनु-एती ति छेदो, 'वमोदुदन्तानं' ति (१८) इमस्स विसयो। अनूपघातो ति अनु-उपघातो ति छेदो, 'सरा सरे लोपं', 'दीघं' ति इमेसं विसयो। अनच्छरिया ति अन-आच्छरिया ति छेदो, 'रस्सं' ति (२६) इमस्स विसयो; अनु-अच्छरियं ति वा छेदो, तदा 'सरा सरे लोपं' ति इमस्स विसयो। परियेसना ति परि-एसना ति छेदो, यकारागमस्स विसयो। परामासो ति परा-आमासो ति छेदो, 'सरा सरे लोपं' ति इमस्स विसयो। परिग्गहो ति परि-गहो ति छेदो, 'परद्वेभावो ठाने' ति (२८) इमस्स विसयो; तथा पग्गहो ति, उपसग्गमत्तमेव विसेसो। पक्कमो ति इमस्स प-कमो ति छेदो, 'परद्वेभावो

*उपाहणं–सी०। †ब्यग्गं–सी०।

ठाने' ति द्वेभावस्स विसयो; परक्कमो ति एत्था पि उपसग्गमत्तमेव विसेसो। निक्कसावो ति द्वेभावस्सेव विसयो; दुल्लयनं ति पि तथा। दुब्भिक्खं ति दु-भिक्खं ति छेदो, 'वग्गे घोसाघोसानं ततियपठमा' ति (२९) इमस्स विसयो। दुब्बुत्तं तिदं 'परद्वेभावो ठाने' ति इमस्स विसयो। सन्दिट्ठं तिदं पन 'वग्गन्तं वा वग्गे' (३१) तिमस्स विसयो। दुग्गहनिग्गहादीनि द्वेभावस्सेव विसयानी ति। अभिक्कम्पटिक्कमादीनि वुत्तनयानेवा ति।

इति कच्चायनवण्णनायं सन्धिकप्पस्स
पञ्चमकण्डवण्णना निट्ठिता।
सन्धिकप्पो निट्ठितो।

२. नामकप्पो

(१) पठमो कण्डो

५२. जिनवचनयुत्तं हि । २.१.१ ।

'जिनवचनयुत्तं हि'[1] इच्चेतं अधिकारत्थं वेदितब्बं ।

---

२. नामकप्पो

(१) पठमो कण्डो

एवं सेय्यत्थिकानं अक्खरकोसल्लं दस्सेत्वा, इदानि पदकोसल्लं दस्सेतुं—

५२. जिनवचनयुत्तं ही त्यादिमाह । अयं सामञ्ञानुसन्धि । 'जिनवचनयुत्तं ही' ति इदं सुत्तं किम्पभवं····निक्खन्तन्ति ? "सुणेय्या" ति इमस्स पदप्पभवं तन्निदानं···· । किन्निक्खन्तन्ति ? "अक्खरपदं सुणेय्या" ति वुत्तं, किं पदं सुणमानो जिनवचनयुत्तायुत्तं सब्बपदमेव सोतब्बं ति पुच्छाय सति, पदं सुणमानो जिनवचनयुत्तपदमेव सुणेय्य नायुत्तपदन्ति दस्सेतुं, 'जिनवचनयुत्तं ही' ति वुत्तं—अयमिमस्स सुत्तनिक्खन्ति । विसेसानुसन्धी ति पि वत्तब्बं—इदं हि हेट्ठा वुत्तमक्खरम्पि उपरि वत्तब्बपदम्पि अपेक्खति; सीहविलोकनेन किं अपेक्खती ति ? हेट्ठा 'अक्खरापादयो एकचत्तालीसं' ति (१) वुत्तअक्खरं च उपरि वुत्तं चतुब्बिधपदञ्च जिनवचनानुकूलं येवा ति । किमत्थमिदमुच्चते ? सन्धिकप्पनिद्दिट्ठानन्तरं नामकप्पं दस्सेन्तेन जिनवचनयुत्तलिङ्गानेव निप्पज्जन्ते, तेहेव विभत्तादयो होन्ती ति ञापनत्थमिदमुच्चते ति—अयमिह न्यासागतो सम्बन्धो[1] । किमत्थमिदमुच्चते ? अक्खरपदं सुणन्तो जिनवचनयुत्तअक्खरपदानि येव सुणेय्या ति ञापनत्थमिदमुच्चते–अयमम्हाकं खन्ति । जिनवचनयुत्तं ति एकं, ही ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तन्ति दट्ठब्बं—अयमिह पदच्छेदो । जिनवचनयुत्तअक्खरपदमेव सुणेय्या ति अत्थो—अयमिह पदत्थो । जिनवचनयुत्तं ति कम्मत्थनिद्देसो, विसेसननिद्देसो वा,

---

१. ०युत्तम्हि—से० ।

1. द०—क० न्या०, पि० ७३ ।

लिङ्गत्थनिद्देसो वा; ही ति अवधारणनिद्देसो; सञ्ञाधिकारपरिभासाविधिसुत्तेसु अधिकारसुत्तं ति वेदितब्बं। सीहगतिकमण्डूकगतिकयथानुपुब्बिकवसेन तीसु अधिकारेसु सीहगतिकअधिकारोयं, यथानुपुब्बिको अधिकारो ति पि वुच्चति। पञ्च मारे जितवा ति जिनो[1], तस्स वचनं जिनवचनं, जिनवचनस्स युत्तं जिनवचनयुत्तं; हिसद्दो निपातो। कस्मा पञ्च मारे जितवा ति वुत्तं ? ननु भगवा तयो मारे येव बोधिमूले जिनाति, न च द्वे मारे ति चोदना; सच्चं, तथा पि द्विन्नं मारानं कारणस्स जितत्ता उपचारवसेन पञ्च मारे जितवा ति वुत्तन्ति परिहारो। अथ वा कस्मा 'जिनवचनयुत्तं' ति एत्थ 'जिनो' ति नामं थेरेन निक्खित्तं, ननु भगवतो अनेकानि 'सम्बुद्धो' त्यादीनि नामानि सन्ती ति चोदना; सच्चं, तानि 'सम्बुद्धो' त्यादीनि नामानि सन्ति, तथा पि सब्बञ्ञुतं पत्वा सत्त सत्ताहे वीतिनामेत्वा ब्रह्मुना आयाचितधम्मदेसनेन धम्मचक्कं पवत्तेतुं बाराणसिं गच्छन्तेन भगवता अन्तरामग्गे उपकाजीवकेन पुट्ठो सम्फुल्लपदुमसंकासमुखं विवरित्वा—

> "मादिसा वे जिना होन्ति ये पत्ता आसवक्खयं।
> जिता मे पापका धम्मा तस्माहं उपका जिनो"[2] ।। ति।

वुत्तनामत्ता तदनुरूपवसेन थेरेन निक्खित्तं। अथ वा सब्बपच्चत्थिके निग्गण्हितुं थेरेन वुत्तं, निक्खित्तं।

एवं पठमं अधिकारसुत्तं विधाय, इदानि परिभासासुत्तं विधातुं—

---

1. तु०—"पापके अकुसले धम्मे मारादयो च अजिनी ति जिनो"..."जिनसद्दो हि केवलो हि सब्बञ्ञुम्हि वत्तति; सोपपदो पन पच्चेकबुद्धादीसु, तम्हि च यथारहं पवत्तति"—अभि० सू०, पि० १३८; "जिनो सक्को तु सिद्धत्थो सुद्धोदनि च गोतमो"— अभि०, गा० ४।

> "सब्बञ्ञू सुगतो बुद्धो धम्मराजा तथागतो।
> समन्तभद्दो भगवा जिनो दसबलो मुनि ।।
> ....
> अमोघवचनो धम्मकायो माराभिभू इति।
> असंखेय्यानि नामानि सगुणेन महेसिनो।
> नामं गुणे हि निस्सितं को कविन्दो कथेस्सति ।।
> तत्र सब्बञ्ञु इच्चादि नामं साधारणं भवे।
> सब्बेसानम्पि बुद्धानं गोतमो इति आदि न" ।।
> ... ...

—सद्द०, भा०, १, पि० ७३-७४।

2. महावग्ग, पि० ११।

५३. लिङ्गञ्च निपच्चते । २.१.२ ।

यथा[1] यथा[1] जिनवचनयुत्तं हि लिङ्गं[2] तथा[3] तथा[3] इध लिङ्गञ्च निपच्चते, तं यथा—एसो नो सत्था, ब्रह्मा, अत्ता, सखा, राजा ।

---

५३. लिङ्गञ्च निपच्चते* ति वुत्तं। इदं सुत्तं किम्पभवं'''? ''पदं सुणेय्या'' ति पदञ्च 'जिनवचन युत्तं ही' ति सुत्तञ्च पभवं तन्निदानं……। किन्निक्खन्तन्ति ? ''जिनवचनयुत्तं पदं सुणेय्या'' ति वुत्तं, जिनवचनयुत्तं पदं सुणन्तेन सिक्खन्तेन किं कत्वा सुणितब्बं सिक्खितब्बन्ति पुच्छाय सति, जिनवचनयुत्तं पदं सुणन्तेन सिक्खन्तेन लिङ्गञ्च निपच्चते ठपीयते चा ति दस्सेतुं, 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ति वुत्तं। रूपसिद्धिमते पन लिङ्गञ्च निपच्चते, धातवो च निपच्चन्ते ति दस्सेतुं 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ति वुत्तं[1] । वुत्तञ्च—

''लिङ्गमिच्चादिसुत्तम्हि किरियं ठपीयते ति च ।
समुच्चेत्येथ चसद्दो धातवो रूपसिद्धियं'' ॥ ति ।

अयमस्स निक्खन्ति। किमत्थमिदमुच्चते? जिनवचनयुत्तं हि लिङ्गं ठपीयति, निपच्चती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। लिङ्गन्ति एकं, चा ति एकं, निपच्चते ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तन्ति दट्ठब्बं। लिङ्गं ति कम्मत्थो, चा ति समुच्चयत्थो, निपच्चते ति क्रिया; सञ्ञाधिकारपरिभासाविधिसुत्तेसु परिभासासुत्तं ति वेदितब्बं। यथा यथा येन येन पकारेन जिनवचनयुत्तं हि लिङ्गं इध कच्चायनपकरणे ठपीयते निपच्चते च; अथ वा यं यं पकारं जिनवचनयुत्तं लिङ्गं अत्थि तं तं पकारं जिनवचन-युत्तं लिङ्गं इध कच्चायनपकरणे ठपीयते निपच्चते ति अत्थो। लीनं अत्थं गमयति बोधयती ति लिङ्गं[2]; लीनसद्दुपपद-गमु धातु गतिम्हि, क्विप्पच्चयो; लिङ्ग धातु गतिम्ही ति अत्थे णप्पच्चयो। किं तं? अत्थज्जोतकं घटपटादिकं वचनं। वुत्तञ्च—

१-१. यथायथा—से० ।

२. नत्थि से० पोत्थके ।

३-३. तथातथा—से० ।

*. निप्फज्जते—सी० (सब्बत्थ), न्यासे पि ।

1. रूप०, सु० ६१ ।

2. तु०—''लिङ्गं पाटिपदिकं''—रूप० सु० वु०, सु० ६१; क० न्या०, पि० ७३; ''विसदत्तादिसहितं लीनत्थगमकं निप्फन्नवचनं लिङ्गं''—सद्द०, सु० १९२; ''विसदभावा-

"रुक्खो ति वचनं लिङ्गं लिङ्गत्थो तेन दीपितो।
एवं लिङ्गञ्च लिङ्गत्थं कत्वा योजेय्य पण्डितो"[3] ॥ ति।

एत्थ च न्यासमतेन आवत्थिकादिचतुक्कवसेन च किरियादिचतुक्कवसेन च सामञ्ञादिचतुक्कवसेन च चतुब्बिधं लिङ्गं[4]; तेसु एकेकस्मि अन्तवसेन इत्थिलिङ्गे पञ्चधा पञ्चधा कत्वा वीसतिविधं वुत्तं; पुल्लिङ्गे छब्बिधं छब्बिधं कत्वा चतुवीसतिविधं वुत्तं; नपुंसके तिविधं तिविधं कत्वा द्वादसविधं वुत्तं। तत्थ आवत्थिकं नाम अवत्थावसेन वुत्तं 'वच्छो, दम्मो बलिवद्दो' त्यादिकं लिङ्गं; लिङ्गिकं नाम दण्डादिसंयोगेन पवत्तं 'दण्डी, सिखी, करी' त्यादिकं लिङ्गं; नेमित्तिकं नाम गुणनिमित्तं कत्वा पवत्तं 'सद्धो, मतिमा, गुणवा, बुद्धो' त्यादिकं लिङ्गं; अधिच्चसमुप्पन्नं नाम वचनत्थमनपेक्खित्वा वोहारवसेनेव दासदळिद्दादिसु पवत्तं 'सिरिवड्ढको, धनवड्ढको' त्यादिकं लिङ्गं—इदं आवत्थिकादिचतुक्कं। किरिया

दिसहितं लीनस्सत्थस्स गमकं निप्फन्नवचनं लिङ्गं नाम भवति"—त०, वु०; "धातुप्पच्चयविभत्तिवज्जितं, अत्थवं लिङ्गं—त०, सु० १९६; "धातुप्पच्चयविभत्तीहि विवज्जितं अत्थवन्तं पटिच्छन्नमङ्गं निप्फन्नपदानं पठमं ठपेतब्बरूपं लिङ्गं नाम भवति" त०, वु०; "उपसग्गनिपाता च"—त०, सु० १९७; "उपसग्गनिपाता च लिङ्गं नाम भवन्ति"—त०, वु०;

"लीनं अपाकटं अङ्गं लीनं गमयती ति वा।
लिङ्गं नामन्ति विञ्ञेय्यं नामं लिङ्गं हि सादिसं" ॥

—क० भे०, का० ३५;

"धातुविभक्तिवर्जमर्थवल्लिङ्गम्—का० २.१.१; "अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्" —पा० १.२.४५; "कृत्तद्धितसमासाश्च"—त०, १.२.४६।

3. तु०—क० न्या०, पि० ७४।

4. तु०—त०;

"नामं एकविधं वुत्तं द्विधा अन्वत्थरुळिहया।
तिविधा पुमलिङ्गित्थि-नपुंसकविभागतो ॥
सामञ्ञं च गुणक्रिया यदिच्छा ति चतुब्बिधं।
जातिगुणक्रियादब्बनामेहि पञ्चधा मतं ॥
... .
सद्दत्थमनपेक्खित्वा निमित्तविरहे पन।
अत्थे सद्दस्स उप्पत्ति रुळिहनामं ति वुच्चति" ॥

—का०, १४८-१५४।

नाम नामकिरियावसेन पवत्तं 'कारको, पाचको' त्यादिकं लिङ्गं; गुणनामं नाम गुणतो पवत्तं 'तेविज्जो, छळभिञ्ञो' त्यादिकं लिङ्गं; जातिनामं नाम जातिसामञ्ञेन पवत्तं 'खत्तियो, ब्राह्मणो' त्यादिकं लिङ्गं; यदिच्छकं नाम हेतुमनपेक्खित्वा इच्छावसेन पवत्तं 'तिस्सो, फुस्सो' त्यादिकं लिङ्गं—इदं किरियादिचतुक्कं। सामञ्ञनामं नाम समञ्ञाय सम्मुतिया पवत्तं 'महासम्मतो' त्यादिकं लिङ्गं; गुणनामं नाम गुणतो पवत्तं 'धम्मकथिको, पंसुकूलिको' त्यादिकं लिङ्गं; कित्तिमं नाम नामकरणवसेन कित्तेत्वा पवत्तं 'तिस्सो फुस्सो' त्यादिकं लिङ्गं; ओपपातिकं नाम पुरिमवोहारस्स पच्छिमे पतितवसेन पवत्तं 'चन्दो, सुरियो, पठवि, पब्बतो' त्यादिकं लिङ्गं—इदं सामञ्ञादिचतुक्कं। एतेसु हि एकेकस्मिं चतुक्के इत्थिलिङ्गं आकारिवण्णुवण्णन्तवसेन पञ्चधा पञ्चधा कत्वा सब्बं वीसतिविधं होति, पुल्लिङ्गं अवण्णिवण्णुवण्णन्तवसेन छब्बिधं छब्बिधं कत्वा चतुवीसतिविधं होति, नपुंसकम्पन अकारिकारुकारन्तवसेन तिविधं तिविधं कत्वा द्वादसविधं होति। वुत्तञ्च—

"अवत्थादिचतुक्कस्स वसा लिङ्गं चतुब्बिधं।
किरियादिसामञ्ञादिचतुक्कानं वसेन वा॥

तत्थ चेकेकमाकारिवण्णुवण्णन्ततो पन।
पञ्चधा पञ्चधा कत्वा इत्थिलिङ्गञ्च वीसति॥

अवण्णिवण्णुवण्णन्तवसतो पन चेककं।
छब्बिधं छब्बिधं कत्वा पुल्लिङ्गं चतुवीसति॥

तत्थ चेकेकमकारिकारुकारन्तवसतो पन।
तिविधं तिविधं कत्वा द्वादसञ्च नपुंसकं"॥ ति।

अयं न्यासागतो लिङ्गन्तभेदो; इदञ्च भेदं सन्धाय वुत्तं—

"छपञ्ञास विधे लिङ्गभेदे एवमुदीरये"[1] ति।

रूपसिद्धियम्पन नमनवसेन एकविधत्तञ्च, रुळ्हि-अन्वत्थवसेन दुविधत्तञ्च, पुमित्थिनपुंसकवसेन तिविधत्तञ्च, सामञ्ञगुणकिरियायदिच्छावसेन चतुब्बिधत्तञ्च कत्वा, अवण्णिवण्णुवण्णोकारनिग्गहीतन्तपकतिवसेन अट्ठविधं ति वुत्तं[2]।

1. तु०—क० न्या०, पि० ७४।

2. रूप०, नामकण्डभूमिकायं।

तट्टीकायम्पि "अवण्णन्ता 'पुरिसपरिसा' इच्चादिका, इवण्णन्ता 'अग्गि, दण्डी' इच्चादिका, उवण्णन्ता 'भिक्खु, अभिभू' इच्चादिका, ओकारन्ता 'गोसुतनो' त्यादिका, निग्गहीतन्ता 'किं, इदं' त्यादिका ति एवं अकारादिसरन्तनिग्गहीतन्तपकतिभेदेन अट्ठविधं" ति वुत्तं[1]। तेसु च पुल्लिङ्गे अकारन्तपकतिको ओकारन्तो च, उकारन्तपकतिको आकारन्तो च, अकारन्तपकतिको आकारन्तो च, इकारन्तपकतिको इकारन्तो च, ईकारान्तपकतिको ईकारन्तो च, उकारन्तपकतिको उकारन्तो च, उकारन्तपकतिको आकारन्तो च, ऊकारन्तपकतियो ऊकारन्तो च, ओकारन्तपकतिको ओकारन्तो चा ति नव पभेदा वुत्ता। तथा हि वुत्तञ्च[2]—

1. तु०—

"या सा च इत्थिया लिङ्गं यो सो पुल्लिङ्गमेव च।
यं तं नपुंसकञ्चेति तिविधं लिङ्गलक्खणं॥
आवत्थिलिङ्गिकं नेमित्तिकाधिच्चसमुप्पन्नं।
वच्छो दण्डी च तेविज्जो सिरिवड्ढनको मतो॥
क्रियाजातिगुणं यादिच्छकन्ति वा चतुब्बिधं।
पाचको च अस्सो राजा सेविज्जो च तिस्सादयो॥
सामञ्ञगुणकित्ती च ओपपातिकतोथवा।
महासम्मततेविज्जो तेमियो चन्दिमादिको॥
तिलिङ्गेस्वेकमेकस्स चतुभेदभावतो।
द्वादसपभेदं लिङ्गं पण्डितेहि विजानिया॥
....
छपञ्ञासट्ठसट्ठी च द्वाधिका नवुदीरिता।
न्यासे तद्दीपके रूपसिद्धियञ्च यथारहं"॥
—क० भे०, गा० ३६-४६;

"रुळ्हीअन्वत्थवसेन नामं दुविधमीरितं।
इत्थिपुमनपुंसकवसेन तिविधं मतं॥
नामनामादिवसेन पञ्चधा समुदीरितं।
उदाहरणमेतेसं नामकप्पे सुपाकटं॥
वियुत्तिअवियुत्तीनं वसेन उप्पत्ति द्विधा।
वियुत्ति तत्थ धातूहि पच्चयेहि च सिज्झति॥
अवियुत्तिसु अधातु पच्चयो पि न दिस्सति।
एवं छब्बिधं नामन्तु वेदितब्बं सुबुद्धिना"॥ ति।
—सद्दसार०, गा० ३५३-३५६।

2. रूप०, सु० १७५।

"पुरिसो गुणवा राजा साग्गि दण्डी च भिक्खु च।
सत्थाभिभू च सब्बञ्ञू गो ति पुल्लिङ्गसंगहो" ॥ ति।

तत्थ 'पुरिसो' ति अकारन्तपकतिको ओकारन्तपयोगो; 'गुणवा, सत्था' ति उकारन्तपकतिको आकारन्तपयोगो, गाथाबन्धनवसेन उप्पटिपाटिया वुत्तो; 'राजा' ति अकारन्तपकतिको आकारन्तपयोगो; 'सा' ति आकारन्तपकतिको आकारन्तपयोगो; 'अग्गि' इति इकारन्तपकतिको इकारन्तपयोगो; 'दण्डी' ति ईकारन्तपकतिको ईकारन्तपयोगो; 'भिक्खु' इति उकारन्तपकतिको उकारन्तपयोगो; 'अभिभू, सब्बञ्ञू' ति ऊकारन्तपकतिको ऊकारन्तपयोगो; 'गो' ति ओकारन्तपकतिको ओकारन्तपयोगो—एवं पकति-अन्तवसेन नवविधं होति; कारिकायम्पि वुत्तं[1]—

"पुरिसो सा जोति पाणि धम्मि* ञाणि संघी पि च*।
भिक्खाभिभू वेस्सभू च गो ति पुल्लिङ्गसंगहो" ॥ ति।

इत्थिलिङ्गे आकारन्तपकतिको आकारन्तो च, इकारन्तपकतिको इकारन्तो च, ईकारन्तपकतिको ईकारन्तो च, उकारन्तपकतिको उकारन्तो च, उकारन्तपकतिको आकारन्तो च, ऊकारन्तपकतिको ऊकारन्तो च, ओकारन्तपकतिको ओकारन्तो चा ति सत्तपभेदा वुत्ता। तथा हि वुत्तं[2]—

"कञ्ञा रत्ति नदी इत्थी मातुलानी च भिक्खुनी।
दण्डिनी यागु माता च जम्बु गो तित्थिसंगहो" ॥ ति।

तत्थ 'कञ्ञा' ति आकारन्तपकतिको आकारन्तपयोगो; 'रत्ति' इति इकारन्तपकतिको इकारन्तपयोगो; 'नदी, इत्थी, मातुलानी, भिक्खुनी, दण्डिनी' ति ईकारन्तपकतिको ईकारन्तपयोगो; 'यागु' इति उकारन्तपकतिको उकारन्तपयोगो; 'माता' ति उकारन्तपकतिको आकारन्तपयोगो; 'जम्बू' ति ऊकारन्तपकतिको ऊकारन्तपयोगो; 'गो' ति ओकारन्तपकतिको ओकारन्तपयोगो—एवं पकति-अन्तवसेन सत्तविधं होति; कारिकायम्पि वुत्तं[3]—

"कञ्ञा पत्ति युत्ति वुत्ति मही वेतरणी पि च।
यागु-धातु-धेनुकासु जम्बू गो तित्थिसंगहो" ॥ ति।

*. "धम्मो सङ्घी तथेव च"—का०।

1. का०, गा० १९९।
2. रूप०, सु० १९४।
3. का०, गा० २१७।

नपुंसकलिङ्गे अकारन्तपकतिको निग्गहीतन्तो च, आकारन्तपकतिको निग्गहीतन्तो च, इकारन्तपकतिको इकारन्तो च, ईकारन्तपकतिको ईकारन्तो च, उकारन्तपकतिको उकारन्तो च, ऊकारन्तपकतिको ऊकारन्तो च, ओकारन्तपकतिको ऊकारन्तो चा ति सत्त पभेदा वुत्ता। तथा हि वुत्तं[1]—

"चित्तं कम्मञ्च अस्सद्धमथट्ठि सुखकारि च।
आयु गोत्रभू धम्मञ्ञू चित्तगू ति नपुंसके" ॥ ति।

तत्थ 'चित्तं, कम्मं' ति अकारन्तपकतिको निग्गहीतन्तपयोगो; 'अस्सद्धं' ति आकारन्तपकतिको निग्गहीतन्तपयोगो; 'अट्ठि' इति इकारन्तपकतिको इकारन्तपयोगो; 'सुखकारि' इति ईकारन्तपकतिको इकारन्तपयोगो'; 'आयु' इति उकारन्तपकतिको उकारन्तपयोगो'; 'गोत्रभू, धम्मञ्ञू' ति ऊकारन्तपकतिको ऊकारन्तपयोगो; 'चित्तगू' ति ओकारन्तपकतिको ऊकारन्तपयोगो—एवं पकति-अन्त-वसेन सत्तविधं होति; कारिकायम्पि वुत्तं[2]—

"चित्तञ्च मुखनासिका अट्ठी च सुखकारि च।
चक्खाभिभू चित्तगू ति संगहोयं नपुंसके" ॥ ति।

"किं समुदायो इदं पच्चयो" त्यादि-ब्यञ्जनन्तो निग्गहीतन्तपकतिको निग्गहीतन्तो ति पि वुच्चति। अयं रूपसिद्धिनयो।

कस्मा 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ति वुत्तं? 'लिङ्गं निपच्चते' इच्चेव वत्तब्बन्ति चोदना। समुच्चयत्थं एवं वुत्तन्ति परिहारो। अथ वा 'ठपनापेक्ख-निप्पज्जनापेक्खेसु द्वीसु लिङ्गपदेसु ठपनापेक्खलिङ्गपदस्स पधानत्ता 'लिङ्गञ्च ठपीयते' ति वत्वा 'निपच्चते चा' ति वत्तब्बन्ति चोदना। सच्चं, तथा पि उत्तरसुत्तत्थं 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) पि एत्थ चसद्देन ठपनापेक्खलिङ्गस्सेव परामट्ठत्ता एवं वुत्तं ति परिहारो। पठमं ठपेतब्बपकति येव लिङ्गं न होति, निप्फन्नरूपम्पि कारणूपचारवसेन लिङ्गन्नामा ति दस्सेतुं, सविभत्तिकं कत्वा "एसो" त्यादि वुत्तं। तत्थ 'जिनवचनयुत्तं ही' ति (५२) सुत्तं अधिकारं कत्वा, 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ति (५३) सुत्तेन "एसो" ति पदं पाठक्कमतो वियोजेत्वा, "एत" इति जिनवचना-नुरूपं ठपेत्वा, तस्स 'परसमञ्ञा पयोगे' ति (९) सुत्तेन धातुप्पच्चयविभत्ति-

1. रूप०, सु० १९९।
2. का०, गा० २२८।

वज्जितस्स अत्थवतो सद्दस्स लिङ्गसञ्ञं कत्वा, 'धातुलिङ्गेहि पराप्पच्चया' ति (४३४) सुत्तं परिभासं कत्वा, 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेन जिनवचनयुत्तलिङ्गतो विभत्तियो परं कत्वा, का च पन ता विभत्तियो ति सन्देहे जाते, 'सियो अंयो····स्मिसू' ति (५५) सुत्तेन सि यो····स्मि सु इच्चेतेसं विभत्तिसञ्ञं कत्वा, 'तदनुपरोधेना' ति (५६) सुत्तेन द्विवचनवज्जने परिभासं कत्वा, तासं विभत्तीनं पठमादुतियादिवसेन अनियमप्पसङ्गे सति 'वत्तिच्छानुपुब्बिका सद्दप्पवत्ती' ति परिभासतो 'लिङ्गत्थे पठमा' ति (२८६) पठमाविभत्तिं कत्वा, तस्सा पि एकवचनबहुवचनवसेन अनियमप्पसङ्गे सति 'एकम्हि वत्तब्बे एकवचनं' ति परिभासतो एकवचनसि-विभत्तिं कत्वा, अकारतो तकारं वियोजेत्वा, 'एततेसं तो' ति (१७४) तकारस्स सकारं कत्वा, 'अतो नेना' ति (१०३) वत्तमाने, 'सो' ति (१०४) सुत्तेन अकारन्ततो लिङ्गम्हा सिवचनस्स ओकारादेसं कत्वा, 'सरलोपो····पकती' ति (८३) पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, परसरस्स च पकतिभावं कत्वा, 'नये परं युत्ते' ति (११) सुत्तेन परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

"नो" ति एत्थ वुत्तनयेन अम्हलिङ्गं ठपेत्वा, तस्स 'परसमञ्ञा पयोगे' ति (९) सुत्तेन धातुप्पच्चयविभत्तिवज्जितस्स अत्थवतो सद्दस्स लिङ्गसञ्ञं कत्वा, 'धातुलिङ्गेहि पराप्पच्चया' ति सुत्तं परिभासं कत्वा, 'ततो च विभत्तियो' ति सुत्तेन जिनवचनयुत्तलिङ्गतो विभत्तियो परं कत्वा, का च पन ता विभत्तियो ति सन्देहे जाते, 'सियो-अंयो-····स्मिसू' ति सुत्तेन 'सियो····' इच्चेतेसं विभत्तिसञ्ञं कत्वा, 'तदनुपरोधेना' ति सुत्तेन द्विवचनं वज्जेत्वा, एकवचनबहुवचनानं अनुरूपपरिभासं कत्वा, तासं विभत्तीनं पठमादुतियादिवसेन अनियमप्पसङ्गे सति 'वत्तिच्छानुपुब्बिका सद्दप्पवत्ती' ति परिभासतो 'यस्स वा परिग्गहो तं सामी' ति(२८५) सुत्तेन सामिसञ्ञं कत्वा, 'सामिस्मिं छट्ठी' ति (३०३) सुत्तेन छट्ठिविभत्तिं कत्वा, तस्सा पि एकवचनबहुवचनवसेन अनियमप्पसङ्गे सति 'बहुम्हि वत्तब्बे बहुवचनं' ति परिभासतो छट्ठीबहुवचन-नं-विभत्तिं कत्वा, अम्हसद्दस्स 'पदतो दुतियाचतुत्थीछट्ठीसु वोनो' ति (१४७) सुत्तेन सह विभत्तिया नो-आदेसे कते रूपं।

सत्था ति एत्थ च वुत्तनयेन सत्थुलिङ्गं ठपेत्वा, वुत्तनयेनेव पठमाएकवचनसिविभत्तिं कत्वा, उकारतो थकारं वियोजेत्वा, 'सत्थुपितादीनमा सिस्मिं सिलोपो चे' ति (१९९) सुत्तेन सत्थुसद्दन्तभूतस्स उकारस्स आकारं कत्वा सिलोपञ्च कत्वा, परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। ब्रह्मा, सखा, राजा त्यादिसु पि वुत्तनयेनेव सिविभत्तिं कत्वा 'ब्रह्मत्तसख····अमानं' ति (१८८) सुत्ते वत्तमाने 'स्या चे' ति (१८९) सुत्तेन अंकारन्ततो सिवचनस्स आ-आदेसं कत्वा, राजसद्दं सरतो वियोजेत्वा, 'सरलोपो····पकती' ति (८३) सुत्तेन पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, परसरस्स पकतिभावञ्च कत्वा, परक्खरं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

५४. ततो च विभत्तियो ।२. १. ३ ।

ततो जिनवचनयुत्तेहि लिङ्गेहि विभत्तियो होन्ति ।

इमिना हि पाठक्कमतो नीहरित्वा पठमं पुरिस इति सिलिट्ठफलके ठपनं सन्धाय ठपीयती ति वुत्तं; सिविभत्तिकं कत्वा पुरिसो इति निपच्चनं सन्धाय निपच्चते ति वुत्तं; ठपनं पठमं कातब्बं, निपच्चनं पच्छा कातब्बं ।

एवं परिभासासुत्तं विधाय, इदानि विधिकारकसुत्तं विधातुं—

५४. ततो च विभत्तियो[1] ति वुत्तं । इदं सुत्तं ...? 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ति (५३) सुत्तप्पभवं तन्निदानं.... । किन्निक्खन्तं ति । 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ठपीयते चा ति वुत्तं; ततो जिनवचनानुरूपवसेन ठपेतब्बलिङ्गतो कतरं पठमं योजेतब्बं ति पुच्छाय सति, ततो जिनवचनानुरूपवसेन ठपेतब्बलिङ्गतो विभत्तियो च योजेतब्बा ति दस्सेतुं 'ततो च विभत्तियो' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? ततो जिनवचनयुत्तलिङ्गतो च परा विभत्तियो होन्ती ति ञापनत्थमिदमुच्चते । ततो ति एकं, चा ति एकं, विभत्तियो ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं । ततो ति अवधिनिद्देसो, चा ति समुच्चयनिद्देसो, विभत्तियो ति विसयीनिद्देसो; सञ्ञाधिकारपरिभासाविधिसुत्तेसु विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । ततो जिनवचनयुत्तलिङ्गतो विभत्तियो परा होन्ती ति अत्थो । कम्मादिवसेन च, एकत्तादिवसेन च लिङ्गत्थं विभजन्ती ति विभत्तियो[2]; अथ वा विभज्जते पाटिपदिकत्थो एताया ति विभत्तियो । 'ततो विभत्तियो' ति एत्तकमेव वत्तब्बं, अथ कस्मा चग्गहणं पक्खिपित्वा 'ततो च विभत्तियो' ति वुत्तं ति ? समुच्चयत्थं । किं समुच्चेति ? अलिङ्गभूततो तवेतूनादिपच्चयन्तनिपाततो* पि विभत्तियो होन्ती ति[3] । अथ वा चसद्देन पठमादुतियादिएकवचनबहुवचनादिसञ्ञाकरणत्थं[4] । वुत्तञ्च—

"ततो चादो चसद्देन तास्वेकवचनादिकं ।
पठमादिसञ्ञं साधेति आचेरो न्यासकारको" ॥ ति + ।

आचेरसद्दो आचरियपरियायो; चसद्देन तवेतूनादिपच्चयन्तनिपाततो विभत्तियो परा होन्तिच्चाह बुद्धप्पियाचरियो ति ।

एवं विभत्तिकारकसुत्तं विधाय, इदानि विभत्तिसञ्ञासुत्तं विधातुं—

---

*. तुनादि०—सी० । + सी० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—"तस्मात्परा विभक्तयः"—का० २.१.२; पा० ३.१.१, ३.१.२, ४.१.१; 'लीनङ्गतो च'—सद्द० सु० २०२ ।
2. तु०—रूप०, सु० ६२; क० न्या०, पि० ७४; "स्यादयो त्यादयो च विभत्तियो"—सद्द०, सु० १९८ ।
3. तु०—रूप०, सु० ६२ ।
4. तु०—क० न्या०, पि० ७४ ।

५५. सियो-अंयो-नाहि-सनं-स्माहि-सनं-स्मिसु । २. १. ४ ।

का च पन ता विभत्तियो ? सि यो इति पठमा, अं यो इति दुतिया, ना हि इति ततिया, स नं इति चतुत्थी, स्मा हि इति पञ्चमी, स नं इति छट्ठी, स्मि सु इति सत्तमी ।

विभत्ति इच्चनेन क्वत्थो ? 'अम्हस्स ममं सविभत्तिस्स से' (१२०) ।

---

५५. **सियोअंयोनाहिसनंस्माहिसनंस्मिसू**[1] ति वुत्तं । अथ वा विभत्तिनियमसुत्तं विधातुं, अथ वा विभत्तिसञ्ञाय सञ्ञङ्गपरिभासासुत्तं विधातुं सियो…स्मिसू ति वुत्तं । इदञ्च तिण्णं आचरियानं मतानुसारेन वुत्तं । पुरिमपक्खे—

"सञ्ञा च परिभासा च विधि नियममेव च ।
पटिसेधाधिकारो च नामिकं छब्बिधं मतं" ॥

ति वुत्तेसु छब्बिधेसु सुत्तेसु सञ्ञासुत्तं ति रूपसिद्धिमतेन वुत्तं[2] । पच्छिमपक्खे न्यासमतेन नियमसुत्तं ति वुत्तं[3] । ततो पच्छिमपक्खे पन सुत्तनिद्देसमतेन परिभासासुत्तं ति वुत्तं । परिभासा नामेसा तिविधा—सञ्ञङ्ग-विद्ध्यङ्ग-अनञ्ञङ्गवसेन । तत्थ 'परसमञ्ञा पयोगे' ति (९) सुत्तं सञ्ञङ्गपरिभासा नाम; 'पुब्बमधोठितमस्सरं सरेन वियोजये' ति (१०) सुत्तं विद्ध्यङ्गपरिभासा नाम; 'तदनुपरोधेना' ति (५६) सुत्तं अनञ्ञङ्गपरिभासा नाम । तेसु इदं सुत्तं सञ्ञङ्गपरिभासा नाम ।

इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति ? 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति । किन्निक्खन्तन्ति ? 'ततो च विभत्तियो' ति एत्थ विभत्तियो ति वुत्तं; का च पन ता विभत्तियो ति पुच्छाय सति, स्यादयो द्विसत्त विभत्तियो नाम होन्ती ति दस्सेतुं 'सियो …स्मिसू' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? स्यादयो द्विसत्त विभत्ति नामा ति ञापनत्थमिदमुच्चते । सियोअंयो…स्मिसू ति एकपदमेव । सञ्ञीनिद्देसो सरूपनीयनिद्देसो वा; विभत्तिसञ्ञो पकतिनिद्देसो वा । स्यादयो द्विसत्त विभत्ति नाम होन्ती ति अत्थो । सि च, यो च…स्मि च, सु च तथा; खुद्दकद्वन्दोयं । सियो च, अंयो च…स्मिसु च तथा; महाद्वन्दोयं । कस्मा इहेदं वुत्तन्ति चोदना ।

---

1. तु०—"सियो … स्मिसु"—सद्द०, सु० २००; मो०, सु० २.१; का० २.१.१; पा० ४.१.२ ।
2. रूप०, सु० ६३ ।
3. तु०—क० न्या०, पि० ७५–७६ ।

Acc:, 29003

५६. तदनुपरोधेन । २. १. ५ ।

यथा यथा तेसं जिनवचनानं अनुपरोधो[१] तथा तथा इध लिङ्गञ्च निपच्चते ।

'ततो च विभत्तियो' ति पुब्बे विभत्तिसञ्ञं अट्ठपेत्वा वुत्तत्ता ता पनिमा ति दस्सनत्थं तदनन्तरं वुत्तन्ति परिहारो[1] ।

एवं विभत्तिसञ्ञं विधाय, परिभासन्तरं विधातुं—

५६. तदनुपरोधेना ति वुत्तं । इदं सुत्तं किम्पभवं···? 'सियोअंयो··· स्मिंसू' ति (५५) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति । किन्निक्खन्तन्ति ? कस्मा इध चुद्दसमेव विभत्तियो वुत्ता; एकवचनबहुवचनवसेन च द्वे येव वचना वुत्ता ति पुच्छाय सति, जिनवचनानुपरोधतो चुद्दसमेव वुत्ता, एकवचन बहुवचनवसेन च द्वे येव वचना वुत्ता ति दस्सेन्तेन 'तदनुपरोधेना' ति वुत्तं ति । वुत्तञ्च—

"तदनुच्चादिकं सुत्तं किमत्थमिहमीरितं ।
परसत्थागतं द्विब्बचनं वारेतुमीरितं" ।। ति ।

किमत्थमिदमुच्चते ? येन येन पकारेन निप्फादियमाने तेसं जिनवचनानुपरोधो होति, तेन तेन पकारेन निप्फादियते ति ञापनत्थमिदमुच्चते ति । 'तदनुपरोधेना' ति एकपदमेव । तदनुपरोधेना ति विसेसननिद्देसो । यथा यथा तेसं तेसं जिनवचनानं उपरोधो न होति तथा तथा इध लिङ्गञ्च निपच्चते, आख्यातञ्च निपच्चते ति अत्थो । न उपरोधो अनुपरोधो, तेसं अनुपरोधो तदनुपरोधो, तेन तदनुपरोधेन[2] । कस्मा इहेवेदमुच्चते ति चोदना । अञ्ञत्थ जिनवचनानमननुरूपविभत्तिवचनपरिवज्जनत्थं ति परिहारो[3] ।

एवं सि-यो त्यादीनं चुद्दसन्नं विभत्तिसञ्ञं विधाय, इदानि तासु विभत्तीसु पठमेकवचनस्स विसेससञ्ञं विधातुं—

---

१. अनुपरोधेन-से० ।

1. क० न्या०, पि० ७५-७६ ।

2 तु०--क० न्या०, पि० ७५-७६ ।

3. तु०--"कस्मा इहेवमुच्चते ति ? इह पन चुद्दस विभत्तियो ठपिता, अञ्ञत्थ एकवीसति । को नु खो हेतु इहेवं ठपने ति सन्देहो जायेय्य; तदपगमनत्थं इहेदं ठपितं···अथ वा सक्कतगन्थे विभत्तियो अञ्ञथा पठिता, इह अञ्ञथा; किन्तु खो कारणं इहेवं पठने ति सन्देहो सिया ति; तं निवत्तनत्थं···"—त०, पि० ७६; रूप०, सु० ६४ ।

५७. आलपने सि गसञ्ञो । २. १. ६ ।

आलपनत्थे सि गसञ्ञो होति । भोति अय्ये, भोति कञ्ञे, भोति घरादिये ।

आलपने ति किमत्थं ? सा अय्या । सी ति किमत्थं ? भोतियो अय्यायो । ग इच्चनेन क्वत्थो ? 'घते च' (११४) ।

---

५७. आलपने सि गसञ्ञो[1] ति वुत्तं । इदं सुत्तं किम्पभवं....? 'सियो.. स्मिसू' ति (५५) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति । किन्निक्खन्तन्ति ? 'सियो....' त्यादिना चुद्दसन्नं विभत्तिसञ्ञा कता; तासु सिवचनस्स विसेससञ्ञा का कातब्बा ति पुच्छाय सति, तासु सिवचनस्स गसञ्ञा पि कातब्बा ति दस्सेतुं 'आलपने सि गसञ्ञो' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? आलपने सिविभत्ति गसञ्ञो होती ति ञापनत्थं । आलपने ति एकं, सी ति एकं, गसञ्ञो ति एकं ति तिपदमिदं सुत्तं । आलपने ति आधारसत्तमी, सी ति सञ्ञी, गसञ्ञो ति सञ्ञा; सञ्ञाधिकारपरिभासाविधिसुत्तेसु सञ्ञासुत्तं ति वेदितब्बं । आलपने सिविभत्ति गसञ्ञो होती ति अत्थो । अभिमुखं कत्वा लपनं आलपनं, तस्मि आलपने; ग इति सञ्ञा एतस्सा ति गसञ्ञो । कस्मा 'सिगो' ति अवत्वा 'सि गसञ्ञो' ति वुत्तं ति चोदना । एवमवत्वा 'सि गसञ्ञो' ति वचनं आदेससङ्कानिवत्तनत्थं ति परिहारो[2] ।

भोती ति एत्थ 'जिनवचनयुत्तं ही' ति (५२) सुत्तं अधिकार कत्वा, 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ति (५३) सुत्तेन भोती ति पदं पाठक्कमतो वियोजेत्वा, भवन्त इति जिनवचनानुरूपं ठपेत्वा, 'इत्थियमतो आप्पच्चयो' ति (२३७) वत्तमाने 'नदादितो वा ई' ति (२३८) ईप्पच्चयं कत्वा, 'न्तुस्स तमीकारे' (२४१) त्यधिकिच्च 'भवतो भोतो' ति (२४२) भवन्तसद्दस्स भोतादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावं च कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, एकन्ततद्धितत्ताभावा 'तद्धित....चे' ति (६०३) एत्थ चसद्देन नाममिव कत्वा, 'जिनवचनयुत्तं हि', 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ति वत्तमाने 'ततो च विभत्तियो ति (५४) विभत्तुप्पत्ति कत्वा, 'सियो....स्मिसू' ति (५५) सुत्तेन विभत्तिनियमं कत्वा, तस्सा पि अनियमप्पसङ्गे 'वत्तिच्छानुपुब्बिका सद्दप्पवत्ती' ति कत्वा, 'लिङ्गत्थे पठमा' ति (२८६) वत्तमाने 'आलपने चे' ति (२८७) आलपनत्थे पठमाविभत्ति कत्वा, तस्सा पि अनियमप्पसङ्गे 'वत्तिच्छानुपुब्बिका सद्दप्पवत्ती' ति कत्वा, 'एकम्हि....बहुवचनं' ति एकवचनसिविभत्ति कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इमिना गसञ्ञं कत्वा, 'आलपने सि गसञ्ञो' ति, 'इवण्णुवण्णाज्झला' ति (५८) वत्तमाने 'ते इत्थिख्या पो' ति (५०) इवण्णस्स पसञ्ञं कत्वा,

---

1. तु० —''आमन्तणे सि गसञ्ञो''—सद्द०, सु० २०४; ''आमन्त्रिते सिः सम्बुद्धिः''—का० २. १. ५ ।
2. तु०—क० न्या०, पि० ७७ ।

५८. इवण्णुवण्णाज्झला[1] । २. १. ७ ।

इवण्णुवण्णा इच्चेते झलसञ्ञा होन्ति यथासङ्ख्यं । इसिनो, दण्डिनो, अग्गिनो, गहपतिनो, सेतुनो[2], भिक्खुनो, सयम्भुनो ।

झल इच्चनेन क्वत्थो ? 'झलतो सस्स नो वा' (११७) ।

'भो गे तू' ति (२४३) वत्तमाने 'झलपा रस्सं' ति (२४४) रस्सं कत्वा, 'सेसतो लोपं गसिपी' ति (२२०) सिम्हि लुत्ते रूपं ।

अय्ये, कञ्ञे, घरादिये ति एत्थ अय्य-कञ्ञ-घरादियसद्देहि 'इत्थियमतो आप्पच्चयो' ति (२३७) सुत्तेन आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, 'तद्धित....चे' ति (६०३) एत्थ चसद्देन नाममिव कत्वा, वुत्तनयेन आलपनेकवचनं कत्वा, तस्सिमिना गसञ्ञञ्च कत्वा, 'आलपने सि गसञ्ञो', 'ते इत्थिख्या पो' ति वत्तमाने 'आ घो' ति (६०) घसञ्ञं कत्वा, 'सखातो गस्से वा' ति (११३) वत्तमाने 'घते चे' ति (११४) गस्सेकारं कत्वा, 'सरलोपो....पकती' ति (८३) सुत्तेन पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, 'वा परो असरूपा' ति (१३) वत्तमाने 'कचासवण्णं लुत्ते' ति (१४) एकारस्स असवण्णे सम्पत्ते तेनेव पकतिभावं कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं ।

इतरं किमुदाहरणं ? तत्थ सा ति तसद्दतो वुत्तनयेनाप्पच्चयादिम्हि कते 'लिङ्गत्थे पठमा' ति पठमेकवचनसिविभत्तिं कत्वा, तसद्दं वियोजेत्वा, 'अनपुंसकस्सायं सिम्हि' (१७२), 'अमुस्स मो सं' ति (१७३) वत्तमाने 'एततेसन्तो' ति (१७४) तकारस्स सकारे कते 'सेसतो लोपं गसिपी' ति (२२०) सिम्हि लुत्ते रूपं । अय्या ति अय्य-सद्दतो वुत्तनयेनाप्पच्चयादिम्हि कते 'लिङ्गत्थे पठमा' ति पठमेकवचन-सिविभत्तिं कत्वा, अनालपनत्ता इमिना गसञ्ञमकत्वा सिम्हि लुत्ते रूपं होति । भोतियो ति एत्थ वुत्तनयेन 'लिङ्गत्थे पठमा' त्यधिकिच्च 'आलपने चे' ति आलपनत्थे पठमाबहुवचन-योविभत्तिं कत्वा, इध सिवचनाभावतो इमिना गसञ्ञमकत्वा, गस्साभावा 'सेसतो लोपं गसिपी' ति सिलोपाभावो व विसेसो । अय्यायो ति अय्यसद्दतो वुत्तनयेनाप्पच्चयादिं कत्वा, इध वुत्तप्पकाराभावा इमिना गसञ्ञमकत्वा, गस्साभावा आदेसाभावो व विसेसो । इमस्स पयोजनं दस्सेन्तेन 'घते चे' ति (११४) वुत्तं । घरादिये ति भगिनिं नामेनालपती ति (सुत्त) निपातट्ठकथायं वुत्तं[1] ।

एवं मूलसञ्ञं विधाय, इदानि अमूलसञ्ञं विधातुं—

५८. इवण्णुवण्णाज्झला[2] ति वुत्तं । वुत्तञ्च[3]—

"गसञ्ञा मूलसञ्ञा च झलघपा अमूलका" ति ।

---

१. ०वण्णा झला–से० । २. सेतुनो केतुनो–सी० २ ।

1. सु० नि० अ०, पि० ५६५ ।

2. तु०—"झलिवण्णुवण्णा"—सद्द०, सु० २०५ ।

3. सद्दसार०, का० ३२४ ।

अथ वा एवं स्यादीनं चुद्दसन्नं विभत्तिसञ्ञञ्च सिविभत्तिया विसेसभूतं गसञ्ञञ्च विधाय, इदानि लिङ्गन्तानं इवण्णुवण्णानं झलसञ्ञं विधातुं 'इवण्णुवण्णाज्झला' ति वुत्तं। इदं सुत्तं····निक्खन्तन्ति ? 'लिङ्गञ्च निपच्चते', 'सियो····स्मिंसू' (५५) त्यादि-सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति। किन्निक्खन्तन्ति ? 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ति सुत्तेन अत्थवतो सद्दस्स लिङ्गसञ्ञा परिभासा वुत्ता; 'सियो····स्मिंसू' ति सुत्तेन स्यादीनं विभत्तिसञ्ञा च वुत्ता; लिङ्गन्तभूतानं इवण्णुवण्णानं का सञ्ञा कातब्बा ति पुच्छाय सति, लिङ्गन्तभूतानं इवण्णुवण्णानं झलसञ्ञा कातब्बा ति दस्सेन्तेन 'इवण्णुवण्णाज्झला' ति वुत्तं। उपरि 'झलतो सस्स नो वा' (११७), 'झलानमियुवा सरे वा' (७०), 'अम्मो निग्गहीतं झलपेही' ति (८२) सुत्तेहि निक्खन्तं ति पि वत्तब्बं। किमत्थमिदमुच्चते ? इवण्णुवण्णा यथासंख्यं झलसञ्ञा होन्ती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। इवण्णुवण्णा ति एकं, झला ति एकन्ति द्विपदमिदं। इवण्णुवण्णा ति सञ्ञी, झला ति सञ्ञा, सञ्ञा····सञ्ञासुत्तं ति वेदितब्बं। सञ्ञासद्दस्स इहानु-वत्तनतो इवण्णुवण्णा यथाक्कमं झलसञ्ञा होन्ती ति अत्थो।

"यं चत्थतो चतो चेकसेसतो वापि सूयरे।
तस्स पच्चेकसम्बन्धो यथालाभं कदाचि पी" ॥ ति।

वुत्तत्ता एत्थ यथालाभनयवसेन इवण्णस्स झसञ्ञा, उवण्णस्स लसञ्ञा च दट्ठब्बा। इ एव वण्णो इवण्णो, तथा उवण्णो, इवण्णो च उवण्णो च इवण्णुवण्णा; झो च लो च झला।

इसिनो त्यादीन्युदाहरणानि। तत्थ इसिनो ति इसिसद्दतो 'जिनवचनयुत्तं हि' (५२), 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३) त्यधिकिच्च 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) विभत्त्युप्पत्तिं कत्वा, 'सियो····स्मिंसू' ति विभत्तिनियमं कत्वा, तस्सा पि अनियमप्पसङ्गे 'वत्तिच्छानुपुब्बिका सद्दप्पवत्ती' ति कत्वा, 'यस्य दातु····' ति (२७८) सम्पदानसञ्ञं कत्वा, 'सम्पदाने चतुत्थी' ति (२९५) चतुत्थिं कत्वा, तस्सा पि अनियमप्पसङ्गे सति 'वत्तिच्छा····' ति कत्वा, 'एकम्हि····बहुवचनं' ति एकवचन-सविभत्तिं कत्वा वा, 'यस्स वा····सामी' ति (२८५) सामिसञ्ञं कत्वा, 'सामिस्मिं छट्ठी' ति (३०३) एकवचनछट्ठीविभत्तिं कत्वा वा, इकारतो यकारं वियोजेत्वा, इकारस्स अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना झसञ्ञं कत्वा, 'झलतो सस्स नो वा' ति झकारतो सकारस्स नो-आदेसे कते रूपं। दण्डिनो ति दण्डीसद्दतो वुत्तनयेन सविभत्तिं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, ईकारस्स झसञ्ञं कत्वा, 'झलतो····' ति सकारस्स नो-आदेसं कत्वा, 'अघो····पि चा' ति (८४) अघत्ता ईकारस्स रस्सत्ते कते रूपं। अग्गिनो, गहपतिनो ति च तथा सस्स नो-आदेसे कते रूपानि। सेतुनो, भिक्खुनो ति च उकारस्स ल इति सञ्ञाकरणमेव विसेसो। सयम्भुनो, अभिभुनो त्यादिसु ऊकारस्स लसञ्ञाकरणञ्च, 'अघो····पि चा' ति अघत्ता ऊकारस्स रस्सकरणञ्च विसेसो।

५९. ते इत्थिख्या पो । २. १. ८ ।

ते इवण्णुवण्णा यदा इत्थिख्या तदा पसञ्ञा होन्ति । रत्तिया, इत्थिया, वधुया, धेनुया, देविया ।

इत्थिख्या ति किमत्थं ? इसिना, भिक्खुना । प इच्चनेन क्वत्थो ? 'पतो या' (११२) ।

'झल इच्चनेन क्वत्थो' ति विसयपुच्छा; 'झलतो सस्स नो वा' ति विसय-विसज्जना । झल इच्चनेना ति झल इति अनेन सञ्ञाकरणेन, क्वी ति कतरस्मिं सुत्तपदेसे को अत्थो ति वा छेदो । झलसञ्ञा पन लिङ्गन्ते लिङ्गमज्झे च निस्सिता, पसञ्ञा पन लिङ्गन्तमेव निस्सिता । वुतञ्च[1]—

"झलसञ्ञा पसञ्ञा च न लिङ्गन्तं व निस्सिता ।
आख्याते लिङ्गमज्झे च द्विलिङ्गन्ते च दस्सिता" ॥ ति ।

इसिनो दण्डिनो भिक्खुनो सयम्भुनो त्यादिसु लिङ्गन्ते, कुब्बन्तो त्यादिसु लिङ्ग-मज्झे कुब्बन्ती त्यादिसु आख्याते दिस्सति ।

एवं द्वीसु लिङ्गेसु इवण्णुवण्णानं झलसञ्ञं विधाय, इत्थिलिङ्गे तेसं पसञ्ञं विधातुं—

५९. ते इत्थिख्या पो[2] ति वुत्तं । इदं सुत्तं किम्पभवं····? 'इवण्णुवण्णाज्झला' ति सुत्तप्पभवं तन्निदानं···· । किन्निक्खन्तन्ति ? 'इवण्णुवण्णाज्झला' ति सुत्तेन द्वीसु लिङ्गेसु इवण्णुवण्णानं झलसञ्ञा वुत्ता; इत्थिलिङ्गे का सञ्ञा ति पुच्छाय सति, इत्थिलिङ्गे ते पसञ्ञा होन्तो ति दस्सेन्तेन 'ते इत्थिख्या पो' ति वुत्तं । उपरि 'पतो या' ति (११२) सुत्ततो वा निक्खन्तं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । किमत्थमिदमुच्चते ? ते इवण्णुवण्णा यदा इत्थिख्या तदा पसञ्ञा होन्ती ति ञापनत्थं । ते ति एकं, इत्थिख्या ति एकं, पो ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं । ते ति सञ्ञी; इत्थिख्या ति तब्बिसेसनं, पो ति सञ्ञा, सञ्ञा···सञ्ञासुत्तं ति वेदितब्बं । ते इवण्णुवण्णा यदा इत्थिख्या तदा पसञ्ञा होन्ती ति अत्थो । इत्थिया आख्या इत्थिख्या[3] । कस्मा सुत्ते "ते" ति सञ्ञिनो बहुवचने निद्दिट्ठे सति "पो" ति सञ्ञाय एकवचनं कतं ति चोदना; सञ्ञिनो बहुभावेन बहुवचनं कतं, सञ्ञाय एकत्थभावेन एकवचनं कतं ति परिहारो ।

रत्तिया त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ च रत्तिया, इत्थिया, देविया, धेनुया, वधुया ति लिङ्गन्तक्कमवसेन भवितब्बं—रत्तिया ति इकारन्तो, इत्थिया देविया ति ईकारन्तो,

---

1. रूप०, सु० २६ ।
2. तु०—"इत्थियन्ते पो"—सद्द०, सु०, २०६ ।
3. तु०—क० न्या०, पि० ८१ ।

६०. आ घो । २. १. ९ ।

आकारो यदा इत्थिख्यो[1] तदा घसञ्ञो होति । सब्बाय, कञ्ञाय, वीणाय, गङ्गाय, दिसाय, सालाय, मालाय, तुलाय, दोलाय, पभाय, सोताय, पञ्ञाय, करुणाय, नावाय, कपालाय ।

आ इति किमत्थं ? रत्तिया, इत्थिया, देविया, धेनुया । इत्थिख्यो[1] ति किमत्थं ? सत्थारा देसितो अयं धम्मो । घ इच्चनेन क्वत्थो ? 'घतो नादीनं' (१११) ।

धेनुया ति उकारन्तो, वधुया ति ऊकारन्तो । तेसु च रत्तिया ति रत्तिलिङ्गं ठपेत्वा ततो नादिपञ्चेकवचनविभत्तियो कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'आलपने सि गसञ्ञो' (५७), 'इवण्णुवण्णाज्झला' ति (५८) वत्तमाने इमिना इकारस्स पसञ्ञं कत्वा, 'आय····तु' (१०९), 'घतो नादीनं' (१११) त्यधिकिच्च 'पतो या' ति (११२) नादीनं पञ्चन्नं एकवचनानं यादेसे कते रूपं । इत्थिया, देविया ति ईकारन्तो । तत्थ 'अघो····चे'ति (८४) रस्सकरणमेव विसेसो । धेनुया ति उकारन्तो, उकारस्स पसञ्ञाकरणमेव विसेसो । वधुया ति ऊकारन्तो, ऊकारस्स 'अघो····चे' ति* रस्सकरणमेव विसेसो ।

इसिना, भिक्खुना त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तेसम्पन इसिभिक्खुसद्देहि नावचनं कत्वा, इत्थिख्यस्स इकारुकारस्साभावा इमिना पसञ्ञमकत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा ।

एवं लिङ्गन्तभूतानं इकारुकारानं द्वीसु लिङ्गेसु झलसञ्ञञ्च इत्थिलिङ्गे तेसं पसञ्ञञ्च विधाय, इदानि इत्थिवाचकस्स पच्चयस्सा पि घसञ्ञं विधातुं—

६०. आ घो[1] ति वुत्तं । इदं सुत्तं किम्पभवं····? 'इवण्णुवण्णाज्झला' (५८), 'ते इत्थिख्या पो' ति (५९) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं····। किन्निक्खन्तन्ति ? द्वीसु लिङ्गेसु इवण्णुवण्णानं झलसञ्ञा च, इत्थिलिङ्गे तेसं पसञ्ञा च वुत्ता; इत्थिवाचकस्साकारस्स का सञ्ञा कातब्बा ति पुच्छाय सति, इत्थिवाचकस्साकारस्स घसञ्ञा कातब्बा ति दस्सेन्तेन 'आ घो ति वुत्तं । उपरि 'घतो नादीनं' (१११), 'घते चा' ति (११४) सुत्ततो वा निक्खन्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? आकारो यदा इत्थिख्यो तदा घसञ्ञो होती ति ञापनत्थमिदमुच्चते । आ ति एकं, घो ति एकं ति द्विपदमिदं सुत्तं । आ ति सञ्ञी,

१. इत्थिख्या-से०, सी० १ ।

* चा-सी ।

1. तु०-"आकारो घो"—सद्द०, सु० २०७ ।

६१. सागमो से । २. १. १० ।

सकारागमो होति से-विभत्तिम्हि ! पुरिसस्स, अग्गिस्स, दण्डिस्स, इसिस्स, भिक्खुस्स, सयम्भुस्स, अभिभुस्स ।

से ति किमत्थं ? पुरिसस्मिं ।

घो ति सञ्ञा; सञ्ञाधिकारपरिभासाविधिसुत्तेसु सञ्ञासुत्तं ति वेदितब्बं। सञ्ञाग्गहणइत्थिख्याग्गहणानमनुवत्तनतो इत्थिख्यो आकारो घसञ्ञो होती ति अत्थो।

सद्धाय, कञ्ञाय, वीणाय, दिसाय, सालाय, मालाय, दोलाय, पभाय, सोताय, पञ्ञाय, करुणाय, नावाय, कपालाय त्यादीनि उदाहरणानि। तेसु सद्धाया ति सद्धलिङ्गतो 'इत्थियमतो आप्पच्चयो' ति (२३७) आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावं च कत्वा, 'तद्धित''''चे' ति (६०३) एत्थ चग्गहणेन नाममिव कत्वा, कत्वत्थकरणत्थसम्पदानत्थपञ्चम्यत्थसाम्यत्थसत्तम्यत्थेसु कत्तुसञ्ञादिकं कत्वा, तेसु अत्थेसु ततियादिएकवचनविभत्तिपञ्चकं कत्वा, आकारतो वियोजेत्वा, 'आलपने सि गसञ्ञो' (५७), 'ते''''पो' (५९) त्यधिकिच्च इमिना इत्थिवाचकस्साकारस्स घसञ्ञं कत्वा, 'आय''''तु' (१०९) त्यधिकिच्च 'घतो नादीनं' ति (१११) नादीनमेकवचनानं आयादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं। सेसं वुत्तनयमेव।

रत्तिया ति किमुदाहरणं, तं वुत्तनयमेव। सत्थारा ति सत्थुसद्दतो ततियेकवचनं कत्वा, उकारं वियोजेत्वा, 'सत्थुपिता''''चे' ति (१९९) वत्तमाने 'अञ्ञेस्वारत्तं' ति (२००) सत्थुसद्दन्तस्सारादेसं कत्वा, सति पि आकारे अनित्थिवाचकत्ता घसञ्ञमकत्वा, 'अञ्ञेस्वारत्तं', 'ततो स्मिमी' ति (२०६) वत्तमाने 'ना आ' ति (२०७) नावचनस्स आ-आदेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं।

एवं लिङ्गविभत्तिसञ्ञादिकं विधाय, इदानि आगमविधिसुत्तं विधातुं—

६१. सागमो से[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं''''? 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तप्पभवं तन्निदानं''''। किन्निक्खन्तन्ति ? 'ततो च विभत्तियो' तिमिना जिनवचनयुत्तलिङ्गतो विभत्तियो होन्ती ति वुत्तं; किं पुरिसस्स त्यादिसु सकारद्वयविभत्तिवसेन रूपसिद्धि होती ति पुच्छाय सति, सकारद्वयविभत्तिवसेन रूपसिद्धि न होति, सविभत्तिम्हि सकारागमवसेन रूपसिद्धि होती ति दस्सेन्तेन 'सागमो से' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? सविभत्तिम्हि सकारागमो होती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। सागमो ति एकं, से ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। सागमो ति विसयी, से ति निमित्तसत्तमी,

---

1. तु०–"पुं-नपुंसकेसु से सागमो"—त०, सु० २०८।

६२. संसास्वेकवचनेसु च । २. १. ११ ।

संसासु एकवचनेसु विभत्तादेसेसु सकारागमो होति । एतिस्सं, एतिस्सा; इमिस्सं, इमिस्सा; तिस्सं, तिस्सा; तस्सं, तस्सा; यस्सं, यस्सा; अमुस्सं, अमुस्सा ।

संसास्विति किमत्थं ? अग्गिना, पाणिना[१] । एकवचनेस्विति किमत्थं ? तासं, सब्बासं । विभत्तादेसेस्विति किमत्थं ? मनसा, वचसा, थामसा ।

सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । सविभत्तिम्हि सकारागमो होती ति अत्थो । आगच्छती ति आगमो, आगमनं वा आगमो; सकारो येव आगमो सागमो, सकारस्स वा आगमो सागमो[1] ।

पुरिसस्सा त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ च पुरिसस्सा ति पुरिससद्दतो वुत्तनयेनेव चतुत्थीएकवचनं वा छट्ठीएकवचनं वा सविभत्तिं कत्वा, इमिना सागमं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा । इतरानि तस्सदिसानेवे ति । पुरिसस्मिं ति किमुदाहरणं ? तम्पन पुरिससद्दतो 'जिनवचनयुत्तं हि' (५२), 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३) त्यधिकिच्च 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) विभत्त्युप्पत्तिं* कत्वा, तासं अनियमप्पसङ्गे, 'वत्तिच्छा····' ति कत्वा, 'योधारो तमोकासं' ति (२८०) ओकाससञ्ञं कत्वा, 'ओकासे सत्तमी' ति (३०४) सत्तम्येकवचने स्मिंविभत्तिं कत्वा, सति पि विभत्तिम्हि सविभत्याभावामिना** सकारागममकत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा ।

एवं येभुय्यवसेन द्वीसु लिङ्गेसु स-विभत्तिम्हि सकारागमं विधाय, इदानि इत्थिलिङ्गे विभत्तादेसभूतेसु संसास्वेकवचनेसु पि सकारागमं विधातुं—

६२. संसास्वेकवचनेसु चे[2] ति वुत्तं । इदं सुत्तं····? 'सागमो से' ति (६१) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति । किन्निक्खन्तन्ति ? 'सागमो से' तिमिना द्वीसु लिङ्गेसु स-विभत्तिम्हि सकारागमो वुत्तो; किं द्वीसु लिङ्गेसु सकारस्मि येव सकारागमो होती ति पुच्छाय सति, इत्थिलिङ्गे संसासु एकवचनेसु विभत्त्यादेसेसु*** पि सकारागमो होती ति दस्सेतुं, 'संसास्वेकवचनेसु चा' ति वुत्तं । किमत्थमिद-

---

१. पाणिना दण्डिना—सी० १ ।

* विभत्यु०—सी० (सब्बथ) । ** सविभत्या०—सी० (सब्बत्थ) । *** विभत्या०—सी०(सब्बत्थ) ।

1. तु०—क० न्या०, पि० ८३ ।

2. तु०—"संसास्वेकवचनेसु थियं"—सद्द०, सु० २०६ ।

मुच्चते? एकवचनभूतेसु संसादेसेसु पि सकारागमो होती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। संसासू ति एकं, एकवचनेसू ति एकं, चा ति एकं ति तिपदमिदं सुत्तं। संसासू ति निमित्तसत्तमीनिद्देसो, एकवचनेसू ति तब्बिसेसनं, चे ति अनुकड्ढनं, सञ्ञा····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। सग्गहणस्सानुवत्तनतो एकवचनेसु संसासु विभत्त्यादेसेसु परेसु सागमो होती ति अत्थो। सं च सा च संसा, तेसु संसासु। कस्मा पन पुरिमसुत्तेन एकयोगो न कतो ति? भिन्नविसयत्ता न कतो; पुरिमसुत्तं हि येभुय्यवसेन द्वीसु लिङ्गेसु विहितं, इदं पन इत्थिलिङ्गविसये व विहितं ति।

एतिस्सं त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ च एतिस्सं ति एतसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावं च कत्वा, 'तद्धित····चे' ति (६०३) एत्थ चसद्देन नाममिव कत्वा, वुत्तनयेन सत्तम्येकवचने स्मि-विभत्ति कत्वा, 'आलपने सि गसञ्ञो' (५७), 'ते इत्थिख्या पो' ति (५९) वत्तमाने, 'आ घो' ति (६०) इत्थिवाचकस्साकारस्स घसञ्ञं कत्वा, 'सब्बनामकारते पठमो' (१६४), 'सब्बतो को' (१७८) त्यधिकिच्च 'घपतो····' ति (१७९) स्मिवचनस्स सं-आदेसं कत्वा, 'सागमो से' (६१) त्यधिकिच्च इमिना सागमं कत्वा, इदमेवाधिकिच्च 'एतिमासमी' ति (६३) एतसद्दन्तस्सिकारे कते रूपं। एतिस्सा ति एतसद्दतो वुत्तनयेनाप्पच्चयादिं कत्वा, चतुत्थेकवचनं वा छट्ठेकवचनं वा सविभत्तिं कत्वा, वुत्तनयेन 'घपतो····संसा' ति सादेसादिम्हि कते रूपं। तथेव इमिस्सं त्यादि। तिस्सं, तिस्सा ति एत्थ 'तस्सा वा' ति (६४) आकारस्सिकारकरणमेव विसेसो। तस्सं, तस्सा, यस्सं, यस्सा ति एत्थ इदमेवाधिकिच्च 'घो रस्सं' ति (६६) आकारस्स रस्सकरणमेव विसेसो। अमुस्सं, अमुस्सा ति एत्थ 'आलपने सि गसञ्ञो', 'इवण्णुवण्णाज्झला' (५८) त्यधिकिच्च 'ते इत्थिख्या पो' ति पसञ्ञाकरणमेव विसेसो। अग्गिना, पाणिना त्यादीनि किमुदाहरणानि? तेसम्पन अग्गि, पाणि इच्चेतेहि 'जिनवचन····' (५२), 'लिङ्गञ्च····' (५३) त्यधिकिच्च 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) विभत्त्युप्पत्तिं कत्वा, 'सियो····स्मिसू' ति ति (५५) अनियमप्पसङ्गे, 'वत्तिच्छानुपुब्बिका सद्दप्पवत्ती' ति कत्वा, 'येन····करणं' ति (२८१) करणसञ्ञं कत्वा, 'करणे ततिया' ति (२८८) ततियेकवचनं नाविभत्तिं कत्वा, सति पि एकवचने संसानमभावा इमिना सागममकत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा। तासं, सब्बासं त्यादीनि किमुदाहरणानि? तत्थ तासं ति तसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, वुत्तनयेन नाममिव कत्वा, 'जिनवचन····' ति अधिकारं कत्वा, स्यादुप्पत्तिं कत्वा, तस्सापिनियमप्पसङ्गे वुत्तनयेन सामिसञ्ञं कत्वा, 'सामिस्मिं छट्ठी' ति (३०३) छट्ठीबहुवचनं कत्वा, 'सब्बनामकारते पठमो' त्यधिकिच्च 'सब्बतो नं संसानं' ति (१६८) नं-वचनस्स सं-आदेसं कत्वा, सति पि समादेसे एकवचनेस्वीति वुत्तत्ता इमिना सागममकत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। इतरं तंसदिसमेव; सब्बसद्दो येवेत्थ विसेसो। वचसा, मनसा, थामसा ति किमुदाहरणानि? तत्थ मनसा ति मनसद्दतो वुत्तनयेन ततियेकवचननाविभत्तिं कत्वा, 'मनो····मिआ'

६३. एतिमासमि[१] । २. १. १२ ।

एता-इमा इच्चेतेसमन्तो सरो इकारो होति संसासु एकवचनेसु विभत्तादेसेसु । एतिस्सं, एतिस्सा; इमिस्सं, इमिस्सा ।

संसास्विति किमत्थं ? एताय, इमाय । एकवचनेस्विति किमत्थं ? एतासं, इमासं ।

ति (१८१) नावचनस्साकारं कत्वा, तमेवाधिकिच्च 'स सरे वागमो' ति (१८४) सकारागमं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, सति पि सासद्दे विभत्तादेसस्साभावा इमिना सागमं अकत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा । इतरं वुत्तसदिसमेव ।

एवं इत्थिलिङ्गविसये संसास्वेकवचनेसु विभत्तादेसेसु सकारागमं विधाय, इदानि तस्मि येव विसये तेसु येव परेसु आदेसविधिं विधातुं—

६३. एतिमासमी[1] ति वुत्तं । इदं सुत्तं किम्पभवं····? 'घपतो स्मिसानं संसा' (१७९), 'संसास्वेकवचनेसु चे' ति (६२) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं···· । किन्निक्खन्तन्ति ? एतिस्सं, एतिस्सा, इमिस्सं, इमिस्सा त्यादिसु 'घपतो····' ति इमिना सब्बनामतो घपसञ्ञातो स्मिसानं संसादेसो च, 'संसास्वेक····' ति इमिना सकारागमो च वुत्तो; किं एतासं, एतस्सा, इमासं त्यादिरूपसम्भवो येव होति, न एतिस्सं त्यादिरूपसम्भवो ति पुच्छाय सति, संसासु एकवचनेसु परेसु एता-इमा इच्चेतेसमन्तस्स इकारादेसं कत्वा एतिस्सं, एतिस्सा त्यादीनि रूपानि पि होन्ती ति दस्सेन्तेन 'एतिमासमी' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? एता, इमा इच्चेतेसमन्तो इकारो होति संसासु एकवचनेसु विभत्तादेसेसू ति ञापनत्थं । एतिमासं ति एकं, इ इ ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं । एतिमासं ति अन्तापेक्खाछट्ठीकारी, इ इति कारियं, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । संसास्वेकवचनानुवत्तनतो एता-इमा इच्चेतेसमन्तो संसास्वेकवचनेसु विभत्तादेसेसु इकारादेसो होती ति अत्थो । एता च इमा च एतिमा, तासं एतिमासं । सुत्तागतानं एतिमासद्दानं एतिमासद्दस्सानुकरणत्ता सब्बनामानुकरणस्स च सुद्धनामसभावतो सुद्धनामे आदेसवसेन एतिमानं ति वत्तब्बं, अथ कस्मा एतिमासं ति वुत्तं ? सब्बनामानुकरणस्स च सब्बनामिकविधानेन पि भवितब्बत्ता एतिमासं ति सब्बनामिकविधानेन वुत्तं[2] ।

एतिस्सं त्यादीनि उदाहरणानि; तानि वुत्तनयानेव । एताय, इमाया ति किमुदाहरणानि ? तेसम्पन एत-इम-सद्देहि 'इत्थियमतो आप्पच्चयो' ति (२३७)

---

१. ०मासं इ—से० ।

1. तु०—''एतिमादीनमि''—सद्द०, सु० २१० ।

2. तु०—क० न्या०, पि० ८७ ।

६४. तस्सा वा । २. १. १३ ।

तस्सा इत्थियं वत्तमानाय आकारस्स[1] इकारो होति वा संसासु एकवचनेसु विभत्तादेसेसु । तिस्सं, तिस्सा; तस्सं, तस्सा ।

आप्पच्चयं कत्वा, सद्धाया त्यादिसु वुत्तनयेन रूपसिद्धि वेदितब्बा । एतासं, इमासं त्यादीनि पि किमुदाहरणानि ? तानि पि सुविञ्ञेय्यानेव ।

एवं सब्बनामभूतानं एता-इमासद्दानं अवयवभूतस्साकारस्सिकारादेसं विधाय, इदानि सब्बनामतकारावयवभूतस्साकारस्सिकारादेसं विधातुं—

६४. तस्सा वा[1] ति वुत्तं । इदं सुत्तं…? 'एतिमासमी' ति (६३) सुत्तप्पभवं तन्निदानं… । किन्निक्खन्तन्ति ? एतिस्सं, एतिस्सा, इमिस्सं, इमिस्सा त्यादिसु उदाहरणेसु संसासु एकवचनेसु विभत्तादेसेसु एता-इमा इच्चेतेसं अवयवभूतस्साकारस्सिकारादेसो वुत्तो; किं तेसं अवयवभूतस्साकारस्सेव इकारादेसो होती ति पुच्छाय सति, संसासु एकवचनेसु विभत्तादेसेसु सब्बनामतकारावयवभूतस्साकारस्सा पि इकारादेसो होती ति दस्सेन्तेन, 'तस्सा वा' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? तस्सा इत्थियं वत्तमानस्साकारस्स इकारो वा होति संसासु एकवचनेसु विभत्तादेसेसू ति ञापनत्थं । तस्सा ति एकं, वा ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं । तस्सा ति अन्तापेक्खाछट्ठी, वा ति विकप्पनत्थं, सञ्ञा…पे०…विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । संसास्वेकवचनग्गहणानमिकारग्गहणस्स चानुवत्तनतो तासद्दन्तस्सिकारो होति संसास्वेकवचनेसु विभत्तादेसेसु विकप्पेना ति अत्थो । कस्मा पनेत्थ वासद्दो वुत्तो, तस्सा ति एत्तकमेव वत्तब्बन्ति ? विकप्पनत्थमिह वासद्दो वुत्तो ।

तिस्सं, तिस्सा त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ च तिस्सं ति तसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, वुत्तनयेन विभत्तुप्पत्तिं कत्वा, संसादेसादिम्हि कते रूपं । तस्सं, तस्सा ति वागहणफलं । तत्थ वासद्देन निवारेत्वा, 'घो रस्सं' ति (६६) रस्सकरणमेव विसेसो ।

एवं 'एतिमासमी' ति, 'तस्सा वा' ति सुत्तेहि संसास्वेकवचनेसु विभत्तादेसेसु एता-इमा-तासद्दन्ताकारस्सिकारं विधाय, इदानि एता-इमा-ता-सद्दतो सस्स विभत्तिस्स स्सायादेसं विधातुं—

---

१. अकारस्स–से० ।

1. तु०—"ताय वा"—सद्द०, सु० २११ ।

६५. ततो सस्स स्साय। २. १. १४।

ततो ता-एता-इमातो सस्स विभत्तिस्स स्सायादेसो होति वा, अन्तो[१] च सरो इकारो होति[१]। तिस्साय, तिस्सा; एतिस्साय, एतिस्सा; इमिस्साय, इमिस्सा।

---

६५. ततो सस्स स्साया[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं....? 'घपतो स्मिसानं संसा' ति सुत्तप्पभवं तन्निदानं....। किन्निक्खन्तन्ति? 'घपतो....संसा' ति सुत्तेन सब्बनामतो घपसञ्ञातो स्मिसानं संसादेसो वुत्तो; किं तासु विभत्तिसु ततो ता-एता-इमातो सब्बनाम-घ-पसञ्ञातो संसादेसा येव होन्ती ति पुच्छाय सति, ततो ता-एता-इमातो सब्बनाम-घ-पसञ्ञातो सस्स स्सायादेसो पि होती ति दस्सेन्तेन 'ततो सस्स स्साया' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? हेट्ठावुत्ततो ता-एता-इमातो सस्स विभत्तिस्स स्सायादेसो होति वा ति ञापनत्थं। ततो ति एकं, सस्से ति एकं, स्साया ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। ततो ति अवधि, स्सा ति कारी, स्साया ति कारियं, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। एतिमासग्गहणस्स च, अनन्तरसुत्ततो तग्गहण-वाग्गहणानं चानुवत्तनतो ततो ता-एता-इमातो सस्स विभत्तिस्स स्सायादेसो होति विकप्पेना ति अत्थो। वुत्तियम्पन ता-एता-इमातो ति पच्चासत्तिन्यायेन वुत्तं[2]।

तिस्साया त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ च तिस्साया ति तसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, वुत्तनयेन चतुत्थेकवचनं वा छट्ठेकवचनं वा सविभत्ति कत्वा, 'आलपने सि गसञ्ञो' (५७), 'ते इत्थिख्या पो' ति वत्तमाने 'आ घो' ति (६०) आकारस्स घसञ्ञं कत्वा, वुत्तनयेन 'सब्बनाम....' (१६४), 'सब्बतो को' (१७८) त्यधिकिच्च 'घपतो....' ति (१७९) सविभत्तिस्स सादेसे सम्पत्ते, तदपवादा 'एतिमासमि'* (६३), 'तस्स वा' (६४) त्यधिकिच्च इमिना स्सायादेसं कत्वा, 'एतिमासमी' ति इमिना स्सायादेसस्स सादेसगतिकत्ता 'संसास्वेकवचनेसु चा' ति (६२) सकारागमञ्च कत्वा, आकारस्सिकारं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। वुत्तञ्च रूपसिद्धियं—"सादेसगतिकत्ता स्सायादेसे पी" ति[3]। इतरानि द्वे तस्सदिसानेव। वाग्गहणफलानि हेट्ठा वुत्तानेवेति।

१–१. नत्थि सी० पोत्थके।

* एतिमासमी—सी० (सब्बत्थ)।

1. तु०—"तेतिमातो सस्स साय"—सद्द०, सु० २१२।

2. क० वु०, सु० ६५।

3. रूप०, सु० २१७।

६६. घो रस्सं । २. १. १५ ।

घो रस्समापज्जते संसासु एकवचनेसु विभत्तादेसेसु । तस्सं, तस्सा; यस्सं, यस्सा; सब्बस्सं, सब्बस्सा ।

संसास्विति किमत्थं ? ताय, सब्बाय । एकवचनेस्विति किमत्थं ? तासं, सब्बासं ।

एवं 'एतिमासमि', 'तस्सा वा' ति सुत्तेहि संसासु एकवचनेसु विभत्तादेसेसु ता-एता-इमा इच्चेतेसं सब्बनामानं अवयवभूतस्साकारस्सिकारं विधाय, इदानि तस्साकारस्स रस्सत्तं विधातुं—

६६. घो रस्सं[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं····? 'एतिमासमि' (६३), 'तस्सा वा' ति (६४) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं····। किन्निक्खन्तन्ति ? 'एतिमासमि', 'तस्सा वा' ति सुत्तेहि आकारस्सिकारो वुत्तो; किं आकारस्सिकारेनेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, आकारस्सिकारेनेव न भवितब्बं, आकारस्स रस्सत्तञ्च होती ति दस्सेन्तेन 'घो रस्सं' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? घो रस्समापज्जते संसासु एकवचनेसु विभत्तादेसेसू ति ञापनत्थं। घो ति एकं, रस्सन्ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं। घो ति कारी, रस्सन्ति कारियं, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। संसास्वेकवचनग्गहणस्सानुवत्तनतो घो रस्समापज्जते संसास्वेकवचनेसु विभत्तादेसेसू ति अत्थो। इमस्स हि 'एतिमासमि', 'तस्सा वा' ति सुत्तानं विकप्पनत्थं वुत्तत्ता वासद्दो निवत्तते।

तस्सं, तस्सा, यस्सं, यस्सा, सब्बस्सं, सब्बस्सा त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ च तस्सं ति तसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, वुत्तनयेन स्मिवचनं कत्वा, तस्स सं-आदेसं च सागमं च कत्वा, इमिना घस्स रस्सत्ते कते रूपं। सेसं वुत्तनयमेव। ताय, सब्बाया ति किमुदाहरणानि ? तत्थ तसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, आकारस्स घसञ्ञं कत्वा, 'घतो नादीनं' ति (१११) आयादेसं कत्वा, संसादेसस्साभावा इमिना रस्सत्तमकत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं। सब्बाया ति च तथा। तासं, सब्बासं ति एत्थ च तसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, चतुत्थीबहुवचनं वा छट्ठी बहुवचनं वा कत्वा, 'सब्बतो नं संसानं' ति (१६८) नंवचनस्स समादेसं कत्वा, एकवचनसमादेसस्साभावा इमिना रस्सत्तमकत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं तीसु लिङ्गेसु यथालाभवसेन आगमादेसविधिं विधाय, इदानि द्वादिसंख्यासद्दतो पि नम्हि विभत्तिम्हि नकारागमं विधातुं—

---

1. तु०—"रस्सत्तं घो"—सद्द०, सु० २१३; "सर्वनाम्नस्तु ससवो ह्रस्वपूर्वाश्च"—का० २.१.४३; "सर्वनाम्नः स्याड्ढ्रस्वश्च"—पा० ७.३.११४ ।

६७. नो च द्वादितो नम्हि । २. १. १६ ।

द्वि इच्चेवमादितो सङ्ख्यातो नकारागमो होति नम्हि विभत्तिम्हि । द्विन्नं, तिन्नं, चतुन्नं, पञ्चन्नं, छन्नं, सत्तन्नं, अट्ठन्नं, नवन्नं, दसन्नं ।

द्वादितो ति किमत्थं ? सहस्सानं । नम्ही ति किमत्थं ? द्वीसु, तीसु ।

चसद्दग्गहणेन स्सं चागमो होति । चतस्सन्नं इत्थीनं, तिस्सन्नं वेदनानं ।

---

६७. नो च द्वादितो नम्ही[1] ति वुत्तं । इदंसुत्तं....? 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तप्पभवं तन्निदानं....। किन्निक्खन्तन्ति ? द्विन्नं त्यादिसु 'ततो च विभत्तियो' ति विभत्त्युप्पत्ति वुत्ता; किं तत्थ संयोगनकारद्वयविभत्तिवसेन द्विन्नं ति रूपसिद्धि होती ति पुच्छाय सति, संयोगनकारद्वयविभत्तिवसेन रूपसिद्धि न होति, नम्हि नकारागमवसेन होती ति दस्सेन्तेन, 'नो च द्वादितो नम्ही' ति वुत्तं । अथ वा दिन्नं त्यादिसु द्विसद्दतो नम्हि कते द्वीनं ति नम्हि द्विसद्दन्तस्स दीघं कत्वा रूपं भवेय्य न द्विन्नं ति पुच्छाय सति, एत्थ नम्हि नकारागमवसेन रूपं भवती ति दस्सेतुं, 'नो च द्वादितो नम्ही' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? द्वि इच्चेवमादितो सङ्ख्यातो नकारागमो होति नम्हि विभत्तिम्ही ति ञापनत्थमिदमुच्चते । चतुप्पदमिदं सुत्तं । नो ति विसयी, चा ति समुच्चयो, द्वादितो ति अवधि, नम्ही ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । 'सागमो से' ति (६१) इतो मण्डूकगतिकवसेन आगमग्गहणमिहानुवत्तते । तेन नकारागमो होति नम्हि विभत्तिम्ही ति अत्थो । द्वि आदि येसं ते द्वादयो (अट्ठारसन्ता सङ्ख्या सद्दा) ।

द्विन्नं त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ च द्विन्नं ति द्विसद्दतो वुत्तनयेन चतुत्थी-छट्ठीबहुवचन-नं-विभत्तिं कत्वा, 'सागमो से' त्यधिकिच्च इमिना नकारागमं कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं । इतरानि वुत्तसदिसानि । पञ्चन्नं त्यादिसु 'सुनंहिसु चा' ति (८९) दीघे सम्पत्ते तमेवाधिकिच्च 'पञ्चादीनमत्तं' ति (९०) अकारकरणमेव विसेसो । सहस्सानं ति किमुदाहरणं ? तम्पन सहस्ससद्दतो वुत्तनयेन नं-विभत्तिं कत्वा, सति पि नम्हि विभत्तिम्हि द्वादीनमभावा इमिना नकारागममकत्वा, 'सुनंहिसु चे' ति दीघे कते रूपं । द्वीसु, तीसू ति पि किमुदाहरणानि ? तेसम्पन द्वि-ति-सद्देहि वुत्तनयेन सुविभत्तिं कत्वा, सति पि द्वादिसद्दे नं-विभत्तिया अभावा इमिना नकारागममकत्वा, वुत्तनयेन दीघे कते रूपं। चतस्सन्नं ति चग्गहणफलं । तम्पन चतुसद्दतो वुत्तनयेन चतुत्थीछट्ठीबहुवचन-नं-विभत्तिं कत्वा, इध चग्गहणेन सकारद्वयस्स[2] च नकारस्स चागमं कत्वा, 'क्वचादि....

---

1. तु०--"द्वादितो दसन्ता नागमो नम्हि"—सद्द०, सु० २१४; "आमि च नुः"—का० २. १. ७२, "त्रेस्त्रयश्च"—का०२. १. ७३, "चतुरः"—का० २.१.७४; "संख्यायाः ष्णान्तायाः"—का० २. १. ७५; "ह्रस्व नद्यापो नुट्"—पा० ७. १. ५४; "षट्-चतुर्भ्यश्च"—पा० ७. १. ५५ ।
2. तु०—"तिचतुतो थियं इस्समस्सं"—सद्द०, सु० २१५ ।

६८. अमा पतो स्मिस्मानं वा । २. १. १७ ।

प इच्चेतस्मा स्मि-स्मा इच्चेतेसं अं-आ-आदेसा होन्ति वा यथासङ्ख्यं । मत्यं, मतियं, मत्या, मतिया; रत्यं, रतियं, रत्या, रतिया; निकत्यं, निकतियं, निकत्या, निकतिया; विकत्यं, विकतियं, विकत्या, विकतिया; विरत्यं, विरतियं, विरत्या, विरतिया; पुथव्यं[1], पुथवियं, पुथव्या[2], पुथविया; पवत्यं, पवत्तियं[3], पवत्या, पवत्तिया[4] ।

पच्चयेसु चा' ति (४०५) वत्तमाने, 'तेसु वुद्धि···आदेसा चे' ति (४०६) चतुसद्दन्तस्सुकारस्स अकारं कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं । एत्थ च सकारद्वयागमो ससरो, नकारागमो निस्सरो । इतरं तस्सदिसमेव; अकारकरणमेव विसेसो ।

एवं नम्हि नकारागमं विधाय, इदानि पतो स्मिस्मानं आदेसं विधातुं—

६८. अमा पतो स्मिस्मानं वा[1] ति वुत्तं । इदं सुत्तं···? 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तप्पभवं तन्निदानं···किन्निक्खन्तन्ति ? 'ततो च विभत्तियो' ति इमिना जिनवचनयुत्ततो मतित्यादि-इवण्णन्तलिङ्गतो स्मा-स्मि-विभत्तियो वुत्ता; एवं सति किं तत्थ मतिस्मा, मतिस्मि ति रूपं होती ति पुच्छाय सति, मतित्यादि-इवण्णन्तलिङ्गतो पसञ्ञातो विभासा स्मि-स्मानं अं-आ आदेसा होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'अमा पतो स्मिस्मानं वा ति' वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? प इच्चेतस्मा स्मि-स्मानं यथासङ्ख्यं अं-आ आदेसा होन्ति वा ति । चतुप्पदमिदं सुत्तं । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । अं च आ च अंआ; स्मि च स्मा च, तथा, तेसं स्मि-स्मानं; यथानुक्कमेन 'स्मास्मिन्नं' ति अवत्वा एवं वचनं विध्यन्तरत्थं । वुत्तञ्च—

"'अमा पतो' ति सुत्तन्ते अवत्वान स्मास्मिनन्ति ।
पटिलोमेन वचनं विध्यन्तरविजाननं ॥
स्मिनुवत्तनं हेट्ठा उत्तरस्स विधन्तरं ।
पकतेसाचरियानं आकारपरिदीपनं" ॥ ति ।

मत्यं त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ च मत्यं ति मतिसद्दतो वुत्तनयेन सत्तम्येकवचन-स्मि-वचने कते 'आलपने सि···' (५७), 'इवण्णुवण्णाज्झला' (५८) त्यधिकिच्च 'ते इत्थिख्या पो' ति (५९) इत्थिवाचकस्स इकारस्स पसञ्ञं कत्वा, इमिना स्मिनो अं-आदेसं कत्वा, 'झलानमियुवा···' (७०), 'यवमदन···' (३५) त्यधिकिच्च 'पसञ्ञस्स चा' ति (७२) इकारस्स यकारं कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं । मत्या ति मतिसद्दतो वुत्तनयेन विभत्त्युप्पत्तिं कत्वा, अनियमप्पसङ्गे 'वत्तिच्छा···' ति कत्वा, 'यस्मादपेति···' ति

---

१. पुथव्य–से० । २. पुथव्या–से० । ३. पवतियं–सी०१, सी०२ । ४. पवतिया–सी०१, सी०२ ।

1. तु०–"पतो स्मिस्मानं अमा वा"–सद्द०, सु० २१६; ना सस्मिनमा"–त०, सु० २१७ ।

६९. आदितो ओ च । २. १. १८ ।

आदि इच्चेतस्मा स्मिवचनस्स अं-ओ च[१] आदेसा होन्ति वा । आदिं, आदो ।

वा ति किमत्थं ? आदिस्मि, आदिम्हि नाथं नमस्सित्वा ।

चसद्दग्गहणेन अञ्ञस्मा पि स्मिवचनस्स आ-ओ-अं-आदेसा होन्ति वा । दिवा च रत्तो च हरन्ति ये बलिं, बाराणसिं अहु राजा ।

(२७३) अपादानसञ्ञं कत्वा, 'अपादाने पञ्चमी' ति (२९७) पञ्चम्येकवचन-स्मा-विभत्तिं कत्वा, इमिना तस्साकारं कत्वा, वुत्तनयेन इकारस्स यकारं कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं। इतरानि वाग्गहणफलानि । तेसम्पन वुत्तनयेन स्मि-स्माविभत्तियो कत्वा, इमिना वुत्त-विधाने सम्पत्ते वाग्गहणेनाकत्वा, स्मिवचनस्स 'घपतो स्मि यं वा' ति (२१६) यमा-देसं कत्वा, 'आयचतुत्थेक....' (१०९), 'घतो नादीनं' (१११) त्यधिकिच्च 'पतो या' ति (११२) यादेसं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा । निकत्यं ति निकतिसद्दतो वुत्तनयेन स्मि-विभत्तिम्हि कते, वुत्तनयेन पसञ्ञादिम्हि कते रूपं । निकतियं ति वुत्तनयमेव । विकत्यं ति उपसग्गमत्तमेव विसेसो । विरत्यं ति वुत्तनयमेव । इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव । पुथव्य ति पुथवसद्दतो 'इत्थिय....' (२३७), 'नदादितो वा ई' ति (२३८) वत्तमाने 'णवणिक....'ति (२३९) ईप्पच्चयं कत्वा, 'सरलोपे....पकती' ति (८३) पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, परसरस्स पकतिभावञ्च कत्वा, 'तद्धितसमास....' ति (६०३) एत्थ चसद्देन नाममिव कत्वा, वुत्तनयेन स्मि-स्माविभत्तियो कत्वा, पसञ्ञञ्च कत्वा, इमिना अमादेसञ्च कत्वा, इवणस्स यकारञ्च कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं । पुथवियं, पुथविया ति चादीनि वाग्ग-हणफलानि । तेसम्पन पुथवीसद्दतो स्मि-स्माविभत्तियो कत्वा, वाग्गहणेन अं-आ आदेसं निवारेत्वा, 'घपतो स्मि यं' वा ति (२१६) यमादेसं कत्वा, इतरस्मि 'पतो या' ति (११२) यादेसे कते रूपं । पवत्यं, पवतियं, पवत्या, पवतिया त्यादीनि हेट्ठावुत्तसदिसानेवा ति ।

एवं पतो व स्मि-स्मानं अं-आ-आदेसं विधाय, इदानि आदिसद्दतो स्मि-वचनस्स अं-ओ आदेसं विधातुं—

६९. आदितो ओ चे[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं....? 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तप्पभवं तन्निदानं....। किन्निक्खन्तन्ति ? आदिं, आदो त्यादिसु 'ततो च विभत्तियो' त्यादिना स्मिविभत्ति वुत्ता; एवं सति किं आदिस्मि ति रूपमेव भवेय्या ति पुच्छाय सति, आदिस्मि ति रूपमेव न भवेय्य, आदिसद्दतो स्मिवचनस्स अं-ओ-आदेसं कत्वा आदिं, आदो ति रूपम्पि होती ति दस्सेन्तेन, 'आदितो ओ चे' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? आदि इच्चेतस्मा स्मि-वचनस्स अं-ओ-आदेसा होन्ति विकप्पेना ति ञापनत्थं । आदितो

१. नत्थि से०, सी०१ पोत्थकेसु ।

1. तु०—"आदितो अं ओ—सद्द०, सु० २१८ ।

७०. झलानमियुवा सरे वा । २. १. १९ ।

झल इच्चेतेसं इय-उव इच्चेते आदेसा होन्ति वा सरे परे यथासङ्ख्यं[१]। तयन्तं, पच्छियागारे, अग्गियागारे, भिक्खुवासने निसीदति, पुथुवासने।

सरे ति किमत्थं? तिमलं, तिफलं, तिकचतुक्कं, तिदण्डं, तिलोकं, तिनयनं, तिपासं, तिहंसं[२], तिभवं[३], तिबन्धनं[४], तिवेदनं, तिपिटकं, तिवेदं, चतुद्दिसं, पुथुभूतं। वा ति किमत्थं? पञ्चहङ्गेहि समन्नागतो[५], तीहाकारेहि चक्खायतनं।

वा ति विकप्पनत्थं—इकारस्स अयादेसो होति। वत्थुत्तयं।

ति एकं, ओ ति एकं, चा ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। आदितो ति अवधि, ओ ति कारियं, चा ति समुच्चयं, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति* वेदितब्बं**। अनन्तरसुत्ततो स्मिगहणस्स च अं-गहण-वागहणानञ्चानुवत्तनतो आदि इच्चेतस्मा स्मि-वचनस्स अं-ओ-आदेसा होन्ति विकप्पेना ति अत्थो।

आदिं त्यादीन्युदाहरणानि। तेसम्पन आदिसद्दतो स्मि-विभत्तिं कत्वा, अनन्तर-सुत्तमधिकिच्च इमिना अं-ओ-आदेसे कत्वा, अमादेसस्मिं परे 'सरा सरे लोपं' (१२) त्यधिकिच्च 'वा परो असरूपा' ति (१३) पुरसरस्स लोपे सम्पत्ते तं बाधेत्वा, 'सरलोपो....पकती' ति (८३) पुब्बसरस्स लोपे सम्पत्ते 'अम्मो निग्गहीतं....' ति (८२) झतो परस्स अमादेसस्स निग्गहीतं कत्वा, इतरत्र 'सरलोपो....पकती' ति पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, परसरस्स पकतिभावादिम्हि कते रूपानि। आदिस्मिं, आदिम्हो त्यादीनि वागहणफलानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव। दिवा च रत्तो च बाराणसिं त्यादीनि चग्गहणफलानि। तत्थ दिवा-रत्ति-बाराणसी इच्चेतेहि पाटिपदिकेहि वुत्तनयेन स्मि-वचनं कत्वा, इध चग्गहणेन पटिपाटिया तस्स आ-ओ-अं-आदेसं कत्वा[1], पुब्बरूपद्वये, वुत्तनयेन पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, परसरस्स पकतिभावञ्च कत्वा, इतरस्मिं च वुत्तनयेन निग्गहीतं कत्वा, 'अघो रस्स....'ति (३४) पुब्बसरस्स रस्सं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा।

एवं स्मि-स्मानं बाहिरङ्गविधिं विधाय, इदानि झलानं अन्तरङ्गविधिं विधातुं—

७०. झलानमियुवा सरे वा[2] ति वुत्तं। इदं सुत्तं....? 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'इवण्णुवण्णाज्झला' ति (५८) सुत्तप्पभवं तन्निदानं....। किन्निक्खन्तन्ति? 'लिङ्गञ्च

*—** सी० पोत्थके नत्थि।

१. नत्थि से० पोत्थके। २. तिभासं-सी० २। ३. तिभरं-से०। ४. तिबन्धं-सी० १।
५. नत्थि से० पोत्थके।

1. तु०—"अञ्ञस्मा च"—सद्द०, सु० २१९।
2. तु०—"सरे झलानमियुवा"—त०, सु० २२०; "अचि श्नुधातुभ्रुवां य्वोरियङुवङौ"—पा० ६. ४. ७७।

निपच्चते' तिमिना तियन्तं, भिक्खुवासने त्यादिकं पदं ति-अन्तं, भिक्खु-आसने त्यादि लिङ्गे ठपिते ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इकारुकारानं 'इवण्णुवण्णाज्झला' ति च झलसञ्ञाय कताय किं कत्वा तियन्तं त्यादि रूपं सिज्झती ति पुच्छाय सति, झलानं सरे परे इयुवादेसा कत्वा सिज्झती ति दस्सेन्तेन, 'झलान···वा' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? झल इच्चेतेसं इय-उव इच्चेते आदेसा होन्ति सरे परे विकप्पेना ति ञापनत्थं। झलानं ति एकं, इयुवा ति एकं, सरे ति एकं, वा ति एकन्ति चतुप्पदमिदं सुत्तं। झलानं ति सम्बन्धछट्ठीकारी, इयुवा ति कारियं, सरे ति निमित्तसत्तमी, वा ति समुच्चयनिद्देसो, सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। अत्थो सुविञ्ञेय्यो व। झो च लो च झला, इयो च उवो च इयुवा। कस्मा पनेत्थ वासद्दो कतो, ननु च हेट्ठा वासद्दो अधिकतो*ति? सच्चं; तथा पि अनुवत्तमान-वा-सद्दस्स विभासत्थत्ता अत्थन्तरविञ्ञापनत्थमिह वासद्दो कतो ति[1]।

तियन्तं त्यादीन्युदाहरणानि। तेसम्पन ति-अन्तं, पच्छि-अगारे, अग्गि-अगारे, भिक्खु-आसने, पुथु-आसने ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, पुब्बेसं तिण्णमिकारानं 'आलपने सि···' (५७) त्यधिकिच्च 'इवण्णु···' (५८) ति झसञ्ञं कत्वा, इतरेसमुकारस्स लसञ्ञं कत्वा, 'अमा पतो···' (६८) त्यधिकिच्च इमिना झलानं पटिपाटिया इयुवादेसे कत्वा, नेतब्बे नीते रूपानि। तिमलं त्यादीनि किमुदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव। अधिकतवागहणफलं दस्सेन्तो "पञ्चहङ्गेहि" त्यादिमाह[2]। तत्थ च पञ्चहि-अङ्गेहि, तीहि-आकारेहि, चक्खु-आयतनं ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, वुत्तनयेन झलसञ्ञं कत्वा, इमिना आदेसे सम्पत्ते वागहणेनाकत्वा, 'वा परो···' (१३) ति लोपे सम्पत्ते तत्थ वागहणेनाकत्वा, 'इवण्णो यन्नवा' (२१), 'वमोदुदन्तानं' ति (१८) यकारवकारे सम्पत्ते तत्थ नवा-क्वचि-ग्गहणेहि अकत्वा, 'सरा···' ति (१२) पुब्बसरानं लोपं कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं। इदानि सुत्ते वागहण-फलं दस्सेन्तेन "वत्थुत्तयं"[2]ति वुत्तं। तस्स पन तिण्णं समूहो ति अत्थे 'समूहत्थे कण्णा चे' ति (३५६) णप्पच्चयं कत्वा, 'तेसं णो लोपं' ति (३९८) णलोपं कत्वा, णप्पच्चयस्स अवयवभूतअकारस्मिं वुत्तनयेन इकारस्स इध वागहणेन अयादेसं कत्वा[3], तद्धितत्ता नाममिव कत्वा, विभत्त्युप्पत्तिञ्च कत्वा, 'योनन्नि नपुंसकेहि' (२१७), 'अतो निच्चं' (२१८) त्यधिकिच्च 'सिं' ति (२१९) अमादेसं कत्वा, सरलोपपकति-भावञ्च कत्वा, वत्थूनं तयं ति समासे कते रूपं।

* अधिगतो—कत्थचि।

1. तु०—क० न्या०, पि० ९२।
2. तु०—क० वु; क० न्या०, पि० ९२-९३।
3. तु०—"इकारस्स अयो णानुबन्धे"—सद्द०, सु० २२१।

७१. यवकारा । २. १. २० ।

झलानं यकारवकारादेसा होन्ति वा[१] सरे परे यथासङ्ख्यं[२]। अग्यागारे, चक्ख्वायतनं[३], स्वागतं ते महावीर ।

चसद्दग्गहणं सम्पिण्डनत्थं ।

एवं लिङ्गन्तभूतानं झलानं एकेककारिनो द्वयकारियं विधाय, एकेककारिनो एकेककारियं विधातुं—

७१. यवकारा चे[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं····? 'झलानमियुवा सरे वा' ति (७०) सुत्तप्पभवं तन्निदानं···। किन्निक्खन्तन्ति ? 'झलानमियुवा सरे वा' 'तिमिना लिङ्गन्तभूतानं झलानं इयुवादेसा वुत्ता; किं तेसं लिङ्गन्तभूतानं झलानं इयुवादेसा येव होन्ती ति पुच्छाय सति, तेसं इयुवादेसा येव न होन्ति, यकारवकारादेसा पि होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'यवकारा चे' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? झलानं यवादेसा होन्ति सरे ति ञापनत्थमिदमुच्चते। यवकारा ति एकं, चा ति एकन्ति द्विपदमिदं। यवकारा ति कारियं, चा ति सम्पिण्डनं। झलानं यवकारादेसा पि होन्ति सरे ति अत्थो। यकारो च वकारो च यवकारा, 'तेसु वुद्धी····' (४०६) त्यादिना पुब्बस्स कारसद्दस्स लोपो, चकारो निपातो। कस्मा इहेदं वुत्तं, ननु च 'इवण्णो यन्नवा' (२१), 'वमोदुदन्तानं' (१८) त्यादीहि सिज्झती ति ? सिज्झति; तथा पि नामवसेन पि विधातुमिहेतं वुत्तं[2]।

अग्यागारं त्यादीनि उदाहरणानि। तेसम्पन अग्गि-अगारं, चक्खु-आयतनं, सु-आगतं ति छेदं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'आलपने सि····' (५७) त्यधिकिच्च 'इवण्णु····' ति झलसञ्ञं कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना यकारवकारादेसं कत्वा, पुब्बपक्खे 'ब्यञ्जनो च विसञ्ञोगो' ति (४१) एत्थ चग्गहणेन सञ्ञोगादिस्स गकारस्स लोपे कते रूपं। सञ्ञोगादिस्सा ति इमिना उपरिमक्खरं दस्सेति, तं 'निग्गहीतं संयोगादि नो' ति (६०९) सुत्ते आविभविस्सति।

एवं झलानं यकारवकारं विधाय, पसञ्ञस्स इवण्णस्स आदेसं विधातुं—

---

१. नत्थि सी०१ पोत्थके। २. नत्थि से० पोत्थके। ३. चक्खायतनं-सी० २।

1. तु०—सद्द०, सु० २२०।

2. क० व्या०, पि० ६४।

७२. पसञ्ञस्स च । २. १. २१ ।

पसञ्ञस्स च[1] विभत्तादेसे सरे परे यकारादेसो होति । पुथव्या[2], रत्या, मत्या ।

सरे ति किमत्थं । पुथवियं ।

चसद्दग्गहणमनुकड्ढनत्थं ।

७३. गाव से । २. १. २२ ।

गो इच्चेतस्स ओकारस्स[3] आवादेसो होति से विभत्तिम्हि । गावस्स ।

---

७२. पसञ्ञस्स चा[1] ति वुत्तं । इदं सुत्तं....? 'झलानमियुवा सरे वा' (७०), 'यवकारा चे' ति (७१) सुत्तद्वयप्पभवं तन्निदानं.... । 'झला....वा' ति इमिना लिङ्गन्तभूतानं झलानं इयुवादेसा वुत्ता, 'यवकारा चे' ति इमिना च यकारवकारादेसा वुत्ता; किं लिङ्गन्तभूतस्स इवण्णस्स यकारादेसेनेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, लिङ्गन्तभूतस्स पसञ्ञस्स इवण्णस्स यकारादेसो पि होती ति दस्सेन्तेन, पसञ्ञस्स चा' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? पसञ्ञस्स इवण्णस्सा पि परे यकारादेसो होती ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । पसञ्ञस्सा ति सम्बन्धछट्ठी कारी. चा ति अनुकड्ढनं, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं । चग्गहणं कस्मा कतन्ति चोदना; अनुकड्ढनत्थन्ति परिहारो । चग्गहणेन यकारे अनुकड्ढिते वकारो निवत्तति, तेन इवण्णो येव गहेतब्बो[2] ।

पुथव्या त्यादीनि उदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

एवं लिङ्गन्तभूतानं झलपसञ्ञइवण्णुवण्णानं इयुवादेसञ्च यकारवकारादेसञ्च यकारादेसञ्च विधाय, लिङ्गन्तभूतस्स गोसद्दन्तोकारस्स पि आदेसं विधातुं—

७३. गाव से[3] ति वुत्तं । इदं सुत्तं....? 'झलानमियुवा सरे वा' (७०), 'यवकारा च' (७१), 'पसञ्ञस्स चा' ति (७२) सुत्तत्तयप्पभवं तन्निदानं....। किन्नि-

---

१. सी०१, सी०२ पोत्थकेसु नत्थि । २. पुथब्या–से० । ३. अकारस्स–से० ।

1. तु०—"पस्स यो"—सद्द०, सु० २२२ ।
2. तु०—क० न्या०, पि० ६५ ।
3. क० सु० ७३, ७४ = सद्द०, सु० २२३, २२४; तु०—"गोतो णित्"–पा० ७. १. ९० ।

क्खन्तन्ति* ? तेहि तीहि सुत्तेहि लिङ्गन्तभूतानं झ-ल-प-सञ्ञानं इवण्णुवण्णानं यथाक्कमं इयुवादेसो यकारवकारादेसो च, पसञ्ञस्स इवण्णस्स यकारादेसो च वुत्तो; लिङ्गन्तभूतस्सोकारस्स को आदेसो ति पुच्छाय सति, गोसद्दन्तभूतस्स ओकारस्स से विभत्तिम्हि आवादेसो होती ति दस्सेन्तेन, 'गाव से' ति वुत्तं। अथ वा 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तद्वयतो निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं। किमत्थमिदमुच्चते ? गोसद्दस्सोकारस्स से विभत्तिम्हि आवादेसो होती ति ञापनत्थं। गावे ति एकं, से ति एकन्ति द्विपदमिदं। रूपसिद्धियम्पन गो ति एकं, आवे ति एकं, से ति एकन्ति वुत्तं[1]। गावे ति कारियं, से ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। गो इच्चेतस्स ओकारस्स आवादेसो होति से विभत्तिम्ही ति अत्थो। गोस्स ओ गो ति समासं कत्वा, पुन तेन आवा ति कारियपदेन गोस्स आवो ति गावो ति समासं कत्वा न्यासे द्विपदन्ति वुत्तं[2]। रूपसिद्धियम्पन गोस्स ओ गो ति एत्थ अवयवअवयवीनमेकक्खणे लब्भनतो समासो होति, गोस्स आवो गावो ति एत्थ पन कारिकारियानमेकक्खणे अलब्भमानतो सापेक्खता नत्थि, तस्मा समासो न होती ति तिपदता वुत्ता[3]। 'गाव से' ति कस्मा वुत्तं, 'गावो से ति वत्तब्बन्ति ? सच्चं; तथा पि सुखुच्चारणत्थं ओकारस्स लोपं कत्वा, तत्र अकारागमं कत्वा एवं वुत्तन्ति; वुत्तञ्च—

> ' 'गावो से' ति च वत्तब्बे ओ लोपं लोपमादिना।
> कत्वा तत्र अकारमानेत्वा एवमीरितं'' ॥ ति।

जात्यापेक्खत्ता से ति एकवचनं कतं। कस्मा पन स-विभत्तितो स्मि-वचनं कतन्ति ? एत्थ सकारो हि सद्दगतिको, स्मि-वचनं अत्थजोतकं ति; वुत्तञ्च—

> 'पठमा सद्दगतिका दुतिया अत्थजोतका।
> विभत्तितो विभत्ती ति न चोदेतब्बमेव ही'' ॥ ति।

गावस्सा ति उदाहरणं। तस्स पन गो ति लिङ्गं ठपेत्वा, वुत्तनयेन चतुत्थेकवचनं वा छट्ठेकवचनं वा कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इमिना सविभत्तिम्हि ओकारस्स आवादेसं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, 'सागमो से' ति (६१) सकारागमे कते रूपं।

इतोपट्ठाय सुत्तनिक्खन्ति-आदयो संखेपेन कथयिस्साम।

* ०न्तं—सी०।
1. रूप०, सु० १७४।
2. क० न्या०, पि० ६६।
3. रूप०, सु० १७४।

७४. योसु च । २. १. २३ ।

गो इच्चेतस्स ओकारस्स आवादेसो होति यो इच्चेतेसु परेसु । गावो गच्छन्ति, गावो पस्सन्ति; गावी गच्छन्ति, गावी पस्सन्ति ।

चसद्दग्गहणं किमत्थं ? ना-स्मा-स्मिसु वचनेसु गो[1] इच्चेतस्स ओकारस्स[1] आवादेसो होति । गावेन, गावा, गावे, गावेसु ।

---

७४. योसु चे तिदं 'गाव से' ति (७३) सुत्ततो निक्खन्तं। 'गाव से' ति इमिना से विभत्तिम्हि गोसद्दन्तस्सोकारस्सावादेसो वुत्तो; से विभत्तिम्हि येव सो होती ति पुच्छाय सति, 'योसु चे' ति वुत्तं। अथ वा 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तद्वयतो निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं। सम्बन्धो वुत्तानुसारेन सुविञ्ञेय्यो व। योसू ति एकं, चा ति एकन्ति द्विपदमिदं। योसू ति निमित्तसत्तमी, चा ति समुच्चयं, सञ्ञा ¨ पे०¨¨ विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। यो च यो चा ति यो, तासु योसु विभत्तिसु, दब्बापेक्खावसेन चेत्थ बहुवचनं ।

गावो गच्छन्ती त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ गावो ति गोसद्दतो जिनवचनाधिकारमधिकिच्च वुत्तनयेन पठमाबहुवचनं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना योम्हि ओकारस्सावादेसं कत्वा, 'ततो योनमो तू' ति (२०५) एत्थ तुग्गहणेन योवचनस्सोकारादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं। इतरस्मिं दुतिया-यो-विभत्तिकरणमेव विसेसो। गावी ति एत्थ वुत्तनयेन यो-वचनं, कत्वा, योम्हि ओकारस्सावादेसं कत्वा, 'क्वचादिमज्झुत्तरानं¨¨' ति (४०५) वा, 'तेसु वुद्धा'दि (४०६) सुत्तेन वा यो-वचनस्स ईकारं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं[1]। रूपसिद्धियम्पन गावी गच्छन्ति, गावो पस्सन्ती त्यादिसु गोसद्दतो 'नदादितो वा ई' ति (२३८) ईप्पच्चयं कत्वा, 'तेसु वुद्धा'दि सुत्तेन वा 'गाव से' ति (७३) एत्थ गाव इति योगविभागेन वा आवादेसं कत्वा, ततो यो-वचनं कत्वा, 'घपतो च योनं लोपो' ति (११८) योनं लोपं कत्वा, इत्थिलिङ्गे येव रूपसिद्धि वुत्ता[2]। गावेन, गावा, गावे, गावेसू त्यादीनि चग्गहणफलानि। तेसम्पन गोसद्दतो यथाक्कमं ना-स्मा-स्मि-सु-वचनानि कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, तेसु परेसु ओकारस्स चग्गहणेन आवादेसं कत्वा, यथाक्कमं तासं

१-१. नत्थि से० पोत्थके ।

1. तु०—क० न्या०, पि० ६७ ।

2. रूप०, सु० १८६ ।

७५. अवम्हि च । २. १. २४ ।

गो इच्चेतस्स ओकारस्स आव[1]-अव इच्चेते आदेसा[1] होन्ति अम्हि विभत्तिम्हि । गावं, गवं ।

चसद्दग्गहणेन सादिसेसेसु पुब्बुत्तरवचनेसु[2] च अवादेसो होति । गवस्स, गवो, गवेन, गवा, गवे, गवेसु ।

एन-आ-ए-आदेसे कते, पुरिमेसु तीसु सरलोपपकतिभावं कत्वा, नेतब्बं; पच्छिमे 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) अकारस्स एकारकरणमेव विसेसो ।

७५. अवम्हि चे[1] तिदं 'गाव से' (७३), 'योसु चे' ति (७४) सुत्तद्वयतो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'गाव से' तिमिना से विभत्तिम्हि गोसद्दन्तस्सोकारस्स आवादेसो वुत्तो, 'योसु चे' ति सुत्तेन योसु परेसु आवादेसो च वुत्तो; एवं सति अम्हि विभत्तिम्हि गोसद्दन्तस्स ओकारस्स कतरादेसेन भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, अम्हि विभत्तिम्हि आव-अवादेसा पि होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'अवम्हि चा' ति वुत्तं । अयमस्स सुत्तनिक्खन्ति । किमत्थमिदमुच्चते ? गो इच्चेतस्सोकारस्स आव-अव इच्चेते आदेसा होन्ति अम्हि विभत्तिम्ही ति ञापनत्थमिदमुच्चते । तिपदमिदं । अवा ति कारियं, अम्ही ति निमित्तसत्तमी, चा ति समुच्चयं, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं । गावग्गहणस्सानुवत्तनतो गो इच्चेतस्सोकारस्स आव-अव इच्चेते आदेसा होन्ति अम्हि विभत्तिम्ही ति अत्थो । इध अवकारिये सति पि कस्मा आवकारियं वत्तती ति ? अप्पकवसेन वत्तती ति । अथ वा चसद्देन अनुकड्ढनसमुच्चयो कतो; अयञ्च चसद्दो वुत्तावुत्तसमुच्चयो । वुत्तञ्च—

> "अवम्हि चा ति चसद्दो समुच्चेति विभत्तियो ।
> जरग्गवादिको तेन सिद्धो सुगतसासने ॥" ति ।

गावं, गवं ति गोसद्दतो 'जिनवचनयुत्तं ही' ति (५२) सुत्तमधिकिच्च वुत्तनयेन दुतियेकवचनं कत्वा, 'गाव से' (७३) त्यधिकिच्च इमिना ओकारस्स आवअवादेसे कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपानि । "चसद्दग्गहणेन सादिसेसेसु पुब्बुत्तर-वचनेसू"[2] ति एत्थ सुत्तागतविभत्तितो सेसेसु पुब्बे 'गाव से', 'योसु चे' ति तत्थ

१-१. आव-अवादेसा–से०, सी०१ । २. पुब्बुत्तवचनेसु–सी०१, सी० २ ।

1. तु०—"गोस्सवावा यो-अं-ना-स-स्मा-स्मि-सुसु—" सद्द०, सु० २२४ ।

2. द०—क० वु० ।

७६. आवस्सु वा । २. १. २५ ।

आव इच्चेतस्स गावादेसस्स अन्तसरस्स उकारादेसो होति वा अम्हि विभत्तिम्हि । गावुं, गावं ।

आवस्से ति किमत्थं ? गवं । अम्ही ति किमत्थं ? गावो तिट्ठन्ति ।

चग्गहणेन च वुत्तेसु चा ति अट्सु विभत्तिसु परासु अवादेसो होती ति अत्थो । गवस्सा त्यादीन्युदाहरणानि । तत्थ च गवस्सा ति गोसद्दतो वुत्तनयेन स-विभत्तिं कत्वा, चग्गहणेनोकारस्स अवादेसं कत्वा, सकारागमे कते रूपं । इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

७६. आवस्सु वा[1] तिदं 'गाव से' ति (७३) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'गाव से' तिमिना से विभत्तिम्हि गोसद्दन्तोकारस्स आवादेसं कत्वा, गावस्से ति रूपं वुत्तं; किं आवादेसं कत्वा गावस्से ति रूपेनेव भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, आवादेसस्स अवयवभूतस्स अकारस्स उकारादेसं कत्वा गावुं ति पि भवितब्बन्ति दस्सेन्तेन, 'आवस्सु वा' ति वुत्तन्ति । अयमस्स निक्खन्ति । किमत्थमिदमुच्चते ? आवादेसन्तस्सुकारो होति अम्हि विभत्तिम्हि विकप्पेना ति ञापनत्थमिदमुच्चते । आवस्सा ति एकं, ऊ ति एकं, वा ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं । आवस्सा ति अवयवापेक्खछट्ठीकारी, उ इति कारियं, वा ति विकप्पनत्थो, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं । आवस्स अ-आव इति छट्ठी-तप्पुरिसं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति (१२) पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, नतब्बं नेत्वा, पुन आवसद्दे आदेसापेक्खं छट्ठिं कत्वा, आवस्सा ति वुत्तं[2] । तेन आव इच्चेतस्स गावादेसस्स अन्तस्स सरस्स उकारो होति विकप्पेना ति अत्थो[3] । कस्मा पनिध आवग्गहणं कतन्ति ? अवकारियस्स निवत्तनत्थं कतं । वुत्तञ्च—

"आवस्सु वा ति सुत्तम्हि आवसद्दस्सुदीरणं ।
अवसद्दं निवत्तेतुं वुत्तं सुत्तमनन्तरे ॥" ति ।

गावुं ति गोसद्दता वुत्तनयेन अं-विभत्तिं कत्वा, 'गाव से' (७३) त्यधिकिच्च 'अवम्हि चा' ति (७५) गोसद्दन्तोकारस्स आवादेसं कत्वा, 'अवम्हि चा' त्यधिकिच्च इमिना आवादेसन्तस्सुकारं कत्वा, 'आलपने सि····' ति (५७) वत्तमाने 'इवण्णुवण्णा-ज्झला' ति (५८) उकारस्स लसञ्ञं कत्वा, 'अम्मो निग्गहीतं····' ति (८२) अं-वचनस्स निग्गहीतादेसे कते रूपं ।

आवस्से ति किमत्थं ? गवं त्यादिसु सति पि गो-आदेसस्स अन्तसरे आवादेसा-भावा इमिना अन्तसरस्स उकारो न होती ति ञापनत्थं वुत्तं । अम्ही ति किमत्थं वुत्तं ? गावो तिट्ठन्ती त्यादिसु सति पि आवादेसे अं·विभत्त्याभावा इमिना अन्तसरस्स उकारादेसो न होती ति ञापनत्थं वुत्तं ।

---

1. तु०—"अंम्हावस्सु वा"—सद्द०, सु० २२६ ।

2–3. तु०—क० न्या०, पि० ६८–६६ ।

७७. ततो नं अं पतिम्हालुत्ते च समासे । २. १. २६ ।

ततो गोसद्दतो नं-वचनस्स अं-आदेसो होति, गो इच्चेतस्स ओकारस्स अवादेसो होति पतिम्हि परे अलुत्ते च समासे । गवम्पतिस्स थेरस्स ।

अलुत्ते ति किमत्थं ? गोपति ।

चसद्दग्गहणेन असमासे पि नं-वचनस्स अं-आदेसो होति, गो इच्चेतस्स ओकारस्स अवादेसो च होति । गवं ।

---

७७. ततो नं अं पतिम्हालुत्ते च समासे[1] तिदं 'अवम्हि चा' ति (७५) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'अवम्हि चा' ति इमिना अम्हि विभत्तिम्हि वाक्ये ठितस्स गोसद्दन्तोकारस्स अवादेसो वुत्तो; गवम्पतो त्यादिम्हि नम्हि परे अलुत्तसमासे केनादेसेन भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, गोसद्दतो नं-वचनस्स अं-आदेसं कत्वा, गोसद्दन्तभूतस्सोकारस्स च अवादेसं कत्वा, गवम्पती ति रूपं सिज्झती ति दस्सेन्तेन, 'ततो....समासे' ति वुत्तं । अयमस्स निक्खन्ति । किमत्थमिदमुच्चते ? गोसद्दतो परस्स नं-वचनस्स अं होति, गो इच्चेतस्सोकारस्स अवादेसो होति पतिम्हि परे अलुत्ते च समासे ति ञापनत्थमिदमुच्चते । सत्तपदमिदं । ततो ति अवधि, नन्ति कारी, अन्ति कारियं, पतिम्ही ति निमित्तसत्तमी, अलुत्ते ति तब्बिसेसनं, चा ति समुच्चयो, समासे ति आधारसत्तमीनिद्देसो, सञ्ञा ...पे०.... विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं । ततो ति च, नं ति च, अं ति च, पतिम्ही ति च रुळ्हिपदत्ता अविग्गहानि । न लुत्तो अलुत्तो, तस्मिं; समसनं समासो, तस्मिं; विभत्तिपरिनामवसेन गोसद्दग्गहणस्स गोसद्दतो ति पञ्चम्यन्तेन वत्तनतो च अवग्गहणस्सानुवत्तनतो च ततो गोसद्दतो नं-वचनस्स अं होति, ओकारस्स च अवादेसो होति पतिसद्दस्मिं परे अलुत्ते च समासे ति अत्थो । ननु च इध गोसद्दो अनुवत्तति, अथ कस्मा ततोग्गहणेन च गोसद्दं परामसती ति ? सच्चं; तथा पि सो कारिभावेनेव वत्तते, तस्मा अवधिभावेनानुवत्तनत्थं ततोग्गहणेन परामट्ठं ति ।

गवम्पती ति गोसद्दतो वुत्तनयेन छट्ठीबहुवचनं कत्वा, पतिसद्दतो च सि-विभत्तिलोपं कत्वा, गोनं पती त्यत्थे 'नामानं समासो युत्तत्थो' (३१८), 'उभे तप्पुरिसा' (३२८) त्यधिकिच्च 'अमादयो परपदेही' ति (३२९) अमादितप्पुरिसं कत्वा, युत्तत्थसमासं च कत्वा, 'तेसं विभत्तियो....' ति (३१९) विभत्तिलोपे सम्पत्ते चग्गहणेन लोपमकत्वा, 'गोण नम्हि वा' ति (८०) गोणादेसे सम्पत्ते तत्थ वाग्गहणेनाकत्वा, 'गाव से' (७३), 'अवम्हि चे' (७५) त्यधिकिच्च इमिना नं-वचनस्स अमादेसं कत्वा, गोसद्दन्तोकारस्सावादेसञ्च कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं । गोपती ति किमुदाहरणं ? तम्पन

---

1. तु० –''पतिम्हालुत्ते च समासे—सद्द०, सु० २२८ ।

७८. ओ सरे च । २. १. २७ ।

गो इच्चेतस्स ओकारस्स अवादेसो च[1] होति समासे सरे परे। गवस्सकं, गवेळकं, गवाजिनं।

चसद्दग्गहणेन उवण्ण इच्चेवमन्तानं लिङ्गानं उव-अव-उरादेसा होन्ति स्मिं-यो इच्चेतेसु परेसु क्वचि। भुवि, पसवो, गुरवो, चतुरो।

सरे ति किमत्थं? गोधनो, गोविन्दो।

गोसद्दतो नं-वचनं कत्वा, पतिसद्दतो च सिविभत्तिलोपं कत्वा, गोनं पती त्यत्थे वुत्तनयेन समासं कत्वा, विभत्तिलोपे अकते येव नं-वचनस्स अमादेसे सम्पत्ते अलुत्तसमासाभावा आदेसमकत्वा, विभत्तिलोपे कते रूपं। गवं ति चग्गहणफलं, तं वुत्तानुसारेन सुविञ्ञेय्यमेव।

७८. ओ सरे चे[1] तिदं 'ततो नमं ....' ति (७७) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खतन्ति? गवम्पती त्यादिसु 'ततो नमं ....' ति सुत्तेन अलुत्तसमासे नं-वचनस्स अमादेसं कत्वा, गोसद्दन्तोकारस्स च अवादेसं कत्वा, रूपसिद्धि वुत्ता; गवसस्सकं त्यादिसु लुत्तसमासेसु गोसद्दन्तोकारस्स सरस्मिं परे केनादेसेन भवितब्बन्ति पुच्छाय सति, गवस्सकं त्यादिसु लुत्तसमासेसु गोसद्दन्तोकारस्स सरस्मिं परे अवादेसो होती ति दस्सेन्तेन, 'ओ सरे चे' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? गो इच्चेतस्स ओकारस्स सरे परे अवादेसो होति लुत्ते समासे ति ञापनत्थं। तिपदमिदं। कारी, निमित्तसमुच्चयनिद्देसा। हेट्ठा गोग्गहणस्स च, अवग्गहणस्स, समासग्गहणस्स चानुवत्तनतो गो इच्चेतस्स ओकारस्स सरे परे अवादेसो होति समासे ति अत्थो। ननु 'गाव से' ति (७३) इतो गोग्गहणस्सानुवत्तनतो ओग्गहणम्पि इहानुवत्तति, अथ कस्मा ओग्गहणं कतन्ति? सच्चं; तथा पि ओग्गहणकरणं उत्तरनिवत्तनत्थन्ति।

गवस्सकं त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ गो च अस्सको चा त्यत्थे 'नामानं समासो ....' (३१८) त्यधिकिच्च 'नामानं समुच्चयो द्वन्दो' ति (३३१) द्वन्दसमासं कत्वा, 'नामानं समासो ....' ति युत्तत्थसमासञ्च कत्वा, 'तेसं विभत्तियो ....' ति (३१९) विभत्तिलोपं कत्वा, 'वुत्तट्ठानमप्पयोगो' ति परिभासं कत्वा, 'तेसं विभत्तियो ....' ति एत्थ तेसंगहणेन चसद्दस्स लोपं कत्वा, 'पकति चस्स ....' ति (३२०) पकतिभावं कत्वा, गोसद्दं वियोजेत्वा, ओकारस्स 'गाव से' (७३), 'अवम्हि च (७५), 'ततो नमं ....' ति ति वत्तमाने इमिना अवादेसं कत्वा, वकारं वियोजेत्वा, 'सरा सरे लोप' ति पुब्बसरस्स

---

१. नत्थि सी०१ पोत्थके।

1. तु०–"लुत्ते ओ सरे ब्यञ्जने च"–सद्द०, सु० २२६।

७९. तब्बिपरीतुपपदे ब्यञ्जने च । २. १. २८ ।

तस्स अवसद्दस्स यदा उपपदे तिट्ठमानस्स तस्स ओकारस्स उ[१]-विपरीतो होति ब्यञ्जने परे । उग्गते सुरिये, उग्गच्छति, उग्गहेत्वा ।

चसद्दग्गहणमवधारणत्थं[२]—अवसाने, अवकिरणे, अवकिरति[३] ।

लोपं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, 'सो नपुंसकलिङ्गो' (३२२), 'दिगुस्सेकत्तं' (३२३), 'तथा द्वन्दे....' (३२४) त्यधिकिच्च 'विभासा रुक्खतिण्ण....' ति (३२५) नपुंसकलिङ्गत्तञ्च एकत्तञ्च कत्वा, 'तद्धितसमास....' ति (६०३) नाममिव कत्वा, वुत्तनयेन पठमेकवचनसिविभत्ति कत्वा, 'योनन्नि....' (२१७), 'अतो निच्चं' (२१८) त्यधिकिच्च 'सिं' ति (२१९) सिवचनस्स अमादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं । इतरानि वुत्तसदिसानेवा ति । भुवि, पसवो, गुरवो, चतुरो त्यादीनि चग्गहणफलानि । तत्थ भुवी ति भुसद्दतो स्मिवचनं कत्वा, इध चग्गहणेन उवण्णस्स उवादेसं कत्वा, 'ततो स्मिमी' ति (२०६) एत्थ ततोग्गहणेन स्मिवचनस्स इकारादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं; पसवो, गुरवो ति पसु-गुरु इच्चेतेहि पाटिपदिकेहि योविभत्ति कत्वा, चग्गहणेन उकारस्स अवादेसं कत्वा, 'ततो योनमो तू' ति (२०५) एत्थ तुग्गहणेन योवचनस्सोकारादेसे कते रूपानि; चतुरो ति चतुसद्दतो योवचनं कत्वा, उकारस्स उरादेसादिम्हि कते रूपं[1] ।

गोधनो, गोविन्दो ति किमुदाहरणानि ? तत्थ च गावो धनानि यस्स सो ति अत्थे युत्तत्थसमासञ्च कत्वा, बहुब्बीहिसमासञ्च कत्वा, गोधनसद्दस्स पकतिभावं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, सति पि समासत्ते सरपरत्ताभावा इमिना आदेसमकत्वा, नेतब्बे नीते रूपं । गोविन्दो ति एत्थ पन विन्दती ति विन्दो ति कत्वा, गावो विन्दो गोविन्दो ति तप्पुरिससमासकरणमेव विसेसो ।

७९. तब्बिपरीतूपपदे ब्यञ्जने चे[2] तिदं 'अवम्हो च' (७५), 'ओ सरे चे' ति (७८) सुत्तद्वयतो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'अवम्हि चे' ति इमिना अंविभत्तिम्हि

---

१. नत्थि से०, सी०१ पोत्थकेसु । २. चसद्दग्गहणेन अव०-से० । ३. अवकिरंति-से० ।

1. "तु०—"अनेकत्थत्ता निपातानं चग्गहणस्स च निपातत्ता तप्फलं दस्सेन्तो 'चग्गहणेन उवण्ण इच्चेवमन्तानं लिङ्गानं उव-अव-उरादेसा होन्ति स्मि-यो इच्चेतेसु क्वची' ति आह । भुवि....चतुरो ति उदाहरणानि"—क० न्या०, पि० १०१; "उवण्णन्तानं स्मि-योसु उव-अव-उरा क्वचि"—सद्द०, सु० २३४ ।

2. तु०—"ओ वा विपरीतो"—सद्द०, सु० २५; "अथ वा ओकारो विपरीतसञ्ञो होति, अवसद्दस्स विपरीतत्ता"—त०, वु०; "उवण्णो च"—त०, सु० २६; "उवण्णो च विपरीतसञ्ञो होति, अवसद्देन सम्भूतस्स ओकारस्स विपरीतत्ता"—त०, वु० ।

ओकारस्स अवादेसो वुत्तो, 'ओ सरे चे' ति च समासे सरे परे ओकारस्स अवादेसो वुत्तो; अवसद्दस्स पन को आदेसो होती ति पुच्छाय सति, अवसद्दस्स पन ओकारस्स विपरीतभूतो उकारो होती ति दस्सेन्तेन, 'तब्बिपरीतूपपदे ब्यञ्जने चे' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? तस्सावसद्दस्स उपपदे तिट्ठमानस्स ब्यञ्जने परे ओकारस्स विपरीतो होती ति ञापनत्थं। तब्बिपरीतो ति एकं, उपपदे ति एकं, ब्यञ्जने ति एकं, चा ति एकन्ति चतुप्पदमिदं सुत्तं। तब्बिपरीतो ति कारियं, उपपदे ति आधारसत्तमी, ब्यञ्जने ति निमित्तसत्तमी, चा ति अवधारणनिद्देसो, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। तस्स विपरीतो तब्बिपरीतो, तस्सा ति ओकारस्स विपरीतो ति उकारो, ओकारस्स विपरीतभूतो उकारो ति अत्थो; तस्स तब्बिपरीतो ततब्बिपरीतो, तकारस्सेकस्स लोपवसेन तब्बिपरीतो, कारिभूतस्स तस्स अवसद्दस्स विपरीतस्स तस्स ओकारस्स विपरीतभूतो उकारो होती त्यत्थो। 'अवम्हि च', 'ओ सरे चे' ति सुत्तद्वयतो अवग्गहण-ओग्गहणानमनुवत्तनतो तस्सावसद्दस्स उपपदे ठितस्स तस्स ओकारस्स विपरीतो होति ब्यञ्जने परे त्यत्थो। एत्थ च पठमेन तकारेन 'अवम्हि चे' ति सुत्ततो अनुवत्तमानं अवसद्दं कारिभावेनेव परामसति, पच्छिमेन तकारेन 'ओ सरे चे' ति सुत्ततो अनुवत्तमानं ओकारं सम्बन्धविसेसनभावेन परामसति, ओकारस्स विपरीतो ति इमिना उकारो गहितो। सरेसु हि तयो विपरीता—आकारस्स रस्सभूतो अकारो विपरीतो, एकारस्स च रस्सभूतो इकारो विपरीतो, ओकारस्स च रस्सभूतो उकारो विपरीतो ति; तस्मा ओकारस्स विपरीतो ति वुत्तं। एतेन अवसद्दमेव कारिभावेन वुच्चती ति दट्ठब्बं। इकारो च ईकारएकारानं विपरीतो च रस्सो च, उकारो च ऊकारोकारानं विपरीतो च रस्सो च, तस्मा अञ्ञेसं विपरीतानं निवत्तनत्थं ओकारस्सा ति वुत्तं। आकारो पन अकारस्स वुद्धि च दीघो च, ईकार-एकारा इकारस्स वुद्धि च दीघा च, ओकारो उकारस्स वुद्धि च दीघो च; सिवचनादीनं अं-ओ-आ-आदेसा पन विकारो नाम; एवं विपरीतदीघवुद्धिविकारानं विसेसो दट्ठब्बो। ननु च अवग्गहण-ओग्गहणानमनुवत्तनतो तब्बिपरीतो ति एत्थ तकारद्वयेन अवग्गहण-ओग्गहणद्वयं पन परामसितब्बन्ति ? यदि अनुवत्तमानं सन्धाय तकारद्वयेन अवग्गहण-ओग्गहणे परामसेय्य, आदेसभूतस्स अवसद्दस्सा ति च गोसद्दावयवभूतस्स ओकारस्स चा ति गण्हेय्य; तं निवत्तनत्थं तकारद्वयं कतन्ति। इमिना च उग्गते त्यादिसु अवसद्दो उपसग्गो ति दस्सेति।

उग्गते त्यादीन्युदाहरणानि। तेसम्पन अव-गते अव-गच्छती ति छेदं कत्वा, 'अवम्हि च' (७५), 'ओ सरे चा' (७८) त्यधिकिच्च इमिना उपसग्गभूतस्स अवसद्दस्स ओकारस्स विपरीतभूतं उकारं कत्वा, 'परद्वेभावो ठाने' ति (२८) द्वेभावं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा। अवसाने त्यादीनि चग्गहणफलानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव।

८०. गोण नम्हि वा । २. १. २९ ।

सब्बस्स[१] गोसद्दस्स गोणादेसो होति वा नम्हि विभत्तिम्हि । गोणानं सत्तन्नं ।

वा ति किमत्थं ? गोनं[२] ।

गोणञ्चे[३] तरमानानं उजुं गच्छति पुङ्गवो ।
सब्बा गावी उजुं यन्ति नेत्ते उजुगते[४] सति[५] ॥

योगविभागेन अञ्ञत्था[६] पि गोणादेसो होति । गोणभूतानं ।

---

८०. गोण नम्हि वा[1] निदं 'गाव से' (७३), 'यो सु च' (७४), 'अवम्हि च' (७५), 'ततो नं अं.....' (७७) त्यादीहि सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? यथावुत्तेहि सुत्तेहि यथावुत्तासु विभत्तिसु आ-अव-आदेसा वुत्ता; एवं सति गोणानं त्यादिसु नम्हि परे कथं गोणादेसो भवेय्या ति पुच्छाय सति, गोणानं त्यादिसु नम्हि परे गोणादेसो होती ति दस्सेन्तेन, 'गोण नम्हि वा' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बस्सेव गोसद्दस्स गोणादेसो होति नम्हि परे विकप्पेना ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । गोणा ति कारियं, नम्ही ति निमित्तसत्तमी, वा ति विकप्पनत्थनिद्देसो, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं । सब्बस्सेव गोसद्दस्स गोणादेसो होति नम्हि विभत्तिम्हि विकप्पेना त्यत्थो । द्विन्नं पदानं रुळ्हिपदत्ता वासद्दस्स च निपातत्ता विग्गहो नत्थि । 'गोणो नम्ही' ति वत्तब्बे गोण नम्हि वा' ति कस्मा वुत्तं ? 'सेसतो लोपं.....' (२२०) त्यधिकिच्च 'सब्बासमावुसो.....' ति (२२१) एत्थादिग्गहणेन लोपं कत्वा वा, लोपागमवसेन सन्धिं कत्वा वा एवं वुत्तन्ति दट्ठब्बं[2] ।

गोणानं ति गोसद्दतो चतुत्थीबहुवचनं * वा छट्ठीबहुवचनं** वा कत्वा, 'गाव से' (७३) त्यधिकिच्च इमिना नम्हि परे सब्बस्सेव गोसद्दस्स गोणादेसं कत्वा, 'योसु कतनिकार.....' (८८) त्यधिकिच्च 'सुनंहिसु चे' ति (८९) पुब्बसरस्स दीघे कते रूपं । गोनं ति वागहणफलं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । "योगविभागेना[3]" ति एत्थ योगो ति सुत्तं, तस्स

---

* चतुत्थि०—सी० । **छट्ठि—सी० ।

१. सब्बस्सेव-सी० २ । २. नत्थि से०, सी०१ पोत्थकेसु । ३. गवञ्चे-सी० २ । ४. उजुंगते-से० । ५. गोनं-से० । ६. अञ्ञत्रा-सी०१, सी० २ ।

1. तु०—"सुनंहिसु गोण"—सद्द०, सु० २३१ ।

2. तु०—क० न्या०, पि० १०३ ।

3. व०—क० वु० ।

८१. सुहिनासु च । २. १. ३० ।

सु-हि-ना इच्चेतेसु च सब्बस्स गोसद्दस्स गोणादेसो होति वा । गोणेसु, गोणेहि[1], गोणेन ।

वा ति किमत्थं ? गोसु, गोहि, गोभि, गावेन[2] ।

चसद्दग्गहणेन स्यादिसेसेसु पुब्बुत्तरवचनेसू[3] पि[3] गोण-गु-गवयादेसा होन्ति । गोणो, गोणा, गोणं, गोणे, गोणस्स, गोणम्हा[4], गोणस्मा[5], गुन्नं, गवयेहि ।

विभागो योगविभागो[1], तेन; गोणा ति सुत्तस्स विभागकरणेना त्यत्थो । गोणभूतानं ति इदं पन गोभूतलिङ्गं ठपेत्वा, ततो नंवचनं कत्वा, 'सुनंहिसु चे' ति दीघं कत्वा, सब्बस्स विभत्तिरहितस्स गोसद्दस्स 'गोणा' ति योगविभागेन गोणादेसे कते रूपं ।

८१. **सुहिनासु चे[2]** तिदं 'गोण नम्हि वा' ति (८०) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'गोण नम्हि वा' तिमिना नम्हि विभत्तिम्हि गोणादेसो वुत्तो; किं नम्हि विभत्तिम्हि येव गोणादेसो होती ति पुच्छाय सति, सु-हि-नासु पि गोणादेसो होती ति दस्सेन्तेन, 'सुहिनासु चे' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? सुहिनासु विभत्तिसु सब्बस्सेव गोसद्दस्स गोणादेसो होति विकप्पेना ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । सुहिनासू ति निमित्तसत्तमी, चा ति समुच्चयो, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं । हेट्ठा गोणग्गहणस्स च, अनन्तरसुत्ततो गोणग्गहणवाग्गहणानञ्चानुवत्तनतो सुहिनासु विभत्तिसु सब्बस्सेव गोसद्दस्स गोणादेसो होति विकप्पेना त्यत्थो । सु च हि च ना च, तथा, तासु सुहिनासु । 'नाहिसुसू' ति वत्तब्बे सुखुच्चारणत्थमेवं वुत्तं ।

गोणेसू त्यादीन्युदाहरणानि । तत्थ च गोणेसू ति गोसद्दतो वुत्तनयेन सत्तमीबहुवचनं कत्वा, 'गाव से' (७३), 'गोण नम्हि वा' त्यधिकिच्च इमिना सब्बस्स गोसद्दस्स गोणादेसं कत्वा, 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) गोसद्दन्तस्सेकारादेसे कते रूपं । गोणेही ति एत्थ हिविभत्तिं कत्वा, 'सुहिस्वकारो ए' ति एकारकरणमेव विसेसो । गोणेना ति नाविभत्तिं कत्वा, तस्सेनादेसकरणमेव विसेसो । गोसु त्यादीनि किमुदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

---

१. गोणेहि गोणेभि–सी०१ । २. गवेन–से०, सी०१ । ३–३. ०वचनेस्वपि–सी०१, सी०२ ।
४. गोणम्हि–सी० १ । ५. नत्थि सी०१ पोत्थके ।
1. तु०—"एत्थ च योगविभागो नाम सुत्तविभागो, सुत्तस्स द्वेधाकरणं"—क० न्या०, पि० १०३ ।
2. तु०—सद्द०, सु० २३१ ।

८२. अम्मो[1] निग्गहीतं झलपेहि । २. १. ३१ ।

अंवचनस्स[2] मकारस्स च झ-ल-प इच्चेतेहि निग्गहीतं होति । अग्गिं, इसिं, महेसिं, गहपतिं, दण्डिं, भिक्खुं, सयम्भुं, अभिभुं, इत्थिं, रत्तिं, वधुं, पुल्लिङ्गं, पुम्भावो, पुंकोकिलो[3] ।

अम्मो[4] ति किमत्थं ? अग्गिना[5], रत्तिया, भिक्खुना, इत्थिया, वधुया । झलपेही ति किमत्थं ? सुखं, दुक्खं ।

पुनरारम्भगहणं विभासानिवत्तनत्थं–अग्गिं, वधुं, पटुं, बन्धुं[6], बुद्धिं ।

"चसद्दग्गहणेन स्यादिसेसेसु पुब्बुत्तरवचनेसु"[1] एत्थ सि आदि येसं ते स्यादयो, येसं वचनानं सि आदि ते वचना स्यादयो, तेसु ; 'गोण नम्हि वा', सुहिनासु चे' ति सुत्तेसु आगता छ विभत्तियो ठपेत्वा सि यो अं यो स स्मा स स्मिं ति इमे अट्ठ विभत्ति-वचना; स्यादी च ते सेसा चा ति स्यादिसेसा, तेसु स्यादिसेसेसु अट्ठसु विभत्तिवचनेसु; पुब्बा च उत्तरा च पुब्बुत्तरा, तेसु पुब्बुत्तरवचनेसु; अपिसद्दो पुरिमसुत्तद्वयागतविभत्तियो समुच्चेति[2] । अयमधिप्पायो—इध चग्गहणेन स्यादिसेसेसु अट्ठसु पुब्बुत्तरवचनेसु गोणादेसो होति, तेन गोणो गोणा ति च गोणं गोणे ति च सकारद्वये गोणस्सा ति च गोणम्हा गोणम्ही ति च रूपं सिज्झति; अपिसद्देन पन पुरिमसुत्तेसु आगतानं छन्नं विभत्तीनं समुच्चितत्ता गुन्नं गवयेही ति च तेन सिज्झति, तत्थ गु-आदेसो नम्हि होति, गवयादेसो हि-विभत्तिम्हि होति । इदं कच्चायनगतूदाहरणवसेन वुत्तं । आचरिया पन 'हि-विभत्तिम्हि उपलक्खणवसेन गवयादेसस्स दस्सनतो गवयेन, गवयेसु, गवयानं, गवयेसं ति पि सिज्झती' ति वदन्ति । एत्थ च गोणो, गोणा, गोणं, गोणे, गोणस्स, गोणम्हा, गोणम्हीत्यादि सि-आदिसेसेसु पुब्बुत्तरवचनेसू ति वुत्तानमट्ठन्नं विभत्तीनं उदाहरणं । तं पन उपलक्खणवसेन दस्सितत्ता गवयेन गवयेहि गवयानं गवयेसं ति पि सिज्झती ति वुत्तं, तानि सुविञ्ञेय्यानेव । गुन्नं ति एत्थ पन 'नो च द्वादितो नम्ही' ति (६७) एत्थ चसद्देन नकारागमं कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं[3] ।

८२. अम्मो निग्गहीतं झलपेही[4] तिदं 'सरलोपो····पकति' (८३), 'न झतो कतरस्सा' (२२४), 'अं यमीतो पसञ्ञातो' (२२३), 'पुमस्स*····समासे' *(२२२) त्यादीहि

– पुमन्तस्सा सिम्ही— सी० ।

१. अं ओ–सी०२ । २. ० च–से० । ३. पुङ्कोकिलो–सी०२ । ४. अं मो–सी०२ । ५. ० पाणिना–सी०२ । ६. नत्थि सी०१ पोत्थके ।

1. द०—क० वु० ।
2. तु०—"गोस्स सब्बस्स वा नंम्हि गु"—सद्द०, सु० २३०; "स्यादिसेसासु च"— त०, सु० २३२ ।
3. तु० — क० न्या०, पि० १०५ ।
4. तु० — "झलपेहि निग्गहीतमं-मानं"—सद्द०, सु० २३५ ।

सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति ? 'सरलोपो····'ति सुत्तेन अम्हि पुब्बसरानं लोपो वुत्तो, 'नं झतो····'ति सुत्तेन च कतरस्साज्झतो अं-वचनस्स नं-आदेसो वुत्तो, 'अं यमीतो····' ति सुत्तेन च पसञ्ञातो ईकारतो अं-वचनस्स यमादेसो वुत्तो, 'पुमस्स···· समासेसू' ति सुत्तेन च ततो समासे मकारावयवस्स अकारस्स लोपो वुत्तो; एवं सति अग्गिं दण्डिं भिक्खुं सयम्भुं त्यादीनि रूपानि च इत्थिपुल्लिङ्गं पुम्भावो त्यादीनि रूपानि च कथं सिज्झेय्युं ति पुच्छाय सति, अग्गिं ···· सयम्भुं त्यादीनि रूपानि झ-ल-पेहि अं-वचनस्स निग्गहीतादेसं कत्वा, पुल्लिङ्गं····पे०····पुंकोकिलो त्यादीनि रूपानि च मकारस्स निग्गहीतादेसं कत्वा सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'अम्मो निग्गहीतं झलपेही' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? झ-ल-प इच्चेतेहि परस्स अं-वचनस्स ओकारस्स च निग्गहीतादेसो होती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। अम्मो ति एकं, निग्गहीतन्ति एकं, झलपेही ति एकन्ति तिपदमिदं। अम्मो ति कारी, निग्गहीतन्ति कारियं, झलपेही ति अवधिनिद्देसो, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। झलपेहि अम्मो निग्गहीतं पप्पोती ति अत्थो। सुत्ते पन पठमा कारी, दुतिया कारियवसेन वुत्तं[1]। अं च मो च अम्मो; समाहारद्वन्दे पुल्लिङ्गवसेन अम्मो ति वुत्तं, चित्तुप्पादो ति यथा। निग्गण्हित्वा गय्हती ति निग्गहीतं, निस्साय गय्हती ति वा, तथा[2]। झो च लो च पो च झलपा, तेहि झलपेहि।

अग्गिं, इसिं, गहपतिं, दण्डिं, महेसिं ति झतो अं-वचनस्स निग्गहीतादेसस्सुदाहरणं। तेसु पच्छिमद्वये रस्सत्तं। भिक्खुं, सयम्भुं, अभिभुं ति लतो; इधा पि पच्छिमद्वये रस्सत्तं। रत्तिं, इत्थिं, पटुं, वधुं ति पतो निग्गहीतादेसस्सुदाहरणं; तेसु पि पच्छिमे रस्सत्तं। पुल्लिङ्गं, पुम्भावो, पुंकोकिलो ति लतो मकारस्सुदाहरणं।

---

1. तु०—"वुत्तियम्पन आदेसादेसिविधानं ति कत्वा तदनुरूपवसेन अं-वचनस्स मकारस्स च निग्गहीतं होती ति वुत्तं। कारिनं पठमाय निद्दिसित्वा कारियस्सुपयोगवसेन निद्देसो-प्यादेसादेसिविधानमेव गमयती ति सुत्तं पन 'अम्मो निग्गहीतं झलपेही' ति आह। एकस्सेव हि अत्थस्स नानप्पकारेन पयोगो दिस्सति—देवदत्तस्स रज्जं पापुणाति, देवदत्तो रज्जं पापुणाति, देवदत्तो राजा होती ति; न च तं विरुज्झति। ननु च सुत्ताधिप्पाय-स्सानुवत्तनतो 'वुत्ति', इध पन कस्मा एवं वुत्तं ति ? सुत्ताधिप्पायदीपनत्थं एवं निद्देसो-प्यादेसादेसिविधानमेव गमयती ति तमेव दीपेन्तो एवं सुत्तमाह, तत्थ च तदधिप्पायं दस्सेन्तो एवं सुत्तमाह। सुत्तस्स हि दुविधो अत्थो—मुख्यत्थो, अधिप्पायत्थो च। तत्थ च मुख्यत्थो 'सागमो से' त्यादिसु से विभत्तिम्हि सकारागमो होती ति आदि; अधिप्पायत्थो 'संसास्वेकवचनेसु चे' त्यादिसु संसासु एकवचनेसु विभत्तादेसेसू त्यादि; उभयत्थस्सा पि वत्तनतो हि 'वुत्ति'; तस्मा चेवं वुत्तियं वुत्तं ति दट्ठब्बं"—क०व्या०, पि०, १०६।
2. ब०—पि०, २५-२६।

तेसु अग्गिं ति अग्गिसद्दतो दुतियेकवचनं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'आलपने....' (५७) त्यधिकिच्च 'इवण्णु....' ति (५८) इवण्णस्स झसञ्ञं कत्वा, इमिना अं-वचनस्स निग्गहीतादेसे कते रूपं। इसिं, गहपतिं ति पि एसेव नयो। दण्डि, महेसिं ति एत्थ रस्सत्तं। भिक्खुं ति भिक्खुसद्दतो दुतियेकवचनं कत्वा, ततो अं-वचनस्स निग्गहीतादेसो। सयम्भुं, अभिभुं ति एत्था पि रस्सत्तं। इत्थिं, वधुं ति च तथा। पुल्लिङ्गं ति एत्थ पन पुमस्स लिङ्गं ति अत्थे 'नामानं समासो....' (३१८), 'उभे तप्पुरिसा' (३२८) त्यधिकिच्च, 'अमादयो....' ति (३२९) अमादितप्पुरिससञ्ञं अमादितप्पुरिससमासञ्च कत्वा, 'नामानं समासो....' ति युत्तत्थसमाससञ्ञञ्च युत्तत्थसमासञ्च कत्वा, 'तेसं विभत्तियो....' ति (३१९) विभत्तिलोपं कत्वा, 'पकति चस्स....' ति (३२०) पकतिभावं कत्वा, नाममिव कत्वा, स्युप्पत्तादिं च कत्वा, पुमलिङ्गं ति ठिते, मकारं वियोजेत्वा, 'सेसतो लोपं....' (२२०) त्यधिकिच्च 'पुमस्स लिङ्गादिसु....'ति (२२२) पुमसद्दन्तस्स सरस्स लोपं कत्वा, पुमसद्दतो पकारं वियोजेत्वा, वुत्तनयेन उकारस्स लसञ्ञं कत्वा, इमिना निस्सरस्स मकारस्स निग्गहीतं कत्वा पुंलिङ्गं ति ठिते, 'ब्यञ्जने चे' ति (३९) निग्गहीतस्स लोपं कत्वा, लकारस्स द्वेभावं कत्वा, 'वग्गन्तं....' ति (३१) एत्थ वाग्गहणेन लकारादेसं कत्वा वा, नेतब्बे नीते रूपं। पुम्भावो ति एत्थ निग्गहीतस्स मकारकरणमेव विसेसो। पुंकोकिलो ति कम्मधारयसमासकरणमेव विसेसो।

अग्गिना त्यादीनि किमुदाहरणानि? तत्थ अग्गिना ति ततियेकवचनं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इवण्णस्स झसञ्ञं कत्वा, सति पि झे अं-वचनस्स मकारस्स चाभावामिना निग्गहीतत्तमकत्वा रूपं। रत्तिया ति रत्तिसद्दतो ततियेकवचनं कत्वा, इवण्णस्स पसञ्ञं कत्वा, सति पि पस्मिं अंकारमकारनमभावा निग्गहीतत्तमकत्वा, 'आय चतुत्थेक....' (१०९) त्यधिकिच्च 'पतो या' ति (११२) यादेसे कते रूपं। भिक्खुना तिदं सुविञ्ञेय्यमेव। इत्थिया ति च 'अघो रस्स' (८४)-मिच्चादिना रस्सकरणमेव विसेसो। सुखं ति सुखसद्दतो दुतियेकवचनं कत्वा, सति पि अंवचने झलपानमभावा इमिना निग्गहीतत्तमकत्वा, 'सरलोपो....' ति (८३) पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, परसरस्स पकतिभावञ्च कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं।

"पुनरारम्भग्गहणं* विभासानिवत्तनत्थं" ति एत्थ च पुब्बसुत्तेसु झलपे आरभित्वा, इध 'झलपेही' ति पुन झलपग्गहणं विभासानिवत्तनत्थं; विभासत्थवाचकस्स वासद्दस्स निवत्तनत्थं ति अत्थो। 'झलानमियुवा सरे वा' ति (७०) सुत्ततो झलग्गहणस्स च, 'पसञ्ञस्स चा' ति (७२) सुत्ततो पग्गहणस्स च अनुवत्तनत्थे सति इध पुन झलपग्गहणं 'झलानमियुवा सरे वा' ति सुत्ततो अनुवत्तमानस्स विभासत्थवाचकस्स वासद्दस्स निवत्तनत्थं कतं ति अधिप्पायो[1]। तं निवत्तनेन च 'अं यमीतो पसञ्ञातो' (२२३), 'नं

*. पुनारम्भ०—कत्थचि।

1. तु०—क० व्या०, पि० १०८।

८३. सरलोपोमादेसप्पच्चयादिम्हि[1] सरलोपे तु पकति । २. १. ३२ ।

सरलोपो होति अमादेसप्पच्चयादिम्हि, सरलोपे कते[2] तु पकति होति । पुरिसं, पुरिसे, पापं, पापे, पापियो, पापिट्ठो ।

अमादेसप्पच्चयादिम्ही ति किमत्थं ? अप्पमादो अमतपदं । सरलोपे ति किमत्थं ? पुरिसस्स, दण्डीनं[3] ।

तुसद्दग्गहणमवधारणत्थं–भिक्खुनी, गहपतानी ।

पकतिग्गहणसामत्थेन पुन सन्धिभावो च होति । सेय्यो, सेट्ठो, जेय्यो, जेट्ठो ।

झतो कतरस्सा' ति (२२४) सुत्तानं विसयं ठपेत्वा, झलतो परस्स अंवचनस्सिमिना निग्गहीतं निच्चं होती ति दस्सेति । तेन वुत्तं—"अग्गिं, वधुं, पटुं, बुद्धिं" ति; तं वुत्तनयमेव ।

८३. सरलोपोमादेसप्पच्चयादिम्हि सरलोपे तु पकती[1] तिदं 'सरा सरे लोपं' (१२), 'वा परो असरूपा' ति (१३) सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति ? पुरिसो पुरिसा पुरिसं पुरिसे पापियो पापिट्ठो त्यादिसु पयोगेसु पुरिस-पापादिसद्देहि अं-आदेसप्पच्चया-दिम्हि कते 'सरा सरे लोपं' ति पुब्बसरस्स लोपे कते परसरस्स विकारो वा भवेय्य, 'वा परो असरूपा' ति वा परसरस्स लोपो वा भवेय्य; एवं सति पुरिसो....पापिट्ठो त्यादीनि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, पुरिसो ....पापिट्ठो त्यादिसु पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, परसरस्स पकतिभावं कत्वा, तानि रूपानि सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'सर-लोपो....पकती' वुत्तं। 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं; तदनुरूपा निक्खन्तिकथा वत्तब्बा । अयमस्स निक्खन्ति । किमत्थमिदमुच्चते ? अमादेसप्पच्चयादिम्हि सरलोपो च होति, सरलोपे कते तु पकति होती ति ञापनत्थमिदमुच्चते । पञ्चपदमिदं । सरलोपो ति कारियं, अमा-देसप्पच्चयादिम्ही ति निमित्तसत्तमी, सरलोपे तु भावसत्तमी, तू ति अवधारणं, पकती ति कारियं, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं । इध पच्चयादिम्ही ति सामञ्ञवसेन वुत्ते पि आदेसग्गहणेन विभत्तादेसो व गहितो; तथा पच्चयग्गहणेन तद्धिताख्यात-कितकपच्चया गहिता; आदिग्गहणेन आख्यातकितकादिसु आगमं गहितं[2] । वुत्तञ्च रूपसिद्धियं[3]—

---

१. सरलोपो अमा०–से० । २. नत्थि से० पोत्थके । ३. दण्डिनं–से०, सी० १ ।

1. तु०—"अमादेस-पच्चयागमेसु क्वचि सरलोपो, तेसं पकति च"—सद्द०, सु० २३६ ।

2. तु०—क० न्या०, पि० १०६ ।

3. रूप०, सु० ६७ ।

"त्यादिविभत्तियो चेत्थ पच्चयत्तेन गय्हरे।
आदिग्गहणमाख्यातकितकेस्वागमत्थिदं ॥
पच्चयसाहचरिया** चादेसो पकतीपरो।
पदन्तसरलोपो न तेनब्भाहादिके+ परे" ॥ ति।

एत्थ इमस्मिं सुत्ते त्यादिविभत्तियो च पच्चयत्तेन पच्चयभावेन गय्हन्ते; आगमत्थिदं ति एत्थ इदं ति अं-आदिग्गहणं ति इमिना तुल्याधिकरणं, इदं आदिग्गहणं आख्यातकितकेसु आगमत्थं आगमस्स अत्थाय गहितं; पच्चयसाहचरिया* ति पच्चयादिम्ही ति एत्थ आदेसस्स पच्चयेन साहचरिया साहचरियभावेन पठितत्ता आदेसो च पकतिपरो विभत्तादेसो एव गय्हते; तेन पकतितो परस्स विभत्ति-आदेसस्सेव गहणतो अब्भ-आह इच्चादिके पदादेसे परे अब्भुग्गतो, सत्था आहा ति एवमादिसु इमिना पदन्तसरलोपो न होती त्यत्थो[1]। इध च आदेसप्पच्चयादिम्ही ति सामञ्ञवसेन वुत्ते पि 'वा परो असरूपा' (१३) त्यादिसुत्तानं निवारणत्थं इमस्स सुत्तस्स वुत्तत्ता सुद्धसरो वा ब्यञ्जनपटिबद्धो वा गय्हते ति न्यासमतेन वुत्तं[2]। रूपसिद्धियम्पन परसरस्स पकतिभावविधानसामत्थियतो अमादेसप्पच्चयादिभूते सरे परे ति पि सिद्धं ति वुत्तं[3]। अं च आदेसो च पच्चयो च अमादेसप्पच्चया, अमादेसप्पच्चया आदि यस्स सो अमादेसप्पच्चयादि, तस्मिं अमादेसप्पच्चयादिम्हि; यस्सा ति आगमस्स; सो ति आगमो। ननु च 'सरा सरे लोपं' ति (१२) सुत्तेन सरस्मिं परे पुब्बसरस्स लोपो वुत्तो ति? सच्चं; तथा पि चित्तं त्यादिसु 'दीघं' (१५) त्यादिना विकारमापज्जेय्य, तस्मा तं निवारेतुं वुत्तं ति।

पुरिसं त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ च पुरिसं ति पुरिससद्दतो जिनवचनाधिकारमधिकिच्च वुत्तनयेन दुतियेकवचनं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इमिना पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, तस्मिं लुत्ते 'सरा सरे लोपं', 'वा परो असरूपा', 'कचासवण्णं लुत्ते' (१४) त्यधिकिच्च 'दीघं' ति दीघे सम्पत्ते तं निवारेत्वा, इमिना पकतिवचनं कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं। पुरिसे ति दुतियाबहुवचनं कत्वा, तस्स 'अतो नेना' (१०३) त्यधिकिच्च 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) एकारादेसं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, इमिना पुब्ब-

---

** ०सहचरिया—सी०। + ०ब्भादिके—सी०। * ०सहचरिया—सी० (सब्बत्थ)।

1. रूपसिद्धियम्पन अस्स सुत्तस्स वण्णना एवं आगता—"पुब्बसरस्स लोपो होति अं-वचने आदेसप्पच्चयादिभूते च सरे परे, सरलोपे कते तु परसरस्स पकतिभावो होति। एत्थ च 'सरलोपे' ति पुनग्गहणं इमिना व कतसरलोपनिमित्ते येव परसरविकारे सम्पत्ते पकतिभावत्थं...."—सु० ६७।

2. क० न्या०, पि० १०६।

3. रूप०, सु० ६७।

सरस्स लोपं कत्वा, परभूतस्स एकारस्स असवण्णे सम्पत्ते पकतिभावं कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं। पापं ति पापसद्दतो सिवचनं कत्वा, 'योनन्नि नपुंसकेहि' (२१७), 'अतो निच्चं' (२१८) त्यधिकिच्च तस्स 'सिं' ति (२१९) अं-आदेसं कत्वा, इमिना सरलोपपकतिभावे कते रूपं। पापे ति पापसद्दतो दुतिया-यो-वचनं कत्वा, तस्स 'योनन्नि नपुंसकेहो' त्यधिकिच्च 'अतो निच्चं' ति तस्स निकारादेसं कत्वा, 'अतो नेना' त्यधिकिच्च 'सब्बयोनीनमाए' ति निकारस्स एकारं कत्वा, इमिना सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं। पापियो ति अयञ्च पापो अयञ्च पापो, अयमिमेसं विसेसेन पापो त्यत्थे वा, सब्बे इमे पापा, अयमिमेसं विसेसेन पापो त्यत्थे वा, 'विसेसे तर....' ति (३६५) इयप्पच्चयं कत्वा, 'तेसं विभत्तियो....' ति (३१९) एत्थ तेसंगहणेन विभत्तिलोपं कत्वा, 'वुत्तट्ठानमप्पयोगो' ति सेसानमप्पयोगं कत्वा, इमिना पुब्बसरस्स लोपं कत्वा परस्स असवण्णे सम्पत्ते, इमिना पकतिभावादिम्हि कते रूपं। इतरं तस्सदिसमेव।

अप्पमादो अमतपदं त्यादिसु 'सति पि सरस्मिं अमादीनमभावा सरलोपपकतिभावो न होती' ति ञापनत्थं वुत्तं ति। पुरिमस्स. दण्डिनं ति च किमुदाहरणानि? तेसं पन पुरिस-दण्डी इच्चेतेहि पाटिपदिकेहि यथाक्कमं चतुत्थेकवचनदुतियेकवचनानि कत्वा, सति पि पच्चये सरलोपाभावामिना पकतिभावमकत्वा, पुरिमपक्खे सागमं कत्वा, इतरपक्खे अं-वचनस्स 'अं यमीतो....' (२२३) त्यधिकिच्च 'नं झतो....' ति (२२४) नं-आदेसं कत्वा, अघस्स रस्सत्ते कते रूपं। भिक्खुनी, गहपतानी त्यादीनि तुग्गहणफलानि। तत्थ च भिक्खुनी ति भिक्खुसद्दतो 'इत्थियमतो....' (२३७) त्यधिकिच्च 'पतिभिक्खु....' ति (२४०) इनीप्पच्चयं कत्वा, सति पि पच्चये "तुग्गहणमवधारणत्थं" ति वुत्तत्ता च, अवधारणत्थस्स तुग्गहणस्स च, निवत्तनत्ता च, इमिना लोपादीनि अकत्वा, ततो स्युप्पत्तिं कत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपं। गहपतानी ति गहपतिसद्दतो इनीप्पच्चयं कत्वा, सति पि पच्चये परसरस्स लोपमकत्वा, पतिसद्दं वियोजेत्वा, 'पञ्चादीनमत्तं' (९०) त्यधिकिच्च 'पतिस्सिनिम्ही' ति (९१) पतिसद्दन्तस्सत्तं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' त्यधिकिच्च 'वा परो असरूपा' ति परसरस्स लोपं कत्वा, 'क्वचासवण्णं लुत्ते', 'दीघं' त्यधिकिच्च 'पुब्बो चे' ति (१६) पुब्बसरस्स दीघे कते रूपं। "पकतिग्गहणसामत्थेन पुन सन्धिभावो च होती" ति एत्थ सेय्यो सेट्ठो त्यादिसु अयं च पसत्थो अयं च पसत्थो, अयमिमेसं विसेसेन पसत्थो ति अत्थे वा, सब्बे इमे पसत्था, अयमिमेसं विसेसेन पसत्थो ति अत्थे वा वुत्तनयेन इट्ठप्पच्चयं कत्वा, 'वुद्धस्स जो....' (२६४) त्यधिकिच्च 'पसत्थस्स सो चे' ति (२६५) पसत्थसद्दस्स सादेसं कत्वा, पकतिग्गहणेन इदं सुत्तं निवारेत्वा, 'सरा सरे लोपं' ति पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, 'क्वचासवण्णं लुत्ते' ति परस्स इकारस्स असवण्णे कते सन्धिभावो होति। न्यासे पन "सरलोपोमादेसप्पच्चयादिम्ही" ति योगविभागेन पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, परसरस्स असवण्णं वुत्तं[1]।

1. तु०—क० न्या०, पि० ११०-१११।

८४. अघो रस्समेकवचनयोस्वपि च । २. १. ३३. ।

अघो रस्समापज्जते एकवचन-यो इच्चेतेसु च। इत्थि, इत्थियो, इत्थिया; वधुं, वधुयो, वधुया। दण्डिनं, दण्डिनो[1], दण्डिना; सयम्भु, सयम्भुवो, सयम्भुना।

अघो ति किमत्थं ? कञ्ञं, कञ्ञा[2], कञ्ञायो, कञ्ञाय। एकवचन-योस्विति किमत्थं ? इत्थीहि, सयम्भूहि।

चसद्दग्गहणमवधारणत्थं—नदिं, नदियो, नदिया।

अपिग्गहणेन न रस्समापज्जते—इत्थी, भिक्खुनी।

---

८४. **अघो रस्समेकवचनयो स्वपि चे**[1] तिदं 'घो रस्सं' ति (६६) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति ? 'घो रस्सं' ति सुत्तेन संसास्वेकवचनेसु घस्स रस्सत्तं वुत्तं; एवं सति इत्थि दण्डि सयम्भुं वधुं त्यादिसु अघस्स झ-ल-पस्स रस्सत्तं कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, इत्थि दण्डि सयम्भुं वधुं त्यादिसु एकवचन-योसु रस्सत्तं होती ति दस्सेन्तेन. 'अघो····पि चे' ति वुत्तं। 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं; अनुरूपा पन निक्खन्तिकथा वत्तब्बा। किमत्थमिदमुच्चते ? अघो सरो रस्समापज्जते एकवचन-यो इच्चेतेसु परेसू ति ञापनत्थमिदमुच्चते। पञ्चपदमिद सुत्तं। अघो ति कारी, रस्सं ति कारियं, एकवचन-योसू ति निमित्तसत्तमी, अपी ति पटिसेधो, चा ति अवधारणनिद्देसो, सञ्ञा ····पे०····विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। पदत्थो सुविञ्ञेय्यो व[2]। न घो अघो; अकारस्स अञ्ञथत्ता घतो अञ्ञे झ-ल-पा अघा नामा त्यत्थो[3]। अपिसद्देन पनेत्थ द्वीसु लिङ्गेसु येव झलपानं रस्सत्तं निसेधेति, तञ्च खो सिम्हि विभत्तिम्हि येव[4]; तेन इत्थि, दण्डि, सयम्भुं, अभिभुं ति रूपानि भवन्ति। नपुंसके पन सिम्हि वचने सुखकारि, सीघयायि इति रस्सत्तेन रूपानि होन्ति। अयञ्चापिसद्दो द्वीसु लिङ्गेसु येव सिम्हि निसेधेति, न नपुंसके सिम्हि विभत्तिम्हि निसेधेति; तेन सुखकारि इत्यादीनि रूपानि रस्सत्तेन भवन्ति। चसद्देन पनेत्थ ठपेत्वा अपिग्गहणफलं अवसेसेसु एकवचन-योसु इमिना सुत्तेन वुत्तविधानस्स सन्निट्ठानं करोति।

---

१. नत्थि से० पोत्थके। २. नत्थि से०, सी० १ पोत्थकेसु।

1. तु०—"अमादेसेकवचन-यो-नोस्वघो रस्सं"—सद्द०, सु० २३७।
2. "घसञ्ञकआकारवज्जितो लिङ्गस्सन्तो सरो रस्समापज्जते एकवचनेसु योसु च परेसू ति"—रूप०, सु० १४४।
3. तु०—"न घो ति अघो, झ-ल-पानं एतं अधिवचनं"—क० न्या०, पि० १११।
4. तु०—"अपिग्गहणं सिम्हि निवत्तनत्थं"—रूप०,;सु० १४४।

इत्थिं त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ इत्थिं ति इत्थीसद्दतो दुतियेकवचनं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'आलपने....' (५७), 'इवण्णु....' (५८) त्यधिकिच्च 'ते इत्थिख्या पो' ति (५९) पसञ्ञं कत्वा, इमिना रस्सं कत्वा, 'अम्मो....' ति (८२) अं-वचनस्स निग्गहीतत्ते कते रूपं। इत्थियो ति इत्थीसद्दतो पठमाबहुवचनं वा दुतियाबहुवचनं वा कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, वुत्तनयेन पसञ्ञं कत्वा, इमिना अघस्स रस्सत्ते कते रूपं। इत्थिया ति इत्थीसद्दतो ततियेकवचनं वा चतुत्थेकवचनं वा पञ्चमी-छट्ठी-सत्तमी-एकवचनं वा कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, वुत्तनयेन पसञ्ञञ्च कत्वा, तासं 'आय....' (१०९), 'घतो नादीनं' (१११) त्यधिकिच्च 'पतो या' ति (११२) यादेसं कत्वा, वुत्तनयेन रस्सत्ते कते रूपं। वधुं त्यादीनि सुविञ्ञेय्यानेव। दण्डिनं ति दण्डीसद्दतो वुत्तनयेन दुतियेकवचनं कत्वा, इमिना अघस्स रस्सत्तं कत्वा, 'अं यमीतो ....' (२२३) त्यधिकिच्च 'नं झतो....' ति (२२४) नं-आदेसे कते रूपं। दण्डिनो ति दण्डीसद्दतो वुत्तनयेन चतुत्थेकवचनं वा छट्ठेकवचनं वा कत्वा, 'झलतो....' ति (११७) नो-आदेसे च रस्सत्ते च कते रूपं; यो-वचनं कत्वा वा 'नं झतो....' त्यधिकिच्च 'योनन्नो' ति (२२५) योवचनस्स नो-आदेसे च रस्सत्ते च कते रूपं। दण्डिना ति ततियेकवचन-नाविभत्ति-करणमेव विसेसो। सयम्भुं ति दुतियेकवचनं कत्वा, ऊकारस्स लसञ्ञं कत्वा, लस्स रस्सत्तं कत्वा, 'अम्मो....' ति अं-वचनस्स निग्गहीतादेसे कते रूपं। सयम्भुवो ति सयम्भूसद्दतो यो-वचनं कत्वा, 'घपतो च....' (११८) त्यधिकिच्च 'लतो....' ति (११९) यो-वचनस्स वोकारं कत्वा, इमिना रस्सत्ते कते रूपं। इतरं सुविञ्ञेय्यमेव।

कञ्ञं त्यादीनि किमुदाहरणानि? तत्थ च कञ्ञं ति कञ्ञासद्दतो वुत्तनयेन दुतियेकवचनं कत्वा, 'आलपने....', 'ते इत्थिख्या पो' त्यधिकिच्च 'आ घो' ति (६०) घसञ्ञं कत्वा, "अघो" ति वुत्तत्ता सति पि एकवचने इमिना रस्सत्तमकत्वा, सरलोप-पकतिभावादिम्हि कते रूपं। कञ्ञायो ति एत्थ बहुवचनकरणमेव विसेसो। कञ्ञाया ति कञ्ञासद्दतो ततियेकवचनं वा चतुत्थेकवचनं वा पञ्चमी-छट्ठी-सत्तमी-एकवचनं वा कत्वा, 'आय..तू' त्यधिकिच्च 'घतो नादीनं' तिमिना नादीनं आयादेसे कते, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं।

इत्थीहि, सयम्भूही ति पि किमुदाहरणानि? तत्थ च इत्थीहि, सयम्भूही ति इत्थी-सयम्भूसद्देहि वुत्तनयेन हिविभत्तिं कत्वा, सति पि अघत्ते एकवचन-योनमभावा इमिना रस्सत्ते अकते रूपानि। नदिं, नदियो, नदिया ति चग्गहण-फलानि। तत्थ च नदिं, नदिया ति नदीसद्दतो दुतियेकवचनं वा ततियेक-वचनं वा कत्वा, वुत्तनयेन पसञ्ञं कत्वा, निग्गहीतत्तं वा यादेसं वा कत्वा, इमिना चग्गहणेन रस्सत्ते कते रूपं। एत्थ 'अपिग्गहणं' सामञ्ञविधि; 'न सिस्मिमनपुंसकानी' ति (८५) विसेसविधि, अपिसद्दस्स नियामभावेन वुत्तत्ता। तस्मा नियमितब्ब-नियाम-

८५. न सिस्मिमनपुंसकानि । २. १. ३४ ।

सिस्मिं अनपुंसकानि लिङ्गानि न रस्समापज्जन्ते । इत्थी, दण्डी, सयम्भू, वधू, भिक्खुनी ।

सिस्मिन्ति किमत्थं ? भोति इत्थि, भो सयम्भु, भोति वधु, भो[1] दण्डि[1] । अनपुंसकानी ति किमत्थं ? सुखकारि दानं, सुखकारि सीलं, सिघयायि चित्तं ।

कानं विसेसं ठपेत्वा, एकवचन-योसु रस्सत्तं नियतं ति चसद्देन सन्निट्ठानं करोति[1]। इत्थी, भिक्खुनी ति अपिग्गहणफलानि[2] । तत्थ च इत्थी-भिक्खुनी इच्चेतेहि पाटिपदिकेहि सिविभत्तिं कत्वा, अघत्ते सति पि अपिसद्देन सिविभत्तिम्हि रस्सभावस्स निवारितन्तं रस्सत्ते अकते रूपं ।

८५. न सिस्मिमनपुंसकानी[3] तिदं 'अघो रस्स····पि चा' ति (८४) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'अघो रस्स····पि चा' तिमिना एकवचन-योसु रस्सत्तं वुत्तं, अपिसद्देन पन रस्सत्तं निसेधितं ; किं अपिसद्देन सब्बेसु लिङ्गेसु सब्बेसु एकवचन-योसु निसेधितन्ति पुच्छाय सति, द्वीसु येव लिङ्गेसु सिम्हि येव निसेधेती ति अपिसद्दस्स नियमं कत्वा दस्सेतुं, 'न सिस्मिमनपुंसकानी' ति वुत्तं । 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि वा निक्खन्तन्ति वत्तब्बं; अनुरूपा निक्खन्तिकथा वत्तब्बा । किमत्थमिदमुच्चते ? सिस्मिं अनपुंसकानि लिङ्गानि न रस्समापज्जन्ते ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । ना ति पटिसेधनं, सिस्मि ति निमित्तसत्तमी, अनपुंसकानी ति

१-१. भोति दण्डिनि-से० ।

1–2. तु०—"अनेकत्थत्ता निपातानं चग्गहणस्स च निपातत्ता तप्फलं दस्सेन्तो 'चग्गहणमवधारणत्थं' ति आह । अयं पनेत्थ अत्थो—सचे एकवचन-योस्वघो अत्थि 'न सिस्मिमनपुंसकानी' तिमस्सा पिग्गहणस्स च विसये ठपेत्वा रस्सो होति येवा ति । अवधारणसद्दो हि निवत्तनत्थो । इदं हि वुत्तट्ठाने अघस्स कदाचि पि रस्सत्तानुपगमनं निवारेति । नदिया, नदियो ति तत्थोदाहरणानि····इत्थी, भिक्खुनी ति अपिग्गहणफलानि । तानि किञ्चा पि 'न सिस्मिमनपुंसकानी' ति इमिना व सिज्झन्ति, तथा पि इमिना पि सिज्झन्ती ति दस्सनत्थं इहेव वुत्तानी ति दट्ठब्बानि । अथ वा 'न सिस्मिमनपुंसकानी' ति इदं पन नासम्पत्ते विधानं; अथ खो सम्पत्ते ति नियमो अपिग्गहणेनेव हि सिद्धे पि सिद्धे सत्यारम्भो नियमाय होती ति इदं वुत्तं होति; सचे 'न सिस्मिमनपुंसकानि' च रस्समापज्जन्ते तानि अनंपुसकानेवा ति"—क० न्या०, पि० ११२-११३ ।

3. तु०—"अनपुंसकानि सिम्हि"—सद्द०, सु० २३६ ।

८६. उभादितो नमिन्नं। २. १. ३५।

उभ इच्चेवमादितो नं-वचनस्स इन्नं होति। उभिन्नं, दुविन्नं।

उभादितो ति किमत्थं? उभयेसं।

कारी, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं। विधिनियमत्ता अनन्तरसुत्ततो रस्सग्गहण-मिह नग्गहणेन सम्बन्धो होति; तेन अनपुंसकानि लिङ्गानि न रस्समापज्जन्ते सिम्हि विभत्तिम्ही त्यत्थो। न नपुंसकानि अनपुंसकानि, इत्थिपुमवचनानि। कस्मा पनिदं सुत्तं वुत्तं, ननु पुरिमसुत्ते अपिग्गहणेनेव सिज्झं ति? सच्चं; तथा पिसद्देन सामञ्ञतो निसेधनं करोति, इमिना पन सुत्तेन सिम्हि विभत्तिम्हि द्वीसु लिङ्गेसु येव रस्सत्तं नापज्जती ति नियमेत्वा व निसेधनं करोती ति पुन वुत्तं ति।

इत्थी, दण्डी, सयम्भू, वधू, भिक्खुनी त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ इत्थी त्यादीहि सिविभत्तिं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, कमेन झ-ल-पसञ्ञं कत्वा, सति पि एकवचनस्मिं परे अघे इमिना नियमं कत्वा, अपिसद्देन रस्सत्तनिवत्तने कते रूपं। भोति इत्थि त्यादीनि किमुदाहरणानि? तत्थ भोती ति भवन्तसद्दतो ईप्पच्चयं कत्वा, 'न्तुस्स तमीकारे' ति (२४१) वत्तमाने 'भवतो भोतो' ति (२४२) भवन्तसद्दस्स भोतादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, भोतीसद्दतो आलपनेकवचनं कत्वा, तस्स गसञ्ञं कत्वा, सति पि अनपुंसकत्ते सिस्साभावामिना रस्सत्तमकत्वा, 'भो गे तू' ति (२४२) वत्तमाने 'झलपा रस्सं' ति (२४७) रस्सं कत्वा, वुत्तनयेन गम्हि लुत्ते रूपं। इतरानि वुत्तसदिसानेव। सुखकारि दानं त्यादीनि किमुदा-हरणानि? तत्थ च सुखकारीसद्दतो स्युप्पत्तिं कत्वा, सति पि सिवचने अनपुंसकाभावा इमिना पटिसेधमकत्वा, 'अघो रस्स····' ति (८४) सुत्तेन रस्सं कत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपं। इतरानि तस्सदिसानेव।

८६. उभादितो नमिन्नं[1] तिदं 'सब्बतो नं संसानं' ति (१६८) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति? 'सब्बतो नं संसानं' तिमिना सब्बासं, सब्बेसानं ति सब्बनामतो संसानमादेसा वुत्ता; एवञ्च सति उभसब्बनामतो नंवचनस्स संसानमादेसं कत्वा उभेसं उभेसानं ति रूपं भवेय्य, उभिन्नं ति रूपं न भवेय्या ति पुच्छाय सति, उभसब्बनामतो नंवचनस्स इन्नमादेसं कत्वा उभिन्नं ति रूपं भवती ति दस्सेन्तेन, 'उभादितो नमिन्नं' ति वुत्तं। 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तं ति पि वत्तब्बं; तदनुरूपा निक्खन्तिकथा वत्तब्बा। किमत्थ-मिदमुच्चते? उभ इच्चेवमादितो सब्बनामतो नंवचनस्स इन्नमादेसो होती ति ञापनत्थं। उभादितो ति अवधि, तं ति कारी, इन्नं ति कारियं, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति

---

1. तु० — "उभस्मा नमिन्नं"—सद्द०, सु० २४१; "द्वितो च"—त०, सु० २४२; "नम्हि द्विस्स दुवि"—त०, सु० २४४।

८७. इण्णमिण्णन्नं तीहि सङ्ख्याहि । २. १. ३६ ।

नं-वचनस्स इण्णं-इण्णन्नं इच्चेते आदेसा होन्ति तीहि सङ्ख्याहि । तिण्णं, तिण्णन्नं ।

तीही ति किमत्थं ? द्विन्नं ।

दट्ठब्बं । उभ इच्चेवमादितो नंवचनस्स इन्नमादेसो होती ति अत्थो । रूपसिद्धियम्पन उभसद्दो एकन्तसब्बनामवसेन वुत्तो[1]; न्यासे पन द्विसद्दस्स कारियभावेन वुत्तं[2] । आदि-सद्दस्स पकारत्थत्ता द्वयक्खरं संगण्हाति ।

उभिन्नं ति द्विसद्दतो छट्ठीबहुवचनं* कत्वा, 'योसु द्विन्नं·····' ति (१३२) एत्थ चग्गहणेन नम्हि द्विसद्दस्स उभादेसं कत्वा, इमिना नंवचनस्स इन्नमादेसं कत्वा, सरलोप-पकतिभावादिम्हि कते रूपं । दुविन्नं तिदं पन द्विसद्दतो नंवचनं कत्वा, तेनेव चग्गहणेन दुवि-आदेसं कत्वा, आदिसद्दस्स पकारत्थत्ता इमिना इन्नमादेसं कत्वा, सरलोपपकति-भावादिम्हि कते रूपं । उभयेसं ति किमुदाहरणं ? तं पन द्विसद्दतो नंवचनं कत्वा, तेनेव चग्गहणेन द्विसद्दस्स उभयादेसं कत्वा, सति पि नंवचने उभादीनमभावा इमिना नंवचनस्स इन्नादेसमकत्वा, 'सब्बनामकारते पठमो' (१६४) त्यधिकिच्च 'सब्बतो नं संसानं' ति (१६८) नंवचनस्स सं-आदेसं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'सुहिस्वकारो ए' (१०१) त्यधिकिच्च 'सब्बनामानं नम्हि चे' ति (१०२) अकारस्सेत्तं कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं ।

८७. इण्णमिण्णन्नं तीहि सङ्ख्याही[3] तिदं 'उभादितो नमिन्नं' ति (८६) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति**। 'उभादितो नमिन्नं' ति सुत्तेन द्विसद्दतो नंवचनस्स इन्नमादेसो वुत्तं; एवं सति तिण्णं तिण्णन्नं त्यादीनि रूपानि कथं सिज्झेय्युं ति पुच्छाय सति, तिण्णं तिण्णन्नं त्यादीनि रूपानि तिसद्दतो नंवचनस्स इण्णमिण्णन्नमादेसं कत्वा सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'इण्णमिण्णन्नं तीहि सङ्ख्याही' ति वुत्तं । किमत्थमिद-मुच्चते ? तीहि सङ्ख्याहि नंवचनस्स इण्णमिण्णन्नं इच्चेते आदेसा होन्ती ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । इण्णमिण्णन्नं ति कारियं, तीही ति तब्बिसेसनं, सङ्ख्याही ति अवधि, सञ्ञा·····पे०·····विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं । अनन्तरसुत्ततो नंवचस्सानुवत्तनतो तीहि सङ्ख्याहि

---

* छट्ठि०—सी० । ** सी० पोत्थके नत्थि ।

1. ''सब्ब-कतर-कतम···उभ-द्वि-ति···इति सत्तवीसति सब्बनामानि''—रूप०, सु० २००, तु०—''सर्वादीनि सर्वनामानि''—पा० १. १. २७ ।

2. क० न्या०, पि० ११४ ।

3. तु०—''तितो इण्णमिण्णन्नं''—सद्द०, सु० २४३ ।

८८. योसु कतनिकारलोपेसु दीघं । २. १. ३७ ।

सब्बे सरा योसु कतनिकारलोपेसु दीघमापज्जन्ते । अग्गी, भिक्खू, रत्ती, यागू, अट्ठी, अट्ठीनि, आयू, आयूनि, सब्बानि, यानि, तानि, कानि, कतमानि,[1] एतानि, अमूनि, इमानि ।

योस्विति किमत्थं ? अग्गि, भिक्खु, रत्ति, यागु[2], सब्बो, यो, सो, को, अमुको । कतनिकारलोपेस्विति किमत्थं ? इत्थियो, वधुयो, सयम्भुवो । पुनरारम्भग्गहणं किमत्थं ? निच्चदीपनत्थं । अग्गी, भिक्खू, रत्ती, यानि, तानि, कतमानि ।

नंवचनस्स इण्णं-इण्णन्नं इच्चेते आदेसा होन्ती ति अत्थो । तीही ति बहुवचनं तिसद्दतो बहुवचनमेव होती ति दस्सनत्थं वुत्तं[1] । विग्गहो सुविञ्ञेय्यो व ।

तिण्णं, तिण्णन्नं त्यादीनि उदाहरणानि । तानि तिसद्दतो नंवचनं कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना नंवचनस्स इण्णं-इण्णन्नं आदेसद्वये कते रूपानि । तीही ति किमुदाहरणं, तं सुविञ्ञेय्यमेव ।

८८. योसु कतनिकारलोपेसु दीघं[2] तिदं 'झलतो सस्स नो वा' (११७), 'घपतो च योनं लोपो' (११८), 'योनन्नि नपुंसकेहि' (२१७), 'अतो निच्चं' (२१८) ति सुत्तेहि निक्खन्तं ? किन्निक्खन्तन्ति ? 'झलतो····वा', 'घपतो····लोपो', योनन्नि····', 'अतो निच्चं' ति सुत्तेहि झ-ल-घ-पतो योनं लोपो वुत्तो, नपुंसकलिङ्गेहि योनं नि-आदेसो च वुत्तो; एवं च सति अग्गि भिक्खु अट्ठि अट्ठीनि आयु आयूनि सब्बानि इति रस्सन्तेनेव भवेय्युं, कथं अग्गी भिक्खू अट्ठी अट्ठीनि आयू आयूनी ति रूपानि भवेय्युं ति पुच्छाय सति, योसु कतनिकारलोपेसु सब्बे सरा दीघं पप्पोन्ती ति दस्सेतुं, 'योसु कतनिकारलोपेसु दीघं' ति वुत्तं । 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं । किमत्थमिदमुच्चते ? योसु कतनिकारलोपेसु सब्बे सरा दीघमापज्जन्ते ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । योसू ति भावसत्तमी, कतनिकारलोपेसू ति भावलक्खण-निद्देसो, दीघं ति कारियं, सञ्ञा*····पे०····**विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं । योसु वचनेसु कतनिकारलोपेसु सब्बे सरा दीघमापज्जन्ते त्यत्थो । निकारो च लोपञ्च निकारलोपा;

---

१. नत्थि से०, सी०१ पोत्थकेसु । २. इत्थि–सी०१; नत्थि से० पोत्थके ।

*-** सी० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—"एत्थ च तीहि सङ्ख्याही ति बहुवचननिद्देसो सङ्ख्यावाचकतो तिसद्दतो बहुवचनमेव होती ति ञापनत्थं; पकति हेसाचरियानं येन केनचि आकारेनाधिप्पायविञ्ञापनं—" क० न्या०, वि० ११५ ।

2. तु०—"योसु दीघं कतलोपनिकारेसु"—सद्द०, सु० २४५ ।

कतानि निकारलोपानि येसं तानि कतनिकारलोपानि, तेसु कतनिकारलोपेसु; योसू ति इमिना तुल्याधिकरणं[1]। यो च यो च यो, तेसु योसु। सरलोपादिसुत्ततो सरसद्दो कारिभावेन इधानुवत्तते। वुत्तियं सब्बसद्देन च तोसु लिङ्गेसु सरा गहिता।

अग्गी त्यादीन्युदाहरणानि। तत्थ च अग्गी ति अग्गिसद्दतो योवचनं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, 'आलपने····' (५७) त्यधिकिच्च 'इवण्णु····' ति (५८) इवण्णस्स झसञ्ञं कत्वा, 'झलतो सस्स····' (११७) त्यधिकिच्च 'घपतो च····' ति (११८) झतो योवचनस्स लोपं कत्वा, इमिना दीघे कते रूपं। भिक्खू, रत्ती, अट्ठीनि त्यादीनि सुविञ्ञेय्यानेव। भिक्खुसद्दतो पन लनिमित्तेन लोपो, रत्ति-यागुतो पनिमित्तेन लोपो, अट्ठिसद्दतो झनिमित्तेन लोपो[2]। अट्ठीनी ति अट्ठिसद्दतो योवचनं कत्वा, 'घपतो स्मिं यं वा' (२१६) त्यधिकिच्च 'योन्नन्नि····' ति (२१७) निकारं कत्वा, दीघे कते रूपं। इतरद्वयं वुत्तनयमेव। सब्बानी ति सब्बसद्दतो योवचनं कत्वा, 'योन्नन्नि····' त्यधिकिच्च 'अतो निच्चं' ति (२१८) नि-आदेसं कत्वा, इमिना दीघे कते रूपं। इतरद्वे तस्सदिसानेव। कानी ति किंसद्दस्स 'किस्स क वे चे' ति (२२७) एत्थ चग्गहणेन कादेसकरणमेव विसेसो। अमूनी ति यो-वचनस्स नि-आदेसं कत्वा, इमिना दीघे कते रूपं। इतरं तस्सदिसमेव।

अग्गि इत्यादीनि किमुदाहरणानि? तत्थ च अग्गि-भिक्खु-रत्ति-इत्थि इच्चेतेहि पाटिपदिकेहि सिवचनं कत्वा, सन्तेसु पि सरेसु योवचनस्साभावा इमिना दीघमकत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपानि। सब्बो, यो ति एत्थ सिवचनस्स ओकारकरणमेव विसेसो। सो ति तसद्दतो सिवचनं कत्वा, 'एततेसन्तो' ति (१७४) तकारस्स सकारकरणमेव विसेसो। को ति किंसद्दतो सिवचनं कत्वा, वुत्तनयेन कादेसे कते रूपं। इत्थियो त्यादीनि किमुदाहरणानि? तत्थ च इत्थियो, वधुयो ति इत्थी-वधूसद्देहि योवचनं कत्वा, 'अघो रस्स····' ति (८४) अघस्स रस्सं कत्वा, सति पि योवचने कतनिकारलोपाभावा दीघस्मिं अकते रूपं। सयम्भुवो ति सयम्भूसद्दतो योवचनं कत्वा, 'लतो वोकारे चे' ति (११९) वोकारं कत्वा, लोपाभावा दीघस्मिं अकते रूपं।

पुनारम्भग्गहणं किमत्थं ति एत्थ आरम्भो आदो; आरम्भित्वा योसू ति पुनारम्भग्गहणं निच्चदीपनत्थं ति योसु कतनिकारलोपेसु पुब्बसरानं दीघभावस्स निच्चदीपनत्थं। इदं वुत्तं होति—'घपतो च योनं लोपो' ति (११८) सुत्तस्स अनन्तरे इमस्मिं सुत्ते वुच्चमाने, योनं ति पदस्स विभत्तिविपरिनामवसेन योसू ति अनुवत्तनतो कतनिकारलोपेसू ति एत्तके वुत्ते सिद्धे, योसू ति पुनग्गहणं दीघभावस्स निच्चदीपनत्थं होती ति[3]।

1. तु०—क० न्या०, पि० ११५।
2. तु०—त०, पि० ११६।
3. तु०—त०, पि० ११७।

८९. सुनंहिसु च । २. १. ३८ ।

सु-नं-हि इच्चेतेसु च सब्बे सरा दीघमापज्जन्ते । अग्गीसु, अग्गीनं, अग्गीहि ; भिक्खूसु, भिक्खूनं भिक्खूहि ; रत्तीसु[1], रत्तीनं, रत्तीहि[1]; पुरिसासु[2], पुरिसानं, पुरिसाहि[2] ।

एतेस्विति किमत्थं ? अग्गिना, पाणिना, दण्डिना[3] ।

चसद्दग्गहणमवधारणत्थं—सुखेत्तेसु ब्रह्मचारीसु धम्ममक्खासि भगवा[4], भिक्खूनं दानं दत्वा सकेहि पाणीहि[5] ।

---

८९. सुनंहिसु चा[1] तिदं 'योसु····दीघं' ति (८८) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? अग्गी, अट्ठीनी त्यादिसु योनं निकारलोपे कते पुब्बसरानं दीघता वुत्ता ; एवं सति अग्गीसु अग्गीनं अग्गीहि त्यादीनि रूपानि कथं सिज्झेय्युं ति पुच्छाय सति, अग्गीसु त्यादिसु सु-नं-हिसु पि दीघं कत्वा सिज्झन्ती ति दस्सेतुं, 'सुनंहिसु चे' ति वुत्तं । 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं । किमत्थमिदमुच्चते ? सु-नं-हि इच्चेतेसु परेसु सब्बे सरा दीघमापज्जन्ते ति ञापनत्थं । सुनंहिसू ति एकं, चा ति एकन्ति द्विपदमिदं । सुनंहिसू ति निमित्तसत्तमी, चा ति अवधारणं, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं । दीघग्गहणमिहानुवत्तते । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । सु च नं च हि चा ति, तथा, तेसु ।

अग्गीसू त्यादीन्युदाहरणानि । तत्थ अग्गीसू ति अग्गिसद्दतो सत्तमीबहुवचनं कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना सुविभत्तिम्हि दीघे कते रूपं । सेसं सुविञ्ञेय्यमेव । अग्गिना, पाणिना त्यादीनि किमुदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव । ब्रह्मचारीसू त्यादीनि चग्गहणफलानि । तत्थ ब्रह्मचारी-भिक्खु-पाणिसद्देहि सु-नं-हि विभत्तियो कत्वा, इध चग्गहणेन दीघत्तं निवारेत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा ।

१-१. नत्थि से० पोत्थके । २-२. पुरिसानं—सी० १, सो० २ ।

३. नत्थि से० पोत्थके । ४. नत्थि सी० १ पोत्थके । ५. पाणेहि—से० ।

1. तु०—"सुनंहिसु"—सद्द०, सु० २४६ ।

९०. पञ्चादीनमत्तं । २. १. ३९ ।

पञ्चादीनं सङ्ख्यानमन्तो अत्तमापज्जते सु-नं-हि इच्चेतेसु परेसु[1] । पञ्चसु, पञ्चन्नं, पञ्चहि ; छसु, छन्नं, छहि ; सत्तसु, सत्तन्नं, सत्तहि ; अट्ठसु, अट्ठन्नं, अट्ठहि; नवसु, नवन्नं, नवहि; दससु, दसन्नं, दसहि ।

पञ्चादीनमिति किमत्थं ? द्वीसु, द्विन्नं, द्वीहि ।

अत्तमिति भावनिद्देसो उभयसागमत्थं[2]; अन्तो उकारो अत्तमापज्जते । चतस्सन्नं इत्थीनं, तिस्सन्नं[3] वेदनानं ।

---

९०. **पञ्चादीनमत्तं**[1] तिदं 'सुनंहिसु चे' ति (८९) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति ? 'सुनंहिसु चे' ति सुत्तेन सु-नं-हि इच्चेतेसु पुब्बसरानं दीघत्तं वुत्तं; एवं सति पञ्चसु पञ्चन्नं पञ्चही ति रूपानि कथं सिज्झेय्युं ति पुच्छाय सति, सु-नं-हि इच्चेतेसु पञ्चादीनमन्तसरस्स अत्तं होती ति दस्सेतुं, 'पञ्चादीनमत्तं' ति वुत्तं । 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं । किमत्थमिदमुच्चते ? पञ्चादीनमन्तो अत्तमापज्जते सु-नं-हि इच्चेतासु विभत्तिसू ति ञापनत्थं । पञ्चादीनं ति एकं, अत्तं ति एकन्ति द्विपदमिदं । पञ्चादीनं ति अवयवापेक्खा-छट्ठी, अत्तं ति कारियं, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अनन्तरसुत्ततो सु-नं-हि इच्चेते इहानुवत्तन्ते । तेन पञ्चादीनमन्तो सरो अत्तमापज्जते सु-नं-हि इच्चेतेसु परेसू त्यत्थो । पञ्चसद्दो आदि येसं ते पञ्चादयो, तेसं पञ्चादीनं; आदिसद्देन अट्ठारसन्ता सङ्ख्या गहेतब्बा । ननु च इमिना सुत्तेन कते रूपं पुब्बरूपेन न किञ्चि विसिट्ठं ति[2] ? सच्चं ; तथा पि 'सुनंहिसु च', 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) एवमादीनं सुत्तानं निवारणत्थं वुत्तं[3] ।

पञ्चसु, पञ्चन्नं, पञ्चही त्यादीन्युदाहरणानि । तत्थ पञ्चसद्दतो सु-नं-हि-वचनानि कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, वुत्तनयेन एत्थ दीघत्तादिम्हि सम्पत्ते, 'सुनंहिसु चे' त्यधिकिच्च इमिना अत्ते कते रूपं। द्वीसू त्यादीनि किमुदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

---

१. नत्थि से०, सी०१ पोत्थकेसु । २. उभयस्सागमनत्थं-सी० २ । ३. तिस्सण्णं-सी० २ ।

1. तु०—"पञ्चादीनमन्तो अत्तं, योसु च"—सद्द०, सु० २४७ ।

2-3. तु०—क० न्या०, पि० ११८ ।

९१. पतिस्सिनीम्हि[1] । २. १. ४० ।

पतिस्सन्तो अत्तमापज्जते इनीम्हि[2] पच्चये परे । गहपतानी ।

इनीम्ही ति किमत्थं ? गहपति ।

"अत्तमितिभावनिद्देसो" ति एत्थ अकारस्स भावो अत्तं ति भावतद्धितनिद्देसो; "उभयस्सागमत्थं"* ति सकारद्वयागमत्थं ति अत्थो। एत्थ च अत्तं ति भावनिद्देसो सकारद्वयागमत्थं च होति, अन्तो उकारो च अत्तमापज्जते त्यत्थो । चतस्सन्नं त्यादीन्युदाहरणानि । तत्थ चतुसद्दतो नम्हि कते इमिना भावनिद्देसेन सकारद्वयागमञ्च उकारस्सत्तञ्च कत्वा, नकारागमे च कते रूपं । इतरं सकारद्वयागमवसेन वुत्तं ।

९१. पतिस्सिनीम्ही[1] तिदं 'पञ्चादीनमत्तं' ति (९०) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति ? 'पञ्चादीनमत्तं' ति सुत्तेन सु-नं-हिसु अत्तं वुत्तं; एवं सति गहपतानी ति एत्थ कथमिकारस्स अत्तं भवेय्या ति पुच्छाय सति, इनीम्हि परे पतिसद्दन्तस्स इकारस्स च अकारो होती ति दस्सेतुं, 'पतिस्सिनीम्ही' ति वुत्तं। हेट्ठा वुत्तनयेन वा निक्खन्तिकथा कथेतब्बा। किमत्थमिदमुच्चते ? पतिसद्दस्सन्तो इनीम्हि पच्चये परे अत्तमाज्जते ति ञापनत्थं । पतिस्सा ति एकं, इनीम्ही ति एकन्ति द्विपदमिदं। पतिस्सा ति अन्तापेक्खाछट्ठी, इनीम्ही ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा पे०.... विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। अनन्तरसुत्ततो अत्तग्गहणमिहानुवत्तते। तेन पतिसद्दन्तस्स इनीम्हि परे अत्तं होती त्यत्थो ।

गहपतानो त्युदाहरणं । तस्स पन गहपतिसद्दतो 'इत्थियमतो आप्पच्चयो' (२३७) त्यधिकिच्च 'पति....इनी' ति (२४०) इनीपच्चयं कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना इनीम्हि पतिसद्दन्तस्सत्तं कत्वा, 'सरा सरे लोपं' (१२) त्यधिकिच्च 'वा परो असरूपा' ति (१३) परसरस्स लोपं कत्वा, 'सरा सरे....', 'वा परो....', 'क्वचासवण्णं लुत्ते' (१४), 'दीघं' (१५) त्यधिकिच्च 'पुब्बो चे' ति (१६) पुब्बसरस्स दीघं कत्वा, ततो स्युप्पत्ति कत्वा, सिलोपे कते रूपं । इतरं सुविञ्ञेय्यमेव ।

---

१. ०निम्हि-से० । २. इनिम्हि-से० ।

* उभयस्सागमनत्थं—सी० ।

1. तु०—"पतिस्सिनीपच्चये"—सद्द०, सु० २४८; "पतिभिक्खुराजीकारन्तेहि इनी"—क० सु० २४०; "पत्यादिभिक्खादि-राजादीवन्तेहि इनी"—म०, सु० ४६६ ।

९२. न्तुस्सन्तो योसु च । २. १. ४१ ।

न्तुप्पच्चयस्सन्तो अत्तमापज्जते सु-नं-हि-यो इच्चेतेसु[1] । गुणवन्तेसु, गुणवन्तानं, गुणवन्तेहि, गुणवन्ता, गुणवन्ते ।

न्तुस्सेति किमत्थं ? इसीनं । एतेस्विति किमत्थं ? गुणवा ।

चसद्दग्गहणेन अञ्ञेसु च[2] वचनेसु अत्तं[3] च होति । गुणवन्तस्मिं, गुणवन्तेन ।

अन्तग्गहणेन न्तुप्पच्चयस्सन्तो[8] अत्तञ्च होति, योनं इकारो च, गुणवन्ति ।

---

९२. **न्तुस्सन्तो योसु चे[1]** तिदं 'सुनंहिसु च' (८९), 'पञ्चादीनमत्तं' (९०), पतिस्सिनीम्ही' ति (९१) सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति ? 'सुनंहिसु च', 'पञ्चादीनमत्तं' ति सुत्तेहि पञ्चादीनमन्तस्सत्तं, इनीम्हि च 'पतिस्सिनीम्ही' ति सुत्तेन पतिसद्दन्तस्सत्तं वुत्तं; एवं सति गुणवन्तेसु गुणवन्तानं गुणवन्तेहि गुणवन्ता गुणवन्ते त्यादिसु पयोगेसु यथावुत्तविभत्तीसु गुणवन्तेसु त्यादि-रूपा कथं भवेय्युं ति पुच्छाय सति, यथावुत्तासु विभत्तीसु न्तुस्सुकारस्सत्तं कत्वा तानि रूपानि सिज्झन्ती ति दस्सेतुं, 'न्तुस्सन्तो योसु चे' ति वुत्तं। हेट्ठा वुत्तेहि 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५२), 'ततो च विभत्तियो' (५४) त्यादीहि सुत्तेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं। किमत्थमिदमुच्चते ? न्तुस्सन्तो सु-नं-हि-यो इच्चेतासु विभत्तीसु परासु अत्तमापज्जते ति ञापनत्थं। न्तुस्से ति एकं, अन्तो ति एकं, योसू ति एकं, चा ति एकन्ति चतुप्पदमिदं सुत्तं। न्तुस्से ति हअयवापेक्खाछट्ठी, अन्तो ति कारी, योसू ति निमित्तसत्तमी, चा ति समुच्चयनिद्देसो, सञ्ञा''''पे०''''विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। सु-नं-हिग्गहणस्स च अत्तग्गहणस्स चानुवत्तनतो न्तुस्सन्तो सु-नं-हि-यो इच्चेतेसु विभत्तिवचनेसु अत्तमापज्जते त्यत्थो।

गुणवन्तेसु गुणवन्तानं गुणवन्तेहि गुणवन्ता गुणवन्ते ति उदाहरणानि। तत्थ च गुणवन्तुसद्दतो यथावुत्तविभत्तियो यथाक्कमं कत्वा, एतासु विभत्तीसु उकारस्सत्तं कत्वा, तीसु उदाहरणेसु सु-नं-हिसु 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) एकारे च, 'सुनंहिसु चे' ति (८९) दीघे च कते रूपं। द्वीसु पन योसु उकारस्सत्तं कत्वा, 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) योनं यथाक्कमं आकारत्तञ्च एकारत्तञ्च कत्वा रूपं। इसीनं ति किमुदाहरणं, तं सुविञ्ञेय्यमेव। गुणवा ति किमुदाहरणं ? तं पन गुणवन्तुसद्दतो पठमेकवचनं

---

१. इच्चेतेसु परेसु-सा० २। २. नत्थि सी० १ पोत्थके। ३. नत्थि से० पोत्थके।

1. तु०—''न्तुस्स अं-यो-ना-हि-स-नं-सु-स्मा-स्मिसु—सद्द०, सु० २४६।

९३. सब्बस्स वा अंसेसु । २. १. ४२ ।

सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स अत्तं होति वा अं-स इच्चेतेसु । सतिमं भिक्खुं, सतिमन्तं भिक्खुं वा ; बन्धुमं राजानं, बन्धुमन्तं राजानं वा, सतिमस्स भिक्खुनो, सतिमतो भिक्खुनो वा ; बन्धुमस्स रञ्ञो, बन्धुमतो रञ्ञो वा सुंकं[1] देति[1] ।

एतेस्विति किमत्थं ? सतिमा भिक्खु, बन्धुमा राजा ।

कत्वा, एतेसमभावा इमिना अत्तमकत्वा, 'अम्हस्स ममं....' (१२०), 'न्तुस्स न्तो (१२२) त्यधिकिच्च 'आ सिम्ही' ति (१२४) न्तुस्स सविभत्तिस्स आकारं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं । गुणवन्तस्मिं, गुणवन्तेना ति चग्गहणफलं[1]; तं सुविञ्ञेय्यमेव । गुणवन्ती ति अन्तग्गहणफलं[2] । तं पन गुणवन्तुसद्दतो योवचनं कत्वा, अन्तग्गहणेन न्तुसद्दन्तस्सत्तं योवचनस्सित्तं च कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं ।

९३. सब्बस्स वा अंसेसू[3] तिदं 'पञ्चादीनमत्तं' (९०), 'न्तुस्सन्तो योसु चे' ति (९२) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'पञ्चादीनमत्तं' ति सुत्तेन पञ्चादीनमकारस्सत्तं, 'न्तुस्सन्तो....' ति न्तुसद्दन्तस्स अत्तं वुत्तं; एवं सति सतिमं सतिमस्स त्यादीनि रूपानि कथं सिज्झेय्युं ति पुच्छाय सति, सतिमं सतिमस्सा त्यादिसु अं-स इच्चेतेसु परेसु सब्बस्स न्तुप्पच्चयस्सत्तञ्च कत्वा तानि रूपानि सिज्झन्ती ति दस्सेतुं, 'सब्बस्स वा अंसेसू' ति वुत्तं । हेट्ठा वुत्तेहि 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं; अनुरूपा निक्खन्तिकथा वत्तब्बा । किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स अत्तं होति अं-स इच्चेतासु विभत्तीसु विकप्पेना ति ञापनत्थं । सब्बस्सा ति एकं, वा ति एकं, अंसेसू ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं । सब्बस्सा ति सम्बन्धछट्ठी कारि, वा ति विकप्पनत्थो, अंसेसू ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति दट्ठब्बं । अत्तग्गहणस्स च न्तुग्गहणस्स चानुवत्तनतो सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स अत्तं होति विकप्पेन अं-स इच्चेतेसु परेसू त्यत्थो ।

सतिमं त्यादीन्युदाहरणानि । तत्थ च सतिमं ति सति अस्स अत्थी त्यत्थे 'तदस्सत्थी ति वी चे' (३६६) त्यधिकिच्च 'सत्यादीहि मन्तू' ति (३७१) मन्तुप्पच्चयं कत्वा, नाममिव कत्वा, सतिमन्तुसद्दतो अंवचनं कत्वा, 'पञ्चादीनमत्तं' (९०),

---

१-१. नत्थि से० पोत्थके ।

1-2. तु—क० न्या०, पि० ११६; "नपुंसके योसु, योनञ्चितं"—सद्द०, सु० २५० ।

3. तु०—"अंसेसु वा सब्बस्स"—तं०, सु० २५१ ।

९४. सिम्हि वा । २. १. ४३ ।

न्तुप्पच्चयस्स अन्तो अत्तं होति वा सिम्हि विभत्तिम्हि । हिमवन्तो व[1] पब्बतो—हिमो[2] यस्स अत्थि तस्मिं वा विज्जती ति हिमवन्तो[2] ।

वा ति किमत्थं ? हिमवा पब्बतो ।

'न्तुस्सन्तो योसु चे' (९२) त्यधिकिच्च इमिना सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्सत्तं कत्वा, मकारं वियोजेत्वा, सरलोपपकतिभावं कत्वा, पुन अं-निमित्तेन सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं। अं-निमित्तेन मकारावयवस्स च आदेससरस्स चा ति द्विन्नं पि लोपो वा कातब्बो विय दिस्सति; अं-निमित्तेन आदेसस्स लोपं कत्वा, तेनेव मकारावयवस्स वा लोपो कातब्बो । सतिमन्तं ति वाग्गहणफलं । तं पन सतिमन्तुसद्दतो अंविभत्ति कत्वा, वाग्गहणेन सब्बस्स न्तुप्पच्चयस्स अत्तं निवारेत्वा, 'न्तुस्सन्तो....' ति एत्थ चग्गहणेन न्तुसद्दन्तस्स अत्तं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं। बन्धुमस्सा ति बन्धुमन्तुसद्दतो चतुत्थेकवचनं छट्ठेकवचनं वा कत्वा, वुत्तनयेन सब्बस्स न्तुसद्दन्तस्सत्तं कत्वा, सागमे कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं । तं पन 'अहस्स ममं....' (१२०), 'न्तुस्स न्तो' (१२२), 'न्तुस्स से वा' (१२३) त्यधिकिच्च 'तोतिता....' ति (१२७) सविभत्तिस्स न्तुप्पच्चयस्स तो-आदेसे कते रूपं। सतिमा, बन्धुमा त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तानि पन सतिमन्तु-बन्धुमन्तुसद्देहि सिविभत्ति कत्वा, अंसानमभावा इमिना अत्तमकत्वा, 'अम्हस्स ममं....', 'न्तुस्स न्तो' त्यधिकिच्च 'आ सिम्ही' (१२४) ति सविभत्तिस्स न्तुस्स आकारादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं।

९४. सिम्हि वा[1] तिदं 'आ सिम्हि' (१२४), 'सेसतो लोपं गसिपी' ति (२२०) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'आ सिम्ही' ति सुत्तेन सिम्हि विभत्तिम्हि सविभत्तिस्स न्तुस्स आ-आदेसो वुत्तो*, 'सेसतो लोपं गसिपी' ति सुत्तेन च सेसेहि लिङ्गेहि सविभत्तिया लोपो वुत्तो; एवं सति हिमवा ति च हिमवन्तो ति च रूपं भवेय्य, कथं हिमवन्तो ति रूपं ति पुच्छाय सति, सिम्हि परे न्तुसद्दन्तस्स अत्तञ्च होती ति दस्सेतुं, 'सिम्हि वा' ति वुत्तं । हेट्ठा वुत्तेहि सुत्तेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं । किमत्थमिदमुच्चते ? सिम्हि विभत्तिम्हि न्तुसद्दन्तस्सत्तं होति विकप्पेना ति

---

१. नत्थि से० पोत्थके । २-२. नत्थि से० पोत्थके ।

* वुत्तं—सी० ।

1. तु०—"सिम्हि कत्थचि"— सद्द०, सु० २५२; "कत्थचि न्तुपच्चयस्स अत्तं होति वा सिम्हि विभत्तियं; एत्थ च 'कत्थची' ति इमिना गाथाविसयो गहेतब्बो—'हिमवन्तो व पब्बतो, पुञ्ञवन्तो जुतिन्धरो, गतिमन्तो सतिमन्तो धितिमन्तो च सो इसि' । वा ति किमत्थं ? 'हिमवा...पब्बतो'"—त०, बु० ।

९५. अग्गिस्सिनि । २. १. ४४ ।

अग्गिस्स अन्तो इनि होति वा सिम्हि विभत्तिम्हि । पुरतो अग्गिनि, पच्छतो[1] अग्गिनि, दक्खिणतो अग्गिनि, वामतो अग्गिनि ।

वा ति किमत्थं ? अग्गि ।

ञापनत्थं । सिम्ही ति एकं, वा ति एकन्ति द्विपदमिदं । सिम्ही ति निमित्तसत्तमी, वा ति विकप्पनत्थं, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अन्तग्गहणस्स च अत्तग्गहणस्स न्तुग्गहणस्स चानुवत्तनतो सिम्हि विभत्तिम्हि न्तुसद्दन्तस्सत्तं होति विकप्पेना त्यत्थो । "अनन्तरसुत्ते सति पि वाग्गहणे इध वाग्गहणकरणं, 'वाग्गहणे वत्तमाने सब्बग्गहणम्पि वत्तती' ति सङ्का सिया, तन्निवत्तनत्थं"[1]। रूपसिद्धियम्पन "पुन वाग्गहणकरणं हिमवन्तुसद्दतो अञ्ञत्थ अत्तनिसेधनत्थं"[2]; ववत्थितविभासत्थोयं वासद्दो; "तेन गुणवन्तादिसु नातिप्पसङ्गो"[3] ति वुत्तं ।

हिमवन्तो ति उदाहरणं । तं पन हिमो अस्स अत्थी त्यत्थे वुत्तनयेन वन्तुप्पच्चयं कत्वा, सिम्हि कते, 'पञ्चादीनमत्तं' (९०), 'न्तुस्सन्तो····' (९२) त्यधिकिच्च इमिना न्तुसद्दन्तस्सत्तं कत्वा, 'अतो नेना' (१०३) त्यधिकिच्च 'सो' (१०४) ति सिस्सोकारादेसादिम्हि कते रूपं । हिमवा ति वाग्गहणफलं[4]; तं पन गुणवा ति इमिना सदिसं ।

९५. अग्गिस्सिनी[5] तिदं 'सेसतो लोपं गसिपी' ति (२२०) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'सेसतो लोपं····' ति सुत्तेन सेसतो सेसेहि लिङ्गेहि सिवचनस्स लोपो

---

१. पच्छिमतो–से० ।

1. क० न्या०, पि० १२० । 2. रूप०, सु० १०५ । 3. त० ।

4. क० न्या०, पि० १२१ ।

5. तु०—"अभिधातब्बे निप्फज्जते"—सद्द०, सु० २५३; तु०—"अग्गिम्हि अग्गिनी ति गिनी ति च—" त०, सु० २५४; "अग्गिम्हि अभिधातब्बे अग्गिनी ति निप्फज्जते, गिनी ति च—अग्गिनि, अग्गिनी अग्गिनयो, अग्गिनिं ति सब्बा विभत्तियो परा लब्भन्ति; तथा गिनि गिनी गिनयो ति । उभिन्नं पाळिप्पवेसो हेट्ठा पकासितो"—त०, वु० ।

अग्गिनि-गिनिसद्दपयोगविसये सद्दनीतिपदमालायं एवं आगतं—"ये पनेत्थ अम्हेहि अग्गिनि-गिनिसद्दा वुत्ता तत्रेके एवं वदन्ति—'अग्गिनिसद्दो पच्चत्तेकवचनभावे येव लब्भति, न पच्चत्तबहुवचनभावे उपयोगभावादिसु वा' ति; केचि पन 'पाळियं अग्गिनिसद्दो नाम नत्थि, गिनिसद्दो येव अत्थी' ति वदन्ति; केचि 'अग्गिनिसद्दो नाम नत्थि, गिनिसद्दो नाम नत्थि, अग्गिसद्दो येव अत्थी' ति वदन्ति । सब्बमेतं न युज्जति अग्गिनि-गिनिसद्दानं उपलब्भनतो, सब्बासु पि विभत्तिसु द्वीसु वचनेसु योगेतब्बतावस्सनतो च····"—सद्द०, भा० १, पि०१८४-१८७ ।

९६. योस्वकतरस्सोज्झो । २. १. ४५ ।

योसु अकतरस्सो झो अत्तमापज्जते। अग्गयो, मुनयो, इसयो, गहपतयो[१]।

योस्विति किमत्थं ? अग्गीसु । अकतरस्सो ति किमत्थं ? दण्डिनो । झो ति किमत्थं ? रत्तियो ।

वुत्तो; एवं सति सिम्हि परे अग्गी ति रूपमेव भवेय्य, कथं अग्गिनि रूपं ति पुच्छाय सति, सिम्हि अग्गिस्सन्तो इनि* पि होती ति दस्सेतुं, 'अग्गिस्सिनी' ति वुत्तं। किमत्थमिद-मुच्चते ? अग्गिसद्दन्तस्स सिम्हि इनि-आदेसो होति विकप्पेना ति ञापनत्थं। अग्गिस्सा ति एकं, इनी ति एकन्ति द्विपदमिदं। अग्गिस्सा ति अवयवापेक्खाछट्ठी, इनी ति कारियं, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। 'न्तुस्सन्तो····' ति (९२) इतो अन्तग्गहणस्स च, 'सिम्हि वा' ति (९४) इतो सिम्हिग्गहणस्स वाग्गहणस्स चानुवत्तनतो अग्गिस-द्दन्तस्स इनि पि होति सिम्हि विभत्तिम्हि विकप्पेना त्यत्थो। अत्तकरणट्ठाने इमस्सुच्चारणं सिग्गहणानुवत्तनत्थं[1]।

अग्गिनी ति उदाहरणं। तं पन अग्गिसद्दतो सिविभत्तिं कत्वा, 'न्तुस्सन्तो····', 'सिम्हि वा' त्यधिकिच्च इमिना अग्गिसद्दन्तस्स इनि कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते, सिलोपे च कते रूपं। इतरं सुविञ्ञेय्यमेव।

९६. **योस्वकतरस्सोज्झो**[2] तिदं 'घपतो च योनं लोपो' ति (११८) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति ? 'घपतो च····' ति सुत्तेन घ-प-झ-ल इच्चेतेहि योनं लोपो वुत्तो; एवं सति अग्गि-मुनि-इसि-सद्देहि योनं लोपे कते अग्गि-मुनि-इसी त्यादीनि रूपानि भवेय्युं, कथं अग्गयो त्यादीनि रूपानी ति पुच्छाय सति, अग्गि-मुनि-इसि-सद्देहि योवचने कते अकतरस्सस्स झस्स अत्तम्पि होती ति दस्सेतुं, 'योस्व····' ति वुत्तं। किमत्थमिद-मुच्चते ? योसु विभत्तिसु अकतरस्सो झो अत्तमापज्जते ति ञापनत्थं। योसू ति एकं, अकतरस्सो ति एकं, झो ति एकन्ति तिपदमिदं। योसू ति निमित्तसत्तमी, अकतरस्सो ति तब्बिसेसनं, झो ति कारियं, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। अत्थो सुवि-ञ्ञेय्यो व। कतो[3] रस्सो यस्सा ति कतरस्सो, न कतरस्सो ति अकतरस्सो।

अग्गयो, मुनयो, इसयो त्यादीनि उदाहरणानि। तानि पन अग्गि-मुनि-इसिसद्देहि योवचनं कत्वा, 'आलपने सि····' (५७) त्यधिकिच्च 'इवण्णु····' ति (५८) इवण्णस्स

---

१. नत्थि से० पोत्थके।

*. इनी—सी०।

1. तु०—क० न्या०, पि० १२१।

2. तु०—"योस्वत्तमकतरस्सो झो"—सद्द०, सु० २५६।

९७. वेवोसु लो च । २. १. ४६ ।

वे-वो इच्चेतेसु अकतरस्सो लो अत्तमापज्जते । भिक्खवे, भिक्खवो, हेतवे, हेतवो ।

अकतरस्सो ति किमत्थं ? सयम्भुवो, वेस्सभुवो, पराभिभुवो । वेवोस्विति किमत्थं ? हेतुना, केतुना, सेतुना ।

चसद्दग्गहणं अत्तमनुकड्ढनत्थं ।

झसञ्ञं कत्वा, 'पञ्चादीनमत्तं' (९०) त्यधिकिच्च इमिना झस्स अत्ते कते रूपानि । अग्गीसू ति किमुदाहरणं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । दण्डिनो ति पि किमुदाहरणं ? तं पन दण्डीसद्दतो योवचनं कत्वा, वुत्तनयेन इवण्णस्स झसञ्ञं कत्वा, 'अघो.... स्वपि चे' ति (८४) रस्सं कत्वा, सति पि योम्हि परे झे अकतरस्साभावा इमिना अत्तमकत्वा, 'नं झतो कतरस्सा' (२२४) त्यधिकिच्च 'योन्ननो' ति (२२५) झतो कतरस्सा योवचनस्स नो-आदेसे कते रूपं । रत्तियो ति रत्तिसद्दतो योवचनं कत्वा, 'आलपने सि....', 'इवण्णु....' त्यधिकिच्च 'ते इत्थिरव्या पो' ति (५९) पसञ्ञं कत्वा, सति पि योम्हि परे अकतरस्से झस्साभावा अत्तम्हि अकते रूपं[4] ।

९६. **वेवोसु लो चे** तिदं[5] 'लतो वोकारो च' (११९), 'अकतरस्सा लतो....' ति (११६) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्नक्खन्तन्ति ? 'लतो....' ति सुत्तेन लतो योवचनस्स वोकारत्तं वुत्तं, 'अकतरस्सा लतो....' ति सुत्तेन लतो योवचनस्स वे-वो-आदेसा वुत्ता; एवं सति भिक्खुवे भिक्खुवो हेतुवे हेतुवो ति रूपानि भवेय्युं, कथं भिक्खवे भिक्खवो हेतवे हेतवो ति रूपानी ति पुच्छाय सति, लतो वे-वो-आदेसेसु कतेसु इमिना वे-वोसु परेसु अकतरस्सो लो अत्तमापज्जते ति दस्सेतुं, 'वेवोसु लो चे' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? वे-वो इच्चेतेसु परेसु अकतरस्सो लो अत्तमापज्जते ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । वेवोसू ति निमित्तसत्तमी, लो ति कारियं, चा ति अनुकड्ढनं, सञ्ञा.... पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अत्तग्गहणस्स[6] च अकतरस्सग्गहणस्स चानुवत्तनतो वे-वो इच्चेतेसु परेसु अकतरस्सो लो अत्तमापज्जते त्यत्थो[7] ।

भिक्खवे, भिक्खवो, हेतवे, हेतवो ति उदाहरणानि । तत्थ च भिक्खु-हेतुसद्देहि 'लिङ्गत्थे पठमा' (२८६) त्यधिकिच्च 'आलपने चे' ति (२८७) योवचनं कत्वा, वुत्तनयेन लसञ्ञं कत्वा, 'अकतरस्सा लतो....' ति (११६) योवचनस्स वे-वो-आदेसं

3-4. तु०—क० न्या०, पि० १२१ ।

5. तु०—"लो च वे-वोसु—सद्द०, सु० २६० ।

6-7. तु०—क० न्या, पि० १२२ ।

९८. मातुलादीनमानत्तमीकारे । २. १. ४७ ।

मातुल इच्चेवमादीनमन्तो आनत्तमापज्जते ईकारप्पच्चये परे। मातुलानी, अय्यकानी, वरुणानि ।

ईकारे ति किमत्थं ? भिक्खुनी, राजिनी[1], जालिनी, गहपतानी ।

आनत्तग्गहणेन नदी इच्चेतस्स दीसद्दस्स ज्जो-ज्जा-ज्जा-आदेसा होन्ति सह विभत्तिया यो-ना-स इच्चेतेसु ; तं[2] यथा[2]—नज्जो सन्दन्ति, नज्जा कतं तरङ्गं, नज्जा नेरञ्जराय तीरे ।

कत्वा, 'पञ्चादीनमत्तं' (९०), 'योस्वकतरस्सोज्झो' (९६) त्यधिकिच्च इमिना लस्स अत्ते कते रूपानि। सयम्भुवो त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तेसु[1] सयम्भू-वेस्सभू-अभिभूसद्देहि योवचनं कत्वा, लसञ्ञं च कत्वा, 'अघोरस्स....' ति (८४) अघस्स रस्सं कत्वा, 'घपतो च....' (११८) त्यधिकिच्च 'लतो वोकारो चे' ति (११९) योवचनस्स वो-आदेसं कत्वा, अकतरस्सत्ताभावा इमिना अत्तम्हि अकते रूपानि। हेतुना केतुनादीनि च किमुदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव[2] ।

९८. **मातुलादीनमानत्तमीकारे**[3] तिदं 'नदादितो वा ई' ति (२३८) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति* ? 'नदादितो....' ति सुत्तेन मातुलादिसद्दतो ईप्पच्चयो वुत्तो; एवं सति मातुलादिसद्दतो ईप्पच्चये कते मातुली अय्यकी त्यादीनि रूपानि भवेय्युं, कथं मातुलानी त्यादीनि रूपानी ति पुच्छाय सति, ईप्पच्चये परे मातुलादीनमन्तस्स आनत्तम्पि होती ति दस्सेन्तेन, 'मातुलादीनमानत्तमीकारे' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? मातुलादीनमन्तो आनत्तमापज्जते ईकारे परे ति ञापनत्थं। तिपदमिदं। मातुलादीनं ति अन्तापेक्खाछट्ठी, आनत्तं ति कारियं, ईकारे ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। अत्थो सुविञ्ञेय्यो व। मातुलसद्दो आदि येसं ते ति मातुलादयो, तेसं मातुलादीनं; आदिसद्दस्स पकारत्थत्ता सदिसलिङ्गानि गय्हन्ते ।

---

१. नत्थि से०, सी० १ पोत्थकेसु। २-२. नत्थि सी० २ पोत्थके।

* ०न्तं—सी०।

1-2. त०।

3. तु०—"मातुलादीनमन्तो आनो ईपच्चये"—सद्द०, सु० २६१; "इन्द्रवरुणभवशर्वरुद्रमृडहिमारण्ययवयवनमातुलाचार्याणामानुक्"—पा० ४. १. ४९; मोग्गल्लानगणपाठे मातुलादीनं वण्णना एवं आगता—"मातुल, वरुण, इन्द्र, गहपति, आचरिय, खत्तिय, अय्यक एवमादि मातुलादि"—सु० ३.३३।

९९. स्माहिस्मिन्नं म्हाभिम्हि वा । २. १. ४८ ।

सब्बतो लिङ्गतो[1] स्मा-हि-स्मिं इच्चेतेसं म्हा-भि-म्हि इच्चेते आदेसा होन्ति वा यथासङ्ख्यं । पुरिसम्हा, पुरिसस्मा ; पुरिसेभि, पुरिसेहि ; पुरिसम्हि, पुरिसस्मिं ।

स्माहिस्मिन्नमिति किमत्थं ? वण्णवन्तं अगन्धकं विरूळ्हपुप्फं[2] पस्ससि[2], महन्तं छत्तं ।

मातुलानी त्यादीन्युदाहरणानि । तानि पन मातुल-अय्यक-वरुणसद्देहि 'इत्थियमतो आप्पच्चयो' (२३७) त्यधिकिच्च 'नदादितो वा ई' ति ईप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावे सम्पत्ते इमिना मातुलादीनमन्तस्स आनत्तं कत्वा, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपानि । भिक्खुनी, जालिनी त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तत्थ च भिक्खुजालीसद्देहि[1] 'इत्थियमतो आप्पच्चयो' त्यधिकिच्च 'पतिभिक्खु....' ति (२४०) इनीप्पच्चयं कत्वा, मातुलप्पकारत्थे सति पि ईकाराभावा इमिनानत्तमकत्वा, 'सरा सरे लोपं' (१२) त्यधिकिच्च 'वा परो....' ति (१३) पुब्बरूपे परसरस्स लोपं कत्वा, इतरस्मिं 'सरा सरे लोपं' ति पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपानि । इतरं पन हेट्ठा वुत्तनयमेवेति[2] ।

'मातुलादीनमीकारे' ति वुत्ते येव सिद्धे सति 'मानत्तमीकारे' ति भावप्पच्चयेन वुत्तत्ता सद्दाधिकत्ता च अत्थाधिको होती ति आह—"आनत्तग्गहणेना" ति । त्तप्पच्चयो चेत्थ अधिको, आनसद्दो पन अविभागवसेन वुत्तो ।

नज्जो त्यादीनि आनत्तग्गहणफलानि[3] । तत्थ नज्जो ति नदीसद्दतो योवचनं कत्वा, योविभत्तिया सह नदीसद्दस्स दीकारस्स ज्जो-आदेसे कते रूपं । नज्जा ति नाविभत्तिकरणमेव विसेसो । इतरस्मिं छट्ठिविभत्तिकरणमेव विसेसो ।

९९. **स्माहिस्मिन्नं म्हाभिम्हि वा**[4] तिदं 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'ततो च विभत्तियो' ति इमिना जिनवचनयुत्ततो पुरि-

---

१. नत्थि से० पोत्थके । २-२. नत्थि से० पोत्थके ।

1-2. तु०—क० न्या०, पि० १२३ ।

3 तु०—"नदिया दीस्स ज्जा योसु वा"—सद्द०, सु० २६२; "योहि सह ज्जो"—त०, सु० २६३; "नादेकवचनेहि ज्जा, स्मिना ज्जञ्च"—त०, सु० २६४ ।

4. तु०—"सब्बतो हिस्स भि वा"—त०, सु० २६५; "स्मा-स्मिनं यथाक्कमं यथारहं म्हा-म्हि"—त०, सु० २६६; वुत्तियं अस्स सुत्तस्स वण्णना एवं आगता—"पाळिनयवसेन गाथायं येव एकवचतो इत्थिलिङ्गतो म्हा-म्हि इच्चेते परा दिस्सन्ति: 'कुसावतिम्हि नगरे', 'यथा बलाकयोनिम्ही' ति" ।

१००. न तिमेहि कताकारेहि । २.१.४९ ।

त-इम इच्चेतेहि कताकारेहि स्मा-स्मिन्नं म्हा-म्हि इच्चेते आदेसा न होन्ति । अस्मा ठाना[१] भयं उप्पज्जति[१], अस्मिं ठाने[१] भयं तिट्ठति[१]; अस्मा, अस्मिं ।

कताकारेही ति किमत्थं ? तम्हा, तम्हि; इमम्हा, इमम्हि ।

सादिलिङ्गतो विभत्त्युप्पत्ति वुत्ता; एवं सति पुरिसस्मा पुरिसेहि पुरिसस्मि ति रूपानि भवेय्युं, कथं पुरिसम्हा पुरिसेहि पुरिसम्ही ति रूपानी ति पुच्छाय सति, पुरिसा ति लिङ्गतो स्मा-हि-स्मिन्नं म्हा-भि-म्हि आदेसं कत्वा तानि रूपानि सिज्झन्ती ति दस्सेतुं, 'स्माहि....वा' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? स्मा-हि-स्मि इच्चेतासं विभत्तीनं यथाक्कमं म्हा-भि-म्हि इच्चेते आदेसा होन्ति विकप्पेना ति ञापनत्थं। तिपदमिदं। स्माहिस्मिन्नं ति सम्बन्धछट्ठीकारी*, म्हाभिम्ही ति कारियं, वा ति विकप्पनत्थनिद्देसो, सञ्ञा....पे० ....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। सब्बतो लिङ्गतो स्मा-हि-स्मि इच्चेतासं म्हा-भि-म्हि इच्चेते आदेसा होन्ती त्यत्थो। सब्बसद्देन चेत्थ लिङ्गत्तयं गहितं, सब्बदेससब्बत्ता। स्मा च हि च स्मि च स्माहिस्मि, तेसं स्माहिस्मिन्नं; 'हिस्मास्मिन्नं' ति अवत्वा एवं वचनं स्मावचनस्स उपरि अनुवत्तनत्थं[1]।

पुरिसम्हा, पुरिसेभि, पुरिसम्ही त्युदाहरणानि। तेसं पन पुरिससद्दतो स्मा-हि-स्मि विभत्तियो कत्वा, इमिना म्हा-भि-म्हि-आदेसे कत्वा, भिम्हि 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) ए-आदेसे कते रूपानि। पुरिसस्मा, पुरिसेहि, पुरिसस्मि ति वाग्गहणफलानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव। वण्णवन्तं अगन्धकं विरुळहपुप्फं त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तानि पन वण्णवन्तु त्यादीहि अं-विभत्तिं कत्वा, सति पि लिङ्गे स्माहिस्मिन्नं अभावा इमिना आदेसमकत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपानि।

१००. न तिमेहि कताकारेही[2] तिदं 'स्माहिस्मिन्नं....' ति (९९) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति ? 'स्माहि....'ति सुत्तेन सब्बलिङ्गतो स्मा-हि-स्मिन्नं म्हा-भि-म्हि-आदेसा वुत्ता; एवं सति कथं अस्मा अस्मि ति रूपानि सिज्झेय्युं ति पुच्छाय सति,

---

१-१. नत्थि से०, सी० १ पोत्थकेसु ।

* ० छट्ठि०—सी० ।

1. तु०—"'हिस्मास्मिनं' ति वत्तब्बे पटिपाटिया अवत्वा एवं वचनं स्मागहणं उत्तरत्रा वि वत्तती ति ञापनत्थं। पकतिहेसाचरियानं येन केनचि आकारेन अधिप्पायविञ्ञापनं"—क० न्या०, पि० १२३ ।

२. तु०—"कताकारेहि न तिमेहि"—सद्द०, सु० २६७; "ङसिङ्योः स्मात्स्मिनौ"—पा० ७.१.१५ ।

१०१. सुहिस्वकारो[१] ए । २.१.५० ।

सु-हि इच्चेतेसु अकारो एत्तमापज्जते । सब्बेसु, येसु, तेसु, केसु, पुरिसेसु, इमेसु, कुसलेसु, तुम्हेसु, अम्हेसु; सब्बेहि, येहि, तेहि, केहि, पुरिसेहि, इमेहि, कुसलेहि, तुम्हेहि, अम्हेहि ।

सब्बनामेहि कताकारेहि तिमेहि स्मास्मिन्नं म्हा-मिम्हि-आदेसा न होन्ती ति दस्सेतुं, 'न तिमेहि कताकारेही' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? त-इम इच्चेतेहि कताकारेहि स्मा-स्मिन्नं म्हा-म्हि इच्चेते आदेसा न होन्ती ति ञापनत्थं । हिस्मिमत्तस्सेवाभावा हि-भिग्गहणानि नानुवत्तन्ते[1] । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । तो च इमो च तिमा, तेहि तिमेहि; कतो अकारो येसं ते कताकारा, तेहि ।

अस्मा, अस्मि ति इमानि तसद्दतो स्मा-स्मि विभत्तियो कत्वा, 'सब्बनाम.....' (१६४), 'तस्स वा.....' (१७५) त्यधिकिच्च 'सस्मास्मि.....' ति (१७६) तसद्दस्सत्तं कत्वा, अनन्तरसुत्तेन आदेसे सम्पत्ते कताकारत्ता इमिना आदेसे अकते रूपानि । अस्मा, अस्मि त्यादीनि इमसद्दतो स्मा-स्मि विभत्तियो कत्वा, 'तस्स वा.....' (१७५), 'सस्मास्मि.....' (१७६) त्यधिकिच्च 'इमसद्दस्स चे' ति (१७७) इमसद्दस्सत्तं कत्वा, वुत्तनयेन आदेसे सम्पत्ते, इमिना तस्मिमकते रूपानि । तम्हा त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तेसम्पन कताकारस्साभावा इमिना पटिसेधम्हि अकते रूपानि ।

१०१. सुहिस्वकारो ए[2] तिदं 'सुनंहिसु चा' ति (८९) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'सुनंहिसु चा' ति सुत्तेन सु-नं-हिसु पुब्बसरानं दीघत्तं वुत्तं; एवं सति कथं सब्बेसु सब्बेही त्यादीनि रूपानी ति पुच्छाय सति, सु-हि इच्चेतेसु अकारो एत्तं याती ति दस्सेतुं, 'सुहिस्वकारो ए' ति वुत्तं । हेट्ठा वुत्तसुत्तेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं । किमत्थमिदमुच्चते ? सु-हि इच्चेतासु विभत्तिसु अकारो एत्तमापज्जते ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । सुहिसू ति निमित्तसत्तमी, अकारो ति कारी, ए ति कारियं, सञ्ञा..... पे०.....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व ।

सब्बेसू त्यादीनि उदाहरणानि; तानि सुविञ्ञेय्यानेव । केसु, केही ति एत्थ 'किस्स क वे चे' ति (२२७) एत्थ चग्गहणेन कादेसो व विसेसो ति ।

---

१. सुहीस्वकारो—से० ।

1. तु०—"हिस्मिमत्तस्सेवाभावा 'अत्ततो पि हिभिग्गहणं' नानुवत्तते"—क० न्या०, पि० १२४ ।

2. तु०—"सु-हिसु लिङ्गाकारो ए"—सद्द०, सु० २६८; "बहुवचने झल्येत्"—पा० ७. ३. १०३ ।

१०२. सब्बनामानं नम्हि च । २.१.५१ ।

सब्बेसं सब्बनामानं अकारो एत्तमापज्जते नम्हि विभत्तिम्हि । सब्बेसं, सब्बेसानं; येसं, येसानं; तेसं, तेसानं; केसं, केसानं; इमेसं, इमेसानं; इतरेसं, इतरेसानं; कतमेसं, कतमेसानं ।

सब्बनामानमिति किमत्थं ? बुद्धानं भगवन्तानं । अकारो ति किमत्थं ? अमूसं, अमूसानं । नम्ही[१] ति किमत्थं ? सब्बे, इमे[१] ।

चसद्दग्गहणं एग्गहणमनुकड्ढनत्थं ।

---

१०२. सब्बनामानं नम्हि चे[1] तिदं 'सुहिस्वकारो ए' (१०१) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'सुहिस्वकारो ए' ति इमिना सु-हिसु अकारस्स एत्तं वुत्तं; एवं सति कथं सब्बेसं सब्बेसानं ति पुच्छाय सति, नम्हि सब्बनाम-अकारस्सेत्तम्पि होती ति दस्सेतुं, 'सब्बनामानं नम्हि चे' ति वुत्तं । 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्ब । किमत्थ-मिदमुच्चते ? सब्बेसं सब्बनामानमकारो एत्तमापज्जते नम्हि विभत्तिम्ही ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । सब्बनामानं ति अवयवापेक्खाछट्ठी, नम्ही ति निमित्तसत्तमी, चा ति अनुकड्ढनं, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अनन्तरसुत्ततो अकारग्गहणस्स च एकारग्गहणस्स चानुवत्तनतो सब्बनामाकारो नम्हि एत्तमापज्जते त्यत्थो[2] ।

सब्बेसं त्यादीन्युदाहरणानि । तत्थ च सब्बेसं ति सब्बसद्दतो नंवचनं कत्वा, 'सुहिस्वकारो ए' (१०१) त्यधिकिच्च इमिना अकारस्सेत्तं कत्वा, 'सब्बनाम....' (१६४) त्यधिकिच्च 'सब्बतो....' ति (१६८) नंवचनस्स सं-आदेसे कते रूपं[3] । सब्बेसानं त्यादिसु सानमादेसो व विसेसो । अमूसं त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तत्थ च अमुसद्दतो नंवचनं कत्वा, सति पि सब्बनामत्ते अकारस्साभावा इमिना एत्तमकत्वा, 'योसु कत-निकार....' (८८) त्यधिकिच्च 'सुनंहिसु चे' ति (८९) दीघं कत्वा, वुत्तनयेन नंवचनस्स संसानमादेसे कते रूपानि[4] ।

१-१. नत्थि से० पोत्थके ।

1. तु०—"सब्बनामानं पन नंम्हि"—सद्द०, सु० २७०; पा०, ७.३.१०३ ।

2. तु०—क० न्या, पि० १२४ ।

3-4. तु०—त०, पि० १२४–१२५ ।

१०३. अतो नेन । २.१.५२ ।

तस्मा अकारतो ना-वचनस्स एनादेसो होति । सब्बेन[1], येन, तेन, केन, अनेन, पुरिसेन, रूपेन ।

अतो ति किमत्थं ? मुनिना, अमुना, भिक्खुना । ना ति किमत्थं ? नस्मा[2], तस्मा ।

---

१०३. अतो नेना[1] तिदं 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? सब्बेन, येन, तेन इत्यादिसु* 'जिनवचनयुत्तं हि' (५२) त्यधिकिच्च 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ति इमिना सब्ब-य इत्यादि-लिङ्गं ठपेत्वा, 'ततो च विभत्तियो' ति इमिना नाविभत्तिम्हि कते, कथं सब्बेन इत्यादि रूपं ति पुच्छाय सति, अकारन्तेहि पुंनपुंसकलिङ्गेहि नावचनस्स 'अतो नेना' ति इमिना एनादेसो होती ति दस्सेतुं, 'अतो नेना' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? अकारन्ततो लिङ्गम्हा नावचनस्स एनादेसो होती ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । अतो ति अवधि, ना ति कारि, एना ति कारियं, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । अ एतस्स अत्थी ति अ, अ इति वचनत्थेन अकारन्तलिङ्गं गहेतब्बं; तेन "अकारन्ततो लिङ्गम्हा" ति रूपसिद्धि-त्यादिसु वुत्तं[2] । 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) इतो अकारे अनुवत्तमाने पुन अकारस्सुच्चारणं कारियस्स निवत्तनत्थं ।

सब्बेना त्यादीन्युदाहरणानि । तेसु केना ति किंसद्दतो नावचनं कत्वा, 'किस्स क वे चे' ति (२२७) एत्थ चग्गहणेन कादेसकरणमेव विसेसो । अनेने ति इमसद्दतो ततियेकवचनं कत्वा, 'सब्बस्सिमस्से वा' (१७०) त्यधिकिच्च 'अनिमि नाम्हि चे' ति (१७१) इमसद्दस्स अनादेसकरणमेव विसेसो । अमुना, भिक्खुना त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तेसं पन सति पि नावचने अकारन्तस्साभावा एनादेसम्हि अकते रूपानि । तस्मा ति च किमुदाहरणं ? तस्स पन सति पि अकारन्ते नावचनस्साभावा इमिना एनादेसम्हि अकते रूपं ।

---

१. नत्थि से० पोत्थके । २. नत्थि से०, सी० १ पोत्थकेसु ।

*. इत्यादीसु—सी०

1. तु०—"अतो नायेन"—सद्द०, सु० २७१ ; "टाङसिङसामिनात्स्याः" — पा० ७.१.१२ ।

2. रूप०, सु० ७९ ।

१०४. सो । २.१.५३ ।

तस्मा अकारतो सि-वचनस्स ओकारो[1] होति । सब्बो, यो, सो, को, अमुको[2], पुरिसो ।

सी ति किमत्थं ? पुरिसानं । अतो ति किमत्थं ? सयम्भू ।

---

१०४. सो[1] ति सुत्तस्स निक्खन्तिकथा 'अतो नेना' ति (१०३) इमिना सदिसा । किमत्थमिदं ? अकारन्ततो परस्स सिवचनस्स ओकारादेसो होती ति ञापनत्थं । सी ति एकं, ओ ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं । सुत्ते हि पठमाकारिपठमाकारियवसेनेव वुत्तं; न्यासे पन "सिस्स ओ सो" ति समासं कत्वा एकपदभावो वुत्तो[2]; तेसं पन कारि-कारियानं एकक्खणे अलब्भमानतो अयुत्तं ति वदन्ति । सी ति कारि, ओ ति कारियं, सञ्ञा···पे०···विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अनन्तरसुत्ततो 'अतो' ति अवधिग्गहणस्स इधानुवत्तनतो अकारन्ततो लिङ्गम्हा परस्स सिवचनस्स ओकारादेसो होती त्यत्थो ।

सब्बो, यो, सो, को, अमुको ति उदाहरणानि । तत्थ च सो ति तसद्दतो सिवचनं कत्वा, 'एततेसन्तो' ति (१७४) सिम्हि परे सकारादेसो च । को ति एत्थ किंसद्दतो सिवचनं कत्वा, 'किस्स क वे चे' ति (२२७) एत्थ चसद्देन ककारकरणञ्च; अमुसद्दतो 'सब्बतो को' ति (१७८) ककारागमकरणञ्च विसेसो । पुरिसानं ति किमुदाहरणं ? तत्थ च पुरिससद्दा नंवचनं कत्वा, सति पि अकारन्तलिङ्गे सिवचनाभावा इमिना ओ-आदेसम्हकते रूपं । सयम्भू ति एत्थ सति पि सिवचने अकारन्तस्साभावा ओकारादेसम्हकते रूपं ।

---

१. ओकारादेसो—से० । २. नत्थि से० पोत्थके ।

1. तु०—"सिस्स ओ"—सद्द०, सु० २७२; "अत्थि पदं अक्खरचिन्तकानं संकेतवसेन अत्थवन्तं हुत्वा उपट्ठाति, मागधिकानं पन अञ्ञथा गहेतब्बत्थं हुत्वा उपट्ठाति, तं यथा—सि ओ सो···"—त०, भा० ३, पि० ६१७ ।

2. क० न्या०, पि० १२५ ।

१०५. सो वा । २.१.५४ ।

तस्मा अकारतो ना-वचनस्स सो-आदेसो होति वा । अत्थसो, ब्यञ्जनसो, सुत्तसो, पदसो, यससो, उपायसो, सब्बसो, ठानसो, थामसो ।

वा ति किमत्थं ? पादेन वा पादारहेन वा थेय्यचित्तेन[१] ।

१०६. दीघोरेहि । २.१.५५ ।

दीघ-ओर इच्चेतेहि स्मा-वचनस्स सो-आदेसो होति वा । दीघसो, दीघम्हा; ओरसो, ओरम्हा ।

दीघोरेही ति किमत्थं ? अमुना, सरम्हा, वचनम्हा ।

---

१०५. सो वा[1] तिदं 'अतो नेना' ति (१०३) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'अतो नेना' ति सुत्तेन अकारन्तलिङ्गतो नावचनस्सेनादेसो वुत्तो; एवं सति कथं अत्थसो, ब्यञ्जनसो त्यादीनि रूपानी ति पुच्छाय सति अकारन्तलिङ्गतो नावचनस्स सो-आदेसो पि होती ति दस्सेतुं, 'सो वा' ति वुत्तं । हेट्ठा वुत्तसुत्तद्वयेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं । किमत्थमिदमुच्चते ? अकारन्ततो लिङ्गम्हा नावचनस्स सो-आदेसो होति विकप्पेना ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । सो ति कारियं, वा ति विकप्पनत्थो, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अनन्तरसुत्ततो 'अतो' ति अवधिग्गहणस्स च नाग्गहणस्स चानुवत्तनतो अकारन्ततो लिङ्गम्हा नावचनस्स सो-आदेसो होति विकप्पेना त्यत्थो ।

अत्थसो, ब्यञ्जनसो, सुत्तसो, पदसो, यससो, उपायसो त्युदाहरणानि । तत्थ च तेहि अत्थ-ब्यञ्जनादिसद्देहि नावचनं कत्वा, 'अतो नेना' त्यधिकिच्च इमिना नावचनस्स सो-आदेसे कते रूपानि । पादेन इत्यादीनि वाग्गहणफलानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

१०६. दीघोरेही*[2] तिदं 'अतो नेन' (१०३), 'सो वा' ति (१०५) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'अतो नेन', 'सो वा' ति सुत्तेहि अकारन्तलिङ्गेहि नावचनस्स एनादेसो च सो-आदेसो च वुत्तो; एवं सति कथं दीघसो, ओरसो ति रूपानी ति पुच्छाय सति, अकारन्तेहि दीघ-ओरसद्देहि स्मावचनस्स सो-आदेसो च होती ति दस्सेतुं, 'दीघोरेही' ति वुत्तं । हेट्ठा वुत्तसुत्तेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं । किमत्थमिद-

---

१. अतिरेकपादेन वा अत्थेन—सें० ।

*. हि—सी० ।

1. तु०—"सो वा ठाने"—सद्द०, सु० २७३ ; "बह्वल्पार्थाच्छस्कारकादन्यतरस्याम्" —पा० ५.४.४२ ।

2. तु०—"दीघोरतो स्मास्स"—सद्द०, सु० २७४ ; पा० ५.४.४२ ।

१०७. सब्बयोनीनमाए । २.१.५६ ।

तस्मा अकारतो[1] सब्बेसं योनीनं आ-ए-आदेसा होन्ति वा यथासङ्ख्यं । पुरिसा, पुरिसे; रूपा, रूपे ।

वा ति किमत्थं ? अग्गयो, मुनयो, इसयो । योनीनं ति किमत्थं ? पुरिसस्स, रूपस्स । अकारतो ति किमत्थं ? दण्डिनो, अट्ठीनि, अग्गी जलन्ति, मुनी चरन्ति ।

मुच्चते ? दीघ-ओर इच्चेतेहि स्मावचनस्स सो-आदेसो होति विकप्पेना ति ञापनत्थं ? एकपदमिदं । दीघोरेही ति अवधिनिद्देसो, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । 'स्माहिस्मिन्नं····' ति (९९) इतो स्मावचनस्स मण्डूकगतियानुवत्तनतो च, 'अतो नेना' ति सुत्ततो 'अतो' ति अवधिया च, 'सो वा' ति सुत्ततो वाग्गहणस्स चानुवत्तनतो दीघ-ओर इच्चेतेहि अकारन्तेहि स्मावचनस्स सो-आदेसो होति विकप्पेना त्यत्थो[1] ।

दीघसो, ओरसो त्युदाहरणानि । तानि पन दीघ-ओरसद्देहि स्मावचनं कत्वा, 'स्माहिस्मिन्नं····', 'अतो नेन', 'सो वा' त्यधिकिच्च इमिना स्मावचनस्स सो-आदेसे कते रूपानि । दीघम्हा, ओरम्हा ति वाग्गहणफलानि; तानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

१०७. सब्बयोनीनमाए[2] तिदं 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ति सुत्तेन पुरिस-पाप-चित्त इच्चादिलिङ्गं ठपेत्वा, 'ततो च विभत्तियो' ति पुरिसादिलिङ्गतो योवचने कते, कथं पुरिसा पुरिसे त्यादिरूपानी ति पुच्छाय सति, अकारन्ततो लिङ्गम्हा परेसं द्विन्नं योविभत्तीनं द्विन्नं निकारादेसानञ्च अकारएकारत्तम्पि होती ति दस्सेन्तेन, 'सब्बयोनीनमाए' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? अकारन्ततो लिङ्गम्हा सब्बेसं योनीनं आ-ए-आदेसा होन्ति यथासंख्यं विकप्पेना ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । सब्बयोनीनं ति कारी, आए ति कारियं, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अतोग्गहणञ्च वाग्गहणञ्च वत्तते[3] । तेन तस्मा अकारन्ततो सब्बेसं योनीनं आ-ए आदेसा

---

१. ओकारतो—सी० ।

1. तु०—क० न्या०, पि० १२६ ।
2. तु०—"योनं नीनञ्चाए"—सद्द०, सु० २७५; तत्थ वुत्तियं एवं आगतं—"अकारतो परेसं पठमा-दुतिया-योनं यथाक्कमं आ-ए-आदेसा होन्ति, तथा पठमा-दुतियानीनं आ-ए-आदेसा होन्ति वा"; "नादिचि"—पा० ६. १. १०२ ।
3. तु०—क० न्या०, पि० १२६ ।

होन्ति यथासंख्यं विकप्पेना त्यत्थो। यो च यो च यो, नि च नि च नि, यो च नि च योनि, सब्बे च ते योनि चा ति सब्बयोनि, तेसं सब्बयोनीनं[1]; सब्बग्गहणेन सब्ब-योवचने सब्बे च नि-आदेसे सङ्गण्हाति[2]। रूपसिद्धियम्पन "सब्बग्गहणं सब्बादेसत्थं" ति वुत्त[3]।

पुरिसा ति पुरिससद्दतो पठमाबहुवचनं कत्वा, 'अतो नेन' (१०३), 'सो वा' (१०५) त्यधिकिच्च इमिना योवचनस्साकारादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं। पुरिसे ति दुतियाबहुवचनं कत्वा, तस्सिमिना एकारादेसादिम्हि कते रूपं। रूपा ति रूपसद्दतो पठमायोवचनं कत्वा 'योनन्नि····' (२१७) त्यधिकिच्च 'अतो निच्चं' ति (२१८) तस्स नि-आदेसं कत्वा, तस्सिमिना आकारादेसे कते रूपं। रूपे ति रूपसद्दतो दुतिया-योवचनं कत्वा, वुत्तनयेन नि-आदेसं कत्वा, तस्सिमिना एकारादिम्हि कते रूपं। 'सो वा' ति (१०५) सुत्ततो इध अनुवत्तमानवासद्दो निच्चमनिच्चमस-न्तञ्च विधिं दीपेति; तेनेतं वुच्चति रूपसिद्धियं[4]—

"निच्चमेव च पुल्लिङ्गे अनिच्चञ्च नपुंसके।
असन्तं झेकतत्ते तु विधिं दीपेति वास्सुती" ॥ ति।

वास्सुती ति इध सुत्ते अनुवत्तमानवासद्दो निच्चं पुल्लिङ्गे आ-एत्तं दीपेति, नपुंसके अनिच्चं आ-एत्तञ्च दीपेति, झेकतत्ते ति झसञ्ञे कते इवण्णे कतत्ते तु कत-अत्ते पन असन्तविधिं दीपेती त्यत्थो।

अग्गयो, मुनयो, इसयो त्यादीनि वाग्गहणफलानि। तानि पन अग्गि-मुनि-इसिसद्देहि योवचनं कत्वा, वुत्तनयेन झसञ्ञं कत्वा, 'पञ्चादीनमत्तं' (९०) त्यधिकिच्च 'योस्व-कत····' ति (९६) झस्सत्तं कत्वा, सति पि अकारन्ते ततो परे योवचने, वाग्गहणेन

1. त०।

2. तु०—"योनीनं ति अवत्वा सब्बग्गहणं द्विन्नं च योनं द्विन्नं च नीनं गहितभावविञ्ञा-पनत्थं। योवचनं हि दुविधं—पठमाबहुवचनं, दुतियाबहुवचनं च। नि-आदेसो पि दुविधो, 'योनन्नि नपुंसकेहि', 'अतो निच्चं' ति द्विन्नं योनं वुत्तत्ता। इध पन योनीनं ति वुत्ते पठमाबहुवचनं तप्पटिबद्ध-नि-आदेसं वा दुतियाबहुवचनं तप्पटिबद्ध-नि-आदेसं वा गहेत्वा, योनीनं ति बहुवचनं कत्वा वुत्तं ति पि सङ्का सिया, तं निवत्तनत्थं सब्बग्गहणं कतं; तेन सब्ब यो-वचने सब्ब-नि-आदेसे च सब्बग्गहणेन सङ्गण्हाती ति दट्ठब्बं। इध च पठमा-बहुवचनस्स तप्पटिबद्ध-नि-आदेसस्स च आकारादेसो होति, दुतियाबहुवचनस्स तप्पटिबद्ध-नि-आदेसस्स च एकारादेसो होती ति दट्ठब्बं। तेनाह वुत्तियं—'यथासङ्ख्यं' ति" —त०, पि० १२६-१२७।

3. रूप०, सु० ६९।

4. त०।

१०८. स्मास्मिन्नं वा । २.१.५७ ।

तस्मा अकारतो सब्बेसं स्मा-स्मिं इच्चेतेसं आ-ए-आदेसा होन्ति वा यथासङ्ख्यं । पुरिसा, पुरिसस्मा; पुरिसे, पुरिसस्मिं ।

अकारतो[1] ति किमत्थं ? दण्डिना, दण्डिस्मिं; भिक्खुना, भिक्खुस्मिं । वा ति किमत्थं ? पुरिसम्हा, पुरिसस्मिं[2] ।

इमिना आदेसे अकते रूपानि । पुरिसस्स, रूपस्सा ति पि किमुदाहरणं ? तं पन पुरिस-रूपसद्देहि सविभत्तिं कत्वा, सकारागमञ्च कत्वा, नेतब्बे नीते, सति पि अकारन्तत्ते, योनमभावा इमिना आदेसे अकते रूपं । दण्डिनो, अग्गी, मुनी ति च किमुदाहरणानि ? तत्थ च दण्डिनो ति दण्डीसद्दतो योवचनं कत्वा, सति पि योवचने अकारन्तस्साभावा इमिना आदेसमकत्वा, ईकारस्स झसञ्ञं कत्वा, 'अघो रस्स....' ति (८४) अघस्स रस्सं कत्वा, 'नं झतो कतरस्सा' (२२४) त्यधिकिच्च 'योनन्नो' ति (२२५) नो-आदेसे कते रूपं । अग्गी, मुनी ति अग्गि-मुनिसद्देहि योम्हि कते वुत्तनयेन आदेसमकत्वा, 'झलतो....' (११७) त्यधिकिच्च 'घपतो च....' ति (११८) योम्हि लुत्ते, 'योसु कतनिकार....' ति (८८) दीघे कते रूपं ।

१०८. **स्मास्मिन्नं वा**[1] तिदं 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? हेट्ठा वुत्तनयेन पुरिसादिलिङ्गञ्च ठपेत्वा, ततो स्मा-स्मिं-विभत्तिम्हि कते, कथं पुरिसा पुरिसे ति रूपानी ति पुच्छाय सति, पुरिसादि-अकारन्तलिङ्गम्हा स्मास्मिन्नम्पि आ-ए-आदेसा होन्ती ति दस्सेतुं, 'स्मास्मिन्नं वा' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? अकारन्ततो लिङ्गम्हा स्मास्मिन्नं यथासङ्ख्यं आ-ए-आदेसा होन्ति विकप्पेना ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । स्मास्मिन्नं ति सम्बन्धछट्ठीकारी, वा ति विकप्पनत्थो, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । सब्बग्गहण-अतोग्गहण-आ-एग्गहणानमनुवत्तनतो अकारन्ततो लिङ्गम्हा सब्बेसं स्मास्मिन्नं यथाक्कमं आ-ए-आदेसा होन्ति विकप्पेना त्यत्थो । 'सो वा' ति (१०५) सुत्ततो वासद्दे अनुवत्तमाने पि पुन इध वाग्गहणकरणं 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) एत्थानुवत्तमानवासद्दस्स ववत्थितविभासत्ता तं निवत्तनत्थं, आ-एनुकड्ढनत्थं ति पि वदन्ति[2] ।

---

१. अतो—से० । २. पुरिसम्हि—से० ।

1. तु०--"स्मास्मिनं"—सद्द०, सु० २७६; पा० ७. १. १२ ।

2. तु०—क० न्या० पि० १२८ ।

१०९. आय चतुत्थेकवचनस्स तु । २.१.५८ ।

तस्मा अकारतो चतुत्थेकवचनस्स आयादेसो होति वा। अत्थाय हिताय सुखाय देवमनुस्सानं बुद्धो लोके उप्पज्जति ।

अकारतो ति किमत्थं ? इसिस्स । चतुत्थी ति किमत्थं ? पुरिसस्स मुखं[1] । एकवचनस्सेति किमत्थं ? पुरिसानं धनं[2] ददाति । वा ति किमत्थं ? दाता होति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा ।

तुसद्दग्गहणेन त्थं[3] च होति—अत्तत्थं, हितत्थं, सुखत्थं ।

पुरिसा, पुरिसे त्यादीनि उदाहरणानि। तानि पन पुरिससद्दतो स्मा-स्मिं-विभत्तियो कत्वा, 'अतो नेन' (१०३), 'सो वा', 'सब्बयोनीनमाए' त्यधिकिच्च इमिना तेसं पटिपाटिया आ-ए-आदेसे कते, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपानि। वाग्गहण-फलानि सुविञ्ञेय्यानेव। दण्डिना त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तत्थ च दण्डिना ति दण्डीसद्दतो स्मावचनं कत्वा, ब्यञ्जनं वियोजेत्वा, झसञ्ञञ्च कत्वा, 'अघोरस्स.....' ति (८४) रस्सं कत्वा, अकारन्तत्ताभावा वुत्तविधानमकत्वा, 'स्मा ना' (२१४) त्यधिकिच्च 'झलतो चे' ति (२१५) स्मावचनस्स ना-आदेसे कते रूपं। इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव।

१०९. आय चतुत्थेकवचनस्स तू[1] तिदं 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति ? अत्थाय, हिताया त्यादिसु अकारन्तेहि नपुंसकलिङ्गेहि अत्थादिसद्देहि चतुत्थेकवचने कते, कथं अत्थाया त्यादि-रूपं ति पुच्छाय सति, अकारन्तेहि नपुंसकलिङ्गेहि पवत्तमानचतुत्थेकवचनस्स आयादेसो होती ति दस्सेन्तेन, 'आय चतुत्थेकवचनस्स तू' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? अकार-न्तेहि नपुंसकलिङ्गेहि चतुत्थेकवचनस्स आयादेसो होति विकप्पेना ति ञापनत्थं। तिपद-मिदं। आया ति कारियं, चतुत्थेकवचनस्सा ति आदेसापेक्खाछट्ठी, तू ति समुच्चयं, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। अतोग्गहणञ्च वाग्गहणञ्चानुवत्तते। अत्थो

---

१. सुखं—से० । २. नत्थि से०, सी० १ पोत्थकेसु । ३. अत्थं—से० ।

1. तु०—''तदत्थे चतुत्थेकवचनस्सायो अत्थञ्च''—सद्द०, सु० २७९; पुब्बसुत्ते तदत्थसद्दस्स परिभासा एवं विज्जति—''छेदनादिसु यं पयोजनं सो तदत्थो''—त०, सु० २७८; ''क्वचि दुतिया-पञ्चमी-छट्ठी-सत्तमीनमत्थे पुन्नपुंसकेहि चतुत्थेकवचनं, तस्स चायो'— त०, सु० २८०; 'ङेर्यः''—पा० ७. १. १३; ''ङेर्यः''—का० २. १. २४ ।

सुविञ्ञेय्यो व। चतुत्थिया एकवचनं, चतुत्थेकवचनं; एत्थ च चतुत्थीवचनेन* छट्ठी-विभत्ति** निवत्तेति, एकवचनसद्देन चतुत्थीबहुवचनं निवत्तेति[1]।

अत्थाया त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ च अत्थाया ति अत्थसद्दतो चतुत्थेक-वचनं कत्वा, 'अतो नेन' (१०३), 'सो वा' (१०५) त्यधिकिच्च इमिना तस्सायादेसे कते, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं। इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव। इसिस्सा ति किमुदाहरणं, तम्पि सुविञ्ञेय्यमेव। पुरिसस्सा ति पि किमुदाहरणं? तं पन सति पि अकारन्तत्ते चतुत्थिया अभावा इमिना आदेसम्हकते रूपं। समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा ति पि किमुदाहरणानि? तत्थ च वासद्दस्स क्वचत्थत्ता सुद्धसम्पदाने अकारन्ततो पुल्लिङ्गम्हा आयादेसाभावं दीपेति, तत्थ च होति वासद्दोत्थं अत्थञ्च होती ति समुच्चेति; तेन अत्तत्थं-हितत्थं-सुखत्थं-त्यादिसु चतुत्थेकवचनस्स त्थमादेसो पि होति, यदत्थं-तदत्थं-किमत्थं-तेलादि-अत्थं-तण्डुलादि-अत्थं त्यादिसु अत्थमादेसो पि होति, आयादेसो पि च; द्विन्नं पुंनपुंसकलिङ्गानं वसेन चतूसु ठानेसु—गत्यत्थकम्मनि, नयनत्थ-कम्मनि[2], विभत्तिविप्पल्लासे, तदत्थे ति; यथा—'मूलाय पटिकस्सेय्या' ति मूलं पटिक-स्सेय्य, 'अप्पोस्सग्गाया' ति अप्पो अप्पको सत्तो सग्गाय सग्गं गच्छति—एवं गत्यत्थ-कम्मनि; 'विरमथ आयस्मन्तो मम वचनाया' ति मम वचनतो विरमथा ति—निस्स-क्कत्थे; 'महतो गणाय भत्ता मे' ति मम महतो गणस्स भत्ता ति—साम्यत्थे; 'असक्कता धनञ्जयाया' ति धनञ्जयेना ति कत्वत्थे वा, धनञ्जयस्सा ति साम्यत्थे वा—एवं विभ-त्तिविप्पल्लासे; अभिञ्ञाय अभिञ्ञत्थं, सम्बोधाय सम्बुज्झनत्थं, निब्बाणाय निब्बाणत्थं—एवं तिलिङ्गतो तदत्थे[3]। नमोयोगादिसु बुद्धाया त्यादिसु आयादेसो पालि-अट्ठकथासु न दिस्सति[4]।

* चतुत्थि०—सी०। ** छट्ठि०—सी०।

1. तु०—"'आय सस्स तु' ति वत्तब्बे चतुत्थीवचनं छट्ठीविवज्जनत्थं; 'आय चतुत्थिया तु' ति वत्तब्बे एकवचनगहणं चतुत्थीबहुवचनविवज्जनत्थं; तुग्गहणफलं सयमेव वक्खति—" क० न्या०, पि० १२८।

2. नयनकम्मं सद्दनीतियं एवं वित्थारितं—"अयं पुरिसो मम अत्थकामो, यो मं गहेत्वान दकाय नेती' ति एत्थ नयनत्थकम्मनि दिस्सति, एत्थ हि 'मं उदकं नेति अत्तनो वसनक-सोब्भं पापेती' ति अत्थो"—सद्द०, पद०, पि० १३८।

3. त०।

4. तु०—"केचि पन वदेय्युं—'यायं पुरिससद्दनयं गहेत्वा 'भूतो भूता भूतं' ति आदिना सब्बेसमोकारन्तपदानं नामिकपदमाला विभत्ता, तत्थ चतुत्थेकवचनस्स आयादेससहितानि रूपानि किमत्थं न वुत्तानी ति? विसेसदस्सनत्थं; तादिसानि हि चतुत्थेकवचनरूपानि पाळिनये पोराणट्ठकथानये च उपपरिक्खीयमाने गत्यत्थकम्मनि नयनत्थकम्मनि विभत्ति-

वुत्तञ्च सद्दनीतियं[5]—

"चतुत्थेकवचनस्स आयादेसेन संयुतं।
रूपं अनित्थिलिङ्गानं वसेन* चतुधाट्ठितं+॥

गत्यत्थकम्मनि चेव नयनत्थस्स कम्मनि।
विभत्तिया विपल्लासे तदत्थे, चा पि** निद्दिसे॥

मूलाय पटिकस्सेय्य अप्पोस्सग्गाय++ गच्छति।
एवं गत्यत्थकम्मस्मिं दिट्ठमम्हेहि सासने॥

दकाय नेति इच्चेवं नयनत्थस्स कम्मनि।
वचनाया ति निस्सक्के विरमनप्पयोगतो*॥

गणाय इति सामिस्मिं भत्तादिसद्दयोगतो।
धनञ्जयाया ति पदं कत्वत्थे** सामिसूचकं॥

असक्कता ति सद्दस्स योगतो ति विनिद्दिसे।
अञ्ञो चा पि विपल्लासो मग्गितब्बो विभाविना॥

अभिञ्ञाय सम्बोधाय निब्बाणाया तिमानि+तु++।
लिङ्गत्तयवसेनेव तदत्थस्मिं विनिद्दिसे॥

एवं पाठानुलोमेन कथितो आयसम्भवो।
इदन्तु सुखुमं ठानं चिन्तेतब्बं पुनप्पुनं"॥ ति।

विपरिणामे तदत्थे चा ति संखेपतो इमेसु चतुसु येव ठानेसु, पभेदतो पन सत्तसु ठानेसु दिस्सन्ति, दान-रोचन-धारणनमोयोगादिभेदे पन यत्थ कत्थचि सम्पादानविसये न दिस्सन्ति; इति इमं विसेसं दस्सेतुं न वुत्तानी ति…"—त०, पि० १३०-१३६।

*—+. ठानेसु चतुसुट्ठितं--सद्द०, त०।

** ति—सद्द०, त०।

++. अप्पो सग्गाय—सद्द०, त०।

*. विरमण०—सद्द०, त०।

**. कतुत्थे--सद्द०, त०।

+—++. तिमानि तुं—सी०।

5. सद्द०, भाग० १, पि० १३६–१३७।

११०. तयो नेव च सब्बनामेहि । २.१.५९ ।

तेहि सब्बनामेहि अकारन्तेहि स्मा-स्मिं-स इच्चेतेसं[१] तयो आ-ए-आयादेसा नेव होन्ति। सब्बस्मा, सब्बस्मिं, सब्बस्स; यस्मा, यस्मिं, यस्स; तस्मा, तस्मिं, तस्स; कस्मा, कस्मिं, कस्स; इमस्मा, इमस्मिं, इमस्स ।

सब्बनामेही ति किमत्थं ? पापा, पापे, पापाय ।

चसद्दग्गहणं अतोग्गहणमनुकड्ढनत्थं ।

---

११०. तयो नेव च सब्बनामेही[1] तिदं 'स्मास्मिन्नं वा' (१०८), 'आय चतुत्थेक ....' ति (१०९) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? एतेहि द्वीहि सुत्तेहि अकारन्ततो स्मा-स्मिं-स-इच्चेतासं विभत्तीनं यथाक्कमं आ-ए-आयादेसा वुत्ता; एवं सति अकारन्तेहि सब्बनामेहि स्मा-स्मिं-स-विभत्तिम्हि कते, कथं सब्बस्मा सब्बस्मिं सब्बस्सा त्यादिरूपानी ति पुच्छाय सति, अकारन्तेहि सब्बनामेहि तासं विभत्तीनं आ-ए-आयादेसा न होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'तयो नेव च सब्बनामेही' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बनामेहि अकारन्तेहि स्मा-स्मिं-स इच्चेतेसं हेट्ठा वुत्ता तयो आ-ए-आयादेसा नेव होन्ती ति ञापनत्थं। पञ्चपदमिदं । तयो ति कारियं, ना ति पटिसेधनं, एवा ति अवधारणं, चा ति अनुकड्ढनं, सब्बनामेही ति अवधि, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । एवग्गहणेन सब्बदा पटिसेधनं निवत्तेति, तेन पुब्बादीहि स्मा-स्मिन्नं आ-ए-आदेसा होन्ति; चग्गहणं स्मा-स्मिन्नं अनुकड्ढनत्थं, आ-ए-कारिगहिते कारिभूता यो-नि-यो अनुवत्तेय्युं ति तन्निवत्तनत्थं वा; चग्गहणेन स्मास्मिन्नं अनुकड्ढनम्पि करोति । अनन्तरसुत्तद्वयमिहानुवत्तते । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व ।

सब्बस्मा, सब्बस्मिं, सब्बस्स इत्युदाहरणानि । तत्थ सब्बस्मा ति सब्बसद्दतो स्मा-स्मिं-स-विभत्तियो कत्वा, इमिना तिण्णं* आ-ए-आयादेसानं पटिसेधे कते रूपं । कस्मा, कस्मिं, कस्सा ति एत्थ 'किस्स क वे चे' ति (२२७) एत्थ चसद्देन किंसद्दस्स कादेसमेव विसेसो । पापा, पापे, पापाया ति किमुदाहरणानि ? तत्थ च पापा ति पापसद्दतो स्मा-स्मिं-स-विभत्तिम्हि कते सब्बनामत्ताभावा पुरिमद्वये 'स्मास्मिन्नं वा' ति (१०८)

---

१. ०एकवचनानं—से० ।

*. तिन्नं—सी० ।

1. तु०—"न तयो सब्बनामतो"—सद्द०, सु० २८१; द०—"अथवेकच्चेहि स्मा-स्मिनमा-ए भवन्ति"—त०, सु० २८२; "तानि रूपानि अप्पकतमानि; सब्बे इच्चादीनि सत्तमी-सहितरूपानि तत्थ तत्थ निद्देसपाळिआदिसु दिस्सन्ति, यमकमहाथेरेन पन सब्बे संबा ति आदिना सत्तमी-पञ्चमीरूपानि कथितानि"—त०, वु० ।

१११. घतो नादीनं । २.१.६० ।

तस्मा घतो नादीनमेकवचनानं विभत्तिगणानं आयादेसो होति । कञ्ञाय कतं कम्मं, कञ्ञाय[1] दीयते[1], कञ्ञाय निस्सटं वत्थं, कञ्ञाय परिग्गहो, कञ्ञाय पतिट्ठितं सीलं ।

घतो ति किमत्थं ? रत्तिया, वधुया, धेनुया[1], देविया[1] । नादीनमिति किमत्थं ? कञ्ञं, विज्जं, वीणं, गङ्गं । एकवचनानमिति किमत्थं ? सब्बासु, यासु, तासु, कासु, इमासु, पभासु ।

इमिना स्मास्मिन्नं आ-ए-आदेसे कते रूपं; परपक्खे 'आय....' ति (१०९) इमिना तदत्थे आयादेसम्हि कते रूपं। वुत्तञ्च न्यासे—"पापाया ति इदं अत्थाया तिमिना सदिसं" ति[1] ।

१११. घतो नादीनं[2] तिदं 'अतो नेन' (१०३), 'आय चतुत्थेकवचनस्स तू' ति (१०९) सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति ? 'ततो नेना' ति सुत्तेन अकारन्ततो नावचनस्स एनादेसो च, 'आय....' ति सुत्तेन चतुत्थेकवचनस्सायादेसो च वुत्तो; एवं सति कथं कञ्ञाया त्यादिरूपं ति पुच्छाय सति, घसञ्ञातो आकारतो नादीनमेकवचनानं आयादेसो पि होती ति दस्सेतुं, 'घतो नादीनं' ति वुत्तं। किमत्थमिद्रमुच्चते ? घतो परेसं नादीनमेकवचनानं विभत्तिगणानं आयादेसो होती ति ञापनत्थं। द्विपदमिदं। घतो ति अवधि, नादीनं ति कारि, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। 'आय....' ति सुत्ततो आयग्गहणञ्च अनन्तरसुत्ततो एकवचनग्गहणञ्चानुवत्तते ।

कञ्ञाया त्यादीन्युदाहरणानि। तत्थ च कञ्ञाया ति कञ्ञसद्दतो 'इत्थियमतो....' ति (२३७) आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, 'तद्धितसमास....' ति (६०३) एत्थ चग्गहणेन नाममिव कत्वा, ततो नावचनञ्च कत्वा, 'आलपने....' (५७), 'ते इत्थिख्या पो' (५९) त्यधिकिच्च 'आ घो' ति (६०) घसञ्ञं कत्वा, 'आय....' त्यधिकिच्च इमिना नावचनस्सायादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं। इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव। रत्तिया, देविया धेनुया, वधुया ति किमुदाहरणानि ? तत्थ च रत्तिया ति रत्तिसद्दतो नादिम्हि कते 'आलपने....', 'इवण्णु....' (५८) त्यधिकिच्च 'ते इत्थिख्या पो' ति इवण्णस्स पसञ्ञं कत्वा, सति पि नादिवचने घस्सा-

---

१-१. नत्थि से० पोत्थके ।

1. क० न्या०, पि० १२६ ।

2. तु०—'घतो नादीनमेकवचनानमायो"—सद्द०, सु० २८३ ।

११२. पतो या । २.१.६१ ।

तस्मा पतो नादीनमेकवचनानं विभत्तिगणानं यादेसो होति । रत्तिया, इत्थिया, वधुया, धेनुया, देविया ।

नादीनमिति किमत्थं ? रत्ती, रत्ति; इत्थी इत्थि । पतो ति किमत्थं ? कञ्ञाय, वीणाय, गङ्गाय, पभाय । एकवचनानमिति किमत्थं ? रत्तीनं, इत्थीनं ।

भावा इमिना वुत्तविधानमकत्वा, 'आय.....' त्यधिकिच्च 'पतो या' ति (११२) यादेसे कते रूपं । देविया ति एत्थ 'अघो रस्स.....' ति (८४) रस्समेव विसेसो । धेनुया ति धेनुसद्दतो नादिम्हि कते उकारस्स पसञ्ञकरणमेव विसेसो । वधुया ति वधूसद्दतो नादिम्हि कते ऊकारन्तत्ता वुत्तनयेन रस्सकरणमेव विसेसो । कञ्ञं, विज्जं, वीणं*, गङ्गं त्यादीनि सुविञ्ञेय्यानेव । सब्बासू त्यादीनि पि किमुदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव । एत्थ किंसद्दस्स वुत्तनयेन कादेसमेव विसेसो ।

११२. पतो या[1] तिदं 'घतो नादीनं' ति (१११) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'घतो नादीनं' ति इमिना घतो परेसं नादीनमेकवचनानं विभत्तिगणानं आयादेसो वुत्तो; एवं सति कथं रत्तिया त्यादिरूपं ति पुच्छाय सति, रत्तिया त्यादिसु पतो परेसं नादीनं विभत्तिगणानं यादेसो पि होती ति दस्सेतुं, 'पतो या' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? पतो परेसं नादीनमेकवचनानं विभत्तिगणानं यादेसो होती ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । पतो ति अवधि, या ति कारियं, सञ्ञा.....पे०.....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । नादिग्गहणञ्च एकवचनग्गहणञ्चानुवत्तते । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व ।

रत्तिया, इत्थिया, धेनुया, वधुया, देविया ति च उदाहरणानि । तानि वुत्तनयेन पच्छिमे रस्सत्तमेव विसेसो । रत्ति, रत्ती, इत्थि, इत्थी ति किमुदाहरणानि ? तत्थ च रत्ती ति रत्तिसद्दतो सिवचनं कत्वा, वुत्तनयेन पसञ्ञं कत्वा, सति पि पसञ्ञे नादीनमभावा इमिना वुत्तविधानमकत्वा, 'सेसतो.....' ति (२२०) सिम्हि लुत्ते रूपं । रत्ती ति एत्थ योवचनं कत्वा, योवचनस्स लोपे कते 'योसु कतनिकार.....' ति (८८) दीघे कते रूपं । इत्थी ति इत्थीसद्दतो सिम्हि लुत्ते रूपं । इतरस्मिं योविभत्तिया लोपकरणमेव विसेसो । कञ्ञाय, वीणाय,** गङ्गाय, पभाया ति किमुदाहरणानि ? तत्थ च सन्तेसु पि नादि-

---

*. वीनं—सी० । **. वीनाय—सी० ।

1. तु०—"पस्मा या"—सद्द०, सु० २८४; "टौसोरे"—का० २.१.३८ ।

११३. सखातो गस्से वा । २. १. ६२ ।

तस्मा सखातो गस्स अकार-आकार-इकार-ईकार-एकारादेसा होन्ति वा । भो सख, भो सखा, भो सखि, भो सखे ।

वचनेसु पस्साभावा इमिना आदेसे अकते रूपानि । रत्तीनं, इत्थीनं ति पि किमुदाहरणानि ? तत्थ च रत्तिसद्दतो नम्हि कते 'योसु कतनिकार....' त्यधिकिच्च 'सुनंहिसु चे' ति (८९) दीघे कते रूपानि । इतरं सुविञ्ञेय्यमेव ।

११३. सखातो गस्से वा[1] तिदं 'आलपने सि गसञ्ञो' ति (५७) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'आलपने....' ति सुत्तेन सिस्स गसञ्ञा कता; तेन किं पयोजनं ति पुच्छाय सति, गसञ्ञाकरणेन सखसद्दतो अकार-आकार-इकार-ईकार-एकारादेसा पि होन्ती ति दस्सेतुं, 'सखातो गस्से वा' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? सखातो गस्स अकार-आकार-इकार-ईकार-एकारादेसा पि होन्ती ति ञापनत्थं । चतुप्पदमिदं । सखातो ति अवधि, गस्सा ति आदेसापेक्खाछट्ठी, ए ति कारियं, वा ति समुच्चयं, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । न्यासे अ च आ च इ च ई च ए चा ति ए ति चतुन्नं सरानमेकक्खणे** लोपवसेन वुत्तं[2]; रूपसिद्धियं चतुन्नं सरानं कमतो लोपो वुत्तो[3] ।

भो सखा त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ भो तिदं आलपनञापकं । तत्थ च भवन्तसद्दतो आलपनेकवचनं कत्वा, तस्स च 'आलपने....' ति (५७) गसञ्ञं कत्वा, 'भवतो भोतो' (२४२) त्यधिकिच्च 'भो गे तू' ति (२४३) भो-आदेसं कत्वा, गलोपे कते रूपं । सखा त्यादीनि सखसद्दतो आलपनेकवचनं कत्वा, तस्स गसञ्ञञ्च कत्वा, इमिना तस्स अकार-आकार-इकार-ईकार-एकारादेसे कते, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपानि । रूपसिद्धियं "वासद्देन अञ्ञस्मा पि क्वचि एकारो, यथा भदन्ते इसे" ति वुत्तं[4] । मुखमत्तसारादिसु पन "सखातो गस्से वा ति वासद्देन समुच्चये कते इसे धने गुम्बे त्यादो एत्थ कच्चायने" ति वुत्तं ।

**. सराणमेक०—सी० ।

1. तु०—"इवण्णेकारत्तं (मतन्तरे)"—सद्द०, सु० २८६; "सखातो गस्सावण्णो"—त०, सु० २८५ ।
2. क० न्या०, पि० २२ ।
3. रूप०, सु० १३२ ।
4. त० ।

११४. घते च । २. १. ६३ ।

तस्मा घतो गस्स एकारो होति । भोति अय्ये, भोति कञ्ञे, भोति घरादिये[1] ।

११५. न अम्मादितो । २. १. ६४ ।

ततो अम्मादितो गस्स एकारत्तं न होति । भोति अम्मा, भोति अन्ना, भोति अम्बा, भोति ताता ।

अम्मादितो ति किमत्थं ? भोति कञ्ञे ।

---

११४. घते चे[1] तिदं 'सखातो गस्से वा' ति (११३) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति ? 'सखातो गस्से वा'* ति इमिना सखसद्दतो गस्स अकार-आकार-इकार-ईकार-एकारादेसा वुत्ता; एवं सति कथं अञ्ञे-कञ्ञे-घरादिये ति रूपं ति पुच्छाय सति, गसञ्ञातो आकारतो गस्सेकारादेसो पि होती ति दस्सेतुं, 'घतो चे' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? घतो परस्स गस्सेकारो होती ति ञापनत्थं। तिपदमिदं। घतो ति अवधि, ए ति कारियं, चा ति समुच्चयं। सति अन्तरे एग्गहणे पुन एग्गहणं सेस-कारियपटिनिवत्तनत्थं[2]। गग्गहणमिहानुवत्तते[3]।

भोति अय्ये त्यादीनि उदाहरणानि। तानि पन अञ्ञ-कञ्ञ-घरादियसद्देहि** वुत्तनयेन आप्पच्चयं कत्वा, घसञ्ञञ्च कत्वा, आलपनेकवचनञ्च कत्वा, गसञ्ञञ्च कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना गस्सेकारं कत्वा, सरलोपपकतिभावे कते रूपानि। न्यासे पन "चग्गहणं 'अघो रस्स.....' ति (८४) एत्थ विय अवधारणत्थं" ति[4] वुत्तं। मुखमत्तसारादिसु पन '"घते चा' ति चसद्देन पतो चेत्तं समुच्चेती ति; तेन सद्धे, राजधीते, सेट्ठिधीते" त्यादिकं वुत्तं

११५. न अम्मादितो[5] तिदं 'सखातो गस्से वा' (११३), 'घते चे' ति (११४)

---

१. घरादिये । चसद्दग्गहणं अवधारणत्थं, सन्निट्ठानं—सी० २ ।

*. वे—सी० । **. ०खरादिय०—सी० ।

1. "घतो निच्चं ए"—सद्द०, सु० २८८; "संबुद्धौ च".—का० २.१.३९; "संबुद्धौ च"—पा० ७.३.१०६ ।

2-3. तु०—क० न्या०, पि० १३१ ।

4. त० ।

5. तु०—"नेव अम्मादितो"—सद्द०, सु० २९० ।

११६. अकतरस्सा लतो य्वालपनस्स वेवो। २. १. ६५।

तस्मा अकतरस्सा लतो य्वालपनस्स वे-वो-आदेसा होन्ति[१]। भिक्खवे, भिक्खवो; हेतवे हेतवो।

अकतरस्सा ति किमत्थं? सयम्भुवो। लतो ति किमत्थं? नागियो, अग्गयो[२], धेनुयो, यागुयो। आलपनस्सेति किमत्थं? ते हेतवो, ते भिक्खवो।

सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति? 'सखातो गस्से वा' तिमिना सखसद्दतो गस्स अ-आ-इ-ई-एकारादेसा वुत्ता, 'घते चे' ति च घतो गस्सेकारो वुत्तो; एवं सति कथं अम्मा त्यादि-रूपं ति पुच्छाय सति, अम्मा त्यादितो न गस्सेकारो ति दस्सेतुं, 'न अम्मादितो' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? अम्मादितो गस्सेकारो न होती ति ञापनत्थं। द्विपदमिदं। ना ति पटिसेधनं, अम्मादितो ति अवधि, सञ्ञा...पे०...विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। गग्गहणं चग्गहणञ्चानुवत्तते। अत्थो सुविञ्ञेय्यो व।

अम्मा त्यादीनि उदाहरणानि। तानि पन अम्म-अन्न-अम्ब-तातसद्देहि वुत्तनयेन आप्पच्चयं कत्वा, आलपनेकवचनञ्च कत्वा, गसञ्ञञ्च कत्वा, 'सखातो गस्से वा' त्यधिकिच्च 'घते चे' ति गस्सेकारादेसे सम्पत्ते, तमेव सुत्तद्वयमधिकिच्च इमिना पटिसेधनं कत्वा, 'सेसतो लोपं...' ति (२२०) सिम्हि लुत्ते रूपानि। एत्थ आदि-सद्दो पकारत्थो। तेन मातुपरियायभूता इत्थिलिङ्गवाचका अम्म-अन्न-अम्ब-तातसद्दा सङ्गय्हन्ते। भोति कञ्ञे ति किमुदाहरणं? तत्थ च कञ्ञसद्दतो आप्पच्चयादिम्हि कते, सति पि गे अम्मादीनमभावा इमिना पटिसेधमकत्वा आकारस्स घसञ्ञं कत्वा, 'घते चे' ति गस्सेकारादेसादिम्हि कते रूपं।

११६. अकतरस्सा लतो य्वालपनस्स वेवो[1] तिदं 'घते चा' ति (११४) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तन्ति? 'घते चा' ति सुत्तेन घसञ्ञाकारतो आलपनेकवचनस्सेकारो वुत्तो; एवं सति भिक्खवे त्यादीनि कथन्ति पुच्छाय सति, अकतरस्सा लतो य्वालपनस्स वे-वो आदेसा पि होन्ती ति दस्सेतुं, 'अकतरस्सा लतो...' ति वुत्तं। हेट्ठा वुत्तसुत्तद्वयेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं। किमत्थमिदमुच्चते? अकतरस्सा लतो य्वालपनस्स वे-वो आदेसा होन्ती ति ञापनत्थं। चतुप्पदमिदं। अकतरस्सा ति तब्बिसेसनं, लतो ति अवधि,

---

१. होन्ति वा–सी०२। २. नत्थि सी०१ पोत्थके।

1. तु०—"रस्सा लतो य्वालपनस्स वेवो"—सद्द०, सु० २६१।

११७. झलतो सस्स नो वा । २. १. ६६ ।

तस्मा झलतो सस्स विभत्तिस्स[1] नो-आदेसो[1] होति वा । अग्गिनो, अग्गिस्स; सखिनो, सखिस्स; दण्डिनो, दण्डिस्स; भिक्खुनो, भिक्खुस्स; सयम्भुनो, सयम्भुस्स ।

सस्सेति किमत्थं ? इसिना, भिक्खुना । झलतो ति किमत्थं ? पुरिसस्स ।

य्वालपनस्सा ति सम्बन्धछट्ठीकारी*, वेवो ति कारियं, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । कतो रस्सो यस्स सो कतरस्सो, न कतरस्सो, तथा, तस्मा अकतरस्सा; लतो तिमिना तुल्याधिकरणं; यो च तं आलपनं चे ति य्वालपनं, तस्स य्वालपनस्स[1] ।

भिक्खवे त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ च भिक्खवे, भिक्खवो ति भिक्खुसद्दतो य्वालपनं कत्वा, लसञ्ञं कत्वा, इमिना वे-वो-आदेसे कते रूपानि । सयम्भुवो ति किमुदाहरण ? तम्पन सयम्भूसद्दतो** य्वालपनं कत्वा, सति पि य्वालपने अकतरस्साभावा इमिना वे-वो-आदेसमकत्वा, रस्सत्ते च कते रूपं । नागियो, धेनुयो, यागुयो ति किमुदाहरणानि ? तत्थ च नागि-धेनु-यागु-वधूसद्देहि य्वालपनं कत्वा, सति पि य्वालपने अकतरस्स-लस्साभावा इमिना वे-वो-आदेसमकत्वा, नागि-वधूनं अन्तसरस्स 'अघो रस्स····' ति (८४) रस्सत्ते कते रूपानि । ते हेतवो, ते भिक्खवो ति किमुदाहरणानि ? तत्थ च हेतु-भिक्खुसद्देहि 'लिङ्गत्थे पठमा' ति (२८६) पठमाबहुवचन-योवचनं कत्वा, लसञ्ञं कत्वा, सति पि अकतरस्से ले य्वालपनस्साभावा इमिना वे-वो-आदेसमकत्वा, 'लतो वोकारो चा' ति (११९) योवचनस्स वोकारं कत्वा, 'योस्वकत····' (९६) त्यधिकिच्च 'वेवोसु लो चे' ति (९७) लस्सत्ते कते रूपानि ।

११७. झलतो सस्स नो वा[2] तिदं 'इवण्णुवण्णाज्झला' ति (५८) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'इवण्णु····' ति सुत्तेन इवण्णुवण्णानं झ-ल-सञ्ञा वुत्ता;

---

१. नत्थि से० पोत्थके ।

* ०छट्ठि०—सी । **. सयम्भु०—सी० ।

1. तु०—क० व्या०, पि० १३१ ।
2. तु०—"झलपेहि वा सस्स नो"—सद्द०, सु० २६२ ।

११८. घपतो च योनं लोपो । २. १. ६७ ।

तेहि घ-प-झ-ल इच्चेतेहि योनं लोपो होति वा । कञ्ञा, कञ्ञायो; वीणा, वीणायो; रत्ती, रत्तियो; इत्थी, इत्थियो; वधू, वधुयो; यागू, यागुयो; अग्गी, अग्गयो; भिक्खू, भिक्खवो; सयम्भू, सयम्भुवो; अट्ठी, अट्ठीनि; आयू, आयूनि ।

तेन किं पयोजनन्ति पुच्छाय सति, झ-ल-सञ्ञा इवण्णुवण्णा परस्स सविभत्तिस्स नो-आदेसो होती ति दस्सेन्तेन, 'झलतो सस्स नो वा' ति वुत्तं । हेट्ठा वुत्तसुत्तद्वयतो निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं । किमत्थमिदमुच्चते ? झलतो सस्स विभत्तिस्स नो-आदेसो होती ति ञापनत्थं । चतुप्पदमिदं । झलतो ति अवधि, सस्सा ति सम्बन्धछट्ठीकारी +, नो ति कारियं, वा ति विकप्पनत्थं, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । झो च लो च झला, ततो झलतो ।

अग्गिनो त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ च अग्गिनो ति अग्गिसद्दतो वुत्तनयेन सविभत्तिं कत्वा; वुत्तनयेन झ-सञ्ञञ्च कत्वा, इमिना सस्स नो-आदेसे कते रूपं । सखिनो ति सखसद्दतो सविभत्तिं कत्वा, 'सखान्तस्सि....' ति (१९४) से विभत्तिम्हि सखान्तस्सिकारं कत्वा, तस्स झसञ्ञं कत्वा, इमिना नो-आदेसे कते रूपं । दण्डिनो, दण्डिस्स, सयम्भुनो, सयम्भुस्सा त्यादिसु अघस्स रस्सकरणमेव विसेसो । इसिना, भिक्खुना त्यादिसु सन्तेसु पि झलेसु सस्साभावा; पुरिसस्सा ति एत्थ सति पि से विभत्तिम्हि झलानमभावा । अनन्तरसुत्ततो अनुवत्तमाने लग्गहणे सति पि पुन लग्गहणकरणं अकतरस्सग्गहणनिवत्तनत्थं ।

११८. घपतो च योनं लोपो[1] तिदं 'इवण्णुवण्णाज्झला' (५८), 'ते इत्थिख्या पो' (५९), 'आ घो' ति + + (६०) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तन्ति ? 'इवण्णु....' ति इवण्णुवण्णानं पुल्लिङ्गनपुंसकलिङ्गेसु झलसञ्ञा च, 'ते....' ति च इत्थिलिङ्गे इवण्णुवण्णानं पसञ्ञा च, 'आ घो' ति च आकारस्स घसञ्ञा वुत्ता; तेहि तीहि सञ्ञाकरणेहि क्वत्थो ति पुच्छाय सति, झ-ल-घ-पेहि योनं लोपो होती ति दस्सेन्तेन, 'घपतो च....' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? घ-प-झ-ल इच्चेतेहि योनं लोपो होति विकप्पेना

१-१. नत्थि से०, सी०१ पोत्थकेसु ।

+ ०छट्ठि—सी० । + +. सी० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—''घपतो च योनं लुत्ति''—सद्द०, सु० २६३ ।

११९. लतो वोकारो च । २. १. ६८ ।

तस्मा लतो योनं वोकारो होति वा। भिक्खवो, भिक्खू; सयम्भुवो, सयम्भू ।

कारग्गहणं किमत्थं ? योनं नो च होति—जन्तुनो ।

चसद्दग्गहणमवधारणत्थं—अमू पुरिसा तिट्ठन्ति, अमू पुरिसे पस्सथ ।

इति नामकप्पे पठमो कण्डो ।

ति ञापनत्थं । चतुप्पदमिदं । घपतो ति अवधि, चा ति अनुकड्ढनं, योनं ति सम्बन्ध-छट्ठीकारी, लोपो ति कारियं, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । झलग्गहणञ्च वाग्गहणञ्च वत्तते । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । यो च यो च यो, तेसं योनं[1] । चग्गहणं झलग्गहणानुकड्ढनत्थं[2] ।

कञ्ञा त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ च कञ्ञा ति कञ्ञसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, कञ्ञासद्दस्स एकन्ततद्धितन्तत्ताभावा 'तद्धित-समास....' ति (६०३) एत्थ च-सद्देन नाममिव कत्वा, वुत्तनयेन योम्हि कते, आका-रस्स 'आ घो' ति घसञ्ञे कते, इमिना घतो परस्स योवचनस्स लोपे कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं । तं सुविञ्ञेय्यमेव । वीणा ति वीणासद्दतो योवचनस्स लोपे कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । रत्ती ति रत्तिसद्दतो योवचनस्स लोपे कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं । इत्थियो तत्थ अघस्स रस्सकरणमेव विसेसो । वधू ति पतो यो-लोपो । वधुयो ति ऊकारन्तत्ता अघस्स रस्सत्तं । यागू ति पतो यो-लोपे कते 'योसु कतनिकार....' ति (८८) दीघत्तं । अग्गी ति अग्गिसद्दतो यो-वचनं कत्वा, इवण्णस्स झसञ्ञं कत्वा, 'झलतो सस्स....' (११७) त्यधिकिच्च इमिना यो-लोपे कते, वुत्तनयेन दीघो । अग्गयो ति वाग्गहणफलं; तत्थ च 'पञ्चादीनमत्तं (९०) त्यधिकिच्च 'योस्वकत....' ति (९६) अकतरस्सस्स झस्सत्तं । भिक्खू ति लतो यो-लोपो दीघत्तञ्च । भिक्खवो ति वाग्गहणफलं; तस्स 'लतो वोकारो चे' ति (११९) वोकारो, 'वेवोसु लो चे' ति (९७) लस्सत्तं । सयम्भू ति लतो यो-लोपो । सयम्भुवो ति वाग्गहणफलं; तस्स वुत्तनयेन वोकारो, अघत्ता रस्सत्तं । अट्ठी ति झतो यो-लोपो, झतो 'योस्वा'दिना (८८) दीघो । अट्ठीनी ति वाग्गहणफलं; 'योनन्नि नपुंसकेही' ति (२१७) न्यादेसो, दीघो च । आयू ति लतो वुत्तनयेन यो-लोपो, दीघो च । आयूनी ति वाग्गहणफलं, न्यादेसो, दीघो च ।

११९. लतो वोकारो चे[3]तिदं 'घपतो च योनं लोपो' ति(११८)सुत्ततो निक्खन्तं ।

1–2. तु०—क० न्या०, पि० १३२ ।

3. तु०—"लतो यथासम्भवं वो नो च"—सद्द०, सु० २६४ ।

किन्निक्खन्तन्ति ? 'झलतो सस्स नो वा' (११७) त्यधिकिच्च 'घपतो च....' ति सुत्तेन झ-ल-घ-प इच्चेतेहि योनं लोपो वुत्तो; एवं च सति कथं भिक्खवो, सयम्भुवो त्यादि-रूपानी ति पुच्छाय सति, लतो योनं वो-आदेसो पि होती ति दस्सेन्तेन, 'लतो वोकारो चे' ति वुत्तं। हेट्ठा सुत्तद्वयतो पि निक्खन्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? लतो वोकारो च होति विकप्पेना ति ञापनत्थं। तिपदमिदं। लतो ति अवधि, वोकारो ति कारियं, चा ति अवधारणनिद्देसो।

भिक्खवो त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ च भिक्खवो ति भिक्खुसद्दतो वुत्तनयेन यो-वचनं कत्वा, लसञ्ञञ्च कत्वा, 'झलतो....' (११७), 'घपतो च....' (११८) त्यधि-किच्च इमिना योवचनस्स वो-आदेसं कत्वा, 'पञ्चादीनमत्तं' (९०), 'योस्वकत....(९६) त्यधिकिच्च 'वेवोसु लो चे' ति (९७) लस्सत्ते कते रूपं। भिक्खू ति वाग्गहणफलं। तत्थ भिक्खुसद्दतो यो-वचनं कत्वा, 'घपतो च....' ति योम्हि लुत्ते 'योसु कतनिकार....' ति (८८) दीघत्तं। सयम्भुवो ति सयम्भूसद्दतो* योम्हि कते लसञ्ञञ्च कत्वा, 'अघो रस्स....' ति (८४) रस्सत्ते कते, इमिना योवचनस्स वोकारादेसे कते रूपं। जन्तुनो ति कारग्गहणफलं; तम्पन जन्तुसद्दतो योम्हि कते, कारग्गहणेन नो-आदेसे कते रूपं। अमू ति चग्गहणफलं; तत्थ च अमुसद्दतो योम्हि कते, सति पि लतो परे यो-वचने चग्गहणेन निवारितत्ता, यो-वचनस्स वोकारादेसमकत्वा, 'झलतो सस्स....' त्यधिकिच्च 'घपतो....' ति योम्हि लुत्ते, 'योसु कतनिकार....' ति दीघे कते रूपं। चग्गहणं चेत्थ 'सुनंहिसु चा' ति (८९) सुत्ते विय क्वचि निवत्तनं दट्ठब्बं। 'कारग्गहणेन योनं वोकारो च होती' ति एत्थ चसद्देन नो-आदेसम्पि समुच्चेति[1]; तेन सयम्भुनो ति सिज्झति[2]।

इति कच्चायनवण्णनायं नामकप्पस्स
पठमकण्डवण्णना।

---

* सयम्भु०—सी०।

1. तु०—क० वु०, अस्स सुत्तस्सुपरि।

2. तु०—रूप०, सु० १५५।

(२) दुतियो कण्डो

१२०. अम्हस्स ममं सविभत्तिस्स से । २. २. १ ।

सब्बस्सेव[१] अम्हसद्दस्स सविभत्तिस्स ममं-आदेसो होति से विभत्तिम्हि । ममं दीयते पुरिसेन, ममं परिग्गहो ।

---

(२) दुतियो कण्डो

एवं पकतिविभत्तीनं पदादेस-विभत्तादेसवसेन विसुं विधिं विधाय, इदानि पकतिविभत्तीनं एकतो आदेसवसेन सविभत्तादेसं विधातुं—

१२०. अम्हस्स ममं सविभत्तिस्स से[1] त्यादि वुत्तं । इदं सुत्तं 'सम्पदाने चतुत्थी'* (२९५), 'सामिस्मिं छट्ठी'** (३०३), 'सागमो से' ति (६१) सुत्तेहि निक्खन्तं । ममं त्यादिसु अम्हसद्दतो से विभत्तिम्हि कते, सकारागमं कत्वा अम्हस्सा ति भवेय्य; एवं सति कथं ममं ति रूपं सिज्झेय्या ति पुच्छाय सति, सविभत्तिस्स अम्हसद्दस्स ममं-आदेसो होती ति दस्सेतुं, 'अम्हस्स····से' ति वुत्तं । अम्हसद्दस्स सविभत्तिम्हि विभत्तिया सह ममं-आदेसो होती ति ञापनत्थं । चतुप्पदमिदं सुत्तं । अम्हस्सा ति कारी, ममं ति कारियं, सविभत्तिस्सा ति तब्बिसेसनं से ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अम्हसद्दस्स से विभत्तिम्हि विभत्तिया सह ममं-आदेसो होती ति अत्थो । विभत्तिया सह वत्तती ति सविभत्ति, तस्स सविभत्तिस्स; अम्हस्सा तिमिना तुल्याधिकरणं[2] ।

ममं त्यादीन्युदाहरणानि । तानि पन अम्हसद्दतो 'जिनवचनयुत्तं हि' (५२), 'लिङ्गञ्च निपच्चते' (५३) त्यधिकिच्च 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) विभत्तुप्पत्तिं कत्वा, 'वत्तिच्छानुपुब्बिका सद्दप्पवत्ती' ति कत्वा, 'यस्स दातुकामो····' ति (२७८) सम्पदानसञ्ञं कत्वा, 'सम्पदाने चतुत्थी' ति (२९५) चतुत्थेकवचनं कत्वा वा, 'यस्स वा····' ति (२८५) सामिसञ्ञं कत्वा, 'सामिस्मिं छट्ठी' ति (३०३) छट्ठेकवचनं कत्वा वा, इमिना विभत्तिया सह ममं-आदेसे कते रूपानि ।

---

१. सब्बस्स—से० ।

* चतुत्थि—सी० । ** छट्ठि—सी० ।

1. तु०—"अम्हस्स सविभत्तिकस्स ममं से"—सद्द०, सु० २६५ ।

2. तु०—क० न्या०, पि० १३४ ।

१२१. मयं योम्हि पठमे । २. २. २ ।

सब्बस्सेव अम्हसद्दस्स सविभत्तिस्स मयं-आदेसो होति योम्हि पठमे । मयं गच्छाम, मयं देम ।

अम्हस्सेति किमत्थं ? पुरिसा तिट्ठन्ति । योम्ही ति किमत्थं ? अहं गच्छामि । पठमे ति किमत्थं ? अम्हाकं पस्ससि त्वं ।

---

१२१. मयं योम्हि पठमे[1] तिदं 'ततो च विभत्तियो' (५४), 'सब्बनामकारते पठमो' ति (१६४) सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं ? मयं तिदं अम्हसद्दतो योम्हि पठमे कते 'सब्बनाम·····' ति इमिना पठमा-योवचनस्स एत्तं कत्वा अम्हे ति रूपमेव भवेय्य; एवं सति मयं ति रूपं कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, योम्हि पठमे सति सविभत्तिस्स अम्हसद्दस्स मयमादेसो पि होती ति दस्सेन्तेन, 'मयं योम्हि पठमे' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? अम्हसद्दस्स योम्हि पठमे सविभत्तिस्स मयमादेसो होती ति ञापनत्थं। तिपदमिदं। मयं ति कारियं, योम्ही ति निमित्तसत्तमी, पठमे ति तब्बिसेसनं, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। अम्हग्गहणं सविभत्तिग्गहणञ्च वत्तते। तेन सब्बस्सेव अम्हसद्दस्स सविभत्तिस्स मयमादेसो होति योम्हि पठमे त्यत्थो ।

मयं गच्छामा त्युदाहरणं। तं पन अम्हसद्दतो योम्हि पठमे कते, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना सविभत्तिस्स अम्हसद्दस्स मयमादेसे कते रूपं। पुरिसा ति किमुदाहरणं ? तञ्च पन पुरिससद्दतो पठमाबहुवचनं कत्वा, सति पि योम्हि पठमे अम्हसद्दस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'अतो नेन' (१०३), 'सो वा' (१०५) त्यधिकिच्च 'सब्ब····' ति (१०७) योवचनस्साकारं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं। अहं ति किमुदाहरणं। तस्स पन अम्हसद्दतो सिम्हि कते, सति पि अम्हसद्दे योवचनस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'अम्हस्स ममं····' (१२०), 'तुम्हाम्हानं तयिमयि' (१३९) त्यधिकिच्च 'त्वमहं सिम्हि चे' ति (१४०) सविभत्तिस्स अम्हसद्दस्स अहमादेसे कते रूपं। अम्हाकं पस्ससी तिदम्पि किमुदाहरणं ? तम्पन अम्हसद्दतो दुतिया-यो-वचनं कत्वा, सति पि योम्हि परे अम्हसद्दे पठमस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'तुम्हाम्हेहि नमाकं' (१६१) त्यधिकिच्च 'वा य्वप्पठमो' ति (१६२) तस्साकमादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावे कते रूपं।

---

1. तु०—"योम्हि पठमे मयं"—सद्द०, सु० २६६ ।

१२२. न्तुस्स न्तो । २. २. ३ ।

सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स न्तो-आदेसो होति योम्हि पठमे । गुणवन्तो तिट्ठन्ति ।

न्तुस्सेति किमत्थं ? सब्बे सत्ता गच्छन्ति । पठमे ति किमत्थं ? गुणवन्ते पस्सन्ति[१] ।

---

१२२. न्तुस्स न्तो[1] तिदं 'न्तुस्सन्तो योसु च' (९२), 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? गुणवन्तो त्यादिसु* गुणवन्तुसद्दतो योवचनं कत्वा 'न्तुस्स....' तिमिना योम्हि न्तुस्सत्ते कते 'सब्ब....' ति आकारं कत्वा गुणवन्ता ति रूपं वुत्तं; एवं सति योम्हि परे गुणवन्तो ति कथं सिज्झेय्या ति पुच्छाय सति, योम्हि परे सविभत्तिस्स न्तुस्स न्तो-आदेसं कत्वा गुणवन्तो ति सिज्झती ति दस्सेन्तेन, 'न्तुस्स न्तो' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स न्तो-आदेसो होति योम्हि परे ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । न्तुस्सा ति कारी, न्तो ति कारियं, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । सविभत्तिग्गहणस्स च योग्गहणस्स च पठमग्गहणस्स चानुवत्तनतो सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स न्तो-आदेसो होति योम्हि पठमे त्यत्थो । कस्मा पनिदं वुत्तं, 'न्तुस्सन्तो योसु चा' (९२) तिमिना व सिज्झती ति ? सिज्झति; एवं सिद्धे पि सत्यारम्भो नियमत्थो; तेन योम्हि पठमे येव सविभत्तिस्स न्तुस्स न्तो-आदेसो होती ति ।

गुणवन्तो त्युदाहरणं । तं पन गुणसद्दतो गुणो अस्स अत्थी ति अत्थे 'तदस्सात्थी....' (३६६) त्यधिकिच्च 'गुणादितो वन्तू' ति (३७०) वन्तुप्पच्चयं कत्वा, 'वुत्तट्ठानमप्पयोगो' त्यधिकिच्च 'तेसं विभत्तियो लोपा चा' ति (३२०) एत्थ तेसं-गहणेन विभत्तिअस्सत्थिसद्दानं लोपं कत्वा, तद्धितत्ता नाममिव कत्वा, वुत्तनयेन पठमाबहुवचनं कत्वा, 'अम्हस्स ममं....' (१२०), 'मयं योम्हि पठमे' (१२१) त्यधिकिच्च इमिना योम्हि सविभत्तिस्स न्तो-आदेसे कते रूपं । सब्बे सत्ता गच्छन्ती ति किमुदाहरणं ? तं पन सब्बसत्तसद्दतो योम्हि कते न्तुस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'वा य्वप्पठमो' (१६२)

---

१. पस्सथ—से० ।

*. त्यादीसु—सी० ।

1. तु०—"अन्तुस्सन्तो आ च"—त०, सु० २९७; वि० व०—"इमस्मिं पकरणे वन्तु-मन्तुपच्चयानं वकार-मकारं देसतो वियोजेत्वा सुखुच्चारणत्थं आकारं गहेत्वा अन्तु-पच्चयो ति वोहारो करीयति, पच्चयावयवो हि 'पच्चयो' ति नामं लभति, तस्स च पयोगानुरूपतो आदेसो विधिय्यति" – त० ।

१२३. न्तस्स से वा । २. २. ४ ।

सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स न्तस्सादेसो होति वा से विभत्तिम्हि । सीलवन्तस्स झायिनो, सीलवतो झायिनो ।

से ति किमत्थं ? सीलवा तिट्ठति ।

त्यधिकिच्च 'सब्बनाम....' ति (१६४) योवचनस्सेत्तं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं । इतरस्मि आकारादेसो । गुणवन्ते ति पि किमुदाहरणं ? तं पन वुत्तनयेन गुणवन्तुसद्दतो दुतिया बहुवचन-यो-विभत्तिं कत्वा, सति पि न्तुम्हि अप्पठमत्ता इमिनादेसमकत्वा, 'पञ्चादीनमत्तं (९०), त्यधिकिच्च 'न्तुस्स न्तो....' ति (९२) योम्हि न्तुसद्दस्सत्तं कत्वा, 'अतो नेन' (१०३), 'सो वा' (१०५) त्यधिकिच्च 'सब्बयोनी....' ति (१०७) योवचनस्सेकारं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं ।

१२३. न्तस्स से वा[1] तिदं 'सागमो से' ति (६१) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? गुणवन्तस्सा ति एत्थ गुणवन्तुसद्दतो चतुत्थेकवचने वा छट्ठेकवचने वा कते सागमं कत्वा गुणवन्तुस्सा ति रूपं भवेय्य, कथं गुणवन्तस्से ति रूपं ति पुच्छाय सति, से विभत्तिम्हि सब्बस्सेव सविभत्तिस्स न्तुस्स न्तस्सादेसो होती ति दस्सेन्तेन, 'न्तस्स से वा' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? न्तुप्पच्चयस्स सब्बस्सेव सविभत्तिस्स न्तस्सादेसो होति से विभत्तिम्हि विकप्पेना ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । न्तस्सा ति कारियं, से ति निमित्तसत्तमी, वा ति विकप्पनत्थं, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । सविभत्तिग्गहणञ्च न्तुग्गहणञ्च वत्तते[2] । तेन सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स न्तस्सादेसो होति विकप्पेना त्यत्थो ।

सीलवन्तस्सा ति उदाहरणं । तं पन सीलवन्तु-सद्दतो सविभत्तिं कत्वा, 'अम्हस्स ममं....' (१२०), 'न्तुस्स न्तो' (१२२) त्यधिकिच्च इमिना न्तुस्स सविभत्तिस्स न्तस्सादेसे कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं । तं पन सीलवन्तुसद्दतो सविभत्तिं कत्वा, इमिना वुत्तविधानमकत्वा, 'अम्हस्स ममं....', 'न्तुस्स न्तो', 'न्तस्स से वा' त्यधिकिच्च 'तोतिता....' ति (१२७) न्तुस्स सविभत्तिस्स तो-आदेसे कते रूपं । सीलवा ति किमुदाहरणं ? तं पन सीलवन्तु-सद्दतो सिविभत्तिं कत्वा, सवचनस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'अम्हस्स ममं....', 'न्तुस्स न्तो' त्यधिकिच्च 'आ सिम्ही' ति (१२४) न्तुस्स सविभत्तिस्स आकारादेसे कते, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं ।

---

1. तु०—"से वान्तस्स"—त०, सु० २६८ ।
2. तु०—क० न्या०, पि० १३६ ।

१२४. आ सिम्हि । २. २. ५ ।

सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स आ-आदेसो होति[1] सिम्हि विभत्तिम्हि । गुणवा, पञ्ञवा, सीलवा, बलवा[2], सतिमा, मतिमा ।

न्तुस्सेति किमत्थं ? पुरिसो[3] तिट्ठति[3] । सिम्ही ति किमत्थं ? सीलवन्तो तिट्ठन्ति ।

---

१२४. आ सिम्ही[1] तिदं 'सिम्ही वा' ति (९४) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'सिम्ही वा' ति सुत्तेन सिम्हि न्तुप्पच्चयस्स न्तुस्सुकारस्सत्तं कत्वा, सिवचनस्सोकारं कत्वा हिमवन्तो ति रूपसिद्धि वुत्ता ; एवं सति सिम्हि गुणवा ति रूपसिद्धि कथं सिया ति पुच्छाय सति, सिम्हि विभत्तिम्हि सह विभत्तिस्स न्तुस्स आ-आदेसो होती ति दस्सेन्तेन, 'आ सिम्हो' ति वुत्तं । 'सेसतो लोपं गसिपी' ति (२२०) सुत्ततो वा निक्खन्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स आ-आदेसो होति सिम्हि विभत्तिम्ही ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । आ ति कारियं, सिम्हो ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा····पे०····विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । सविभत्तिग्गहणञ्च न्तुग्गहणञ्च वत्तते । तेन सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स आ-आदेसो होति सिम्हि विभत्तिम्ही त्यत्थो । गुणवा, गुणवन्तो ति रूपद्वयस्साभावतो वासद्दो नानुवत्तते; नहि एकवचनसिविभत्तिम्हि गुणवा गुणवन्तो ति रूपद्वयं ति ।

गुणवा त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ गुणवा त्यादीनि वुत्तनयानेव । मतिमा ति मतिमन्तुसद्दतो* वुत्तनयेन सिम्हि कते, सह विभत्तिस्स आ-आदेसे कते रूपं । पुरिसो ति किमुदाहरणं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । सीलवन्तो ति किमुदाहरणं ? तं पन सीलवन्तुसद्दतो योम्हि कते, सिस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'अम्हस्स ममं····' (१२०), 'मयं योम्हि पठमे' (१२१) त्यधिकिच्च 'न्तुस्स न्तो' ति (१२२) सविभत्तिस्स न्तुस्स न्तो-आदेसे कते रूपं ।

---

१. होति वा—सी०२ । २. नत्थि से० पोत्थके । ३-३. पुरिसा तिट्ठन्ति—से० ।

* ०मन्त०—सी० ।

1. तु०—"सिम्हा निच्चं"—सद्द०, सु० २६६; "सर्वनामस्थाने चासंबुद्धौ"—पा० ६.४.८ ।

१२५. अं नपुंसके । २. २. ६ ।

सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स अं[1] होति सिम्हि विभत्तिम्हि नपुंसके वत्तमानस्स लिङ्गस्स। गुणवं चित्तं तिट्ठति, रुचिमं पुप्फं विरोचति[2]।

सिम्ही ति किमत्थं ? वण्णवन्तं अगन्धकं विरुळ्हपुप्फं[3] पस्ससि।

---

१२५. अं नपुंसके[1] तिदं 'आ सिम्ही' ति (१२४) सुत्ततो निक्खन्तं। गुणवन्तु-सद्दतो सिम्हि कते 'आ सिम्ही' ति सुत्तेन सिम्हि न्तुस्स अत्तं कत्वा गुणवा ति रूप-सिद्धि वुत्ता; एवं सति गुणवं ति रूपं कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, नपुंसके गुणवन्तु-सद्दतो सिम्हि कते सविभत्तिस्स न्तुस्स अं-आदेसो होती ति दस्सेन्तेन, 'अं नपुंसके' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स अं-आदेसो होति सिम्हि विभत्तिम्हि नपुंसके गम्यमाने ति ञापनत्थं[2]। अं ति एकं, नपुंसके ति एकन्ति द्विपदमिदं। अं ति कारियं, नपुंसके ति आधारसत्तमी, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं। सविभत्तिग्गहणञ्च न्तुग्गहणञ्च सिविभत्तिग्गहणञ्च वाग्गहणञ्च वत्तते[3]। तेन नपुंसके वत्तमानस्स न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स अं होति वा सिम्हि विभत्तिम्ही ति अत्थो। न इत्थी च न पुमा च नपुंसकं, महावुद्धिना न-इत्थी-न-पुमानं नपुंसकादेसो; रूपद्वयस्स अत्थिताय मण्डूकगतिया वासद्दो वत्तते।

गुणवं, रुचिमं ति उदाहरणानि। तानि पन गुणवन्तु-रुचिमन्तुसद्देहि सि-विभत्तिं कत्वा, चित्त-पुप्फसद्देहि तुल्याधिकरणभावेन नपुंसकलिङ्गत्ता 'अम्हस्स ममं....' (१२०), 'न्तुस्स न्तो' (१२२), 'आ सिम्हि' (१२४) त्यधिकिच्च इमिना स-विभत्तिस्स न्तुस्स अं-आदेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपानि। वण्णवन्तं ति किमुदाहरणं ? तम्पन वण्णवन्तुसद्दतो अंविभत्तिं कत्वा, सिस्साभावा इमिनादेसम-कत्वा, 'अम्मो निग्गहीतं....' ति (८२) अंवचनस्स निग्गहीतत्ते सम्पत्ते, 'पञ्चादीनमत्तं' (९०) त्यधिकिच्च 'न्तुस्सन्तो योसु चे' ति (९२) एत्थ चसद्देन न्तुसद्दन्तस्सत्तं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं।

---

१. अ आदेसो—सी०२। २. रोचति—से०। ३. पुप्फं—से०, सी०१।

1. तु०—"नपुंसके अं वा"—सद्द०, सु० ३००; "अतोऽम्"—पा० ७.१.२४।
2. तु०—क० न्या०, पि० १३६।
3. तु०—त०।

१२६. अवण्णा च गे । २. २. ७ ।

सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स अं-अ-आ-आदेसा होन्ति गे परे । भो गुणवं, भो गुणव, भो गुणवा ।

चसद्दग्गहणं[1] अंगहणानुकड्ढनत्थं ।

---

१२६. अवण्णा च गे[1] तिदं 'अं नपुंसके' ति (१२५) सुत्ततो निक्खन्तं । गुणवं-त्यादिसु 'अं नपुंसके' ति सिम्हि न्तुस्स अं-आदेसो वुत्तो; एवं सति भो गुणवं भो गुणवा त्यादिसु आलपनेसु कथं भो गुणवं-त्यादि रूपसिद्धि सिया ति पुच्छाय सति, आलपने गम्हि परे सविभत्तिस्स न्तुस्स अं-अवण्णा च होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'अवण्ण-च गे' ति वुत्तं । 'सेसतो लोपं....' ति (२२०) सुत्ततो निक्खन्तन्ति पि वत्त-ब्बं । किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बस्सेव न्तुप्पच्चय-सविभत्तिस्स अं अवण्णा च होन्ति गम्हि परे ति ञापनत्थं[2] । अवण्णा ति एकं, चा ति एकं, गे ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं । अवण्णा ति कारियं, चा ति अनुकड्ढनं, गे ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा....पे०.... विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । अ एव वण्णो अवण्णो; 'अवण्णो ति वत्तब्बे वचनविपल्लासेन अवण्णा ति वुत्तं' ति सुत्तनिद्देसे वुत्तं* । समानसू ति वसेन अकार-आकारनमेव सन्धाय वुत्तत्ता बहुवचनं विय दिस्सति । चग्गहणं हेट्ठा वुत्तं अं-गहणं अनुकड्ढति । सविभत्ति-ग्गहणञ्च न्तुग्गहणञ्च अंगहणञ्च वत्तते । तेन सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स अं-अवण्णा च होन्ति गम्हि परे ति अत्थो[3] ।

भो गुणवं त्यादीनि उदाहरणानि । तानि पन गुणवन्तुसद्दतो वुत्तनयेन विभत्तु-प्पत्तिं कत्वा, तस्सा पि अनियमप्पसङ्गे, 'लिङ्गत्थे पठमा' (२८६) त्यधिकिच्च 'आलपने चे' ति (२८७) आलपनत्थे सिवचनं कत्वा, 'आलपने सि....' ति (५७) सिस्स गसञ्ञं कत्वा, 'अम्हस्स ममं....' (१२०), 'न्तुस्स न्तो' (१२२), 'अं नपुंसके' (१२५) त्यधिकिच्च इमिना सविभत्तिस्स न्तुस्स अं-अ-आदेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपानि ।

---

१. चसद्दग्गहणेन—से० ।

1. तु०—"(मतन्तरे) गे"—सद्द०, सु० ३१०, "अवण्णो यथारहं"—त०, सु० ३०२ ।

* द०—सुत्तनि०, पि० ५६ ।

2-3. तु०—"सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स अं-अ-आ-आदेसा होन्ति गे परे ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । अवण्णग्गहणेन अकार-आकारे संगण्हाति ; चग्गहणेन अनन्तरे वुत्तं अं-गहणं आकड्ढति । तेनाह च—'अं-अ-आ-आदेसा होन्ती' ति । सविभत्तिग्गहणञ्च न्तुग्गहणञ्च अंगहणञ्च वत्तते । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व"—क० न्या०, पि० १३७ ।

१२७. तोतिता सस्मिनासु । २. २. ८ ।

सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स तो-ति-ता-आदेसा होन्ति वा स-स्मि-ना इच्चेतेसु यथासङ्ख्यं । गुणवतो, गुणवन्तस्स, गुणवति, गुणवन्तस्मि, गुणवता, गुणवन्तेन; सतिमतो, सतिमन्तस्स, सतिमति, सतिमन्तस्मि, सतिमता, सतिमन्तेन ।

एतेस्विति किमत्थं ? गुणवा, सतिमा ।

---

१२७. तोतिता सस्मिनासू[1] तिदं 'न्तुस्सन्तो योसु च' (९२), 'न्तस्स से वा' ति (१२३) सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं ? गुणवतो गुणवति गुणवता त्यादिसु गुणवन्तुसद्दतो स-स्मि-नासु विभत्तिसु कतासु 'न्तस्स से वा' ति सुत्तेन सविभत्तिस्स न्तुस्सन्तस्सादेसे कते 'न्तुस्सन्तो योसु चे' ति सुत्तेन स-स्मि-नासु न्तुसद्दन्तस्सत्ते वा गुणवन्तस्स गुणवन्तस्मि गुणवन्तेना ति रूपानि भवन्ति ; एवं सति गुणवतो गुणवति गुणवता त्यादि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, स-स्मि-नासु विभत्तिसु न्तुस्स सविभत्तिस्स इमिना तो-ति-तादेसा पि होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'तोतिता....' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स विकप्पेन तो-ति-ता-आदेसा पि होन्ती ति ञापनत्थं । तोतिता ति एकं, सस्मिनासू ति एकन्ति द्विपदमिदं । तोतिता ति कारियं, सस्मिनासू ति निमित्तसत्तमी, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं ति वेदितब्बं । सविभत्तिग्गहणञ्च न्तुग्गहणञ्च 'न्तस्स से वा' ति इतो वाग्गहणञ्च मण्डूकगतिया वत्तते[2] । तेन सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स तो-ति-ता-आदेसा होन्ति वा यथासङ्ख्यं स-स्मिनासु परेसू त्यत्थो ।

गुणवतो त्यादीन्युदाहरणानि । तानि पन गुणवन्तुसद्दतो स-स्मि-ना-विभत्तियो कत्वा, 'अम्हस्स ममं....' (१२०), 'न्तुस्स न्तो' (१२२), 'न्तस्स से वा' (१२३) त्यधिकिच्च यथाक्कमं सविभत्तिस्स न्तुस्स तो-ति-ता-आदेसे कते रूपानि। इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव। गुणवन्तस्स, गुणवन्तस्मि, गुणवन्तेना ति वाग्गहणफलं । तत्थ गुणवन्तस्सा ति न्तस्सादेसो; इतरद्वये 'न्तुस्सन्तो योसु चा' ति (९२) सुत्ते चग्गहणेन न्तुसद्दन्तस्सत्तकरणमेव विसेसो। गुणवा, सतिमा ति किमुदाहरणानि ? तं पन गुणवन्तुसतिमन्तुसद्दतो सिम्हि कते एतेसमभावा इमिनादेसमकत्वा, 'आ सिम्ही' ति (१२४) सविभत्तिस्स न्तुस्सत्ते कते रूपानि ।

---

1. तु०—"ना-स्मि-सेसु वा ता-ति-तो"–सद्द०, सु० ३ ३ ।
2 तु०—क० न्या, पि० १३७ ।

१२८. नम्हि तं वा । २. २. ९ ।

सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स तमादेसो होति वा नम्हि विभत्तिम्हि । गुणवतं, गुणवन्तानं ; सतिमतं, सतिमन्तानं ।

नम्ही ति किमत्थं ? गुणवन्तो तिट्ठन्ति, सतिमन्तो तिट्ठन्ति ।

---

१२८. नम्हि तं वा[1] तिदं 'न्तुस्सन्तो योसु चे' ति (९२) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं? गुणवतं त्यादिसु गुणवन्तुसद्दतो नम्हि कते 'न्तस्स से वा' ति (१२३) सुत्ते वाग्गहणेन नम्हि न्तुसद्दन्तस्सत्तं कत्वा, 'सुनंहिसु चे' ति (८९) दीघे कते गुणवन्तानं ति रूपं भवेय्य; एवं सति नम्हि गुणवतं ति रूपं कथं सिज्झेय्या ति पुच्छाय सति, नम्हि सविभत्तिस्स न्तुस्स तमादेसं कत्वा गुणवतं ति रूपं सिज्झती ति दस्सेन्तेन, 'नम्हि तं वा' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स सविभत्तिस्स तमादेसो होति नम्हि परे विकप्पेना ति ञापनत्थं[2] । नम्ही ति एकं, तं ति एकं, वा ति एकन्ति तिपदमिदं सुत्तं। नम्ही ति निमित्तसत्तमी तं ति कारियं, वा ति विकप्पनत्थनिद्देसो, सञ्ञा····पे०····विधिसत्तं। वाग्गहणे अनुवत्तमाने पि पुन वाग्गहणकरणं न्तुप्पच्चयस्स निवत्तनत्थं[3] ।

गुणवतं त्यादीनि उदाहरणानि । तानि पन गुणवन्तु-सतिमन्तुसद्देहि नम्हि कते, 'अम्हस्स ममं····' (१२०), 'न्तुस्स न्तो' (१२२) त्यधिकिच्च इमिना सविभत्तिस्स न्तुस्स तमादेसे कते रूपानि। गुणवन्तानं त्यादीनि वाग्गहणफलानि। तानि पन गुणवन्तु-सतिमन्तुसद्देहि नम्हि कते वासद्देन निवारितत्ता इमिनादेसमकत्वा, 'सुनंहिसु च' (८९), 'पञ्चादीनमत्तं' (९०) त्यधिकिच्च 'न्तुस्सन्तो····' ति (९२) एत्थ चग्गहणेन न्तुसद्दन्तस्सत्तं कत्वा, 'योसु कतनिकार····' (८८) त्यधिकिच्च 'सुनंहिसु चे' ति दीघे कते रूपानि। गुणवन्तो त्यादीनि पि किमुदाहरणानि, तानि वुत्तनयानेव।

---

1. तु०--''तं नम्हि''-सद्द०, सु० ३०४ ।

2. तु०—क०, न्या०, पि० १३८ ।

3. तु०—''इध वाग्गहणकरणं मण्डूकगत्यानुवत्तितस्स उत्तरत्र नानुवत्तनत्तविञ्ञापनत्थं''—त० ।

१२९. इमस्सिदमंसिसु नपुंसके । २. २. १० ।

सब्बस्सेव इमसद्दस्स सविभत्तिस्स इदं होति वा अं-सिसु नपुंसके वत्तमानस्स लिङ्गस्स । इदं चित्तं पस्ससि, इदं चित्तं तिट्ठति; इमं[1] चित्तं पस्ससि, इमं चित्तं तिट्ठति वा[1] ।

नपुंसके ति किमत्थं ? इमं पुरिसं पस्ससि, अयं पुरिसो तिट्ठति ।

---

१२९. इमस्सिदमंसिसु नपुंसके[1] तिदं 'सब्बस्सिमस्से वा' (१७०), 'अनिमि नाम्हि च' (१७१), 'अनपुंसकस्सायं सिम्ही' (१७२) त्यादीहि सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्नि-क्खन्तं ? एसु एसं एहि त्यादिसु सु-नं-हि इच्चेतेसु इमसद्दस्स एकारादेसो वुत्तो, अनेन इमिना त्यादिसु च नाविभत्तिम्हि अन-इमि आदेसा च वुत्ता, अयं ति एत्थ च सिम्हि इमसद्दस्स च अनपुंसके अयमादेसो च वुत्तो; एवं सति इदं ति एत्थ च नपुंसके वत्त-मानस्स सविभत्तिस्स सिम्हि इदं आदेसो कथं होती ति पुच्छाय सति, सिम्हि नपुंसके वत्तमानस्स इमसद्दस्स सविभत्तिस्स इदमादेसो पि होती ति दस्सेन्तेन, 'इमस्सि.....' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? इमसद्दस्स सब्बस्सेव सविभत्तिस्स इदमादेसो होति अं-सि इच्चेतासु विभत्तिसु नपुंसके वत्तमानस्स विकप्पेना ति ञापनत्थं। इमस्से ति एकं, इदं ति एकं, अंसिसू ति एकं, नपुंसके ति एकन्ति चतुप्पदमिदं। इमस्सा ति सम्बन्ध-छट्ठीकारी, इदं ति कारियं, अंसिसू ति निमित्तसत्तमी, नपुंसके ति आधारसत्तमी, सञ्ञा....पे०....विधिसुत्तं। सविभत्तिग्गहणञ्च वागहणञ्च वत्तते। तेन सब्बस्सेव इमसद्दस्स सविभत्तिस्स इदमादेसो होति अं-सिसु नपुंसकेसू त्यत्थो।

इदं चित्तं पस्ससि, इदं चित्तं तिट्ठती ति उदाहरणानि। तानि पन इमसद्दतो वुत्तनयेन अं-सि-विभत्तियो कत्वा, नपुंसके वत्तमानस्स सविभत्तिस्स इमसद्दस्स 'अम्हस्स ममं....' (१२०), 'नम्हि तं वा' (१२८) त्यधिकिच्च इमिना इदमादेसे कते रूपानि। इतरानि वागहणफलानि। इमं पुरिसं, अयं पुरिसो ति किमुदाहरणानि ? तत्थ च इमं ति इमसद्दतो वुत्तनयेन दुतियेकवचने कते नपुंसकत्ताभावा इमिनादेसमकत्वा, सरलोप-पकतिभावादिम्हि कते रूपं। अयं ति च इमसद्दतो पठमेकवचनं कत्वा, नपुंसकत्ताभावा इमिनादेसमकत्वा, 'सब्बस्सिमस्से वा' त्यधिकिच्च 'अनपुंसकस्सायं सिम्ही' ति इमसद्दस्स अयमादेसं कत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपं।

१-१. वा ति किमत्थं ? इमं चित्तं तिट्ठति—से० ।

1. तु०—''इदस्सिमं सिम्हि नपुंसके''—सद्द०, सु० ३०५, ''यो-अं-नादिसु च तेलिङ्गि-कस्सिमो वा''—त०, सु० ३०७ ।

१३०. अमुस्सादुं । २. २. ११ ।

सब्बस्सेव अमुसद्दस्स सविभत्तिस्स अदुं होति अं-सिसु नपुंसके वत्तमानस्स लिङ्गस्स । अदुं पुप्फं पस्ससि, अदुं पुप्फं विरोचति ।

नपुंसके ति किमत्थं ? अमुं राजानं पस्ससि, असु[1] राजा तिट्ठति ।

---

१३०. अमुस्सादुं[1] तिदं 'इवण्णुवण्णाज्झला (५८), 'अम्मो निग्गहीतं·····' (८२), 'अमुस्स मोसं' ति(१७३)सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? अमुं पुरिसं, असु राजा त्यादिसु अमुसद्दतो अं-सिसु कतेसु अमुसद्दन्तस्सुकारस्स लसञ्ञं कत्वा, 'अम्मो निग्गहीतं·····' ति लतो परस्स अंवचनस्स निग्गहीतं कत्वा, अमुं पुरिसं ति च, सिम्हि अमुस्स मकारस्स सकारं कत्वा असू ति च रूपसिद्धि वुत्ता; एवं सति अमुसद्दतो सिम्हि कते अदुं ति रूपं कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, नपुंसके वत्तमानस्स अमुसद्दस्स सिम्हि परे अदुमादेसो पि होती ति दस्सेन्तेन, 'अमुस्सादुं' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? अमुसद्दस्स सब्बस्सेव सविभत्तिस्स अदुमादेसो होति अं-सि इच्चेतासु विभत्तिसु परासु नपुंसके गम्यमाने ति ञापनत्थं[2] । अमुस्सा ति एकं, अदुं ति एकन्ति द्विपदमिदं । अमुस्सा ति सम्बन्धछट्ठीकारी +, अदुं ति कारियं, सञ्ञा·····पे०·····विधिसुत्तं । सविभत्तिग्गहणञ्च अंसिग्गहणञ्च वत्तते । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व[3] ।

अदुं त्यादीनि उदाहरणानि । तानि पन अमुसद्दतो दुतियेकवचनं वा पठमेकवचनं वा कत्वा, 'अम्हस्स ममं·····' (१२०), 'इमस्सिदमं·····' (१२९) त्यधिकिच्च इमिना सविभत्तिस्स अमुसद्दस्स अदुमादेसे कते रूपानि । अमुं राजानं, असु राजा ति किमुदाहरणानि ? तत्थ च अमुं ति अमुसद्दतो दुतियेकवचनं कत्वा, अनपुंसकत्ता इमिनादेसमकत्वा, उकारस्स वुत्तनयेन लसञ्ञं कत्वा, 'अम्मो निग्गहीतं·····' ति अंवचनस्स निग्गहीते कते रूपं । असू ति अमुसद्दतो पठमेकवचनं कत्वा, अनपुंसकत्ता इमिनादेसमकत्वा, 'सब्बस्सिमस्से वा' (१७०), 'अनपुंसकस्सायं सिम्ही' ति (१७२) वत्तमाने, 'अमुस्स मोसं' ति अमुस्स मकारस्स सकारं कत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपं ।

---

१. अमु०—से० ।

\+ ०छट्ठि०—सी० ।

1. तु०—"अमुस्सादुमं-सिसु नपुंसके"—त०, सु० ३०८ ।
2. तु०—क० न्या०, पि० १३६ ।
3. त० ।

१३१. इत्थिपुमनपुंसकसङ्ख्यं । २.२.१२ ।

'इत्थिपुमनपुंसकसङ्ख्यं' इच्चेतं अधिकारत्थं वेदितब्बं ।

---

१३१. इत्थिपुमनपुंसकसङ्ख्यं[1] तिदं 'अम्हस्स ममं·····' (१२०), 'अनपुंसकस्सायं सिम्हि' (१७२), 'अमुस्सादुं' (१३०) त्यादीहि सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'अम्हस्स ममं·····' ति सुत्तेन अलिङ्गभूतस्स अम्हसद्दस्स च, 'अनपुंसकस्सायं·····' ति सुत्तेन अनपुंसके इमसद्दस्स च, 'अमुस्सादुं' ति सुत्तेन नपुंसके इमसद्दस्स च सह विभत्तिया यथाक्कमं मयं-अयं-अदुं-आदेसा वुत्ता; एवं सति द्वादीनं अट्ठारसन्तानं अलिङ्गभूतानं सङ्ख्यासद्दानं सविभत्तिकविधाने किं विधानं कातब्बन्ति पुच्छाय सति, द्वादीनं अट्ठारसन्तानं सङ्ख्यासद्दानं सविभत्तिकविधाने 'इत्थिपुमनपुंसकसङ्ख्यं' ति सुत्तं अधिकारं कत्वा विधातब्बन्ति दस्सेतुं, 'इत्थि·····' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? 'योसु द्विन्नं·····' (१३२), 'तिचतुन्नं·····' (१३३), 'पञ्चादीनमकारो' ति (१३४) सुत्तेहि वुच्चमानानं इत्थिपुमनपुंसकत्तानं सङ्ख्यासद्दानं तेहि तेहि लिङ्गेहि समानवसेन आदेसो कातब्बो ति ञापनत्थं[2] । इत्थिपुमनपुंसकसङ्ख्यं ति एकपदमेव । कम्मत्थनिद्देसो । अधिकारसुत्तं ति वेदितब्बं । इत्थिपुमनपुंसकत्तवाचकसङ्ख्यं अधिकारत्थं वेदितब्बं त्यत्थो । इत्थिपुमनपुंसकञ्च तं सङ्ख्यञ्चा ति, तथा—अयं न्यासाचरियमतिवसेन वुत्तो[3]; "इत्थिपुमनपुंसकञ्च तं सङ्ख्यञ्चा ति इत्थिपुमनपुंसकसङ्ख्यं, इमिना निपातनेन सङ्ख्यसद्दस्स सङ्ख्यादेसो, नपुंसकत्तञ्च, 'सरो रस्सो नपुंसके' ति (३४४) सङ्ख्यासद्दस्स रस्सत्तं चा" ति रूपसिद्धि टीकायं वुत्तं ।

---

1. तु०—"इत्थि-पुम-नपुंसकसंख्या"—सद्द०, सु० ३०६; "इत्थि-पुम-नपुंसक-संख्या इच्चेतं अधिकारत्थं वेदितब्बं; अयं वुत्ति । अयं पनाधिप्पायविञ्ञापिका अनुवुत्ति—'इत्थि-पुम-नपुंसकवाचकत्ता इत्थि-पुम-नपुंसकसङ्खातं संख्यासद्दरूपं इदानि अम्हेहि वुच्चते । एत्थ वचने इत्थि-पुम-नपुंसकसद्दो च संख्यासद्दो च द्वे पि वत्तन्ती ति'"—त०, वु० ।

2-3. तु०—····"इतो परं 'पञ्चादीनमकारो' तिदं परियन्तं कत्वा यं वक्खाम तं इत्थिपुमनपुंसकत्तानं सङ्ख्यासद्दानं होति, तस्मा 'इत्थि···सङ्ख्यं' अधिकारमिति ञापनत्थं । इत्थिपुमनपुंसकत्तवाचकसङ्ख्यं अधिकारमिति अत्थो । अधिकारसद्दो हेत्थ वचनसेसो । इत्थी च पुमा च नपुंसको चा ति अत्थे 'नामानं···युत्तत्थो' ति अधिकिच्च 'नामानं···द्वन्दो' ति सह द्वन्दसञ्ञाय समासं कत्वा, 'नामानं···युत्तत्थो' ति समासं कत्वा, तेसं··· लोपा चे' ति विभत्तिलोपं कत्वा, 'वुत्तट्ठानमप्पयोगो' ति च सद्दमप्पयोगं कत्वा, 'पकति चस्स सरन्तस्सा' ति पकतिभावं कत्वा, 'सो नपुंसकलिङ्गो', 'दिगुस्सेकत्तं' ति अधिकिच्च 'तथा द्वन्दे···चे' ति नपुंसकलिङ्गेकत्तञ्च कत्वा, समासत्ता 'तद्धितसमास···चे' ति नाममिव कत्वा, ततो स्युप्पत्तिं कत्वा, नपुंसकत्ता 'योनम्हि नपुंसकेहि', 'अतो निच्चं'

१३२. योसु द्विन्नं द्वे च । २. २. १३ ।

द्विन्नं सङ्ख्यानं इत्थिपुमनपुंसके वत्तमानानं सविभत्तीनं द्वे होति यो इच्चेतेसु । द्वे इत्थियो, द्वे धम्मा, द्वे रूपानि ।

योस्विति किमत्थं ? द्वीसु ।

चसद्दग्गहणेन द्विसद्दस्स दुवे द्वय उभ उभय दुवि च होन्ति यो-ना-अं-नं इच्चेतेसु । दुवे समणा, दुवे ब्राह्मणा, दुवे जना, द्वयेन, द्वयं, उभिन्नं, उभयेसं, दुविन्नं ।

---

१३२. योसु द्विन्नं द्वे चा[1] तिदं 'योस्वकत....' (९६), 'घपतो च....' (११८), 'योसु कतनिकार....' ति (८८) सुत्तेहि निक्खन्तं । द्वे इत्थियो त्यादिसु द्विसद्दतो योम्हि कते इकारस्स झसञ्ञं कत्वा 'योस्वकत ....' ति सुत्तेन झ-सञ्ञस्स अकारत्तं वा पापुणेय्य, 'घपतो च....' ति सुत्तेन झतो परस्स योवचनस्स लोपं वा पापुणेय्य, 'योसु कतनिकार....' ति सुत्तेन दीघं वा पापुणेय्य; एवं सति द्वे चे ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, द्विसङ्ख्यासद्दतो योम्हि कते सविभत्तिस्स द्विसद्दस्स द्वे-आदेसो पि होती ति दस्सेन्तेन, 'योसु द्विन्नं....' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? सङ्ख्यावाचकस्स द्विसद्दस्स सविभत्तिस्स इत्थिपुमनपुंसके वत्तमानस्स योसु विभत्तिसु द्वे-आदेसो होती ति ञापनत्थं । योसू ति एकं, द्विन्नं ति एकं, द्वे ति एकं, चा ति एकन्ति चतुप्पदमिदं । योसू ति निमित्तसत्तमी, द्विन्नं ति सम्बन्धछट्ठीकारी, द्वे ति कारियं, चा ति समुच्चयो, सञ्ञा.... पे०....विधिसुत्तं । अनन्तरसुत्तं अधिकारवसेन इध वत्तते, सविभत्तिग्गहणञ्च वत्तते[2] । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । द्विस्सा ति अवत्वा द्विन्नं ति बहुवचनकरणं अनुकरणोयभूततो द्विसद्दतो बहुवचनमेव होती ति ञापनत्थं[3] ।

ति अधिकिच्च 'सिं' ति सिस्स अमादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिञ्च कत्वा, तब्बाचकस्स च तब्बोहारेन वोहरितब्बतो इत्थिपुमनपुंसकञ्च तं सङ्खयञ्चा ति अत्थे 'नामानं...युत्तत्थो' ति अधिकिच्च 'द्विपदे...कम्मधारयो' ति सह कम्मधारयसञ्ञाय समासं कत्वा, वुत्तनयेन समाससञ्ञञ्च कत्वा, 'तेसं...लोपा चे' ति विभत्तिलोपादिं कत्वा 'इत्थिपुम...' ति वुत्तं । अधिकारोयं''—क० न्या०, पि० १३९-१४० ।

1. तु०—''योसु द्विन्नं द्वे दुवे''—सद्द०, सु० ३१० ।

2-3. तु०—''अनन्तरसुत्तमिहानुवत्तते, सविभत्तिग्गहणञ्च । इध पन द्विसद्दस्स द्विसद्दवाचकत्ता 'वीसति...तु' ति एत्थ विय द्विस्सा ति वत्तब्बे द्विन्नं ति वचनं सङ्ख्यावाचकद्विसद्दतो बहुवचनमेव होती ति ञापनत्थं । चग्गहणफलं वक्खति''—क० न्या०, पि० १४० ।

१३३. तिचतुन्नं तिस्सो-चतस्सो-तयो-चत्तारो-तीणि-चत्तारि । २. २. १४ ।

तिचतुन्नं सङ्ख्यानं इत्थिपुमनपुंसके वत्तमानानं सविभत्तीनं तिस्सो-चतस्सो-तयो-चत्तारो-तीणि-चत्तारि इच्चेते आदेसा होन्ति यथासङ्ख्यं यो इच्चेतेसु । तिस्सो वेदना, चतस्सो दिसा; तयो जना, चत्तारो पुरिसा; तीणि आयतनानि[1], चत्तारि अरियसच्चानि ।

योस्विति किमत्थं ? तीसु, चतूसु ।

द्वे इत्थियो त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ च द्वे ति द्विसद्दतो योवचनं कत्वा, 'अम्हस्स ममं....' (१२०), 'इत्थिपुम....' (१३१) त्यधिकिच्च इमिना सविभत्तिस्स द्विसद्दस्स द्वे-आदेसे कते रूपं । द्वीसू ति किमुदाहरणं ? तं पन द्विसद्दतो सुविभत्तिं कत्वा, योविभत्तीनमभावा इमिनादेसमकत्वा, 'सुनंहिसु चा' ति (८९) दीघे कते रूपं । दुवे, द्वयेन, द्वयं, उभिन्नं, उभयेसं, दुविन्नं ति चग्गहणफलानि । तत्थ च दुवे ति द्विसद्दतो यो-वचनं कत्वा, चग्गहणेन सविभत्तिस्स द्विसद्दस्स दुवे-आदेसे कते रूपं । द्वयेना ति द्विसद्दतो नाविभत्तिं कत्वा, चग्गहणेन द्विस्स द्वादेसं कत्वा, 'अतो नेना' ति (१०३) नावचनस्सेनादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं । द्वयं ति च द्विसद्दतो अंवचनं कत्वा, वुत्तनयेन द्वयादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं । उभिन्नं ति द्विसद्दतो नंवचनं कत्वा, इमिना द्विसद्दस्स उभादेसं कत्वा, 'उभादितो नमिन्नं' ति (८६) इन्नमादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावे कते रूपं । उभयेसं ति द्विसद्दतो नंवचनम्हि कते इमिना उभयादेसं कत्वा, 'सब्बनाम....' (१६४) त्यधिकिच्च 'सब्बतो नं संसानं' ति (१६८) समादेसे कते, 'सुहिस्वकारो ए' (१०१) त्यधिकिच्च 'सब्बनामानं नम्हि चे' ति (१०२) कारणूपचारेन अकारस्सेत्ते कते रूपं । दुविन्नं ति द्विसद्दतो नम्हि कते इमिना द्विसद्दस्स दुवि-आदेसे कते, 'नो च....' ति (६७) नकारागमं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, 'उभादितो नमिन्नं' ति इन्नमादेसं कत्वा वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं ।

१३३. तिचतुन्नं तिस्सो-चतस्सो-तयो-चत्तारो-तीणि-चत्तारि[1] तिदं 'योसु कतनिकार....' (८८), 'घपतो च ...' (११८), 'लतो वोकारो चे' ति (११९) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? तिस्सो वेदना, चतस्सो दिसा त्यादिसु ति-चतुसंख्यासद्देहि

---

१. आसनानि—से० ।

1. तु०—सद्द०, सु० ३११; "त्रिचतुरोः स्त्रियां तिसृ चतसृ विभक्तौ"—का० २.३.२५; पा० ७.२.९९, "चतुरनडुहोरामुदात्तः"—त०, ७.१.९८ ।

१३४. पञ्चादीनमकारो । २. २. १५ ।

पञ्चादीनं सङ्ख्यानं इत्थिपुमनपुंसके वत्तमानानं सविभत्तिस्स अन्तसरस्स अकारो होति यो इच्चेतेसु । पञ्च[1] इत्थी, पञ्च जना, पञ्च रूपा[1]; छ, छ, सत्त, सत्त, अट्ठ, अट्ठ, नव, नव, दस, दस ।

पञ्चादीनमिति किमत्थं ? द्वे, तयो, चत्तारि ।

योम्हि कते, इत्थिलिङ्गे पसञ्ञेहि इवण्णुवण्णेहि पुमनपुंसकेहि लिङ्गेहि झलसञ्ञेहि इवण्णुवण्णेहि 'घपतो च·····' ति योवचनस्स लोपे कते 'योसु कतनिकार·····' इच्चादिना दीघं वा पापुणेय्य, 'लतो वोकारे चे' ति वा लतो परस्स योवचनस्स वोकारो पि भवेय्य; एवं सति तिस्सो·····चत्तारी त्यादीनि रूपानि कथं सिज्झेय्युन्ति पुच्छाय सति, सविभत्तीनं ति-चतुसङ्ख्यासद्दानं योम्हि यथाक्कमं तिस्सो-चतस्सो-तयो-चत्तारो-तीणि-चत्तारि-आदेसं कत्वा, तानि पि सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'तिचतुन्नं·····' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? ति-चतुसंख्यावाचकानं इत्थिपुमनपुंसकत्तानं सविभत्तीनं यथाक्कमं तिस्सो-चतस्सो-तयो-चत्तारो-तीणि-चत्तारि-आदेसा होन्ति योसु विभत्तिसू ति ञापनत्थं[1] । तिचतुन्नं ति एकं, तिस्सो·····चत्तारी ति एकन्ति द्विपदमिदं सुत्तं । तिचतुन्नं ति सम्बन्धछट्ठीकारी, तिस्सो·····चत्तारी ति कारियं, विधिसुत्तं । सविभत्तिग्गहणञ्च इत्थिपुमनपुंसकसंख्यग्गहणञ्च योग्गहणञ्च वत्तते[2] । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व ।

तिस्सो त्यादीनि उदाहरणानि । तानि पन ति-चतुसद्देहि योवचनं कत्वा, सविभत्तीनं तिचतुन्नं इत्थिपुमनपुंसके वत्तमानानं यथानुरूपतो 'अम्हस्स ममं·····' (१२०), 'इत्थिपुम·····' (१३१), 'योसु द्विन्नं·····' (१३२) त्यधिकिच्च इमिना तिस्सो-चतस्सो-तयो-चत्तारो-तीणि-चत्तारि-आदेसे कते रूपानि । तीसु, चतूसू ति किमुदाहरणानि ? तेसु ति-चतुसद्देहि सत्तमीविभत्तिं कत्वा, योवचनस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'सुनंहिसु चे' ति (८९) दीघे कते रूपानि ।

१३४. पञ्चादीनमकारो[3] तिदं 'सब्बयोनीनमाए' (१०७), 'घपतो च·····' ति (११८) सुत्तेहि निक्खन्तं । पञ्चात्यादिका अट्ठारसन्ता संख्यासद्दा योम्हि कते, 'सब्ब·····' ति सुत्तेन पुल्लिङ्गे योवचनस्स आकार-एकारत्तं वा पापुणेय्य, नपुंसके च निकारद्वयस्स यथाक्कमं आ-एत्तं वा पापुणेय्य, इत्थिलिङ्गे च पञ्चसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा तस्स घसञ्ञं कत्वा, 'घपतो च·····' ति योवचनस्स लोपो वा पापुणेय्य; एवं सति तीसु लिङ्गेसु

१-१. पञ्च पञ्च—सी० १, सी० २ ।

1–2. क० व्या०, पि० १४१ ।

3. तु०—रूप०, सु० २५१ ।

१३५. राजस्स रञ्ञो-राजिनो से । २. २. १६ ।

सब्बस्सेव राजसद्दस्स सविभत्तिस्स रञ्ञो-राजिनो इच्चेते आदेसा होन्ति से विभत्तिम्हि । रञ्ञो, राजिनो ।

से ति किमत्थं ? रञ्ञं ।

पञ्चात्यादि रूपं कथं सिया ति पुच्छाय सति, पञ्चात्यादिका अट्ठारसन्ता सङ्ख्यासद्दा योम्हि कते तीसु लिङ्गेसु सविभत्तिकस्स पञ्चादिसद्दन्तस्स अकारादेसं कत्वा, पञ्चात्यादि रूपं होती ति दस्सेन्तेन, 'पञ्चादीनमकारो' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? पञ्चादीनमट्ठारसन्तानं इत्थिपुमनपुंसकेसु वत्तमानानं अन्तसरस्स सविभत्तिस्स अकारादेसो होति योसु विभत्तिसू ति ञापनत्थं[1] । पञ्चादीनं ति एकं, अकारो ति एकन्ति द्विपदमिदं। पञ्चादीनं ति अन्तापेक्खाछट्ठीकारी*, अकारो ति कारियं, विधिसुत्तं। सविभत्तिग्गहणञ्च इत्थिपुमनपुंसकसंख्यग्गहणञ्च योग्गहणञ्च वत्तते[2] । तेन पञ्चादीनं अट्ठारसन्तानं संख्यानं इत्थिपुमनपुंसके वत्तमानानं सविभत्तीनं अन्तसरस्स अकारो होति योसु विभत्तिसू त्यत्थो[3] ।

पञ्चा त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ च पञ्चादिसद्दतो योम्हि कते, 'अम्हस्स ममं....' (१२०), 'इत्थिपुम....' (१३१), 'योसु द्विन्नं द्वे चे' (१३२) त्यधिकिच्च इमिना अन्तस्स सविभत्तिस्स अकारादेसे कते रूपानि। द्वे, तयो, चत्तारी ति किमुदाहरणानि ? तेसं पन द्वि-ति-चतुसद्देहि योम्हि कते पञ्चादीनं संख्यानमभावा इमिनादेसमकत्वा, वुत्तनयेन द्वे-तयो-चत्तारि-आदेसे कते रूपानि।

१३५. राजस्स रञ्ञो-राजिनो से[4] तिदं 'सामगो से' ति (६१) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं ? रञ्ञो राजिनो त्यादिसु राजसद्दतो से विभत्तिम्हि कते 'सागमो से' सुत्तेन सकारागमे कते राजस्सा ति रूपेनेव भवितब्बं, एवं सति रञ्ञो राजिनो ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, राजसद्दतो से विभत्तिम्हि कते सविभत्तिस्स राजसद्दस्स रञ्ञो-राजिनो-आदेसं कत्वा रञ्ञो राजिनो ति रूपानि पि होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'राजस्स....' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बस्सेव राजसद्दस्स सवि-

---

* छट्ठि०—सी० (सब्बत्थ)।

1. क० न्या०, पि० १४१।

2–3. तु०—स०।

4. तु०—"राजस्स सविभत्तिकस्स से रञ्ञो राजिनो"—सद्द०, सु० ३१४।

१३६. रञ्ञं नम्हि वा । २. २. १७ ।

सब्बस्सेव राजसद्दस्स सविभत्तिस्स रञ्ञं-आदेसो होति वा नम्हि विभत्तिम्हि । रञ्ञं, राजूनं ।

भत्तिस्स रञ्ञो राजिनो इच्चेते आदेसा होन्ति से विभत्तिम्ही ति ञापनत्थं । राजस्सा ति एकं, रञ्ञो राजिनो ति एकं, से ति एकन्ति तिपदमिदं । राजस्सा ति सम्बन्धछट्ठी-कारी, रञ्ञो राजिनो ति कारियं, से ति निमित्तसत्तमी ; विधिसुत्तं । सविभत्तिग्गहण-मिहानुवत्तते । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व ।

रञ्ञो, राजिनो ति उदाहरणानि । तानि पन राजसद्दतो सविभत्तिं कत्वा, 'अम्हस्स ममं·····' (१२०) त्यधिकिच्च इमिना सविभत्तिस्स राजसद्दस्स रञ्ञो-राजिनो-आदेसे कते रूपानि । रञ्ञं ति किमुदाहरणं ? तं पन राजसद्दतो नंविभत्तिं कत्वा, सति पि राजसद्दे सविभत्तिया अभावा इमिनादेसमकत्वा, 'रञ्ञं नम्हि वा' ति (१३६) सविभत्तिस्स राजसद्दस्स रञ्ञमादेसे कते रूपं ।

१३६. रञ्ञं नम्हि वा[1] तिदं 'सुनंहिसु च' (८९), 'राजस्स राजु·····' ति (१६९) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? रञ्ञं ति एत्थ राजसद्दतो नं-विभत्तिम्हि परे दीघं कत्वा राजानं ति वा, राजु-आदेसं कत्वा दीघञ्च कत्वा राजूनं ति वा रूपं भवेय्य; एवं सति रञ्ञं ति रूपं कथं सिज्झेय्या ति पुच्छाय सति, राजसद्दतो नम्हि कते सवि-भत्तिस्स राजसद्दस्स रञ्ञमादेसं कत्वा रञ्ञं ति रूपम्पि होती ति दस्सेन्तेन, 'रञ्ञं नम्हि वा' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बस्सेव राजसद्दस्स सविभत्तिस्स रञ्ञमा-देसो होति नम्हि विकप्पेना ति ञापनत्थं । रञ्ञं ति एकं, नं ति एकं, वा ति एकन्ति तिपदमिदं । रञ्ञं ति कारियं, नम्ही ति निमित्तसत्तमी, वा ति विकप्पनत्थं; विधिसुत्तं । सविभत्तिग्गहणञ्च राजसद्दग्गहणञ्च वत्तते । अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व ।

रञ्ञं ति उदाहरणं । तं पन राजसद्दतो नम्हि कते, राजसद्दस्स सविभत्तिस्स 'राजस्स रञ्ञो·····' (१३५) त्यधिकिच्च इमिना रञ्ञमादेसे कते रूपं । राजूनं ति किमुदाहरणं ? तं पन राजसद्दतो नम्हि कते, सति पि नम्हि परे राजसद्दे इमिनादेसम-कत्वा, 'राजस्स राजु·····' ति राजसद्दस्स राजु-आदेसं कत्वा, 'योसु कतनिकार·····' (८८) त्यधिकिच्च 'सुनंहिसु च' ति दीघे कते रूपं ।

---

1. वु०—"नंम्हि रञ्ञं वा--" त०, वु० ३१५ ।

१३७. नाम्हि रञ्ञा वा । २. २. १८ ।

सब्बस्सेव राजसद्दस्स सविभत्तिस्स रञ्ञा-आदेसो होति वा नाम्हि विभत्तिम्हि । तेन रञ्ञा कतं कम्मं, राजेन वा[1] कतं कम्मं[1] ।

नाम्ही ति किमत्थं ? रञ्ञो सन्तकं[2] ।

---

१३७. नाम्हि रञ्ञा वा[1] तिदं 'अतो नेना' ति (१०३) सुत्ततो निक्खन्तं। रञ्ञा ति एत्थ राजसद्दतो नावचने कते, 'अतो नेना' ति सुत्तेन अकारन्ततो राजसद्दतो नावचनस्स एनादेसे कते, राजेना ति रूपं भवेय्य; एवं सति रञ्ञा ति रूपं कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, नाम्हि परे सविभत्तिस्स राजसद्दस्स रञ्ञादेसं कत्वा रञ्ञा ति रूपम्पि होती ति दस्सेतुं, 'नाम्हि रञ्ञा वा' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? राजसद्दस्स सविभत्तिस्स रञ्ञादेसो होति नाम्हि विकप्पेना ति ञापनत्थं। नाम्ही ति एकं, रञ्ञा ति एकं, वा ति एकन्ति तिपदमिदं। नाम्ही ति निमित्तसत्तमी, रञ्ञा ति कारियं, वा ति विकप्पनत्थं; विधिसुत्तं। सविभत्तिग्गहणञ्च राजग्गहणञ्च वत्तते। अत्थो सुविञ्ञेय्यो व। इधानुवत्तमानवाग्गहणे सति पि पुन वाग्गहणकरणं उत्तरत्र नानुवत्तनत्थं[2] ।

रञ्ञा ति उदाहरणं । तं पन राजसद्दतो नाम्हि कते, 'अम्हस्स ममं ⋯' (१२०), 'राजस्स रञ्ञो ⋯' (१३५) त्यधिकिच्च इमिना सविभत्तिस्स राजसद्दस्स रञ्ञादेसे कते रूपं। राजेना ति किमुदाहरणं ? तं पन राजसद्दतो ततियेकवचनं कत्वा, वाग्गहणेनाकत्वा, 'अतो नेना' ति एनादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं। रञ्ञो ति राजसद्दतो छट्ठेकवचने कते नावचनस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'राजस्स रञ्ञो....' ति सविभत्तिस्स राजसद्दस्स रञ्ञो-आदेसे कते रूपं।

१-१. नत्थि से० पोत्थके। २. सन्निकं—से० ।

1. तु०—"नाम्हि रञ्ञा राजिना"--सद्द०, सु० ३१६ ।

2. तु०—'अनन्तरसुत्ते सति पि वाग्गहणे इध वाग्गहणकरणं उत्तरत्र वाग्गहणनिवत्तनत्थं; यदि हि उत्तरत्रा पि च वत्तेय्य, इध वाग्गहणमकत्तब्बं भवेय्य । कथञ्चेतं? तेन ञायति- न उत्तरत्र वाग्गहणं वत्तती ति । अनन्तरसुत्ते पन वाग्गहणं वत्तत इति । अनन्तरसुत्ते पन वाग्गहणं निवत्ततु; इध पन वाग्गहणं कत्वा निवत्तते ति । इध वाग्गहणकरणतो यदि हि इध उत्तरत्रा पि वत्तेय्य, इच्चेव न कत्तब्बं भवेय्य, इध वाग्गहणकरणे अत्थविसेसाभावा पुरिमस्सेविध च उत्तरत्र च अधिप्पेतत्थसाधनतो। तस्मा असप्पथमनोतरित्वा इध वाग्गहणकरणेन पुरिमवाग्गहणञ्च इध वाग्गहणञ्च उत्तरत्र न वत्तते त्यवगन्तब्बं"— क० न्या०, पि० १४२-१४३ ।

१३८. स्मिम्हि रञ्ञे-राजिनि । २. २. १९ ।

सब्बस्सेव राजसद्दस्स सविभत्तिस्स रञ्ञे-राजिनि इच्चेते आदेसा होन्ति स्मिम्हि विभत्तिम्हि । रञ्ञे, राजिनि ।

१३९. तुम्हाम्हानं[1] तयि-मयि । २. २. २० ।

सब्बेसं तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं तयि-मयि इच्चेते आदेसा होन्ति यथासङ्ख्यं स्मिम्हि विभत्तिम्हि । तयि, मयि ।

स्मिही ति किमत्थं ? त्वं भवसि, अहं भवामि ।

---

१३८. स्मिम्हि रञ्ञे-राजिनी[1] तिदं 'स्मास्मिन्नं वा' (१०८), 'स्माहिस्मिन्नं....' ति (९९) सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं? रञ्ञे राजिनी त्यादिम्हि राजसद्दतो स्मिवचने कते, यथावुत्तसुत्तेहि राजसद्दतो स्मिवचनस्स एकारे वा म्हि-आदेसो वा कते, राजस्मि राजे राजम्ही ति रूपानि भवेय्युं; एवं सति रञ्ञे राजिनी ति रूपानि कथं सिज्झेय्युन्ति पुच्छाय सति, स्मि-विभत्तिम्हि सविभत्तिस्स राजसद्दस्स रञ्ञे-राजिनि-आदेसं कत्वा तानि रूपानि पि होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'स्मिम्हि....' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? राजसद्दस्स सविभत्तिस्स स्मिम्हि रञ्ञे-राजिनि-आदेसा होन्ती ति ञापनत्थं। द्विपदमिदं। स्मिम्ही ति निमित्तसत्तमी, रञ्ञे-राजिनी ति कारियं; विधिसुत्तं। रञ्ञे, राजिनी ति उदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव।

१३९. तुम्हाम्हानं तयिमयी[2] तिदं 'स्मास्मिन्नं वा' (१०८), 'स्माहिस्मिन्नं....' ति (९९) सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं? तयिमयी ति तुम्हाम्हसद्देहि स्मिम्हि कते, यथावुत्तेहि सुत्तेहि तुम्हे ति वा तुम्हस्मि ति वा तुम्हम्ही ति वा अम्हे ति वा अम्हस्मि ति वा अम्हम्ही ति वा रूपानि भवेय्युं; एवं सति तयि मयी ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, तुम्हाम्हेहि स्मिम्हि कते तयि-मयि-आदेसं कत्वा तानि रूपानि पि होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'तुम्हाम्हानं....' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं स्मिम्हि विभत्तिम्हि यथासङ्ख्यं तयि-मयि-आदेसा होन्ती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। द्विपदमिदं। तुम्हाम्हानं ति सम्बन्धछट्ठीकारी, तयिमयी ति कारियं; विधिसुत्तं। सविभत्तिग्गहणञ्च स्मिम्हिग्गहणञ्चानुवत्तते। अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व।

---

१. तुम्हाम्हाकं—से०, सी० १।

1. तु०—सद्द०, सु० ३१७।
2. तु०—'तुम्हाम्हस्स तयि मयि''—सद्द०, सु० ३१८; ''त्वमावेकवचने''—पा० ७.२.९७।

१४०. त्वमहं सिम्हि च । २. २. २१ ।

सब्बेसं तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं त्वं-अहं इच्चेते आदेसा होन्ति यथासङ्ख्यं सिम्हि विभत्तिम्हि । त्वं, अहं ।

सिम्ही ति[१] किमत्थं ? तयि, मयि[१] ।

चसद्दग्गहणेन तुवं च होति–तुवं सत्था ।

१४१. तव-मम से । २. २. २२ ।

सब्बेसं तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं तवं-ममं इच्चेते आदेसा होन्ति यथासङ्ख्यं से विभत्तिम्हि । तव, मम ।

से ति किमत्थं ? तयि, मयि ।

तयि, मयी ति उदाहरणानि । तानि सुत्तानुसारेन सुविञ्ञेय्यानेव । त्वं, अहं ति किमुदाहरणानि ? तानि पन तुम्ह-अम्हसद्देहि सिम्हि कते, सन्तेसु पि तुम्हाम्हेसु स्मिवचनस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'अम्हस्स ममं·····' (१२०), 'तुम्हाम्हानं·····' त्यधिकिच्च 'त्वमहं सिम्हि चे' ति (१४०) सविभत्तीनं तुम्हाम्हसद्दानं त्वमहमादेसे कते रूपानि ।

१४०. त्वमहं सिम्हि चे[1] तिदं 'सो' (१०४), 'सिं' ति (२१९) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? त्वं अहं त्यादिसु तुम्ह-अम्हसद्देहि सिम्हि कते, तुम्हो तुम्हं ति वा अम्हो अम्हं ति वा रूपानि भवेय्युं; एवं सन्ते त्वं-अहं ति रूपसिद्धि कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, सिम्हि परे तेसं तुम्ह-अम्हसद्दानं सविभत्तीनं त्वमहमादेसं कत्वा सिज्झती ति दस्सेन्तेन, 'त्वमहं सिम्हि चे' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं त्वमहमिच्चेते आदेसा होन्ती ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । त्वमहं ति कारियं, सिम्ही ति निमित्तसत्तमी, चा ति समुच्चयं; विधिसुत्तं। सविभत्तिग्गहणञ्च तुम्हाम्हग्गहणञ्च वत्तते। अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व। उदाहरणानि उत्तानानेव। तुवं ति तुम्हसद्दतो सिम्हि कते, चग्गहणेन तुवमादेसे कते रूपं[2] ।

१४१. तवमम से[3] तिदं 'सागमो से' ति (६१) सुत्ततो निक्खन्तं। तव मम इत्यादिसु तुम्हाम्हसद्देहि से विभत्तिम्हि सकारागमे कते तुम्हस्सा ति वा अम्हस्सा ति

१–१. नत्थि से० पोत्थके ।

1. तु०—''अहमहकं सिंस्मि''—सद्द०, सु० ३१६; ''···अहकं ति रूपन्तरम्पि इच्छितब्बं, तस्स अत्थिभावे 'अहकञ्च चित्तवसानुगा भासिस्सं' ति एसा पाळि-निदस्सनं; एत्थ हि अहकं ति अहं इच्चेवत्थो''—त०, भा० १, पि० २८६ ।
2. तु०—''इतरस्स तुवं त्वं''—त०, सु० ३२० ।
3. तु०—''तव मम तुय्हं मय्हञ्च से''—त०, सु० ३२० ।

१४२. तुय्हं-मय्हञ्च । २. २. २३ ।

सब्बेसं तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं तुय्हं-मय्हं इच्चेते आदेसा होन्ति यथासङ्ख्यं से विभत्तिम्हि । तुय्हं, मय्हं ।

से ति किमत्थं ? तया, मया ।

चसद्दग्गहणं सेग्गहणमनुकड्ढनत्थं ।

वा रूपानि भवेय्युं; एवं सति तव ममा ति रूपानि कथं सिज्झेय्युन्ति पुच्छाय सति, तेहि से विभत्तिम्हि कते सविभत्तीनं तेसं तव-मम इच्चेते आदेसे कत्वा सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'तवमम से' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं तव-ममादेसा होन्ति से विभत्तिम्ही ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । तव ममा ति कारियं, से ति निमित्तसत्तमी; विधिसुत्तं । सविभत्तिग्गहणञ्च तुम्हाम्हग्गहणञ्च वत्तते । अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व ।

तव, ममा ति उदाहरणानि । तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि सविभत्तिम्हि कते, 'अम्हस्स ममं·····' (१२०), 'तुम्हाम्हानं तयिमयी' (१३९) त्यधिकिच्च इमिना तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं यथाक्कमं तव-ममादेसे कते रूपानि । तयि, मयी ति किमुदाहरणानि ? तानि पन तुम्हाम्हेहि सविभत्तिम्हि कते, सस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, वुत्तनयेन तयि-मयि इच्चेतेसु आदेसेसु कतेसु रूपानि ।

१४२. तुय्हंमय्हञ्चे[1] तिदं 'तवमम से' ति (१४१) सुत्ततो निक्खन्तं ? किन्निक्खन्तं ? तुय्हं-मय्हं त्यादिसु* तुम्हाम्हसद्देहि सविभत्तिं कत्वा, 'तव मम से' तिमिना तव-ममादेसे कते तव ममा ति रूपानि भवेय्युं; एवं सति पि तुय्हं मय्हं ति रूपानि कथं सिज्झेय्युन्ति पुच्छाय सति, तेसं सविभत्तीनं तुय्हं-मय्हमादेसा होन्ति से विभत्तिम्ही ति दस्सेन्तेन, 'तुय्हंमय्हञ्चे' ति वुत्तं । किमत्थमिदं ? तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं तुय्हं-मय्हं इच्चेते आदेसा होन्ति से विभत्तिम्ही ति ञापनत्थं । द्विपदं । तुय्हंमय्हं ति कारियं, चा ति अनुकड्ढनं । सविभत्तिग्गहणञ्च तुम्हाम्हग्गहणञ्च सेग्गहणञ्च वत्तते । अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व ।

तुय्हं, मय्हं ति उदाहरणानि । तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि से विभत्तिम्हि कते, 'अम्हस्स ममं·····', 'तुम्हाम्हानं·····' (१३९), 'तवमम से' त्यधिकिच्च इमिना सविभत्तीनं

---

* त्यादीसु—सी० ।

1. तु०—त०; "तुभ्यमह्यौ ङयि"—पा० ७.२.९५ ।

१४३. तं-ममम्हि । २. २. २४ ।

सब्बेसं तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं तं-मं इच्चेते आदेसा होन्ति यथासङ्ख्यं अम्हि विभत्तिम्हि । तं, मं ।

अम्ही ति किमत्थं ? तया, मया ।

१४४. तवं-ममञ्च नवा । २. २. २५ ।

सब्बेसं तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं तवं-ममं इच्चेते आदेसा होन्ति न वा यथासङ्ख्यं अम्हि विभत्तिम्हि । तवं, ममं ।

न वा ति किमत्थं ? तं, मं पस्ससि ।

चसद्दग्गहणं अंगहणानुकड्ढनत्थं ।

तुम्हाम्हसद्दानं तुय्हं-मय्हमादेसे कते रूपानि । तया, मया ति किमुदाहरणानि ? तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि नाम्हि कते, सन्तेसु पि तुम्हाम्हेसु सविभत्तिया अभावा इमिनादेसमकत्वा, 'अम्हस्स ममं.....', तुम्हाम्हानं.....' त्यधिकिच्च 'नाम्हि तयामया' ति (१४५) तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं तया-मयादेसे कते रूपानि ।

१४३. तंममम्ही[1] तिदं 'सरलोपो.....' ति (८३) सुत्ततो निक्खन्तं । तं मं ति एत्थ तुम्हाम्हसद्देहि अम्हि कते, 'सरलोपो.....' ति सुत्तेन पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, परसरस्स पकतिभावञ्च कत्वा, तुम्हं ति वा अम्हं ति वा रूपानि भवेय्युं; एवं सन्ते तं मं ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, अम्हि च तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं तं-ममादेसं कत्वा सिज्झन्ती ति दस्सेतुं, 'तंममम्ही' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं तं-मआदेसा पि होन्ती ति ञापनत्थं । तं-मं ति कारियं, अम्ही ति निमित्तसत्तमी; विधिसुत्तं । सविभत्तिग्गहणञ्च तुम्हाम्हग्गहणञ्च वत्तते । अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व ।

तं, मं ति उदाहरणानि । तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि अं-विभत्तिम्हि कते, 'अम्हस्स ममं.....', 'तुम्हाम्हानं.....' त्यधिकिच्च इमिना सविभत्तीनं तुम्हाम्हसद्दानं तं-मं-आदेसे कते रूपानि । तया, मया ति एत्थ तुम्हाम्हसद्देहि नावभत्ति कत्वा, अं-विभत्तिया अभावा इमिनादेसमकत्वा, वुत्तनयेन रूपसिद्धि वेदितब्बा ।

१४४. तवंममञ्च नवा[2] तिदं 'सरलोपो.....' ति (८३) सुत्ततो निक्खन्तं । तवं-

---

1. तु०—"अम्हि तं मं तवं ममञ्च"—सद्द०, सु० ३२२; "त्वमावेकवचने"—पा० ७.२.९७ ।
2. तु०—सद्द०, सु० ३१२; "तवममौ ङसि"—पा० ७.२.९६ ।

१४५. नाम्हि तया-मया । २. २. २६ ।

सब्बेसं तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं तया-मया इच्चेते आदेसा होन्ति यथासङ्ख्यं नाम्हि विभत्तिम्हि । तया, मया ।

नाम्ही ति किमत्थं ? तुम्हेहि, अम्हेहि ।

ममं त्यादिम्हि तुम्हाम्हसद्देहि अम्हि कते, सरलोपपकतिभावं कत्वा तुम्हं-अम्हं ति रूपसिद्धि भवेय्य; एवं सति तवं-ममं ति रूपसिद्धि कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, अम्हि तवं-ममं-आदेसे पि कत्वा सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'तवंममञ्च नवा' ति वुत्तं। किमत्थमिदं ? तुम्ह-अम्हसद्दानं सविभत्तीनं तवं-ममं-आदेसा होन्ति अम्हि विभत्तिम्हि विकप्पेना ति ञापनत्थं । तवं-ममं ति कारियं, चा ति अनुकड्ढनं, नवा ति विकप्पनत्थं; विधिसुत्तं । अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व ।

तवं, ममं ति उदाहरणानि । तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि अम्हि कते, सविभत्तीनं तेसं 'अम्हस्स ममं⋯', 'तुम्हाम्हानं⋯', 'तंममम्ही' (१४३) त्यधिकिच्च तवं-ममं-आदेसे कते रूपानि । तं मं त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि अम्हि कते, नवासद्देन निवारितत्ता इमिनादेसमकत्वा, 'तंममम्ही ति' तं-मं-आदेसे कते रूपानि ।

१४५. नाम्हि तयामया[1] तिदं 'अतो नेना' ति (१०३) सुत्ततो निक्खन्तं । तया मया त्यादिसु तुम्हाम्हसद्देहि नाविभत्तिम्हि कते, नावचनस्स एनादेसं कत्वा तुम्हेन अम्हेन इति रूपानि भवेय्युं; एवं सन्ते तया मया ति रूपानि कथं भवेय्युं ति पुच्छाय सति, नाम्हि सविभत्तीनं तुम्हाम्हसद्दानं तया-मयादेसे कत्वा तानि रूपानी होन्तो ति दस्सेन्तेन, 'नाम्हि तयामया' ति वुत्तं । नाम्ही ति निमित्तसत्तमी, तया-मया ति कारियं; विधिसुत्तं ।

तया, मया ति उदाहरणानि । तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि नाम्हि कते, यथावुत्ताधिकारं कत्वा, इमिना सविभत्तीनं तुम्हाम्हसद्दानं तया-मयादेसे कते रूपानि । तुम्हेहि, अम्हेही ति किमुदाहरणानि ? तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि हिम्हि कते, 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) एकारादेसे कते रूपानि ।

---

1. तु०—"तया मया नास्मि"—सद्द०, सु०, ३२३; "त्वमावेकवचने"—पा० ७.२.९७ ।

१४६. तुम्हस्स तुवं-त्वमम्हि । २. २. २७ ।

सब्बस्स तुम्हसद्दस्स सविभत्तिस्स तुवं-त्वं इच्चेते आदेसा होन्ति अम्हि विभत्तिम्हि ? कलिङ्गरस्स तुवं मञ्ञे, कट्ठस्स त्वं मञ्ञे ।

१४७. पदतो दुतिया-चतुत्थी-छट्ठीसु वोनो । २. २. २८ ।

सब्बेसं[1] तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं यदा पदस्मा परेसं वो-नो आदेसा होन्ति यथासङ्ख्यं दुतिया-चतुत्थी-छट्ठी इच्चेतेसु न वा । पहाय वो[2] गमिस्सामि, मा नो अज्ज विकन्तिसु[3], धम्मं वो भिक्खवे देसिस्सामि, संविभजेथ नो रज्जेन, तुट्ठोस्मि वो पकतिया, नो भगवा अनुप्पत्तो ।

न वा ति किमत्थं ? एसो अम्हाकं सत्था । तुम्हाम्ह[4] इति[4] किमत्थं ? एते इसयो पस्ससि । पदतो ति किमत्थं ? तुम्हाकं सत्था । एतेस्विति किमत्थं ? गच्छथ तुम्हे ।

---

१४६. तुम्हस्स तुवंत्वमम्ही[1] तिदं 'तंममम्हि' (१४३), 'तवंममञ्च नवा' ति (१४४) सुत्तेहि निक्खन्तं । तुवं त्वं त्यादिसु तुम्हाम्हसद्देहि अम्हि कते, तं मं ति च तवं ममं ति च रूपानि भवेय्युं; एवं सन्ते तुवं ति वा त्वं ति वा रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, तुम्हाम्हेहि अम्हि कते तुवं-त्वं-आदेसे कत्वा तनि रूपानि पि होन्ती ति दस्सेतुं, 'तुम्हस्स.....' ति वुत्तं ।

तुवं, त्वं ति उदाहरणानि । तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि अम्हि कते, 'अम्हस्स ममं ....' (१२०) त्यधिकिच्च इमिना सविभत्तीनं तुम्हाम्हसद्दानं तुवं-त्वं-आदेसे कते रूपानि ।

१४७. पदतो दुतियाचतुत्थीछट्ठीसु* वोनो[2] तिदं 'सब्बयोनीनमाए' (१०७), 'सब्बतो नं संसानं' (१६८), 'तुम्हाम्हेहि नमाकं' (१६१), 'वा य्वप्पठमो' ति (१६२)

---

१. सब्बेसानं—सी० २ । २. वो भिक्खवे--से० । ३. विकन्तीसु--से० ।
४-४. तुम्हाकमिति--से०, सी० १ ।

* ०छट्ठिसु—सी० (सब्बत्थ) ।

1. "तुम्हस्संम्हि तुवं त्वं"—सद्द० सु० ३२४; पा० ७.२.९७ ।
2. तु०—"पदस्मा दुतिया-चतुत्थी-छट्ठीसु वो नो न वा"—सद्द०, सु० ३२५; "युष्मद-स्मदोः षष्ठी-चतुर्थी-द्वितीयास्थयोर्वानावौ"–पा० ८.१.२०, "बहुवचनस्य वस्नसौ"–तं०, ८.१.२१ ।

सुत्तेहि निक्खन्तं। वोनो ति एत्थ तुम्हाम्हसद्देहि दुतिया-योवचनञ्च चतुत्थी-छट्ठी-बहुवचनञ्च कत्वा दुतियाबहुवचने तुम्हे ति वा अम्हे ति वा, नम्हि कते तुम्हेसं ति वा तुम्हाकं ति वा अम्हेसं ति वा अम्हाकं ति वा रूपानि भवेय्युं; एवं सति वो नो ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, दुतिया-चतुत्थी-छट्ठीसु सविभत्तीनं तुम्हाम्हसद्दानं वो-नो-आदेसे कत्वा तानि रूपानि भवन्ती ति दस्सेन्तेन, 'पदतो·····' ति वुत्तं। पदतो ति अवधि, दुतियाचतुत्थीछट्ठीसू ति निमित्तसत्तमी, वोनो ति कारियं; विधिसुत्तं। सविभत्तिग्गहणतुम्हाम्हग्गहणानि च, मण्डूकगतिया नवाग्गहणञ्च वत्तन्ते[1]। अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व। उपरि एकवचनविधानस्सवुत्तता बहुवचनन्ति विञ्ञायति[2]।

पहाय वो भिक्खवे गमिस्सामी त्याद्युदाहरणानि। तेसु वो ति पहाय-सद्दं उपपदं कत्वा, तुम्हसद्दतो दुतियाबहुवचनञ्च कत्वा, दुतियाबहुवचनपरत्ता सविभत्तिस्स पदतो परस्स तुम्हसद्दस्स 'अम्हस्स ममं·····' (१२०), 'तुम्हाम्हानं·····' (१३९), 'तवंममञ्च नवा' (१४४) त्यधिकिच्च इमिना वो-आदेसे कते रूपं। नो ति मासद्दूपपदं कत्वा, अम्हसद्दतो वुत्तनयेन योवचनं कत्वा, वुत्तनयेनाधिकारं कत्वा, नो-आदेसे कते रूपं। धम्मं वो देसिस्सामि, संविभजेथ नो रज्जेन—चतुत्थ्यत्थे; तुट्ठोस्मि वो सत्था नो ति—छट्ठ्यत्थे। एसो अम्हाकं ति नवाग्गहणफलं। तं पन एसो-सद्दं उपपदं कत्वा, अम्हसद्दतो छट्ठीबहुवचने कते, सति पि पदतो परे अम्हसद्दे बहुवचनेन च नवाग्गहणेन निवारितत्ता इमिना नो-आदेसमकत्वा, 'तुम्हाम्हेहि नमाकं' ति (१६१) नंवचनस्स आकमादेसे कते, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं। एते इसयो ति पि किमुदाहरणं? तं पन इसिसद्दतो दुतिया-यो-वचने कते, सति पि पदतो परे तुम्हाम्हानमभावा इमिनादेसमकत्वा, अकतरस्सस्स इवण्णस्स झसञ्ञं कत्वा, 'पञ्चादीनमत्तं' (९०) त्यधिकिच्च 'योस्वकत·····' ति (९६) झस्सत्ते कते रूपं। तुम्हाकं सत्था ति च किमुदाहरणं? तं पन तुम्हसद्दतो छट्ठीबहुवचने कते, पदतो अपरत्ता इमिनादेसमकत्वा, आकमादेसादिम्हि कते रूपं। तुम्हे त्यादिसु सन्तेसु पि तुम्हाम्हेसु एतेसमभावा इमिनादेसमकत्वा, 'वा य्वप्पठमो' (१६२) त्यधिकिच्च 'सब्बनामकारते पठमो' ति (१६४) योवचनस्सेत्ते कते रूपानि।

1. तु०—क० न्या०, पि० १४६।

2. तु०—"एत्थ च किञ्चा पि दुतिया-चतुत्थी-छट्ठीसू ति अनियमेत्वा वुत्तं, तथा पि 'तेमेकवचने नाम्ही' ति वुत्तत्ता दुतिया-चतुत्थी-छट्ठीबहुवचनानि येव संगण्हाती ति दट्ठब्बं"—त०।

१४८. तेमेकवचने । २. २. २९ ।

सब्बेसं तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं यदा पदस्मा परेसं ते-मे-आदेसा होन्ति यथासङ्ख्यं चतुत्थी-छट्ठी इच्चेतेसु एकवचनेसु । ददामि ते गामवरानि पञ्च, ददाहि मे गामवरं, इदं ते रट्ठं, अयं मे पुत्तो ।

पदतो ति किमत्थं ? तव ञाति, मम ञाति ।

१४९. नाम्हि । २. २. ३० ।

सब्बेसं तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं यदा पदस्मा परेसं ते-मे-आदेसा न होन्ति अम्हि विभत्तिम्हि । पस्सेय्य तं वस्ससतं आरोग्यं[1], सो मं[2] ब्रुवि[2] ।

---

१४८. तेमेकवचने[1] तिदं 'तवमम से' (१४१), 'तुय्हंमय्हञ्चा' ति (१४२) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? ते मे ति एत्थ तुम्हाम्हसद्देहि सविभत्तिद्वये कते, तव ममा ति वा तुय्हं मय्हं ति वा रूपानि भवेय्युं; एवं सति ते मे ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, से विभत्तिम्हि सविभत्तीनं तुम्हाम्हसद्दानं ते-मे-आदेसे कत्वा तानि रूपानि सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'तेमेकवचने' ति वुत्तं । तेमे ति कारियं, एकवचने ति निमित्तसत्तमी । एत्थ च एकवचने ति सामञ्ञेन वुत्ते पि नाम्ही ति वुत्तत्ता चतुत्थी-छट्ठी-एकवचनानेव गय्हन्ति[2] ।

ते, मे ति उदाहरणानि । तत्थ ते ति ददामिसद्दूपपदतुम्हसद्दतो चतुत्थेकवचनं कत्वा, सविभत्तिस्स तुम्हसद्दस्स 'अम्हस्स ममं.....' (१२०), 'तुम्हाम्हानं तयिमयि' (१३९), 'पदतो दुतिया.....' (१४७) त्यधिकिच्च इमिना ते-आदेसे कते रूपं । मे ति अम्हसद्दतो चतुत्थेकवचनमेव विसेसो । सेसं सुविञ्ञेय्यमेव । तव ञाति, मम ञाती ति किमुदाहरणानि ? तत्थ च तुम्हाम्हसद्देहि से विभत्तिम्हि कते, सन्तेसु पि सकारद्वयेसु परेसु तुम्हाम्हेसु, पदतो अपरत्ता वुत्तविधानमकत्वा, वुत्ताधिकारमधिकिच्च 'तवमम से' ति (१४१) तवममादेसे कते रूपानि ।

१४९. नाम्ही[3] तिदं 'तेमेकवचने' (१४८), 'तवममञ्च.....' ति (१४४)

---

१. अरोग्यं—से० । २–२. मं अब्रुवि—से०; ममब्रुवि—सी० १ ।

1. तु०—"पच्छिमानमेकवचने न वा ते मे"—सद्द०, सु० ३२६; "तेमयावेकवचनस्य"—पा० ८.१.२२ ।
2. तु०—"एत्थ च किञ्चा पि एकवचने ति अनियमवसेन नाम्ही ति वुत्तता चतुत्थी-छट्ठेकवचनानेव संगण्हाती ति दट्ठब्बं"—क० न्या०, पि० १४७ ।
3. तु०—"न दुतियेकवचने"—सद्द०, सु० ३२७ ।

१५०. वा ततिये च । २. २. ३१ ।

सब्बेसं तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं यदा पदस्मा परेसं ते-मे-आदेसा होन्ति वा यथासङ्ख्यं ततियेकवचने परे । कतं ते पातं, कतं तया पापं; कतं मे पापं, कतं मया पापं ।

पदतो ति किमत्थं ? तया कतं, मया कतं ।

चसद्दग्गहणं तेमेग्गहणमनुकड्ढनत्थं ।

सुत्तेहि निक्खन्तं । तं मं त्यादिम्हि तुम्हाम्हसद्दतो अम्हि कते, ते-मे-आदेसं कत्वा वा, तवं-ममं-आदेसं कत्वा वा, ते मे ति वा, तवं ममं ति वा रूपानि भवेय्युं; एवं सति कथं ते मे ति रूपानि भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, अम्हि ते-मे-आदेसा न होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'नाम्ही' ति वुत्तं । किमत्थमिदं ? पदस्मा परेसं सविभत्तीनं तुम्हाम्हसद्दानं ते-मे-आदेसा न होन्ति अम्हि विभत्तिम्ही ति ञापनत्थं । ना ति पटिसेधनं, अम्ही ति निमित्तसत्तमी; विधिसुत्तं । सविभत्तिग्गहणं, तेमेग्गहणं, तुम्हाम्हग्गहणं, पदतोग्गहणं, दुतियाग्गहणं च वत्तते[1] । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व ।

पस्सेय्य तं, सो मं ति उदाहरणानि । तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि अम्हि कते, इमिना ते-मे-आदेसं पटिसेधेत्वा, 'तंममम्ही' ति (१४३) तं-मं-आदेसे कते रूपानि ।

१५०. वा ततिये च[2] तिदं 'अतो नेन' (१०३), 'नाम्हि तयामया' ति (१४५) सुत्तेहि निक्खन्तं । ते मे ति एत्थ तुम्हाम्हेहि नाविभत्तिम्हि कते, नाविभत्तिया एनादेसं कत्वा तुम्हेना ति वा अम्हेना ति वा, सविभत्तिस्स तुम्हाम्हसद्दस्स तया-मया-आदेसं कत्वा तया ति वा मया ति वा रूपानि भवेय्यु; एवं सति नाविभत्तिम्हि कते ते मे ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, नाविभत्तिम्हि ते मे ति रूपानि पि भवन्ती ति दस्सेन्तेन, 'वा ततिये चा' ति वुत्तं । वा[3] ति विकप्पनत्थं, ततिये ति निमित्तसत्तमी, चा ति कारियानुकड्ढनं; विधिसुत्तं । सविभत्तिग्गहण-तुम्हाम्हग्गहण-पदतोग्गहण-तेमेग्गहणानि अनुवत्तन्ति[4] । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व ।

कतं ते, कतं मे ति उदाहरणानि । तानि पन कतं-सद्दूपपदेहि तुम्हाम्हसद्देहि ततियेकवचने कते, 'अम्हस्स ममं·····' (१२०), 'तुम्हाम्हानं तयिमयि' (१३९),

---

1. तु०--क०, न्या०, पि० १४८ ।
2. तु०—"ततियेकवचने वा"—सद्द०, सु० ३२८; पा० ८.१.२२ ।
3.-4. तु—क० न्या०, पि० १४८ ।

१५१. बहुवचनेसु वोनो । २. २. ३२ ।

सब्बेसं तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं यदा पदस्मा परेसं वो-नो-आदेसा होन्ति वा यथासङ्ख्यं ततियाबहुवचने[1] परे। कतं वो कम्मं, कतं नो कम्मं ।

पदतो ति किमत्थं ? तुम्हेहि कतं, अम्हेहि कतं । बहुवचनग्गहणेन योम्हि पठमे वो-नो आदेसा होन्ति । गामं वो गच्छेय्याथ, गामं नो गच्छेय्याम ।

'पदतो....' (१४७), 'तेमेकवचने' (१४८) त्यधिकिच्च इमिना सविभत्तीनं तुम्हाम्हसद्दानं ते-मे-आदेसे कते रूपानि । कतं तया, कतं मया ति वाग्गहणफलं; तं सुविञ्ञेय्यमेव । तया-मया ति किमुदाहरणं ? तेसं पन सन्तेसु पि नाविभत्तिपरेसु तुम्हाम्हेसु, पदतो अपरत्ता इमिनादेसमकत्वा, वुत्तनयेन तया-मया-आदेसे कते रूपानि ।

१५१. बहुवचनेसु वोनो[1] तिदं 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) सुत्ततो निक्खन्तं । कतं वो कम्मं ति एत्थ तुम्हाम्हसद्देहि ततियाबहुवचने कते, तुम्हेहि वा अम्हेहि वा ति रूपानि भवेय्युं; एवं सति हिम्हि वो नो ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, हिम्हि तुम्हाम्हसद्दानं वो-नो-आदेसं कत्वा तानि रूपानि भवन्ती ति दस्सेन्तेन, 'बहुवचनेसु वोनो' ति वुत्तं । बहुवचनेसू ति निमित्तसत्तमी, वोनो ति कारियं; विधिसुत्तं ।

कतं वो, कतं नो ति उदाहरणानि । तानि पन कतं-पदस्मा परेहि तुम्हाम्हेहि ततियाबहुवचने कते, 'अम्हस्स ममं....' (१२०), 'तुम्हाम्हानं तयिमयि' (१३९), 'पदतो....' (१४७), 'तेमेकवचने' (१४८) त्यधिकिच्च इमिना हिविभत्तिम्हि सविभत्तीनं तुम्हाम्हसद्दानं वो-नो-आदेसे कते रूपानि । तुम्हेहि कतं, अम्हेहि कतं ति किमुदाहरणानि; तानि पन सुविञ्ञेय्यानेव । गामं वो, गामं नो ति बहुवचनग्गहणफलानि[2] । तानि पन गामसद्दूपपदेहि तुम्हाम्हसद्देहि पठमाबहुवचने कते, बहुवचनग्गहणेन वो-नो-आदेसे कते रूपानि ।

---

१. ततिये०—से० ।

1. तु०—"वो नो बहुवचने"—सद्द०, सु० ३२९; "बहुवचनस्य वस्नसौ—पा० ८.१.२१ ।

2. तु०—"योम्हि पठमे च"—सद्द०, सु० ३३० ।

१५२. पुमन्तस्सा सिम्हि । २. २. ३३ ।

पुम इच्चेवमन्तस्स सविभत्तिस्स आ-आदेसो होति सिम्हि विभत्तिम्हि। पुमा तिट्ठति ।

सिम्ही ति किमत्थं ? पुमानो तिट्ठन्ति । अन्तग्गहणेन मघव-युव इच्चेवमादीनं लिङ्गानमन्तस्स सविभत्तिस्स आ-आदेसो होति सिम्हि विभत्तिम्हि। मघवा, युवा ।

---

१५२. पुमन्तस्सा सिम्ही[1] तिदं 'सो' (१०४), 'सिं' ति (२१९) सुत्तेहि निक्खन्तं । पुमा ति एत्थ पुमसद्दतो सिम्हि कते, अकारन्तत्ता सिस्सोकारादेसं कत्वा पुमो ति वा, सिस्स अं-आदेसं कत्वा पुमं ति वा रूपानि भवेय्युं; एवं सन्ते पुमा ति रूपं कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, सिम्हि पुमसद्दन्तस्स सविभत्तिस्स आ-आदेसं कत्वा पुमा ति रूपं भवती ति दस्सेन्तेन, 'पुमन्तस्सा सिम्ही' ति वुत्तं । पुमन्तस्सा ति सम्बन्ध-छट्ठीकारी, आ ति कारियं, सिम्ही ति निमित्तसत्तमी; विधिसुत्तं ।

पुमा ति उदाहरणं । तं पन पुमसद्दतो सिम्हि कते, 'अम्हस्स ममं·····' (१२०) त्यधिकिच्च इमिना पुमसद्दन्तस्स सविभत्तिस्स आ-आदेसे कते रूपं । पुमानो ति किमुदाहरणं ? तं पन पुमसद्दतो योम्हि कते, सति पि पुमसद्दे सिस्साभावा इमिना-देसमकत्वा, 'अम्हस्स ममं·····', 'पुमन्तस्सा सिम्ही' त्यधिकिच्च 'योस्वानो' ति (१५५) सविभत्तिस्स पुमसद्दन्तस्स आनो-आदेसं कते रूपं ।

इध पन पुमस्स आ पुमआ इति छट्ठीसमासं कत्वा, ततो आदेसापेक्खछट्ठिं कत्वा, 'पुमस्सा सिम्ही' ति वुत्ते येव सिद्धे पि एवमकत्वा 'पुमन्तस्सा' ति वुत्तत्ता अन्तग्गहणं अधिकं होति; तेन ''अन्तग्गहणेना'' ति वुत्तं[2]। मघवा, युवा ति अन्तग्गहणस्स फलानि[3] । तानि पन मघव-युवसद्देहि सिम्हि कते, मघव-युवसद्दन्तस्स सविभत्तिस्स इध अन्तग्गहणेन आकारादेसे कते रूपानि ।

---

1. तु०—''पुमन्तस्सा सिम्हि वा''—त०, सु० ३३१ ।

2. तु०—क० न्या०, पि० १४६-१५० ।

3. तु०—''मघवादीनं निच्चं''—सद्द०, सु० ३३२ ।

१५३. अमालपनेकवचने । २. २. ३४ ।

पुम इच्चेवमन्तस्स सविभत्तिस्स अं होति आलपनेकवचने परे। हे पुमं ।

आलपने[1] ति किमत्थं ? पुमा तिट्ठति । एकवचने ति किमत्थं ? हे पुमानो[1] ।

---

१५३. अमालपनेकवचने[1] तिदं 'पुमन्तस्सा सिम्ही' ति सुत्ततो निक्खन्तं। हे पुमं ति एत्थ पुमसद्दतो सिम्हि कते, पुमसद्दन्तस्स सविभत्तिस्स आ-आदेसे कते पुमा ति रूपमेव भवेय्य; एवं सति पुमं ति रूपं कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, पुमसद्दतो आलपनेकवचने कते सविभत्तिस्स पुमसद्दन्तस्स अं-आदेसं कत्वा पुमं ति रूपं भवती ति दस्सेन्तेन, 'अमालपनेकवचने' ति वुत्तं। अं ति कारियं, आलपनेकवचने ति निमित्त-सत्तमी; विधिसुत्तं। सविभत्तिग्गहण-पुमन्तग्गहणानि वत्तन्ति। सुत्तगरुभावापनयनत्थं 'अमेकवचने' ति वत्तब्बे एवं वचनं गतिनिमित्तस्स अधिप्पेतदस्सनत्थं[2] ।

हे पुमं ति उदाहरणं। तत्थ हे ति आलपनत्थञापनत्थं वुत्तं; हे तिदं निपात-पदं, ततो गलोपो; पुमं ति पुमसद्दतो आलपनेकवचने कते, 'अम्हस्स ममं....' (१२०), 'पुमन्तस्सा सिम्ही' (१५२) त्यधिकिच्च इमिना सविभत्तिस्स पुमसद्दन्तस्स अं-आदेसे कते रूपं। पुमा ति किमुदाहरणं ? तं पन पुमसद्दतो सिम्हि कते आलपनेकवचनस्सा-भावा इमिना आदेसमकत्वा, वुत्तनयेन सविभत्तिस्स पुमसद्दन्तस्साकारादेसे कते रूपं। हे पुमानो ति च किमुदाहरणं ? तम्पन पुमसद्दतो योम्हि कते, सति पि आलपने परे पुमसद्दे, एकवचनस्साभावा इमिना आदेसमकत्वा, 'योस्वानो' ति (१५५) योम्हि आनो-आदेसे कते रूपं।

१-१. आलपनेकवचने ति किमत्थं ? हे पुमानो—सी०१, सी०२ ।

1. तु०—"(मतन्तरे) पुमस्स अमालपनेकवचने"—सद्द०, सु० ३३३; "पुंसोऽसुङ्"—पा० ७.१.८६; "सान्तमहतः संयोगस्य"—त०, ६.४.१० ।

2. तु०—"'अं गे' ति वुत्ते येव सिद्धे 'आलपनेकवचने' ति वचनं तब्बाचकस्स सद्दन्तरनि-दस्सनत्थं ति दट्ठब्बं; पकति हेसाचरियानं येन केनचि आकारेन सिस्सानं परिणतुप्पावनं ति"—क० न्या०, पि० १५० ।

१५४. समासे च विभासा । २. २. ३५ ।

पुम इच्चेवमन्तस्स समासे च अं-आदेसो होति विभासा। इत्थि च पुमा च नपुंसकं च इत्थिपुमन्नपुंसकानि[१], इत्थिपुमन्नपुंसकानं[२] समूहो इत्थि-पुन्नपुंसकसमूहो[३] ।

विभासा ति किमत्थं ? इत्थिपुमनपुंसकानि[४] ।

चसद्दग्गहणमंगहणानुकड्ढनत्थं ।

१५५. योस्वानो । २. २. ३६ ।

पुम इच्चेवमन्तस्स सविभत्तिस्स आनो-आदेसो होति योसु विभत्तीसु। पुमानो, हे पुमानो ।

योस्विति किमत्थं ? पुमा ।

---

१५४. समासे च विभासा[1] ति 'पुमन्तस्सा सिम्ही' ति (१५२) सुत्ततो निक्खन्तं। पुमा ति एत्थ पुमसद्दतो सिम्हि कते, सविभत्तिस्स पुमसद्दन्तस्साकारादेसं कत्वा पुमा ति रूपं वुत्तं; एवं सति समासे इत्थिपुन्नपुंसकानी ति रूपं कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, समासे पुमसद्दन्तस्स अमादेसं कत्वा इत्थिपुन्नपुंसकानी ति रूपम्पि होती ति दस्सेन्तेन, 'समासे च विभासा' ति वुत्तं। समासे ति अधिकरणसत्तमी, चा ति अंगहणानुकड्ढनं, विभासा ति विकप्पनत्थं; विधिसुत्तं। पुमन्तग्गहण-अंगहणानि च वत्तन्ति। अत्थो सुविञ्ञेय्यो व।

इत्थिपुन्नपुंसकसमूहो ति उदाहरणं। तत्थ इत्थी च पुमा च नपुंसको चा ति अत्थे समासञ्च विभत्तिलोपञ्च चसद्दाप्पयोगञ्च पकतिभावञ्च कत्वा, 'पुमन्तस्सा सिम्हि', 'अमालपनेकवचने' (१५३) त्यधिकिच्च इमिना पुमसद्दन्तस्स अमादेसं कत्वा, 'अं ब्यञ्जने निग्गहीतं' (३०) त्यधिकिच्च 'वग्गन्तं वा वग्गे' ति (३१) वग्गन्तं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, समासत्ता नाममिव कत्वा, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं। इत्थिपुमनपुंसकानी ति किमुदाहरणं ? तं पन विभासासद्देन निवारितत्ता इमिनादेसमकत्वा, विभत्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं।

१५५. योस्वानो[2] तिदं 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) सुत्ततो निक्खन्तं। पुमानो

---

१. इत्थिपुंनपुंसकानि--सी०२; नत्थि से० पोत्थके। २. इत्थिपुंनपुंसकानं—सी०२; इत्थिपुन्नपुंसकानं--से०। ३. ०पुमन्न०--से०, सी०१। ४. इत्थी पुमनपुंसकानि--से०।

1. तु०—''समासे च विभासा''—सद्द०, सु० ३३४।
2. तु०—''आनो योसु''—तं०, सु० ३३५।

१५६. आने स्मिम्हि वा । २. २. ३७ ।

पुम इच्चेवमन्तस्स सविभत्तिस्स आने-आदेसो होति वा स्मिम्हि विभत्तिम्हि । पुमाने, पुमे वा ।

ति एत्थ पुमसद्दतो योम्हि कते, पुमसद्दस्स अकारन्तत्ता योवचनानं आ-एत्ते कते, पुमा ति वा पुमे ति वा रूपानि भवेय्युं; एवं सति पुमानो ति रूपं कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, सविभत्तिस्स पुमसद्दन्तस्स आनो-आदेसं कत्वा पुमानो ति रूपं भवती ति दस्सेन्तेन, 'योस्वानो' ति वुत्तं । योसू ति निमित्तसत्तमी, आनो ति कारियं; विधिसुत्तं । सविभत्तिग्गहण-पुमन्तग्गहणानि वत्तन्ति । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । उदाहरणानि पि सुविञ्ञेय्यानेव ।

पुमा ति किमुदाहरणं ? तस्स पन पुमसद्दतो सिम्हि कते, सति पि पुमसद्दन्ते योवचनस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, वुत्तनयेन पुमन्तेन सह आ-आदेसे कते रूपं ।

१५६. आने स्मिम्हि वा[1] तिदं 'स्मास्मिन्नं वा' (१०८), 'स्माहिस्मिन्नं·····' ति (९९) सुत्तेहि निवखन्तं । पुमाने ति एत्थ पुमसद्दतो स्मिंविभत्तिम्हि कते, 'स्मास्मिन्नं वा' ति सुत्तेन स्मिंवचनस्स एकारे कते पुमे ति वा, 'स्माहिस्मिन्नं·····' ति स्मिंवचनस्स म्हि-आदेसे कते पुमम्ही ति रूपानि भवेय्युं; एवं सति पुमाने ति रूपसिद्धि कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, स्मिम्हि पुमसद्दन्तस्स सविभत्तिस्स आने-आदेसं कत्वा पुमाने ति रूपसिद्धि होती ति दस्सेन्तेन, 'आने स्मिम्हि वा' ति वुत्तं । आने ति कारियं, स्मिम्ही ति निमित्तसत्तमी, वा ति विकप्पनत्थं; विधिसुत्तं । विभासासद्दे अनुवत्तमाने पि इध वाग्गहणकरणं अनन्तरसुत्तस्स विभासाग्गहणं नानुवत्तते ति ञापनत्थं[2] ।

पुमाने ति उदाहरणं । तं पन पुमसद्दतो स्मिम्हि कते, 'अम्हस्स ममं·····' (१२०), 'पुमन्तस्सा स्मिम्ही' (१५२) त्यधिकिच्च इमिना पुमसद्दन्तस्स सविभत्तिस्स आने-आदेसे कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं । तं पन स्मिम्हि कते वाग्गहणेनाकत्वा, 'स्मास्मिन्नं वा' ति एकारादेसे कते रूपं ।

---

1. तु०—"स्मिम्हाने वा"—त०, सु० ३३६ ।

2. तु०—"हेट्ठा सति पि विभासग्गहणे इध वाग्गहणकरणं अनन्तरसुत्तस्स विभासग्गहणं न वत्तते ति ञापनत्थं"—क० न्या०, वि० १५१ ।

१५७. हिविभत्तिम्हि च । २. २. ३८ ।

पुम इच्चेवमन्तस्स हिविभत्तिम्हि च आने-आदेसो होति । पुमानेभि, पुमानेहि ।

पुन विभत्तिग्गहणं किमत्थं ? सविभत्तिग्गहणनिवत्तनत्थं । पुमानेहि[१] । चसद्दग्गहणेन मघव-युव इच्चेवमादीनमन्तस्स आन-आदेसो होति सि-यो-अं-यो इच्चेतेसु[२] विभत्तीसु[३], पुमकम्मथामन्तस्स च[४] उकारो[४] होति स-स्मासु[५] विभत्तीसु । युवानो, युवाना[६], युवानं, युवाने; मघवानो, मघवाना[६], मघवानं, मघवाने; पुमुनो, पुमुना; कम्मुनो, कम्मुना; थामुनो, थामुना ।

---

१५७. हिविभत्तिम्हि चा[1] तिदं 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) सुत्ततो निक्खन्तं । पुमानेही ति एत्थ पुमसद्दतो हिम्हि कते, 'सुहिस्वकारो ए' ति सुत्तेन हिम्हि अकारस्स एत्ते कते, पुमेहि पुमेभी ति रूपानि भवेय्युं; एवं सन्ते पुमानेहि पुमानेभी ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, पुमसद्दतो हिम्हि कते पुमसद्दन्तस्स आने-आदेसं कत्वा पुमानेही त्यादि रूपसिद्धि होती ति दस्सेन्तेन, 'हिविभत्तिम्हि चा' ति वुत्तं । हिविभत्तिम्ही ति निमित्तसत्तमी, चा ति समुच्चयो; विधिसुत्तं ।

पुमानेही त्यादीनि उदाहरणानि । तानि पन पुमसद्दतो हिम्हि कते, 'पुमन्तस्सा सिम्हि', 'आने स्मिम्हि वा' (१५६) त्यधिकिच्च इमिना पुमसद्दन्तस्स आने-आदेसं कत्वा, पच्छिमपक्खे हिविभत्तिया भि-आदेसं कत्वा रूपानि । विभत्तिग्गहणे[2] अनुवत्तमाने पि पुनविभत्तिग्गहणस्स कतत्ता वुत्तं—"पुन विभत्तिग्गहणं किमत्थं" ति; पुमानेही ति सविभत्तिग्गहणस्स निवत्तितभावं दस्सनत्थं वुत्तं[3] ।

मघवानो ति सिम्हि चग्गहणेन आनादेसस्सुदाहरणं; मघवाना ति योम्हि आनादेसस्सुदाहरणं; मघवानं ति अम्हि. मघवाने ति योम्हि; युवानो, युवाना, युवानं, युवाने ति च तथा । पुमुनो, पुमुना, कम्मुनो, कम्मुना, थामुनो, थामुना ति सस्माविभत्तिसु

---

१. नत्थि से० पोत्थके । २. इच्चेतासु--से० । ३. विभत्तिसु—सी० १, सी० २ । ४-४. चुकारो—सी० १, सी० २ । ५. स स्मा--सी० २ । ६. नत्थि से० पोत्थके ।

1. तु०—"हिविभत्तियं"—सद्द०, सु० ३३७ ।

2-3. तु०—"पुनविभत्तिग्गहणं यथाधिकतसविभत्तिग्गहणनिवत्तनत्थं । तेनाह—'पुनविभत्तिग्गहणं किमत्थं ? सविभत्तिग्गहणनिवत्तनत्थं' ति । अनेकत्थत्ता निपातानं चग्गहणस्स निपातता तप्फलं दस्सेन्तो चसद्दग्गहणेना ति आदिमाह"—क० न्या०, पि० १५१ ।

१५८. सुस्मिमा वा । २. २. ३९ ।

पुम इच्चेवमन्तस्स सु[1] इच्चेतस्मिं विभत्तिम्हि[1] आ-आदेसो होति वा । पुमासु, पुमेसु वा ।

१५९. उ नाम्हि च । २. २. ४० ।

पुम इच्चेवमन्तस्स आ-उ-आदेसा होन्ति वा नाम्हि विभत्तिम्हि । पुमाना, पुमुना, पुमेन वा ।

चसद्दग्गहणं[2] आग्गहणानुकड्ढनत्थं[2] ।

उकारादेसस्स उदाहरणानि[1] । तत्थ पुमुनो ति पुमसद्दतो सविभत्तिम्हि कते, इमिना पुमसद्दन्तस्सुकारे कते, तस्स लसञ्ञं कत्वा, 'झलतो·····' ति (११७) लतो सस्स नो-आदेसे कते रूपं । पुमुना ति स्मावचने कते, तस्स 'स्मा ना' ति (२१४) नादेसे कते रूपं ।

१५८. सुस्मिमा वा[2] तिदं 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) सुत्ततो निक्खन्तं । पुमासू ति पुमसद्दतो सुम्हि कते, 'सुहिस्वकारो ए' ति सुत्तेन पुमसद्दन्तस्सेत्ते कते पुमेसू ति रूपसिद्धि भवेय्य; एवं सन्ते पुमासू ति रूपसिद्धि कथं सिया ति पुच्छाय सति, सुम्हि पुमसद्दन्तस्स विकप्पेन आकारादेसम्पि कत्वा सिज्झती ति दस्सेन्तेन, 'सुस्मिमा वा' ति वुत्तं । सुस्मिं ति निमित्तसत्तमी, आ ति कारियं, वा ति विकप्पनत्थं; विधिसुत्तं । सति पि अनुवत्तमाने वाग्गहणे पुन वाग्गहणं वासद्दस्स उपरि नानुवत्तनत्थं[3] ।

पुमासू ति उदाहरणं । तं पन पुमसद्दतो सुविभत्तिम्हि कते, 'पुमन्तस्सा सिम्हि' (१५२), 'हिविभत्तिम्हि चे' (१५७) त्यधिकिच्च इमिना पुमसद्दन्तस्स आकारादेसे कते रूपं । पुमेसू ति किमुदाहरणं ? तत्थ 'सुहिस्वकारो ए' ति एकारत्तमेव विसेसो ।

१५९. उ नाम्हि चा[4] तिदं 'अतो नेना' ति (१०३) सुत्ततो निक्खन्तं । पुमाना पुमुना त्यादिसु पुमसद्दतो नावचने कते पुमेना ति रूपं भवेय्य; एवं सति पुमाना पुमुना

१-१. सुविभत्तिम्हि—से० । २-२. नत्थि से० पोत्थके ।

1. तु०—"सस्मासु पुम-कम्म-थामानमु"—सद्द०, सु० ३३८ ।
2. तु०—"आ वा सुम्हि"—त०, सु० ३३९ ।
3. तु०—क० न्या०, पि० १५२ ।
4. तु०—"नाम्हि च"—सद्द०, सु० ३४० ।

१६०. अ कम्मन्तस्स च । २. २. ४१ ।

कम्म इच्चेवमन्तस्स च अ-उ-आदेसा होन्ति वा नाम्हि विभत्तिम्हि। कम्मना, कम्मुना, कम्मेन वा।

चसद्दग्गहणेन मघव-युव इच्चेवमादीनमन्तस्स आ-आदेसो होति क्वचि ना-सु इच्चेतेसु। मघवाना, मघवासु, मघवेन वा; युवाना, युवासु, युवेन वा।

इति नामकप्पे दुतियो कण्डो।

ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, नाम्हि वचने पुमसद्दन्तस्स आ-उ-आदेसं कत्वा पुमाना पुमुना ति रूपानि भवन्ती ति दस्सेन्तेन, 'उ नाम्हि चा' ति वुत्तं। ऊ* ति कारियं, नाम्ही ति निमित्तसत्तमी, चा ति अनुकड्ढनं; विधिसुत्तं।

पुमुना त्यादीन्युदाहरणानि। तानि पन पुमसद्दतो नावचनं कत्वा, 'पुमन्तस्सा सिम्हि', 'सुस्मिमा वा' त्यधिकिच्च इमिना पुमसद्दन्तस्स आ-उ-आदेसे कते रूपानि। पुमेना ति वाग्गहणफलं, तं सुविञ्ञेय्यमेव।

१६०. अ कम्मन्तस्स चा[1] तिदं 'अतो नेना' ति (१०३) सुत्ततो निक्खन्तं। कम्मना कम्मुना त्यादिसु कम्मसद्दतो नावचने कते, तस्सेनादेसं कत्वा कम्मेना ति रूपं भवेय्य; एवं सति कम्मना कम्मुना ति रूपसिद्धि कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, कम्म-सद्दन्तस्स अकारादेसं कत्वा कम्मना कम्मुना ति रूपानि भवन्ती ति दस्सेन्तेन, 'अ कम्मन्तस्स चा' ति वुत्तं। अ इति कारियं, कम्मन्तस्सा ति सम्बन्धछट्ठीकारी, चा ति समुच्चयो; विधिसुत्तं।

कम्मना, कम्मुना ति उदाहरणानि। तत्थ च कम्मना, कम्मुना ति कम्मसद्दतो नावचने कते, 'हिविभत्तिम्हि च' (१५७), 'सुस्मिमा वा' (१५८), 'उ नाम्हि चा' (१५९) त्यधिकिच्च इमिना कम्मसद्दन्तस्स अ-उ-आदेसे कते रूपानि। मघवाना, मघवासु, मघवेन; युवाना, युवासु, युवेना ति चग्गहणफलानि[2]। तत्थ च मघवाना ति नाम्हि आकारत्तं, मघवासू ति सुविभत्तिम्हि, मघवेना ति क्वचिग्गहणफलं। इतरेसु पि एसेव नयो[3]।

इति कच्चायनवण्णनायं नामकप्पस्स
दुतियकण्डवण्णना।

---

* उ—सी०।

1. तु०—''कम्मन्तस्स अकारवकारा''—सद्द०, सु० ३४१।
2–3. तु०—''क्वचि युवादीनमा सु-नासु''—तं०, सु० ३४२।

(३) ततियो कण्डो

१६१. तुम्हाम्हेहि नमाकं । २. ३. १ ।

तेहि तुम्हाम्हेहि नं-वचनस्स आकं होति । तुम्हाकं, अम्हाकं । नमिति किमत्थं ? तुम्हेहि, अम्हेहि[1] ।

---

(३) ततियो कण्डो

एवं सविभत्तीनं तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तिकमादेसं विधाय, इदानि तेहि विभत्तीनमादेसञ्च, विभत्तिसु परेसु पदानमादेसञ्च विधातुं—

१६१. तुम्हाम्हेहि नमाकं[1] ति आदि वुत्तं। इदं सुत्तं 'पदतो.....' ति (१४७) सुत्ततो निक्खन्तं। 'पदतो.....' ति इमिना पदतो परेसं सविभत्तीनं तुम्हाम्हसद्दानं वो-नो-आदेसा वुत्ता, एवं सति तुम्हाम्हेहि नम्हि परे तुम्हानं अम्हानं ति रूपानि भवेय्युं; एवं सति कथं तुम्हाकं-अम्हाकं ति रूपसिद्धी ति पुच्छाय सति, तुम्हाम्हेहि नंवचनस्स आकमादेसं कत्वा तानि रूपानि सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'तुम्हाम्हेहि नमाकं' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? तुम्हाम्हेहि नंवचनस्स आकमादेसो पि होती ति ञापनत्थमिदमुच्चते। तुम्हाम्हेही ति अवधि, नं ति कारी, आकं ति कारियं; विधिसुत्तं। अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व।

तुम्हाकं, अम्हाकं ति उदाहरणानि। तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि नं-वचनं कत्वा, इमिना नं-वचनस्स आकमादेसे कते, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपानि। तुम्हेहि, अम्हेही ति किमुदाहरणानि ? तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि हिविभत्ति कत्वा, सन्तेसु पि तुम्हाम्हेसु नं-वचनस्साभावा इमिना आकमादेसमकत्वा, 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) एकारादेसे कते रूपानि। रूपसिद्धियं पन सीहगतिकाधिकारेन 'सस्सं' ति (१६३) इतो अं तिदं अधिकारं कत्वा, तुम्हाम्हसद्दतो नं-वचनस्स अं-आदेसं कत्वा, तुम्हं-अम्हं ति रूपम्पि वुत्तं; तेसु वुद्धिलोपागम ...' ति (४०६) सुत्तेन अम्हस्स अस्मादेसं* कत्वा** अस्माकमिति + रूपं पि वुत्तं[2] ।

---

१. नत्थि सी० २ पोत्थके।

*–** अस्माकमादेसमकत्वा–सी०। + अस्माकमीति—सी०।

1. तु०—सद्द०, सु० ३४४; "साम आकम्"—पा० ७.१.३३।

2. रूप०, सु० २४३, २४४।

१६२. वा य्वप्पठमो । २. ३. २ ।

तेहि तुम्हाम्हेहि यो अप्पठमो आकं होति वा । तुम्हाकं पस्ससि, तुम्हे पस्ससि वा; अम्हाकं पस्ससि, अम्हे पस्ससि वा ।

यो ति किमत्थं ? तुम्हेहि अम्हेहि । अप्पठमो ति किमत्थं ? गच्छथ तुम्हे, गच्छाम मयं ।

वा ति विकप्पनत्थं—योनं अं-आनं-आदेसा[1] होन्ति । तुम्हं, तुम्हानं; अम्हं, अम्हानं ।

---

१६२. वा य्वप्पठमो[1] तिदं 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'सब्बयोनीनमाए' ति इमिना दुतिया-योवचनस्स अकारन्ततो एत्तं वुत्तं; एवं सति तुम्हाकं अम्हाकमिति दुतिया-योवचनन्तानि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, तुम्हाम्हेहि दुतिया-योवचने कते, तस्स आकमादेसं कत्वा तानि रूपानि सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'वा य्वप्पठमो' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? तुम्हाम्हेहि यो अप्पठमो आकं होति विकप्पेना ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । वा ति विकप्पनत्थं, यो ति कारी, अप्पठमो ति तब्बिसेसनं; विधिसुत्तं । तुम्हाम्हग्गहणमिध वत्तते । अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व ।

तुम्हाकं, अम्हाकं ति उदाहरणानि । तेसं पन तुम्हाम्हसद्देहि दुतियाबहुवचनं कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना आकमादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपानि । तुम्हे, अम्हे ति वागहणफलानि । तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि दुतियाबहुवचने कते, 'अतो नेन' (१०३), 'सो वा' (१०५) त्यधिकिच्च 'सब्बयोनीनमाए' ति तस्सेकारादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपानि । तुम्हेहि, अम्हेही ति किमुदाहरणानि ? तानि पन तुम्हाम्हेहि हिविभत्तिम्हि कते, योवचनस्साभावा इमिना आकमादेसमकत्वा, 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) अकारस्सेकारं कत्वा, नेतब्बे नीते रूपानि ।

गच्छथ तुम्हे, गच्छाम मयं ति पि किमुदाहरणानि ? तानि पन तुम्हाम्हसद्देहि पठमाबहुवचनं कत्वा, सन्तेसु पि तुम्हाम्हसद्देसु अप्पठमस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'वा य्वप्पठमो' त्यधिकिच्च 'सब्बनामकारते पठमो' ति (१६४) पठमाबहुवचनस्सेत्तं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपानि । इतरस्मिं 'अम्हस्स ममं·····' (१२०) त्यधिकिच्च

---

१. सी० १, सी० २ पोत्थकेसु नत्थि ।

1. तु०—''अं-आनञ्च अप्पठमो यो''—सद्द०, सु० ३४५ ।

१६३. सस्सं। २. ३, ३।

तेहि तुम्हाम्हेहि सस्स विभत्तिस्स अं-आदेसो होति वा। तुम्हं दीयते, तुम्हं परिग्गहो; अम्हं दीयते, अम्हं परिग्गहो; तव दीयते, तव परिग्गहो; मम दीयते, मम परिग्गहो।

सस्सेति किमत्थं ? तुम्हेसु, अम्हेसु।

'मयं योम्हि पठमे' ति (१२१) सविभत्तिस्स अम्हसद्दस्स मयमादेसे कते रूपं। वासद्दस्स विकप्पनसमुच्चयत्थत्ता तप्फलं दस्सेतुं 'वा ति विकप्पनत्थेन योनं अं-आनं होन्ती' ति वुत्तं। तत्थ योनं ति सामञ्ञवसेन वुत्तत्ता द्विन्नम्पि योवचनानं अं-आनमादेसो होति। तुम्हं, तुम्हानं, अम्हं, अम्हानं ति उदाहरणानि; तानि सुविञ्ञेय्यानेव। एत्थ वाग्गहणेन तुम्हं-अम्हं ति एत्थ नंवचनस्स अमादेसं सङ्गहीतं ति सुत्तनिद्देसे वुत्तं[1]।

१६३. सस्सं[2] तिदं 'तवमम से' (१४१), 'तुय्हंमय्हञ्चा' ति (१४२) सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं ? 'तवमम से', 'तुय्हंमय्हञ्चा' ति सुत्तेहि से विभत्तिम्हि तुम्हाम्हसद्दानं सविभत्तीनं तव-मम-तुय्हं-मय्हं इच्चादेसा वुत्ता; एवं सति तुम्हाम्हेहि सविभत्तिं कत्वा तुम्हं अम्हं ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, तुम्हाम्हेहि सविभत्तिस्स अमादेसं कत्वा तुम्हं अम्हं ति पि रूपानि भवन्ती ति दस्सेन्तेन, 'सस्सं' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? तेहि तुम्हाम्हसद्देहि सस्स विभत्तिस्स अमादेसो पि होति विकप्पेना ति ञापनत्थं। द्विपदमिदं। सस्सा ति सम्बन्धछट्ठीकारी, अं ति कारियं; विधिसुत्तं। तुम्हाम्हग्गहण-वाग्गहणानि[3] वत्तन्ति। अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व[4]।

तुम्हं दीयते, तुम्हं परिग्गहो, अम्हं दीयते, अम्हं परिग्गहो, मय्हं दीयते, मय्हं परिग्गहो, मम दीयते, मम परिग्गहो ति उदाहरणानि। तत्थ च तुम्हं ति तुम्हसद्दतो सविभत्तिम्हि कते, 'तुम्हाम्हेहि नमाकं' (१६१), 'वा य्वप्पठमो' (१६२) त्यधिकिच्च इमिना सस्स अमादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं। इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव। तुम्हेसु, अम्हेसू ति किमुदाहरणानि ? तत्थ च तुम्हाम्हसद्देहि सुविभत्तिं कत्वा, सन्तेसु पि तुम्हाम्हसद्देसु, सस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) अकारस्स एत्ते कते रूपानि।

---

1. सुत्तनि०, पि० ६३।

2. तु०—"(मतन्तरे) सस्स वा अं"—सद्द०, सु० ३४६; "गरूनं मतन्तरे तुम्ह-अम्हसद्देहि, सस्स विभत्तिया अं-आदेसो होति वा : तुम्हं दीयते, तव दीयते···अम्हं, मम"–त०, वु०।

3–4. तु०—क० न्या०, पि० १५४।

१६४. सब्बनामकारते पठमो । २. ३. ४ ।

सब्बेसं सब्बनामानं अकारतो परो[1] यो[2] पठमो[2] एत्तमापज्जते। सब्बे, ये, ते, के, तुम्हे, अम्हे, इमे ।

सब्बनामानमिति किमत्थं ? देवा[3], असुरा, नागा, गन्धब्बा । अकारतो ति किमत्थं[3] ? अमू[4] पुरिसा । यो ति किमत्थं ? सब्बो, यो, सो[5], को, अयं ।

पठमग्गहणं उत्तरसुत्तत्थं । कतरो[6] च कतमो च कतरकतमे, कतरकतमा वा[6] ।

---

१६४. सब्बनामकारते पठमो[1] तिदं 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं ? सब्बे ये ते त्यादिसु सब्ब-य-त-सद्देहि योम्हि पठमे कते, तस्स 'सब्बयोनीनमाए' ति इमिना आकारे कते, सब्बा या सा ति आकारन्तानि रूपानि येव भवेय्युं; एवं सति सब्बे ये ते ति एकारादेसवसेन रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, 'सब्बनामकारते पठमो' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बेसं सब्बनामानं अकारतो परो यो पठमो एत्तमापज्जते ति ञापनत्थं। तिपदमिदं। सब्बनामकरतो ति अवधि, ए ति कारियं, पठमो ति कारी; विधिसुत्तं। योग्गहणमिहानुवत्तते। अत्थो सुविञ्ञेय्यो व[2]। सब्बेसं नामानि सब्बनामानि, सब्बनामानं अकारो सब्बनामकारो, ततो सब्बनामकारतो[3]; सब्बनामकारतो ति वुत्ते पि अकारन्ततो

---

१. से० पोत्थके नत्थि। २-२. पठमो यो—सी० १.। ३-३. सी० २ पोत्थके नत्थि। ४. अमु—सी०२। ५. से० पोत्थके नत्थि। ६-६. सी० १, सी० २ पोत्थकेसु नत्थि।

1. तु०—"सब्बनामकारतो यो पठमो ए"—सद्द०, सु० ३४७; "जस् सर्व इः"—का० २.१.३०; "जसः शी"—पा० ७.१.१७।

2-3. तु०—क० न्या०, पि० १५४; रूपसिद्धियं तु अस्स वेय्याकरणं एवं कतं—"सब्बेसं इत्थिपुमनपुंसकानं नामानि सब्बनामानि; तेसं सब्बेसं सब्बनामसञ्ञानं लिङ्गानं अकारतो परो पठमो यो एत्तमापज्जते"—सु० २००; सद्दनीतियं तु 'सब्बनाम' इच्चेतस्स एवं वण्णनं कतं—

"इतो परं पवक्खामि सब्बनामञ्च तस्समं।
नामञ्च योजितं नानानामेहेव विसेसतो॥
यानि होन्ति तिलिङ्गानि अनुकूलानि यानि च।
तिलिङ्गानं विसेसेव पवानेतानि नामतो॥

सब्बनामतो ति अत्थो दट्ठब्बो च; सब्बनामं ति परसमञ्ञा[1]; सब्बस्सेव सब्बनामस्स अनकारन्तत्ता च अकारन्ततो ति; वुत्तञ्च—

'सब्बसाधारणकानि नामानि'च्चेव अत्थतो।
सब्बनामानि वुच्चन्ति सत्तवीसति संखतो॥
तेसु कानिचि रूपेहि सेसञ्ञेहि च युज्जरे।
कानिचि पन सहेव एतेसं लक्खणं इदं॥
एतस्मा लक्खणा मुत्तं न पदं सब्बनामिकं।
तस्मातीतादयो सद्दा गुणनामानि वुच्चरे'' ॥-भा०१, पि० २६६;

कारिकायं तु 'सब्बनाम' इच्चेतस्स व्याकरणं एवं विज्जति—

''अथापरं पवक्खामि तिलिङ्गादिस्स कारिकं।
सब्बनामादि विञ्ञेय्यो तिलिङ्गादिविनिच्छयो॥
तिण्णन्नं सुद्धनामानं साधारणसभावतो।
सब्बनामन्तिदं वुत्तं तस्स किं लक्खणं ति चे॥
सेहि रूपेहि अञ्ञेहि रूपेहि चूपलक्खितं।
सरूपं च पवक्खामि तेसं वानि अनेकधा'' ॥—२३०-२३२ गा०।

1. तु०—'''परसमञ्ञा पयोगे' ति (६) सब्बादीनं सब्बनामसञ्ञा''—रूप०, सु० २००; 'परसमञ्ञा' तु अस्मिन्नेव पोत्थके एवं व्याकता—''परेसं समञ्ञा परसमञ्ञा, वेय्याकरणानं समञ्ञा ति अत्थो; परस्मिं वा समञ्ञा परसमञ्ञा, सक्कतगन्थे समञ्ञा ति वा अत्थो''—वि० व०, सु० ६;

'सर्वनामन्' इति सञ्ञाय वोहारो अतीतागतमेव, यथा—''सर्वनाम्ना स्त्रियो राजन्यवैश्यौ च न नाम्ना''—आप०, १. ४. २०; ''त्व इति विनिग्रहार्थीयं सर्वनामानुदात्तम्। अर्धनामेत्येके''—नि०, १. ७; ''कमिति निपातः। त्रिधानुदात्तम्। अव्ययम्। सर्वनाम। सुखनाम च''—अ०प्रा० ६. ४३; ''सर्वादीनि सर्वनामानि''—पा० १.१.२७; ''सर्वादीनि शब्दस्वरूपाणि सर्वनामसंज्ञानि स्युः। तदन्तस्यापीयं संज्ञा…''—त०, बु०; महाभाष्यगन्थे 'सर्वादीनि सर्वनामानि' इति सुत्तस्स अत्थवण्णनायं सब्बनामसञ्ञा एवं व्याकता—''सर्वादीनि' इति कोऽयं समासः? बहुव्रीहिरित्याह। कोऽस्य विग्रहः। सर्वशब्द आदिर्येषां तानि-इमानीति। यद्येवं, सर्वशब्दस्य सर्वनामसंज्ञा न प्राप्नोति। किं कारणम्? अन्यपदार्थत्वाद् बहुव्रीहेः……नैष दोषः, भवति हि बहुव्रीहौ तद्गुणसंविज्ञानमपि…अञ्ञत्थट्ठाने तस्मिञ्ञेव गन्थे एवं आगतं—''एकश्रुतिः स्वरसर्वनाम, यथा—नपुंसकं लिङ् सर्वनाम''—महा०, सु० १.१.२७, ६.४.१७४ (एत्थ सामञ्ञत्थे 'सब्बनाम' इच्चेतस्स वोहारो);

"सब्ब-कतर-कतम-उभय-इतरा पि च।
अञ्ञतर-अञ्ञतम-पुब्ब-अपर-दक्खिणा ॥
उत्तर-पर-अञ्ञा च य-त-एत-अमु-इमा ।
किं-तुम्ह-अम्ह-एका च द्वि-ति-चतु च पञ्च छ।
सत्त-अट्ठ-नव-दस-वीसादि याव संख्या"[1] ॥ ति।

तेसु च अकारन्ततो ति वुत्तत्ता द्विलिङ्गे येव इमिना विदधाति, न इत्थिलिङ्गे।

निरुक्तगन्थे तु सब्बमुम्मत्तत्थे अस्स वोहारो आगतो, त०, ७. ४; ह्विट्नीमहोदयेन अस्स विसदीकरणं एवं कतं—

"The term 'Sarvanāman', 'all-name', used to denote a pronoun, is an ingenious and interesting one····'Nāman', name, includes substantives, adjectives and pronouns; but while the two former, being descriptive of quality, are restricted in their application to certain objects or classes of objects, a pronoun may be used of anything indifferently; it is title of universal applicability"— —सो० ए०, २. ४;

"स्निः सर्वादि"—जै० १. १. ४०; 'सर्वविश्वोभय···"—मु० ८७; "सर्वादीनि सर्वनामानि स्वार्थेऽसंज्ञायाम् —सु० २. ४. १; "अथ सर्वनामशब्दाः—

'सञ्ज्ञोपसर्जने हित्वा विशेषार्थव्यवस्थया।
सर्वाद्याः सर्वनामानि चत्वारिंशत् समीरिताः'" ॥—प्र० २. २१८;

केचि आधुनिका 'सब्बनाम' इच्चस्स ठाने 'प्रतिमान्' इच्चस्स वोहारं करोन्ति; 'सर्वनामन्' इच्चस्स ठाने 'सिट्' इच्चस्स पयोगो 'सान्तनवाचरियेन' (शान्तनवाचार्य) कतो; 'क्षितीशचन्द्रचटर्जी'महोदयेन तु कथितं—"Sanskrit 'सर्वनामन्' is more acceptable than Greek 'antonumia' or Latin 'pronomen', meaning 'a word used for or instead of a noun'—a definition which leaves much to be desired····"—टे० ट० सं० ग्रा, भा० १, पि० ६६।

1. कारिका २३३–२३४ गा०; तु०—"सब्बनामानि नाम—सब्ब, कतर, कतम, उभय, इतर, अञ्ञ, अञ्ञतर, अञ्ञतम, पुब्ब, पर, अपर, दक्खिण, उत्तर, अधर, य, त, एत, इम, अमु, किं, एक, उभ, द्वि, ति, चतु, तुम्ह, अम्ह इच्चेतानि सत्तवीस। एतेसु सब्बसद्दो सकलत्थो, सो च सब्बासब्बाविवसेन ञेय्यो····अम्हसद्दो अत्तनि वत्तब्बवचनं"—सद्द०, भा०१, पि० २६६-२६७; तु०—रूप०, सु० २००, मू०; तु०—'सर्वादिगण'—पा० गण०।

सब्बे, ये, ते, के, तुम्हे, अम्हे, इमे ति उदाहरणानि। तानि पन सब्ब-यत-किं-तुम्ह-अम्ह-इमसद्देहि योम्हि पठमे कते, 'वा य्वप्पठमो (१६२) त्यधिकिच्च इमिना योवचनस्से-कारं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपानि। तत्थ च के ति किंसद्दस्स 'किस्स क वे चे' ति (२२७) एत्थ चग्गहणेन ककारो। देवा त्यादीनि किमुदाहरणानि? तत्थ च देवादिसद्दतो योम्हि पठमे कते, सति पि अकारन्ततो योम्हि पठमे, असब्बनामत्ता इमिनादेसमकत्वा, 'अतो नेना' ति (१०३); 'सो वा' (१०५) त्यधिकिच्च 'सब्बयो-नीनमाए' ति (१०७) तस्साकारं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपानि। अमू तीध अमुसद्दतो योम्हि पठमे कते, सति पि सब्बनामतो परे योम्हि पठमे, अकारन्ततो अपरत्ता इमिनादेसमकत्वा, वुत्तनयेन लसञ्ञं कत्वा, 'झलतो सस्स नो वा' (११७) त्यधिकिच्च 'घपतो च.....' ति (११८) लोपे कते, 'योसु कत.....' ति (८८) दीघे कते रूपं। सब्बो, यो, सो, को, अयं ति च किमुदाहरणानि? तेहि च सिम्हि कते, सति पि सब्बनामाकारे, योवचनस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'अतो नेना' त्यधिकिच्च 'सो' ति (१०४) सिस्सोकारादेसादिम्हि कते रूपानि। तत्थ च सो ति तकारस्स सकारकरणमेव विसेसो; को ति ककारकरणमेव विसेसो; अयं तिदं पन 'सब्बस्सिमस्से वा' (१७०) त्यधिकिच्च 'अनपुंसकस्सायं सिम्ही' ति (१७२) सिम्हि अयमादेसं कत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपं।

इध सुत्ते पठमग्गहणे विज्जमाने पि 'सब्बयोनीनमाए' तिमिना उपयोगबहुवचनस्स एकारादेसस्स वुत्तत्ता 'वा य्वप्पठमो' ति सुत्ततो अनुवत्तमानस्स कारीभूतस्स यो ति पदस्स पठमभावो विञ्ञायति[1]; अथ कस्मा पठमग्गहणं इध वुत्तन्ति चोदनं मनसि निधायाह—''पठमग्गहणमुत्तरसुत्तत्थं'' ति। यज्जेवं तथेव कातब्बं ति चोदना, इहा पि पाकटभावत्थं कतं ति[2] परिहारो।

1–2. तु०—''इध पन 'सब्बनामकारते' ति वुत्ते येव 'वा य्वप्पठमो' ति इतो योग्गहणस्सा-नुवत्तनतो अधिप्पेतत्थे सिद्धे पि पठमग्गहणकरणं उत्तरसुत्तत्थं। ननु पठमो ति अवुत्ते दुतिया-यो-वचनस्सेति संका सिया ति? न सिया। कस्मा? यदि पन सब्बनामकारतो दुतिया-यो-वचनस्सेत्तं सन्धायेतं वुत्तं भवेय्य, इदमेवावचनीयं भवेय्य—'सब्बयोनीनमाए' ति अकारन्ततो दुतियायोवचनस्सेकारादेसस्सुपलब्भनतो ति। ननु तत्थ विकप्पवसेन वुत्तत्ता निच्चविधानत्थमिदं ति सक्का मन्तुं ति? न सक्का, तत्थ वाग्गहणस्स ववत्थितत्ता ति; तस्स पन ववत्थता तत्थेव वुत्ता; भवत्येवं, कस्मा व तत्थ न वुत्तं ति? इधुप्पत्तितो अवगन्तब्बस्सत्थस्स आवीकरणत्थं ति। यदि एवं, उत्तरसुत्ते पि द्वन्दट्ठम्हा सब्बनामम्हा अकारन्ततो योवचनस्सेकारादेसस्स वुत्तत्ता तदत्थं पि न वत्तब्बं भवेय्या ति? न व वत्तब्बं; कस्मा? 'सब्बयोनीनमाए' ति एत्थ वाग्गहणस्स ववत्थितत्ता, तेन कत्थचि नियवसेन सिया कत्थचि न सिया ति एकेकस्सेव रूपद्वयुप्पादनत्थमिदं वुत्तं ति पि मन्तब्बतो; तस्मा तदासंकानिवत्तनत्थमिह पठमग्गहणं कतं। तेनाह—'पठमग्गहणमुत्तरसुत्तत्थं' ति''—क० न्या०, पि० १५५।

१६५. द्वन्दट्ठा वा । २. ३. ५ ।

तस्मा सब्बनामानं[1] अकारतो[1] द्वन्दट्ठा यो पठमो एत्तमापज्जते वा। कतरकतमे[2], कतरकतमा वा[3] ।

सब्बनामानमिति किमत्थं? देवासुरनागगन्धब्बमनुस्सा[4] । द्वन्दट्ठा ति किमत्थं? ते, सब्बे ।

---

१६५. द्वन्दट्ठा वा[1] तिदं 'सब्बनामकारते पठमो' ति (१६४) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं? 'सब्बनामकारते पठमो' ति इमिना सब्बनामकारतो पठमाबहुवचनस्स एकारत्तं वुत्तं; एवं सति किं सब्बनामद्वन्दे पि कते न एकारत्तमेव कातब्बन्ति पुच्छाय सति, सब्बनामद्वन्दे तेन सब्बनामविधानं न कातब्बं, सब्बनामविधानभूतमेकारत्तं वा 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) इमिना सुद्धनामविधानभूतमेकारत्तं वा कातब्बन्ति दस्सेन्तेन, 'द्वन्दट्ठा वा' ति वुत्तं। किमत्थमिदं? द्वन्दट्ठसब्बनामकारतो यो पठमो विकप्पेन एकारत्तमापज्जते ति ञापनत्थं। द्विपदमिदं। द्वन्दट्ठा ति अवधि, वा ति विकप्पनत्थं; विधिसुत्तं। योग्गहणं[2] च सब्बनामग्गहणं च अकारग्गहणं च पठमग्गहणं च एकारग्गहणं च वत्तते। अत्थो सुविञ्ञेय्यो व। द्वन्दे ठितो द्वन्दट्ठो, द्वन्दवसेन ठितो एत्था ति द्वन्दट्ठो पि, अकारो, तस्मा द्वन्दट्ठा[3] ।

कतरकतमे ति उदाहरणं। तत्थ च कतरो च कतमो चा त्यत्थे 'नामानं समासो ....' ति (३१८) इमिना युत्तत्थसमासं च युत्तत्थसमाससञ्ञं च कत्वा, तमेवाधिकिच्च 'नामानं समुच्चयो द्वन्दो' ति (३३१) द्वन्दसमासं च कत्वा, 'तेसं विभत्तियो....' ति (३१९) विभत्तिलोपं कत्वा, 'वुत्तट्ठानमप्पयोगो' ति परिभासं कत्वा, 'तेसं विभत्तियो ....' ति एत्थ तेसं-गहणेन चसद्दस्सापप्पयोगं कत्वा, 'पकति चस्स....' ति (३२०) पकतिभावं कत्वा, नाममिव कत्वा, ततो योम्हि पठमे कते, 'वा य्वप्पठमो' (१६२), 'सब्ब-

---

१-१. सब्बनाम-अकारतो – सी० १, सी० २। २. कतरो च कतमो च कतरकतमे—सी०१। ३. से० पोत्थके नत्थि। ४ देवा, असुरा, नागा, गन्धब्बा, मनुस्सा—सी० १, सी० २।

1. तु०—'द्वन्दे ठिता वा"—सद्द०, सु० ३४८; "द्वन्द्वस्थाच्च"—का० २. १. ३२; "द्वन्द्वस्थाच्च सर्वनाम्नो लिङ्गादकारान्तात्परो जस् सर्वं इर्भवति वा। कतरकतमे। कतरकतमाः"—त० वृ०; "द्वन्द्वे च"—पा० १. १. ३१, "विभाषा जसि"—त०, १. १. ३२।

2-3. तु०—क० न्या०, पि० १५६।

१६६. नाञ्ञं[1] सब्बनामिकं । २. ३. ६. ।

सब्बनामिकविधानं द्वन्दट्ठे[2] नाञ्ञं[1] कारियं होति । पुब्बा[3] च अपरा च[3] पुब्बापरानं, पुब्बा[4] च उत्तरा च[4] पुब्बुत्तरानं[5], अधरो च उत्तरो च अधरुत्तरानं[6] ।

नामकारते पठमो' त्यधिकिच्च इमिना द्वन्दट्ठाकारतो योपठमस्सेत्तं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं–इदं हि सब्बनामिकविधानं । कतरकतमा ति एत्थ पन योम्हि कते, सति पि द्वन्दट्ठाकारतो परे योम्हि पठमे, वासद्देन निवारितत्ता इमिना एकारत्तमकत्वा, 'सब्बयोनीनमाए' ति अकारन्ततो योपठमस्स आकारत्ते कते रूपं—इदं हि सुद्धनामिकविधानं । इमानि विधानानि सन्धाय सब्बनामिकविधानञ्च सुद्धनामिकविधानञ्च होती ति वुत्तं । देवासुरनागगन्धब्बमनुस्सा ति एत्थ सति पि द्वन्दट्ठाकारतो परे योम्हि पठमे, सब्बनामद्वन्दट्ठाकारतो अपरत्ता; सब्बे त्यादिसु सति पि सब्बनामकारतो परे योम्हि पठमे, द्वन्दट्ठाकारतो अपरत्ता । हेट्ठानुवत्तमाने[1] पि वाग्गहणे पुन इध वाग्गहणकरणं अनन्तरसुत्तस्स वाग्गहणनिवत्तनत्थं[2] ।

१६६. नाञ्ञं सब्बनामिकं[3] तिदं 'सब्बनामानं नम्हि च' (१०२), 'सब्बतो नं संसानं' ति (१६८) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'सब्बनामानं....' ति सुत्तेन नम्हि सब्बनामन्तस्सेकारादेसो च, 'सब्बतो नं संसानं' ति सब्बनामतो नंवचनस्स संसानमादेसो च वुत्तो; एवं सति सब्बनामद्वन्दे नम्हि परे पुब्बुत्तरेसं पुब्बुत्तरेसानं ति रूपानि भवेय्युं; एवं सति कथं पुब्बुत्तरानं त्यादीनि रूपानि सिज्झेय्युन्ति पुच्छाय सति, सब्बनामद्वन्दे द्वन्दट्ठाकारतो एकारत्तं ठपेत्वा सब्बनामिकविधानं अञ्ञं कारियं न कातब्बन्ति दस्सेन्तेन, 'नाञ्ञं सब्बनामिकं' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? इध[4] वुत्तमेकारत्तं ठपेत्वा अञ्ञं 'सब्बनामानं नम्हि च', 'सब्बतो नं संसानं' ति सुत्तेहि वुत्तं सब्बनामिकविधानं सब्बं द्वन्दट्ठाकारतो न कातब्बन्ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । ना ति पटिसेधनं, अञ्ञं ति तब्बिसेसनं, सब्बनामिकं ति कारियं; विधिसुत्तं ।

---

१. नञ्ञं—से० । २. द्वन्दट्ठा—सी० १, सी० २ । ३-३. पुब्बो च अपरो च—से० । ४-४. पुब्बो च उत्तरो च—से० । ५. पुब्बोत्तरानं—से० । ६. अधरोत्तरानं—से० ।

1–2. तु०––क० न्या०, पि०, १५६ ।

3. तु०—"नाञ्ञो सब्बनामविधि"—सद्द०, सु० ३४९; "नान्यत्सार्वनामिकम्"—का० २. १. ३३; "अकारोऽनुवर्तते । द्वन्द्वस्थस्य सर्वनाम्नो लिङ्गस्योक्तमन्यच्च सार्वनामिकं कार्यं न भवति । पूर्वापराय । पूर्वापरात्"—त०, वु०; "द्वन्द्वे च"—पा० १. १. ३१ ।

१६७. बहुब्बीहिम्हि च । २. ३. ७ ।

बहुब्बीहिम्हि च समासे सब्बनामिकविधानं नाञ्ञं कारियं होति। पियो पुब्बो यस्सा[1] सा[2] पियपुब्बाय, पियपुब्बानं, पियपुब्बे, पियपुब्बस्स ।

चेति किमत्थं ? सब्बनामिकविधानं च होति। दक्खिणपुब्बस्सं, दक्खिणपुब्बस्सा; उत्तरपुब्बस्सं, उत्तरपुब्बस्सा ।

सब्बनामग्गहणञ्च द्वन्दट्ठग्गहणञ्च वत्तते। अत्थो सुविञ्ञेय्यो व[5] । सब्बेसं नामानि सब्बनामानि, सब्बनामेसु युत्तं सब्बनामेहि विहितं ति वा सब्बनामिकं, संसादिकं कारियं।

पुब्बापरानं त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ च पुब्बापरानं ति पुब्बा च अपरा चा ति द्वन्दसमासस्स दिसावाचकत्ता इत्थिप्पच्चयन्तानि; तत्थ युत्तत्थसमासञ्च युत्तत्थसमाससञ्ञञ्च द्वन्दसमासञ्च द्वन्दसमाससञ्ञञ्च वुत्तनयेन विभत्तिलोपञ्च सद्दाप्पयोगानि च कत्वा, द्वन्दसमासस्स दिसावाचकत्ता नपुंसकत्ता 'सरो रस्सो नपुंसके' ति (३४४) आकारस्स रस्सत्तं कत्वा, 'सरा·····' ति (१२) अकारे परे पुरिमाकारलोपदीघपरनयनञ्च कत्वा, नाममिव कत्वा, नंविभत्तिम्हि कते, 'सुहिस्वकारो ए' (१०१) त्यधिकिच्च सब्बनामानं·····' ति (१०२) सब्बनामविधाने सम्पत्ते, 'सब्बनामकारते पठमो' (१६४) त्यधिकिच्च 'सब्बतो नं संसानं' ति (१६८) च सब्बनामविधाने संसादेसे च सम्पत्ते, 'सब्बनामकारते पठमो', 'द्वन्दट्ठा वा' (१६५) त्यधिकिच्च इमिना सब्बं सब्बनामिकविधानं पटिसेधेत्वा, योसु·····' (८८) त्यधिकिच्च 'सुनंहिसु चे' ति (८९) सुद्धनामविधानभूते दीघे कते रूपं। पुब्बुत्तरानं ति तंसदिसमेव। अधरुत्तरानं तीध पुल्लिङ्गरूपत्ता रस्सत्तं व विसेसो।

१६७. बहुब्बीहिम्हि चा[6] तिदं 'नाञ्ञं सब्बनामिकं' ति (१६६) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं ? 'नाञ्ञं सब्बनामिकं' ति इमिना द्वन्दे एकारत्तं ठपेत्वा सब्बनामाकारतो सब्बनामिकविधानस्स पटिसेधो कतो; एवं सति बहुब्बीहिसमासे पियपुब्बाया त्यादीनि सुद्धनामिकविधानानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, बहुब्बीहिसमासे पि सब्बनामिकविधानं न सिया, सुद्धनामिकविधानमेव सिया ति दस्सेन्तेन, 'बहुब्बीहिम्हि चा' ति

---

१. यस्स—से०। २. से० पोत्थके नत्थि।

4-5. तु०—क० न्या०, पि० १५६।

6. तु०—"बहुब्बीहिस्मिञ्च"—सद्द०, सु० ३५१; "बहुव्रीहौ"—का० २. १. ३५; "बहुव्रीहौ समासे सार्वनामिकं कार्यं न भवति। त्वत्कपितृको, मत्कपितृकः"—त० वु०; "न बहुव्रीहौ"—पा० १. १. २९।

बुत्तं। किमत्थमिदं ? सब्बनामिकमेकारत्तं बहुब्बीहिसमासे अञ्ञं कारियं न कातब्बन्ति ञापनत्थं। द्विपदमिदं। बहुब्बीहिम्ही ति भावसत्तमी, चा ति निवत्तनत्थं; विधिसुत्तं। सब्बनामग्गहणञ्च[1] नकारग्गहणञ्च अञ्ञग्गहणञ्च सब्बनामिकग्गहणञ्च वत्तते। अत्थो सुविञ्ञेय्यो व[2]।

पियपुब्बाया त्याद्युदाहरणानि। तत्थ च पिया पुब्बा यस्सा ति अत्थे युत्तत्थसमासञ्च युत्तत्थसमाससञ्ञञ्च बहुब्बीहिसमासञ्च बहुब्बीहिसमाससञ्ञञ्च कत्वा, वुत्तनयेन विभत्तिलोपअञ्ञपदलोपादिम्हि कते, 'इत्थियं....'ति (३३३) सुत्तेन पुरिमपदस्स पुम्भावातिदेसवसेन आप्पच्चयाभावं कत्वा, 'पकति चस्स....' ति (३२०) सुत्तेन पियपुब्बासद्दस्स पकतिभावे कते, समासत्ता नाममिव कत्वा, सविभत्तिम्हि कते, पुब्बासद्दं योजेत्वा, आकारस्स घसञ्ञं कत्वा, 'सब्बनामकारते पठमो' (१६४), 'सब्बतो को' (१७८) त्यधिकिच्च 'घपतो स्मिसानं संसा' ति (१७९) सुत्तेन सब्बनामिकविधाने सादसे सम्पत्ते, 'सब्बनामकारते पठमो', 'नाञ्ञं सब्बनामिकं' (१६६) त्यधिकिच्च इमिना बहुब्बीहिम्हि सब्बनामिकविधानं पटिसेधेत्वा, 'आय....' (१०९) त्यधिकिच्च 'घतो नादीनं' ति (१११) सस्स विभत्तिस्स सुद्धनामिकं आयादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावे कते रूपं; सत्तम्येकवचनं वा कत्वा, वुत्तनयेन सब्बनामिकविधाने सम्पत्ते, इमिना सब्बनामिकविधानस्स पटिसेधे कते, 'नेताहि स्मिमायया' ति (१८०) सुत्तेन आयमादेसे, सब्बनामतो सुद्धनामविधानपटिसेधे च सम्पत्ते इमिना व पटिसेधेत्वा, स्मिवचनस्स वुत्तनयेन सुद्धनामविधाने आयादेसे कते रूपं। पियपुब्बानं[3] ति वुत्तनयेन समासे कते, ततो नंविभत्तिं कत्वा, सब्बनामिकविधाने सम्पत्ते, इमिना पटिसेधे कते, सुद्धनामिकविधानेन रूपं भवेय्य[4]; न्यासे पन अञ्ञथा वुत्तं[5], तं विचारेतब्बं। पियपुब्बे ति पिया पुब्बा यस्सा ति अत्थे समासादिं कत्वा, पुब्बपदस्स पुम्भावातिदेसे कते, अञ्ञपदत्थपधानवसेन पुल्लिङ्गत्ता 'क्वचा'(४०५)-दिना उत्तरपदन्तस्स रस्सत्तं कत्वा, ततो स्मिविभत्तिम्हि कते, 'तयो नेव....' ति (११०) असमासे सब्बनामे सुद्धनामविधानपटिसेधे सम्पत्ते इमिना व नं पटिसेधेत्वा, 'स्मास्मिन्नं वा' ति (१०८) सुद्धनामविधाने कते रूपं। पियपुब्बस्सा ति सविभत्तिम्हि कते, सकारागमकरणमेव विसेसो; न्यासे पन अञ्ञथा वुत्तं[6]।

दक्खिणपुब्बस्सं त्यादीनि चग्गहणफलानि। तत्थ च दक्खिणा च पुब्बा चा ति द्वन्दवाक्यं कत्वा, समासादिम्हि कते, ततो स्मिवचनं कत्वा, चग्गहणेन सुद्धविधानस्स पटिसेधं कत्वा,'घो रस्सं....' ति(६६) घस्स रस्सत्तं कत्वा,'संसास्वेकवचनेसु चे' ति(६२)

1–2. तु०—क० न्या०, पि० १५७।

3-4. तु०—त०, पि० १५७-१५८।

5. त०, पि० १५८।

6. त०।

१६८. सब्बतो नं संसानं । २. ३. ८ ।

सब्बतो सब्बनामतो नं-वचनस्स सं-सानं इच्चेते आदेसा होन्ति। सब्बेसं, सब्बेसानं; सब्बासं, सब्बासानं; येसं, येसानं; यासं, यासानं; तेसं, तेसानं; तासं, तासानं; केसं, केसानं; कासं, कासानं; इमेसं, इमेसानं; इमासं, इमासानं; अमूसं, अमूसानं ।

नं ति किमत्थं ? सब्बस्स, यस्स[1], तस्स– एवं सब्बत्थ ।

सागमं कत्वा, न्यासे द्वन्दसमासवसेन वुत्तं[1] । रूपसिद्धियम्पन दक्खिणस्सा च पुब्बस्सा च यं अन्तरालं ति दिसन्तरालन्तबहुब्बीहिं कत्वा दक्खिणपुब्बस्सं ति रूपं वुत्तं[2] । इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव, सादेसमेवेत्थ विसेसो ।

१६८. सब्बतो नं संसानं[3] तिदं 'नाञ्ञं सब्बनामिकं' (१६६), 'बहुब्बीहिम्हि चा' ति (१६७) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'नाञ्ञं सब्बनामिकं', 'बहुब्बीहिम्हि चा' ति सुत्तेहि द्वन्दसमासट्ठाकारन्तबहुब्बीहिसमासट्ठाकारतो सब्बनामिकविधानस्स पटिसेधो कतो; एवं सति सब्बेसं सब्बेसानं त्यादिसु नंवचनस्स सब्बनामिकविधानानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, सब्बेसं सब्बेसानं त्यादिसु असमासेसु सब्बनामिकविधानानि भवन्ती ति दस्सेतुं, 'सब्बतो नं संसानं' ति वुत्तं । किमत्थमिदं ? सब्बतो सब्बनामतो नंवचनस्स संसानमादेसा होन्ती ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । सब्बतो ति अवधि, नं ति कारी, संसानं ति कारियं; विधिसुत्तं । सब्बनामग्गहणमिहानुवत्तते । अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व । सब्बग्गहणं अनुवत्तमानअवधिनिवत्तनत्थं[4] ।

सब्बेसं, सब्बेसानं ति एत्थ नम्हि कते, इमिना संसानमादेसे कत्वा, 'सुहिस्वकारो ए' (१०१) त्यधिकिच्च 'सब्बनामानं·····' ति (१०२) अकारस्स एत्ते कते रूपानि । सब्बासं, सब्बासानं ति इत्थियं आप्पच्चयकरणमेव विसेसो । केसं त्यादिसु किसद्दस्स ककारकरणमेव विसेसो । अमूसं, अमूसानं ति एत्थ 'योसु कत·····' (८८) त्यधिकिच्च 'सुनंहिसु चे' ति (८९) दीघकरणमेव विसेसो । सब्बस्स, यस्स, तस्सा त्यादिसु सति पि सब्बनामे नंवचनस्साभावा 'सब्बतो·····' (१६८) त्यादिना संसानमादेसो न होति ।

---

१. यस्स कस्स—सी० १, सी० २ ।

1. क० न्या०, पि० १५८ ।

2. रूप०, सु० २१० ।

3. तु०—"सब्बनामतो नं संसानं"—सद्द०, सु० ३५३ ।

4. तु०—"इध पन सब्बग्गहणं हेट्ठा अकारतो ति नियमेत्वा वुत्तत्ता तदपगमकरणत्थं"—क० न्या०, पि० १५६ ।

१६९. राजस्स राजु सुनंहिसु च । २. ३. ९ ।

सब्बस्स राजसद्दस्स राजु-आदेसो होति सु-नं-हि इच्चेतेसु । राजूसु, राजूनं, राजूहि, राजूभि ।

सुनंहिसु ति किमत्थं ? राजा ।

चसद्दग्गहणमवधारणत्थं—राजेसु, राजानं, राजेभि, राजेहि ।

---

१६९. राजस्स राजु* सुनंहिसु चे[1] ति इदं 'रञ्ञं नम्हि वा' (१३६), 'सुनंहिसु च' (८९), 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? रञ्ञं राजानं राजेसु राजेहि राजेभी त्यादिसु नम्हि सविभत्तिस्स राजसद्दस्स रञ्ञमादेसो च, राजानं ति नम्हि दीघत्तं च, सुहिसु राजसद्दन्तस्स एकारत्तं च वुत्तं; एवं सति राजूसु राजूनं राजूहि राजूभी त्यादीनि रूपानि कथं सिज्झेय्युन्ति पुच्छाय सति, सुनंहिसु राजसद्दस्स राजु-आदेसो पि होती ति दस्सेतुं, 'राजस्स⋯' ति वुत्तं । किमत्थमिदं ? सब्बस्स राजसद्दस्स राजु-आदेसो होति सु-नं-हि इच्चेतासु विभत्तिसू ति ञापनत्थं । चतुप्पदमिदं । राजस्सेति कारी, राजू ति कारियं, सुनंहिसू ति निमित्तसत्तमी, चा ति निवत्तनत्थं; सञ्ञा⋯पे०⋯विधिसुत्तं । अत्थवसा विभत्तिविपरिनामो ति कत्वा सब्बग्गहणं छट्ठ्यन्तवसेन सम्बन्धो होति[2] । अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व ।

राजूसू त्यादीन्युदाहरणानि । तत्थ च राजूसू ति राजसद्दतो सुविभत्तिम्हि कते, 'सब्बतो नं संसानं' (१६८) त्यधिकिच्च इमिना सब्बस्स राजसद्दस्स राजु-आदेसं कत्वा, 'योसु कत⋯' (८८) त्यधिकिच्च 'सुनंहिसु चे' ति दीघे कते रूपं । इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव । राजा ति किमुदाहरणं ? तम्पन सिम्हि कते, सति पि राजसद्दे एतेसमभावा 'स्या चे ति (१८९) सिवचनस्स आकारादेसे कते रूपं । राजेसु, राजानं, राजेहि, राजेभी ति चग्गहणफलानि[3]; तानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

---

* राजू—सी० (सब्बत्थ) ।

1. तु०—"राजस्स सु-नं-हिसु राजु"—सद्द०, सु० ३५४ ।
2. तु०—"सब्बग्गहण अत्थवसा विभत्तिविपरिनामतो छट्ठन्तवसेनेह सम्बन्धो होति"—क० न्या०, पि० १५९ ।
3. तु०—"अनेकत्थत्ता निपातानं चग्गहणस्स च निपातत्ता तप्फलं दस्सेन्तो 'चग्गहणमवधारणत्थं' ति आविमाह; तत्थ च अवधारणं नाम हेट्ठा वुत्तनयेन क्वचि निवत्तन"—त०, पि० १५९-१६०; "क्वचि समासुत्तरपदत्थे राजादयो पुरिसनया"—सद्द०, सु० ३५५; सद्दनीतिपदमालायं राजसद्दविसये एवं विचारमागतं—"राजा, राजा राजानो⋯भो राजा, भवन्तो राजानो भवन्तो राजा इति वा । अयमम्हाकं रुचि । निरुत्तिपिटकादिसु राजा ति

१७०. सब्बस्सिमस्से वा । २. ३. १० ।

सब्बस्स इमसद्दस्स एकारो होति वा सु-नं-हि इच्चेतेसु । एसु, इमेसु; एसं, इमेसं; एहि, इमेहि ।

इमस्सेति किमत्थं ? एतेसु, एतेसं, एतेहि ।

---

१७०. सब्बस्सिमस्से वा[1] ति इदं 'सुहिस्वकारो ए' (१०१), 'सब्बनामानं नम्हि चे' ति (१०२) सुत्तेहि निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं ? इमेसु इमेहि इमेसं त्यादिसु सु-हि-नंसु इमसद्दन्तस्सेकारं च कत्वा इमेसु इमेही ति च, इमेसं इमेसानं ति च वुत्तं; एवं सति एसु एहि एसं त्यादीनि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, स-नं-हिसु इमसद्दस्सेकारं च कत्वा तानि रूपानि सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'सब्बस्सिमस्से वा' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बस्स इमसद्दस्स एकारो होति सु-नं-हि इच्चेतेसु परेसु विकप्पेना ति ञापनत्थं। चतुप्पदमिदं। सब्बस्सा ति तब्बिसेसनं, इमस्सा ति सम्बन्धछट्ठीकारी, ए ति कारियं, वा ति विकप्पनत्थं; विधिसुत्तं। सुनंहिग्गहणमिहानुवत्तते। अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व।

एसू त्याद्युदाहरणानि। तत्थ च एसू ति इमसद्दतो सुविभत्तिं कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना सुविभत्तिम्हि सब्बस्सेव इमसद्दस्सेकारे कते रूपं। एसं ति नंवचनं कत्वा, तस्स समादेसे कते रूपं। एही ति हिम्हि कते रूपं। वाग्गहणफलानि सुविञ्ञेय्यानेव। एतेसू त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तानि पन एतसद्दतो स्वादिम्हि कते, सन्तेसु पि सु-नं-हि इच्चेतेसु, इमसद्दस्साभावा इमिनाकत्वा, वुत्तनयेन सु-नं-हि विभत्तियो कत्वा, एकारादेसे कते रूपानि।

बहुवचनं न आगतं, चूळनिरुत्तियं पन आगतं। किञ्चा पि निरुत्तिपिटकादिमु न आगतं, तथा पि 'नेतादिसा सखा होन्ति, लब्भा मे जीवतो सखा' ति (जा० अ०, भा० ३, ३२३) पाळियं बहुवचनेकवचनवसेन सखा ति पदस्स दस्सनतो राजा ति बहुवचनं इच्छितब्बमेव....."—सद्द०, भा० १, १५३-१५७।

1. तु०—"इवस्से सब्बस्स"—सद्द०, सु० ३५६; वुत्तियम्पन तत्थ अस्स वेय्याकरणं एवं कतं—"इदसद्दस्स सब्बस्सेव एकारो होति वा सु-नं-हि इच्चेतेसु। इदसद्दस्स पकतिभावो 'इदप्पच्चयता पटिच्चसमुप्पादो' ति पाळिवसेन विञ्ञायति, इमेसं पच्चया ति हि इदप्पच्चया, इदप्पच्चया एव इदप्पच्चयता। एसु इमेसु, एसं इमेसं, एहि इमेहि"; सद्दनीतिपदमालायं तु एवं विचारमागतं—'कच्चायने तु 'इमस्सिदमंसिसु नपुंसके' ति इमसद्दो येव पकतिभावेन वुत्तो, इध पन इदंसद्दो येव; 'इदप्पच्चयता' ति एत्थ इदं ति पकतिया दस्सनतो...'—सद्द०, भा० १, पि० २७७; "हलि लोपः"—पा० ७. २. ११३, "बहुवचने झल्येत्"—त०, ७. ३. १०३।

१७१. अनिमि नाम्हि च । २. ३. ११ ।

इमसद्दस्स सब्बस्सेव अन-इमि-आदेसा होन्ति नाम्हि विभत्तिम्हि । अनेन धम्मदानेन सुखिता होतु[1] सा पजा, इमिना बुद्धपूजेन पत्वान अमतं पदं ।

नाम्ही ति किमत्थं ? इमेसु, इमेसं, इमेहि ।

चसद्दग्गहणं[2] वाग्गहणनिवत्तनत्थं ।

१७२. अनपुंसकस्सायं सिम्हि । २. ३. १२ ।

इमसद्दस्स सब्बस्सेव अनपुंसकस्स अयं-आदेसो होति सिम्हि विभत्तिम्हि । अयं पुरिसो, अयं इत्थी[3] ।

अनपुंसकस्सेति किमत्थं ? इदं चित्तं तिट्ठति[4] । सिम्ही ति किमत्थं ? इमं पुरिसं पस्ससि त्वं[5] ।

---

१७१. अनिमि नाम्हि चा[1] ति इदं 'अतो नेना' ति (१०३) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं ? 'अतो नेना' ति एत्थ इमसद्दतो ततियेकवचने कते, तस्स एनादेसे कते, इमेना ति रूपं भवेय्य; एवं सति अनेन इमिना ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, इमसद्दतो ततियेकवचने कते, इमिना नावचने परे अन-इमि आदेसे कत्वा तानि रूपानि होन्ती ति दस्सेतुं, 'अनिमि नाम्हि चे' ति वुत्तं। किमत्थमिदं ? सब्बस्स इमसद्दस्स नाम्हि विभत्तिम्हि अन-इमि इच्चेते आदेसा होन्ती ति ञापनत्थं। तिपदमिदं। अनिमी ति कारियं, नाम्ही ति निमित्तसत्तमी, चा ति निवत्तनं। सब्बग्गहण-इमग्गहणानि वत्तन्ति। अत्थो सुविञ्ञेय्यो व। अन च इमि च अनिमि।

उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव। इमेसू त्यादीनि किमुदाहरणानि ? तानि पन* इमसद्दतो सुविभत्त्यादीनि** कत्वा, सति पि इमसद्दे, नाविभत्तियाभावा अन-इमि-आदेसमकत्वा, अकारस्सेकारादिम्हि कते रूपानि।

१७२. अनपुंसकस्सायं सिम्ही[2] ति इदं 'सो' (१०४), 'स्या चे' ति (१८९)

---

१. होन्ति—से०। २. चग्गहणं—से०। ३. इत्थि—सी० २।
४. से० पोत्थके नत्थि। ५. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि।

* सी० पोत्थके नत्थि। **. सुविभत्यादीनि—सी०।

1. तु०—"नाम्हि अनिमि"—सद्द०, सु० ३५७; "दश्च"—पा० ७. २. १०९; "अनाप्यकः"—त०, ७. २. ११२।
2. तु०—"सिम्हायमनपुंसकस्स"—सद्द०, सु० ३५८, "अयमनपुंसकस्स निच्चं"—त०, सु० ३०६; त०, भा० १, पि० ९५-९८; "इदोऽय्पुंसि"—पा० ७. २. १११।

१७३. अमुस्स मो सं । २. ३. १३ ।

अमुसद्दस्स अनपुंसकस्स मकारो सकारमापज्जते वा सिम्हि विभत्तिम्हि । असु राजा, अमुको राजा; असु इत्थी, अमुका इत्थी ।

अनपुंसकस्सेति किमत्थं ? अदुं पुप्फं विरोचति । अमुस्सेति किमत्थं ? अयं पुरिसो तिट्ठति । सिम्ही ति किमत्थं ? अमुं पुरिसं पस्ससि ।

सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? इमसद्दतो सिम्हि कते इमो ति वा इमा ति वा रूपानि भवेय्युं; एवं सति पुमित्थिलिङ्गेसु अयमिति रूपं कथं भवेय्या ति पुच्छाय सति, सिम्हि पुमित्थिलिङ्गेसु अयमादेसं कत्वा अयमिति रूपं होती ति दस्सेन्तेन, 'अनपुंसकस्सायं सिम्हो' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? सब्बस्स इमसद्दस्स अनपुंसकस्स सिम्हि अयमादेसो होती ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । अनपुंसकस्सेति कारी, अयं ति कारियं, सिम्ही ति निमित्तसत्तमी; विधिसुत्तं । सब्बग्गहणञ्च इमग्गहणञ्च वत्तते । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । इत्थी च पुमा च इत्थिपुमं, न इत्थिपुमं ति अनपुंसकं, 'तेसु वुद्धी....' ति (४०६) आदिना इत्थिपुमसद्दस्स नपुंसकादेसो ।

अयं त्युदाहरणं । तत्थ च इमसद्दतो सिम्हि कते, 'सब्बस्सिमस्से वा' (१७०) त्यधिकिच्च इमिना पुमित्थिलिङ्गेसु इमसद्दस्स अयमादेसं कत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपं । इदं चित्तं ति एत्थ इमसद्दतो सिम्हि कते, सति पि सिम्हि परे इमसद्दे, अनपुंसकस्साभावा इमिनाकत्वा, 'इमस्सिदमंसिसु....' ति (१२९) सविभत्तिस्स इमसद्दस्स इदमादेसे कते रूपं । इमं पुरिसं ति एत्थ इमसद्दतो अम्हि कते, सति पि इमसद्दे सिस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, सरलोपपकतिभावे कते रूपं ।

१७३. अमुस्स मो सं[1] ति इदं 'सेसतो लोपं गसिपी' ति (२२०) सुत्ततो निक्खन्तं । असु* राजा त्यादिसु अमुसद्दतो सिविभत्तिम्हि कते, 'सेसतो लोपं....' ति सुत्तेन सिम्हि लुत्ते अमू ति रूपमेव भवेय्य; एवं सति असु राजा त्यादीनि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, असू ति अमुसद्दतो सिम्हि कते, मकारस्स सकारं कत्वा असू ति रूपम्पि भवती ति दस्सेन्तेन, 'अमुस्स मो सं' ति वुत्तं । किमत्थमिदं ? अनपुंसके वत्तमानस्स अमुसद्दस्स मकारो सकारमापज्जते सिम्हि विकप्पेना ति ञापनत्थं । तिपदमिदं । अमुस्सा ति अवयवापेक्खछट्ठी, मो ति कारी, सं ति कारियं; विधिसुत्तं ।

---

* असू–सी० ।

1. तु०—"अमुनो मो सं"—सद्द०, सु० ३५६; "तदोः सः सावनन्त्योः"—पा० ७. २. १०६ ।

१७४. एततेसं तो । २. ३. १४ ।

एत-त इच्चेतेसं अनपुंसकानं तकारो सकारमापज्जते सिम्हि विभत्तिम्हि । एसो पुरिसो, एसा इत्थी; सो पुरिसो, सा इत्थी ।

एततेसमिति[1] किमत्थं ? इतरो पुरिसो, इतरा इत्थी । अनपुंसकानमिति[2] किमत्थं ? एतं चित्तं, तं चित्तं; एतं रूपं, तं रूपं ।

वाग्गहणञ्च अनपुंसकग्गहणञ्च सिग्गहणञ्च मण्डूकगतिया वत्तते[1]। अत्थो सुविञ्ञेय्यो व ।

असू ति उदाहरणं । तं पन अमुसद्दतो सिम्हि कते, सरतो वियोजेत्वा, 'अनपुंसकस्सायं सिम्हि' (१७२), 'सब्बस्सिमस्से वा' (१७०) त्यधिकिच्च इमिना मकारस्स सकारं कत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपं । अमुको ति एत्थ अमुसद्दतो सिविभत्तिं कत्वा, 'सब्बतो को' ति (१७८) ककारागमं कत्वा, सति पि सिम्हि परे अमुसद्दे, वासद्देन निवारितत्ता सिस्सोकारादेसे कते रूपं । इतरस्मिं आप्पच्चयकरण-सिलोपकरणमेव विसेसो । अदुं ति अमुसद्दतो सिविभत्तिं कत्वा, सति पि सिम्हि परे अमुसद्दे, अनपुंसकस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'अमुस्सादुं' ति (१३०) सविभत्तिस्स अदुमादेसे कते रूपं । इतरं सुविञ्ञेय्यमेव । अमुं ति एत्थ सति पि अनपुंसके इमसद्दे सिस्साभावा ।

१७४. एततेसं तो[2] ति इदं 'सेसतो लोपं गसिपी' ति (२२०) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? एसो सो एसा सा त्यादिसु* एत-त-सद्देहि सिम्हि कते, सिस्सोकारं कत्वा एतो ति वा तो ति वा, सिलोपं कत्वा एता ति** वा** ता ति वा रूपानि भवेय्युं; एवं सति एसो ति वा सो ति वा, एसा ति वा सा ति वा रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, एत-तसद्देहि सिम्हि कते, एत-तसद्दानं तकारस्स सकारं कत्वा एसो सो एसा सा ति रूपानि होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'एततेसं तो' ति वुत्तं । किमत्थमिदं ? अनपुंसके वत्तमानानं एत-त इच्चेतेसं तकारो सकारमापज्जते सिम्हि विभत्तिम्ही ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । एततेसं ति अवयवापेक्खछट्ठी +, तो ति कारी; विधिसुत्तं । अनपुंसकग्गहणञ्च सिग्गहणञ्च वत्तते[3] । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । एतं च तं च एतते, 'द्वन्दट्ठा वा' ति (१६५) द्वन्दे यो पठमस्सेकारो, तेसं ।

---

१. एतेस्विति--से० । २. अनपुंसकस्सेति--से०; अनपुंसकेति--सी० २ ।

*. ०वीसु—सी० । **-** सी० पोत्थके नत्थि । +. ० छट्ठि-सी० ।

1. तु०—क० न्या० पि० १६१ ।

2. तु०—"तेत-तेसं"—सद्द०, सु० ३६०; पा० ७. २. १०६ ।

3. तु०-"अनपुंसकग्गहणञ्च सिम्हिग्गहणञ्च संगहणञ्च वत्तते"-क० न्या०, पि०१६२ ।

१७५. तस्स वा नत्तं सब्बत्थ । २. ३. १५ ।

तस्स सब्बनामस्स तकारस्स नत्तं होति वा सब्बत्थ लिङ्गेसु । नाय, ताय; नं, तं; ने, ते; नेसु, तेसु; नम्हि, तम्हि; नाभि[1], ताभि[1]; नाहि, ताहि ।

एसो त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ च एतसद्दतो सिम्हि कते, तकारं अकारतो वियोजेत्वा, 'अनपुंसकस्सायं सिम्हि' (१७२), 'अमुस्स मो सं' (१७३) त्यधिकिच्च इमिना सकारं कत्वा, सिस्सोकारादिम्हि कते रूपं । इतरं वुत्तनयमेव । एसा ति च एतसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपं । किमुदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

१७५. तस्स वा नत्तं सब्बत्था[1] ति इदं 'एततेसं तो' ति (१७४) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? एसो सो एसा त्यादिसु सिम्हि द्वीसु लिङ्गेसु एत-त इच्चेतेसं सकारादेसो वुत्तो; एवं सति सेसासु विभत्तिसु सब्बत्थलिङ्गेसु ने ते नं तं ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, सब्बत्थ लिङ्गेसु सेसासु विभत्तिसु तकारस्स नकारं कत्वा तानि रूपानि होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'तस्स वा.....' ति वुत्तं । किमत्थमिदं ? तस्स सब्बनामस्स तकारस्स नत्तं होति सब्बत्थ लिङ्गेसु सब्बासु विभत्तिसु विकप्पेना ति ञापनत्थं । चतुप्पदं । तस्सा ति कारी, वा ति विकप्पनत्थं, नत्तं ति कारियं, सब्बत्था ति आधारसत्तमी । सब्बग्गहण-तग्गहणानि वत्तन्ति[2] । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । अनुवत्तमाने तग्गहणे पुन तग्गहणं एतग्गहणनिवत्तनत्थं[3] ।

नाया त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ नाया ति तसद्दतो 'इत्थियमतो आप्पच्चयो' ति (२३७) आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावं कत्वा, ततो पि नाविभत्तिं कत्वा, 'सब्बनामकारते पठमो' (१६४), 'एततेसं तो' (१७४) त्यधिकिच्च इमिना तस्स नकारं कत्वा, आकारस्स घसञ्ञं कत्वा, 'आय.....'(१०९) त्यधिकिच्च 'घतो नादीनं' ति (१११) आयादेसे कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं । नं ति तसद्दतो अम्हि इमिना तकारस्स नकारे कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं । ने ति तसद्दतो पठमाबहुवचनं कत्वा, इमिना तकारस्स नकारं कत्वा, 'वा य्वप्पठमो' (१६२) त्यधिकिच्च 'सब्बनामकारते पठमो' ति योवचनस्सेत्ते कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं; दुतियाबहुवचने 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७)

१-१. से० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—"नत्तं तस्स वा सब्बलिङ्गेसु"—सद्द०, सु० ३६१; "इध सासनयुत्तिया पवतो परस्सेव तकारस्स नकारादेसो अवगन्तब्बो"—त०, वु० ।

2-3. तु०—'सब्बनामग्गहणञ्च तग्गहणञ्च वत्तते...अनन्तरसुत्ते सति पि तग्गहणे इध तग्गहणकरणं तसद्दस्सेव संगहणत्थं"—क० न्या०, पि० १६२ ।

१७६. सस्मास्मिसंसास्वत्तं । २. ३. १६ ।

तस्स सब्बनामस्स तकारस्स सब्बस्सेव अत्तं होति वा स-स्मा-स्मि-सं-सा इच्चेतेसु सब्बत्थ लिङ्गेसु । अस्स, तस्स; अस्मा, तस्मा; अस्मि, तस्मि; अस्सं, तस्सं; अस्सा, तस्सा ।

तकारस्सेति किमत्थं ? अमुस्सं, अमुस्सा । एतेस्विति किमत्थं ? नेसु, तेसु ।

तस्सेकारकरणमेव विसेसो । नेसु, तेसू ति वुत्तसदिसमेव, 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) एकारकरणमेव विसेसो । नम्हि, तम्ही ति स्मिविभत्तिकरणमेव विसेसो । नाभि, ताभी ति इत्थियं आप्पच्चयकरणमेव विसेसो ।

१७६. स्मास्मिसंसास्वत्तं[1] ति इदं 'तस्स वा नत्तं सब्बत्था' ति (१७५) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'तस्स वा·····' ति सुत्तेन सिविभत्तितो सेसासु विभत्तिसु* तकारस्स नत्तं वुत्तं; एवं सति तकारतो स-स्मा-स्मि-सं-सासु अस्स अस्मा अस्मि त्यादीनि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, स-स्मा-स्मि-सं-सासु तकारस्स अत्तं कत्वा तानि रूपानि पि होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'सस्मास्मि·····' ति वुत्तं । किमत्थमिदं ? तस्स सब्बनामतकारस्स सब्बस्सेव अकारो होति स-स्मा-स्मि-सं-सासु विभत्तिसु सब्बलिङ्गेसु विकप्पेना ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । सस्मास्मिसंसासू ति निमित्तसत्तमी, अत्तं ति कारियं; विधिसुत्तं । सब्बनामग्गहणञ्च तग्गहणञ्च वाग्गहणञ्च सब्बत्थग्गहणञ्च वत्तते[2] । अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व ।

अस्सा त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ अस्सा ति तसद्दतो सविभत्तिं कत्वा, 'सब्बनामकारते पठमो' (१६४), 'सब्बस्सिमस्से वा' (१७०), 'तस्स वा·····' (१७५) त्यधिकिच्च इमिना तकारस्सत्तं कत्वा, सकारागमे कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं । अस्मा, तस्मा, अस्मि, तस्मि त्यादीनि सुविञ्ञेय्यानेव । अस्सं, अस्सा ति तकारतो आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, 'सब्बनामकारते पठमो', 'तस्स वा·····', 'सब्बतो को' (१७८) त्यधिकिच्च 'घपतो स्मिसानं·····' ति (१७९) स्मिसानं संसादेसं कत्वा, तस्स-सद्दस्स च अत्ते कते, 'सागमो से' (६१) त्यधिकिच्च 'संसास्वेक·····' ति (६२) सकारागमे कते रूपानि । इतरानि वाग्गहणफलानि । अमुस्सं, अमुस्सा त्यादिसु सन्तेसु पि संसासु, तकारस्साभावा; नेसु, तेसू त्यादिसु सति पि तकारे, एतेसं अभावा ।

---

* विभत्तीसु—सी० ।

1. तु०—"अत्तं स-स्मा-स्मि-सं-सासु"—सद्द०, सु० ३६२; "त्यदादीनामः"–पा०७.२.१०२ ।

2 तु०—क० न्या०, पि० १६३ ।

१७७. इमसद्दस्स च । २. ३. १७ ।

इमसद्दस्स सब्बस्सेव अत्तं होति वा स-स्मा-स्मिं-सं-सा इच्चेतेसु सब्बत्थ लिङ्गेसु । अस्स, इमस्स; अस्मा, इमस्मा; अस्मिं, इमस्मिं; अस्सं, इमिस्सं; अस्सा, इमिस्सा ।

इमसद्दस्सेति किमत्थं ? एतिस्सं, एतिस्सा ।

चसद्दग्गहणं अत्तमनुकड्ढनत्थं ।

१७८. सब्बतो को । २. ३. १८ ।

सब्बतो सब्बनामतो ककारागमो होति वा सिम्हि[1] विभत्तिम्हि[1] । सब्बको, यको, सको, अमुको, असुको ।

वा ति किमत्थं ? सब्बो, यो, सो, को । सब्बनामतो ति किमत्थं ? पुरिसो ।

पुन सब्बतोग्गहणेन अञ्ञस्मा पि ककारागमो होति । हीनको, पोतको ।

---

१७७. इमसद्दस्स चा[1] ति इदं 'ततो च विभत्तियो' (५४), 'सस्मा·····' ति (१७६) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'ततो च·····' ति इमिना इमसद्दतो स्मा-स्मिंवचने कते स-स्मा-स्मिं-सं-सासु सब्बनामतकारस्स अकारत्तं वुत्तं; एवं सति अस्स अस्मा अस्मिं अस्सं अस्सा त्यादीनि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, इमसद्दस्स च स-स्मा-स्मिं-सं-सासु परेसु अकारत्तं कत्वा अस्स अस्मा अस्मिं अस्सं अस्सा त्यादीनि रूपानि भवन्ती ति दस्सेन्तेन, 'इमसद्दस्स चा' ति वुत्तं । द्विपदमिदं । इमसद्दस्सा ति सम्बन्धछट्ठीकारी, चा ति अत्तग्गहणानुकड्ढननिद्देसो[2] । उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

१७८. सब्बतो को[3] ति इदं 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'ततो च·····' ति सुत्तेन सब्बनामभूतेहि सब्बादिसद्देहि सिम्हि कते सब्बो

१-१. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि ।

1. तु०—"इदसद्दस्स च"—सद्द०, सु० ३६३; पा० ७.२.१०२ ।

2. तु०—"सब्बग्गहणञ्च वाग्गहणञ्च सब्बत्थग्गहणञ्च स-स्मा-स्मिं-सं-साग्गहणञ्च अत्तग्गहणञ्च वत्तते"—क० न्या०, पि० १६४ ।

3. तु०—"सब्बनामतो ककारागमो यथातन्ति"—सद्द०, सु० ३६४; पदमालाय अस्स विवरणं एवं आगतं—"ककारागमवसेन अञ्ञानि पि असब्बनामिकरूपानि भवन्ति, तेसं वसेन अयं लिङ्गत्तयस्स नामिकपदमाला वुच्चते—असुको असुका···ति आदिना अमुको

१७९. घपतो स्मिसानं संसा । २. ३. १९ ।

सब्बतो सब्बनामतो घ-प-सञ्ञातो स्मि- स इच्चेतेसं सं-सा-आदेसा होन्ति वा यथासङ्ख्यं । सब्बस्सं, सब्बस्सा; सब्बायं, सब्बाय; इमिस्सं, इमिस्सा; इमायं[1], इमाय; अमुस्सं, अमुस्सा; अमुयं, अमुया ।

सब्बनामतो ति किमत्थं ? इत्थियं, इत्थिया । स्मिसानमिति किमत्थं ? अमुयो ।

यो को त्यादीनि रूपानेव भवेय्युं; एवं सति सब्बको त्यादीनि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, सब्बनामेहि ककारागमं कत्वा सब्बको त्यादीनि रूपानि सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'सब्बतो को' ति वुत्तं । द्विपदमिदं । सब्बतो ति अवधि, को ति विसयी ।

उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव । पुरिसो ति एत्थ सति पि नामे, सब्बनामस्सा-भावा ककारागसो न होति; 'सब्बतो नं संसानं' ति (१६८) एत्थ सति पि सब्बसद्दे इमस्स सब्बसद्दस्स पुन गहितत्ता वुत्तं—"पुन सब्बतोग्गहणेने" ति[1] ।

१७९. घपतो स्मिसानं संसा[2] ति इदं 'घतो नादीनं' (१११), 'पतो या' ति (११२) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? सब्बनामभूतेहि सब्बादिसद्देहि आप्पच्चयं कत्वा, तस्स घसञ्ञं कत्वा, 'ते इत्थिख्या पो' ति (५९) अमुसद्दन्तस्स पसञ्ञं च कत्वा, 'पतो या' ति यादेसं च कत्वा सब्बाय ताय अमुया त्यादीनि रूपानि एव भवेय्युं; एवं सति सब्बस्सं सब्बस्सा अमुस्सं अमुस्सा त्यादीनि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, सब्बनामेहि घ-प-सञ्ञेहि स्मि-स्मानं सं-सादेसं कत्वा सब्बस्सं सब्बस्सा अमुस्सं अमुस्सा त्यादीनि रूपानि सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'घपतो.....' ति वुत्तं । तिपदमिदं । घपतो ति

अमुका...ति आदिना च पुरिसनयो पि लब्भति, असुका असुकायो...ति आदिना अमुका अमुकायो...ति आदिना च कञ्ञानयो पि लब्भति, अमुकं असुकानि...ति आदिना अमुकं अमुकानि...ति आदिना च चित्तनयो पि लब्भति । इमानेत्थ पदानि असब्बनामिकानि पि ककारागमवसेन नानत्तदस्सनत्थं वुत्तानि"—त०, भा० १, पि० २७८; तु०—"अव्ययसर्वनाम्नामकच्प्राक्टेः"—पा० ५.३.७१ ।

१. इमासं—सी० २ ।

1. तु०—"'सब्बतो नं संसानं' ति एत्थ सति पि सब्बतोग्गहणे पुन सब्बतोग्गहणे पयोजनं सयमेव वक्खति"—क० न्या०, पि० १६४ ।

2. तु०—"घ-पेहि स्मि-सानं सं-सा"—सद्द०, सु० ३६५; "सर्वनाम्नः स्याड्ढ्रस्वश्च"—पा० ७.३.११४ ।

१८०. नेताहि स्मिमामया । २. ३. २० ।

एताहि सब्बनामाहि घ-प-सञ्ञातो स्मिं-वचनस्स नेव आय-या-आदेसा होन्ति । एतिस्सं, एतायं; इमिस्सं, इमायं; अमुस्सं, अमुयं[1] ।

स्मिमिति[2] किमत्थं ? ताय इत्थिया मुखं । एताही ति किमत्थं ? कञ्ञाय, गङ्गाय, वीणाय, सद्धाय ।

अवधि, स्मिंसानं ति सम्बन्धछट्ठीकारी, संसा ति कारियं[1] । उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

१८०. नेताहि स्मिमायया[3] ति इदं 'घतो नादीनं' (१११), पतो या' ति (११२) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'घतो नादीनं' ति इमिना घतो परासं नादीनमेकवचनानं आयादेसो वुत्तो, 'पतो या' ति च पतो परासं तासं यादेसो वुत्तो; एवं सति सब्बनाम-घ-प-सञ्ञेहि स्मिंवचने परे सब्बाय ताय अमुया ति रूपानेव भवेय्युं, सब्बस्सं अमुस्सं त्यादीनि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, सब्बनाम-घ-प-सञ्ञेहि स्मिम्हि परे इमिना पटिसेधं कत्वा सब्बस्सं अमुस्सं त्यादीनि रूपानि पि सिज्झन्ती ति दस्सेन्तेन, 'नेताहि....' ति वुत्तं । किमत्थमिदं ? एताहि सब्बनामाहि घ-प-सञ्ञाहि स्मिंवचनस्स 'घतो नादीनं', 'पतो या' ति सुत्तेहि सम्पत्ता आय-यादेसा नेव होन्ती ति ञापनत्थं । चतुप्पदमिदं । ना ति पटिसेधनं, एताही ति अवधि, स्मिं ति कारी, आयया ति कारियं, पटिसेधविधिसुत्तं । सब्बनाम-घ-प-सद्दानं अनुवत्तमाने पि पुन एताही ति अनुकड्ढितवचनं उपरि नानुवत्तनत्थं[3] ।

एतिस्सं त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ च एतिस्सं ति एतसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, ततो स्मिंवचनं कत्वा, 'सब्बनामकारते पठमो' (१६४), 'घपतो....' (१७९) त्यधिकिच्च इमिना पटिसेधेत्वा, 'घपतो....' ति समादेसं कत्वा, 'एतिमासमी' ति (६३) आकारस्सिकारं कत्वा, 'संसास्वेक....' ति (६२) सागमे कते रूपं । एतायं ति एत्था पि

---

१. अमुया—सी० २ । २. स्मिन्ति—से०, सी० १ ।

1. न्यासे "सब्बग्गहणञ्च वाग्गहणञ्च वत्तते" ति पि आगतो—द०—क०न्या०, पि० १६५ ।
2. तु०—"(मतन्तरे) घ-पेहि स्मिं नाय-या "—सद्द०, सु० ३६६ ।
3. तु०—"चतुप्पदमिदं...एत्थ च 'स्मिनो आयया' ति वत्तब्बे 'सब्बासमावुसोपसग्गनिपातादीहि चे' ति एत्थ आदिग्गहणेन विभत्तिलोपं कत्वा एवं वुत्तन्ति दट्ठब्बं"—क० न्या०, पि० १६६ ।

१८१. मनोगणादितो स्मिन्नानमिआ । २. ३. २१ ।

तस्मा मनोगणादितो स्मिं-नानं[1] इच्चेतेसं इकार-आकारादेसा होन्ति वा यथासङ्ख्यं । मनसि, मनस्मिं; सिरसि, सिरस्मिं; मनसा, मनेन; वचसा, वचेन; सिरसा, सिरेन; सरसा[2], सरेन[2]; तपसा, तपेन; वयसा, वयेन; यससा, यसेन; तेजसा, तेजेन; उरसा, उरेन; तमसा, तमेन ।

स्मिन्नानमिति किमत्थं ? मनो, सिरो, तपो, तमो, तेजो ।

आदिग्गहणेन अञ्ञस्मा[3] पि[3] स्मिं-नानं इकार-आकारादेसा होन्ति । बिलसि, बिलसा; पदसि, पदसा ।

इमिना पटिसेधेत्वा, 'घपतो स्मिं यं वा' ति (२१६) स्मिंवचनस्स यमादेसे कते रूपं । इतरानि तस्सदिसानि । ताया ति किमुदाहरणं । तं पन तसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, छट्ठेकवचनञ्च कत्वा, स्मिंवचनस्साभावा इमिना पटिसेधमकत्वा, घतो आयादेसे कते रूपं । वाधिकारत्ता दक्खिणाय त्यादिसु पटिसेधो न भवति । इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

१८१. मनोगणादितो स्मिन्नानमिआ[1] तिदं 'अतो नेन' (१०३), 'स्मास्मिन्नं वा' ति (१०८) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? मनोगणादिसद्देहि स्मि-ना-वचनेसु कतेसु, तेहि सुत्तेहि मने मनेन त्यादीनि रूपानेव भवेय्युं; एवं सति मनसि मनसा त्यादीनि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, मनोगणादीहि परासं स्मिन्नानं इ-आ-आदेसं कत्वा तानि रूपानि पि होन्ती ति दस्सेन्तेन, 'मनोगणदितो....' ति वुत्तं । एत्थ च

> "एवं वचो वयो तेजो तपो चेतो तमो यसो ।
> अयो पयो* सिरो सरो उरो रहो नदो पि च"[2] ॥ ति ।

वुत्तो मनोगणो नाम[3] । बिलपदादयो मनोगणादि + नाम । तिपदमिदं । मनोगणादितो ति अवधि, स्मिन्नानं ति कारी, इआ ति कारियं; विधिसुत्तं । वाग्गहणञ्चानुवत्तते । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व ।

---

१. स्मि ना—से०, सी० १ । २-२. से० पोत्थके नत्थि । ३-३. अञ्ञेहीपि—से० ।

*. मयो—सी० । +. ०गणादी—सी० ।

1. तु०—"मनोगणादीहि वा स्मिनो इ, ना-स्मानमा"—सद्द०, सु० ३७३ ।
2. तु०—रूप०, सु० ६७ ।
3. तु०—रूप०, त०; "मनोगणो च नाम—

१८२. सस्स चो । २. ३. २२ ।

तस्मा मनोगणादितो सस्स च[1] ओकारो होति । मनसो, तपसो, थामसो[2] ।

चसद्दग्गहणेन* अब्यग्गमनसो नरो ति आदिसु मनसद्दतो सिस्सो[3] होति[4]—एवं यम्हि यम्हि कते यं यं सिज्झति तं तं इध चसद्देन कातब्बं । अब्यग्गं मनं यस्स सो अब्यग्गमनसो**[5] ।

मनसी त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ मनसी ति मनसद्दतो स्मिंवचने कते, 'तस्स वा नत्तं....' (१७५) त्यधिकिच्च इमिना स्मिंवचनस्सिकारं कत्वा, इदमेवाधिकिच्च 'स सरे वागमो' ति (१८४) सकारागमे कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं; इतरं तस्सदिसं । मनसा ति मनसद्दतो नावचने कते, तस्स आकारादेसे च सकारागमे च कते रूपं । इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव । पदसि, पदसा, बिलसि, बिलसा ति आदिग्गहणफलानि । तत्थ च 'स सरे वागमो' ति एत्थ अनुवत्तमानआदिग्गहणेन सकारागमो व विसेसो[1] ।

१८२. सस्स चो[2] तिदं 'सागमो से' ति (६१) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'सागमो से' ति सुत्तेन अकारन्तेहि मनोगणादिसद्देहि पि सागमो वुत्तो; एवं सति मनसो तपसो त्यादीनि रूपानि कथम्भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, अकारन्तेहि मनोगणादिसद्देहि पि सस्स विभत्तिस्स ओकारादेसं कत्वा तानि रूपानि होन्ती ति दस्सेन्तेन,

---

मनो वचो वयो तेजो तपो चेतो तमो यसो ।
अयो पयो सिरो छन्दो सरो उरो रहो अहो ।।

इमे सोळस...''—सद्द०, भा० १, पि० ९९-१०४; कारिका०, गा० १८३; ''मन, तम, तप, तेज, सिर, उर, वच, ओज, रस, यस, पय, (जलासयवाचि) सर, (अक्खयवाचि) वय, (लोहवाचि) अय, (पटवाचि) वास, (मनोवाचि) चेत, छन्द इति मनादि [अञ्ञे हि तु...दट्ठब्बा]''—पालि महा०, पि० ४१९-४२० ।

१. सी० १ पोत्थके नत्थि । २. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । *-**. से० पोत्थके नत्थि । ३. सिस्सोकारादेसो—सी० १ । ४. होति; मनसा पकतं मनोमयं; सेसाकारादेसो होति—सी० २ । ५. ०तमसो—सी०२ ।

1. तु०—''एत्थ च मनोगणतो 'स्मिनानमिआ' ति वुत्ते येव सिद्धे आदिग्गहणमत्थन्तरविञ्ञापनत्थं, गणसद्दस्सेव हि मनोपभुतीनं सङ्गहणतो''—क० न्या०, पि० १६६ ।

2. तु०—''ओ अस्स''—सद्द०, सु० ३७४ ।

१८३. एतेसमो लोपे । २. ३. २३ ।

एतेसं मनोगणादीनमन्तो ओत्तमापज्जते विभत्तिलोपे कते । मनोमयं, अयोमयं, तेजोसमेन, तपोगुणेन, सिरोरुहो[1] ।

आदिग्गहणेन अञ्ञेसमन्तो ओत्तमापज्जते । आपोसमेन, वायोसमेन ।

लोपे ति किमत्थं ? पदसा, मनसा, तपसा, यससा, वचसा; एवमञ्ञे पि योजेतब्बा ।

'सस्स चो' ति वुत्तं। तिपदं। सस्सा ति छट्ठीकारी, ओ ति कारियं, चा ति समुच्चयो; विधिसुत्तं; मनोगणादिग्गहणमनुवत्तते ।

मनसो, तपसो, थामसो त्युदाहरणानि । तत्थ च मन-तप-थामसद्देहि सविभत्तिं कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना सस्स ओकारं कत्वा, हेट्ठा वुत्तनयेन सकारागमे कते रूपानि । अब्यग्गमनसो नरो, कस्सपस्स वचो त्यादीनि चग्गहणफलानि[1] । तत्थ च अब्यग्गमनसद्दतो सिम्हि कते, चग्गहणेन सिस्सोकारं कत्वा, सकारागमे कते रूपं । कस्सपस्स वचो ति वचसद्दतो अम्हि कते, चग्गहणेन अंवचनस्स ओकारं कत्वा, सेसे कते रूपं ।

१८३. एतेसमो लोपे[2] ति इदं 'मनोगणादितो....' (१८१), 'तेसं विभत्तियो....' ति (३१९) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'मनोगणादितो....' ति सुत्तेन मनोगणेहि स्मिनानमिआ आदेसा च, तेसं च समासतद्धितवाक्येसु 'तेसं विभत्तियो....' ति विभत्तिलोपो च वुत्तो; एवं च सति मनोमयं अयोमयं तेजोसमेन तपोगुणेना ति रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, समासतद्धितेसु मनोगणादीहि विभत्तिम्हि लुत्ते एतेसमन्तो ओत्तमापज्जते ति दस्सेतुं 'एतेसमो लोपे' ति वुत्तं। तिपदं । एतेसं ति अन्तापेक्खाछट्ठी, ओ ति कारियं, लोपे ति निमित्तसत्तमी; विधिसुत्तं । एत्थ च लोपे ति विभत्तिलोपमाह[3] ।

---

१. सिरोरुहो केसो—सी० १; सिरोरुहेन—सी० २ ।

1. तु०—"चग्गहणेन अब्यग्गमनसो नरो ति आदिसु मनसद्दतो सिवचनस्सोकारादेसो होति । एवं यस्मिं यस्मिं कते यं यं सिज्झति, तं तं इध चग्गहणेन कत्तब्बं"—क० न्या०, पि० १६७ ।

2. तु०—"तदन्तो विभत्तिलोपे"—सद्द०, सु० ३७५; "हशि च"—पा० ६.१.११२ ।

3. द०—"एत्थ च लोपे ति किञ्चा पि अनियमेत्वा वुत्तं, तथा पि विभत्तिलोपमेवाधिप्पेतं ति गहेतब्बं; न हि मनोगणादीनमन्तो लोपोपलब्भति"—क० न्या०, पि० १६७-१६८ ।

१८४. स सरे वागमो । २. ३. २४ ।

एतेहि[1] मनोगणादीहि विभत्तादेसे सरे परे सकारागमो होति वा। मनसा, मनसि; वचसा, वचसि ।

वा ति किमत्थं ? मनेन[2], तेजेन, यसेन । सरे ति किमत्थं ? मनो, तेजो, यसो ।

पुनादिग्गहणेन अञ्ञस्मि पि सरे पच्चये परे सकारागमो होति । मनसा[3] पकतं कम्मं[3] मानसिकं, वचसा[3] पकतं कम्मं[3] वाचसिकं ।

मनोमयं त्याद्युदाहरणानि । तत्थ मनोमयं ति मनसा पकतं ति अत्थे 'तप्पकतिवचने मयो' ति (३७४) मयप्पच्चये कते, तद्धितवाक्यत्ता 'तेसं विभत्तियो·····' ति एत्थ तेसं-गहणेन विभत्तिपकतसद्दानं लोपं कत्वा, 'मनोगणादितो·····'त्यधिकिच्च इमिना मनसद्दन्तस्सोकारं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, तद्धितत्ता नाममिव कत्वा, सिम्हि कते रूपं। इतरं तस्सदिसं। तेजोसमेना ति तेजसा समो त्यत्थे तप्पुरिससमासं च तप्पुरिससञ्ञं च कत्वा, समासत्ता विभत्तिम्हि लुत्ते इमिना अन्तस्सोकारं कत्वा, नाममिव कत्वा, नावचनं कत्वा, तस्सेनादेसे कते रूपं। इतरं तस्सदिसं। तपोगुणेना ति तपो एव गुणो ति कम्मधारयो व विसेसो। आपोसमेन[1], वायोसमेना ति आदिग्गहणफलानि। तत्थ च तप्पुरिससमासे कते, आदिग्गहणेन ओकारं कत्वा, नादिम्हि कते रूपानि[2]। इहादिग्गहणाभावे[3] पि अनुवत्तमानमादिग्गहणं सन्धायेतं वुत्तं[4]।

१८४. स सरे वागमो[5] ति इदं 'मनोगणादितो·····' ति (१८१) सुत्ततो

---

१. एतेहेव—से० । २. मदेन—से० । ३-३. से० पोत्थके नत्थि ।

1–2. क० न्या०, पि० १६८ ।

3–4. द०–"नन्विहादिग्गहणस्साभावा आदिग्गहणं किमत्थं ति न वत्तब्बन्ति। न न वत्तब्बं; यथा हि असति हि वाग्गहणे पुब्बसुत्ततो अनुवत्तमानं वाग्गहणं सन्धाय तत्थ तत्थ वा ति किमत्थं ति वुत्तं, एवमिह असति पि आदिग्गहणे पुब्बसुत्ततो अनुवत्तमानमादिग्गहणं सन्धाय आदिग्गहणं किमत्थं ति वुत्तं ति"—त०, पि० १६८-१६९ ।

5. तु०—"मनोगणतो सरे सागमो"—सद्द०, सु० ३७६; "मनोगणतो विभत्तादेसे वा पच्चये वा सरे परे सकारागमो होति वा"—त०, वुत्तियं; "तेहेव मनोगणादीहि सरे परे सागमो होति वा। मनसा, मनेन। ववत्थितविभासत्थोयं वासद्दो। तेन मनो मना मने मनायतनं ति आदिसु न होति; मानसिकं चेतसिकं ति आदिसु निच्चं—मनेभि मनेहि"—रूप०, सु० ९६ ।

१८५. सन्तसद्दस्स सो भे बोचन्ते[1]। २. ३. २५।

सब्बस्सेव सन्तसद्दस्स सकारादेसो होति भकारे परे, अन्ते च बकारागमो होति।

सब्भिरेव समासेथ सब्भि कुब्बेथ सन्थवं[2]।
सतं[3] सद्धम्ममञ्ञाय सेय्यो होति न पापियो[3]॥

जीरन्ति[4] वे राजरथा सुचित्ता, अथो सरीरम्पि जरं उपेति।
सतं च धम्मो न जरं उपेति, सन्तो हवे[4] सब्भि पवेदयन्ति॥

सतं[5] भूतो[5] सब्भूतो[6]; सतं[7] भावो[7] सब्भावो।

भे ति किमत्थं? सन्तेहि पूजितो भगवा।

चसद्दग्गहणं क्वचि सकारस्सेव पसिद्धत्थं—सतं कारो, सक्कारो; सतं[8] कतो[8] सक्कतो।

निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं? 'मनोगणादितो····' ति सुत्तेन मनोगणसद्देहि स्मिनानमिआ आदेसा वुत्ता; एवं सति मनसा मनसी त्यादीनि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, विभत्तादेसभूते सरे परे सागमं कत्वा तानि रूपानि होन्ती ति दस्सेतुं, 'स सरे वागमो' ति वुत्तं। चतुप्पदमिदं[1]। सा ति तब्बिसेसनं, सरे ति निमित्तसत्तमी, वा ति विकप्पनत्थं, आगमो ति विसयी; विधिसुत्तं।

उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव। मनेना त्यादीनि वाग्गहणफलानि, तानि पि सुविञ्ञेय्यानेव। मानसिकं, वाचसिकं ति आदिग्गहणफलानि। तत्थ च मानसिकं ति मनसा पकतं त्यत्थे 'येन वा संसट्ठं····' (३५२) त्यधिकिच्च 'तमधीते····' ति (३५३) णिकप्पच्चयं कत्वा, तेसं-गहणेन विभत्तिपकतसद्दानं लोपं कत्वा, णलोपवुद्धिम्हि कते, इधादिग्गहणेन पच्चयेकदेससरस्मि सागमे कते, नाममिव कत्वा, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं। इतरं सुविञ्ञेय्यमेव।

१८५. सन्तसद्दस्स सो भे बोचन्ते[2] ति इदं 'स्माहिस्मिन्नं····' ति (९९)

---

१. बो चन्ते—से०, सी०१। २. नासब्भि—से०। ३-३. से० पोत्थके नत्थि। ४-४. से० पोत्थके नत्थि। ५-५. नत्थि से० पोत्थके। ६. सब्भतो—से०, सविभूतो—सी० १। ७-७. से० पोत्थके नत्थि। ८-८. से० पोत्थके नत्थि।

1. द०—"मनोगणादिग्गहणमिहानुवत्तते। अत्थो सुविञ्ञेय्यो व। एत्थ च 'सरे' ति किञ्चा पि अनियमेत्वा वुत्तं, विभत्तादेससङ्खातं पन सरमेविह 'सरे' ति गहितं ति दट्ठब्बं, न ह्यञ्ञो मनोगणादितो सरोपलब्भति; तेनाह—'विभत्तादेसे सरे' ति"—क० न्या०, पि० १६६।

2. तु०—"सन्तस्स सो भे अन्ते बो"—सद्द०, सु० ३७८।

१८६. सिम्हि गच्छन्तादीनं न्तसद्दो[1] अं । २. ३. २६ ।

सिम्हि गच्छन्तादीनं न्तसद्दो[1] अमापज्जते वा । गच्छं, गच्छन्तो; महं, महन्तो; चरं, चरन्तो; तिट्ठं[2], तिट्ठन्तो[2]; खादं, खादन्तो ।

गच्छन्तादीनमिति किमत्थं ? अन्तो, दन्तो, वन्तो, सन्तो ।

सुत्ततो निक्खन्तं । छप्पदं । सन्तसद्दस्सा ति कारी, सो ति कारियं, भे ति निमित्तसत्तमी, बो ति विसयी, चा ति समुच्चयो, अन्ते ति विसयं; विधिसुत्तं[1] ।

सब्भिरेव त्यादीनि उदाहरणानि[2] । तत्थ च सब्भी ति सन्तसद्दतो ततियाबहुवचनं कत्वा, तस्स 'स्माहिस्मिन्नं····' ति भि-आदेसं कत्वा, इमिना भकारे परे सन्तसद्दस्स सकारं कत्वा, अन्ते बकारागमञ्च कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं । सब्भूतो*, सब्भावो ति च सन्तो भूतो**, सन्तो भावो ति समासे कते, वुत्तनयेन सकारादेसं कत्वा, अन्ते बकारागमे च कते रूपानि । सन्तेही ति किमुदाहरणं, तं सुविञ्ञेय्यं । सक्कतो, सक्कारो ति चग्गहणफलानि[3] । तत्थ च सन्तो कतो, सन्तो कारो ति अत्थे समासे कते, चग्गहणेन सकारं गत्वा, द्वेभावे कते रूपानि ।

१८६. सिम्हि गच्छन्तादीनं न्तसद्दो अं[4] ति इदं 'सो' ति (१०४) सुत्ततो

---

१. अन्तसद्दो—से० । २-२. से० पोत्थके नत्थि ।

*. सम्भुतो—सी० । **. भुत्तो-सी० ।

1. द०—"···पुन सब्बग्गहणकरणं सस्सरग्गहणत्थं"—क० न्या०, पि० १६६ ।
2. द०—"यो पनम्हेहि पदमालाय सब्भी ति अयं सद्दो ततिया-पञ्चमी-बहुवचनवसेन योजितो, सो च खो सन्त इति अकारन्तपकतिवसेन, अञ्ञत्थ पन सब्भी ति इकारन्तपकतिवसेन योजेतब्बो; तथा हि सब्भी ति सप्पुरिसो निब्बानञ्च, सुन्दराधिवचनं वा एतं सब्भी ति सब्बो चायं अत्थो साट्ठकथाय 'बहुम्पेतं असब्भि जातवेदा' ति (जा० अ० भा० १, पि० ४६४) इमाय पाळिया, 'सन्तो हवे सब्भि पवेदयन्ति' (धम्म०, पि० ३१) ति इमाय च दीपेतब्बो—
   आलपने च पच्चत्ते ततिया-पञ्चमीसु च ।
   समासम्हि च योजेय्य सब्भिसद्दं सुमेधसो ॥···"—सद्द०, भा० १, पि० १७४-१७६ ।
3. तु०—"कारादिसु च"—सद्द०, सु० ३७६; 'स्यादिसु सब्भि"—त०, सु० ३८०; "सदभिदितोथ वा सब्भी ति सिद्धि"—त०, सु० ३८१, "पञ्ञत्तियं सन्तस्स न्तो सिम्हि"—त०, सु० ३८२ ।
4. तु०—"गच्छन्तादीनं वा"—त०, सु० ३८३ ।

१८७. सेसेसु न्तुव । २. ३. २७ ।

गच्छन्तादीनं[1] न्तसद्दो न्तुप्पच्चयो व दट्ठब्बो सेसेसु विभत्तिप्पच्चयेसु । गच्छतो, महतो; गच्छति, महति; गच्छता, महता ।

सेसेस्विति किमत्थं ? गच्छं, महं, चरं[2], खादं ।

निक्खन्तं । चतुप्पदं । वाग्गहणमनुवत्तते[1] । सिम्ही ति निमित्तसत्तमी, गच्छन्तादीनं ति अन्तापेक्खाछट्ठी, न्तसद्दो ति कारी, अं ति कारियं; विधिसुत्तं । गच्छं त्याद्युदाहरणानि । तत्थ च गच्छं ति गच्छन्तसद्दतो सिम्हि कते, 'स सरे वागमो' (१८४) त्यधिकिच्च इमिना सिम्हि न्तसद्दस्स अं-आदेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपं—

"एवं महं चरं तिट्ठं ददं भुञ्जं सुणं पचं ।
जयं जीरं चवं मीयं सरं कुब्बं जपं वजं"[2]॥ त्यादयो ।

अन्तो त्यादीनि किमुदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

१८७. सेसेसु न्तुव[3] इति इदं 'सिम्हि गच्छन्तादीनं....' ति (१८६) सुत्ततो निक्खन्तं । 'सागमो से' (६१), 'स्मास्मिन्नं वा' ति (१०८) सुत्तेहि निक्खन्तन्ति पि वत्तब्बं । तिपदं । सेसेसू ति निमित्तसत्तमी, न्तू ति कारी, इवे ति उपमा; इमाहि सेसेसू वचनेसु न्तुव दट्ठब्बा । कारियातिदेसोयं । छब्बिधो हि अतिदेसो; वुत्तञ्च—

"व्यपदेसो निमित्तञ्च तं-रूपं तं-सभावतो ।
सुत्तञ्चेव तया कारियातिदेसो ति छब्बिधो ॥
व्यपदेसे तु नामं व निमित्तं यथाकत्तरि ।
तं-रूपन्तु स्माना व तं-सभावो पुमा इव ॥
सुत्तमनुपवट्ठानं सेसेसु न्तुव कारियं"[4]॥ ति ।

गच्छतो त्याद्युदाहरणानि । तत्थ गच्छतो ति गच्छन्तसद्दतो सविभत्तिं कत्वा, इमिना न्तुव कत्वा, 'तोतिता....' ति (१२७) सविभत्तिस्स न्तुस्स तो-आदेसे कते

---

१. एतेसं—सो० १, सो० २ । २. नत्थि से० पोत्थके ।

1. तु०—"...गच्छन्त-महन्त-चरन्त-तिट्ठन्त-भुञ्जन्त-पिवन्त-खादन्त-सहन्तादीनं न्तुसद्दो अमापज्जते विकप्पेना ति ञापनत्थं"—क० न्या०, पि० १७० ।
2. द०—रूप०, सु० १०८, कारिका०, गा० १८४ ।
3. तु०—"स-स्मि-ना-नंसु न्तु व"—सद्द०, सु० ३८६ ।
4. रूप०, सु० १२० ।

१८८. ब्रह्मत्तसखराजादितो अमानं[1] । २. ३. २८ ।

ब्रह्मत्तसखराजादितो[2] अं-वचनस्स आनं-आदेसो[3] होति वा । ब्रह्मानं, ब्रह्मं; अत्तानं, अत्तं; सखानं, सखं; राजानं, राजं ।

अमिति किमत्थं ? राजा ।

१८९. स्या च । २. ३. २९ ।

ब्रह्मत्तसखराज इच्चेवमादितो[4] सि-वचनस्स आ होति । ब्रह्मा, अत्ता, सखा, राजा, आतुमा ।

१९०. योनमानो । २. ३. ३० ।

ब्रह्मत्तसखराज इच्चेवमादीहि योनं आनो-आदेसो होति । ब्रह्मानो, अत्तानो, सखानो, राजानो, आतुमानो ।

रूपं । इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव । किमुदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

१८८. ब्रह्मत्तसखराजादितो अमानं[1] ति इदं 'ततो च विभत्तियो' (५४), 'सरलोपोमादेस....' ति (८३) सुत्तेहि निक्खन्तं । तिपदं । ब्रह्मत्तसखराजादितो ति अवधि, अं ति कारी, आनं ति कारियं; विधिसुत्तं । वाग्गहणमनुवत्तते । ब्रह्मानं ति ब्रह्मसद्दतो अं-विभत्तिं कत्वा, तस्स आनमादेसे कते रूपं । इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव । राजानं ति एत्थ सति पि राजसद्दे अंवचनस्साभावा ।

१८९. स्या चे[2] ति इदं 'सो' ति (१०४) सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं । सी ति कारी, आ ति कारियं, चा ति निवत्तनत्थं[3]; विधिसुत्तं । ब्रह्मादिगणो चायं विधि । ब्रह्मा त्याद्युदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव । आतुमा ति अत्तपरियायो अत्ता त्वेव वुत्तं होति ।

१९०. योनमानो[4] ति इदं 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) सुत्ततो निक्खन्तं ।

---

१. अं आनं—से० । २, ०राजा इच्चेवमादितो—से० । ३. आनं—सी० १, सी० २ । ४. ० मादीहि—से० ।

1. तु०—"अमानं"—सद्द०, सु० ३६३; "सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ—"पा० ६.४.८ ।
2. तु०—"ब्रह्मत्तसखराजादितो स्या"—सद्द०, सु० ३६०; पा० ६.४.८, "अनङ् सौ"—त०, ७.१.६३ ।
3. तु०—"चग्गहणं वचनसिलिट्ठत्थं, वाग्गहणनिवत्तनत्थं च; ब्रह्मत्तराजादिग्गहणमिहानुवत्तते"—क० न्या०, पि० १७१ ।
4. तु०—"आनो योनं"—सद्द०, सु० ३६२ ।

१९१. सखातो चायो नो । २. ३. ३१ ।

तस्मा सखातो च योनं आयो-नो-आदेसा होन्ति । सखायो, सखिनो । योनमिति किमत्थं ? सखा ।

चसद्दग्गहणं[१] योग्गहणमनुकड्ढनत्थं[१] ।

१९२. स्मिमे । २. ३. ३२ ।

तस्मा सखातो स्मि-वचनस्स एकारो होति । सखे ।

१९३. ब्रह्मातो गस्स च । २. ३. ३३ ।

तस्मा ब्रह्मातो गस्स च एकारो होति । हे ब्रह्मे ।
चसद्दग्गहणं[१] एकारमनुकड्ढनत्थं[१] ।

तस्मा ब्रह्मादिगणतो योनं आनो-आदेसो होती ति अत्थो । द्विपदं । कारिकारियनिद्देसा । उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

१९१. सखातो चायो नो[1] ति इदं 'योनमानो' ति (१९०) सुत्ततो निक्खन्तं; 'सब्बयोनीनमाए' ति सुत्ततो वा निक्खन्तं । तिपदं । अवधि-अनुकड्ढनकारियनिद्देसा[2] । सखायो, सखिनो त्याद्युदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव । सखा ति किमुदाहरणं ? तत्थ सति पि सखसद्दे योनमभावा ।

१९२. स्मिमे ति इदं 'स्मास्मिन्नं वा' ति (१०८) सुत्ततो निक्खन्तं । 'स्मास्मिन्नं वा' ति इमिना सिद्धे सत्यारम्भो निच्चत्थो, तस्सा निच्चत्ता ब्रह्मा ति गण-विसेसरूपविसेसदस्सनत्थं वा[3] । द्विपदं । कारिकारियनिद्देसा । सखे त्याद्युदाहरणं, तं सुविञ्ञेय्यमेव ।

१९३. ब्रह्मातो गस्स चा[4] ति इदं 'सेसतो लोपं गसिपी' ति (२२०) सुत्ततो

१-१. से० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—"आयो-नो सखातो योनं"—सद्द०, सु० ३६४ ।
2. तु०—"योग्गहणमिहानुवत्तते, अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । चग्गहणमनुकड्ढनत्थं"—क० व्या०, पि० १७२ ।
3. तु०—"सखातो स्मिवचनस्स एकारो होति—निच्चत्थो यमारम्भो"—रूप०, सु० बु० १३५ ।
4. तु०—"ब्रह्ममुनादितो ए वा"—सद्द०, सु० २८७; त०, भा० १, पि० १५७-१५८, १८४ ।

१९४. सखान्तस्सि[1] नोनानंसेसु । २. ३. ३४ ।

तस्स सखान्तस्स[2] इकारादेसो होति नो-ना-नं-स इच्चेतेसु । सखिनो, सखिना, सखीनं, सखिस्स ।

एतेस्विति किमत्थं ? सखारेहि, सखेहि[3] ।

१९५. आरो हिम्हि वा । २. ३. ३५ ।

तस्स सखान्तस्स आरो होति वा हिम्हि विभत्तिम्हि । सखारेहि, सखेहि ।

१९६. सुनमंसु वा । २. ३. ३६ ।

तस्स सखान्तस्स आरो होति वा सु-नं-अं इच्चेतेसु । सखारेसु, सखेसु; सखारानं, सखीनं; सखारं, सखं ।

निक्खन्तं । तिपदं । अवधिकारियनिद्देसा[1] । चग्गहणं एग्गहणानुकड्ढनत्थं[2] । उदाहरणं सुविञ्ञेय्यं ।

१९४. सखान्तस्सि नोनानंसेसू[3] ति इदं 'सब्बयोनीनमाए', 'अतो नेन' (१०३), 'सुनंहिसु च' (८९), 'सागमो से' (६१) त्यादीहि सुत्तेहि* निक्खन्तं । तिपदं । सखान्तस्सा ति अवयवापेक्खाछट्ठी ×, ई ति कारियं, नोनानंसेसू ति निमित्तसत्तमी; विधिसुत्तं । सखिनो ति वुत्तनयमेव । इतरानि सखसद्दतो नानं सविभत्ति कत्वा, इमिना अन्तस्सिकारं कत्वा, से विभत्तिम्हि सकारागमे कते रूपानि । सखारेही ति एत्थ सति पि सखसद्दे एतेसमभावा ।

१९५. आरो हिम्हि वा[4] ति इदं 'सुहिस्वकारो ए' ति (१०१) सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं । आरो ति कारियं, हिम्ही ति निमित्तसत्तमी, वा ति विकप्पनत्थनिद्देसो; विधिसुत्तं । सखारेही ति उदाहरणं, तं पन सुविञ्ञेय्यमेव । सखेही ति वाग्गहणफलं ।

१९६. सुनमंसु वा[5] ति इदं 'सुहिस्वकारो ए', 'सुनंहिसु च' (८९), 'ब्रह्मत्त....'

---

१. सखन्तस्सि—सी० १ । २. सखन्तस्स—सी० १ । ३. सी० १, सी० २ पोत्थकेसु नत्थि ।

*. सी० पोत्थके नत्थि । ×. ०छट्ठि—सी ।

1-2. तु०—"एग्गहणमिहानुवत्तते; चग्गहणतदनुकड्ढनत्थं"—क० न्या०, पि० १७२ ।

3. तु०—"सखन्तास्सित्तं नो-ना-नं-सेसु"—सद्द०, सु० ४०७ ।

4. तु०—"आरो हिम्हि"—त०, सु० ४०८ ।

5. तु०—"अं-सु-नंसु"—त०, सु० ४०९ ।

१९७. ब्रह्मातो[1] तु स्मिन्नि । २. ३. ३७ ।

तस्मा ब्रह्मातो[1] तु[2] स्मिं-वचनस्स नि-आदेसो होति । ब्रह्मनि ।

तुसद्दग्गहणेन अब्रह्मातो[3] पि स्मिं-वचनस्स नि होति । कम्मनि, चम्मनि, मुद्धनि ।

१९८. उत्तं सनासु । २. ३. ३८ ।

तस्स ब्रह्मसद्दस्स अन्तो उत्तमापज्जते स-ना इच्चेतेसु । ब्रह्मुनो, ब्रह्मुना ।

सनास्विति किमत्थं ? ब्रह्मा ।

उत्तमिति भावनिद्देसो[4] कत्थचि अभावं दस्सेति । ब्रह्मस्स ।

ति (१८८) सुत्तेहि निक्खन्तं । द्विपदं । सुनंअंसू ति निमित्तसत्तमी, वा ति निवत्तनत्थं[1]; विधिसुत्तं । सखारेसु, सखारानं, सखारं ति उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव । इतरानि वाग्गहणफलानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

१९७. ब्रह्मातो तु स्मिन्नी[2] ति इदं 'स्मास्मिन्नं वा' ति (१०८) सुत्ततो निक्खन्तं; तेन अकारन्तलिङ्गतो स्मिंवचनस्स विधानतो । चतुप्पदं । ब्रह्मातो ति अवधि, तू ति समुच्चयो, स्मिं ति कारी, नी ति कारियं; विधिसुत्तं । ब्रह्मनी ति उदाहरणं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । कम्मनि, चम्मनि, मुद्धनी ति तुग्गहणफलानि[3]; तानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

१९८. उत्तं सनासू[4] ति इदं 'अतो नेन' (१०३), 'सागमो से' ति (६१) सुत्तेहि निक्खन्तं । द्विपदं । कारियनिमित्तसत्तमीनिद्देसा । ब्रह्मसद्दो[5] छट्ठ्यन्तवसेन वत्तते[6] । ब्रह्मुनो, ब्रह्मुना त्युदाहरणानि; तानि सुविञ्ञेय्यानेव । ब्रह्मा ति एत्थ सति पि ब्रह्मसद्दे एतेसमभावा ।

---

१. ब्रह्मतो—सी० १ । २. से० पोत्थके नत्थि । ३. अब्रह्मतो—सी०१, सी० २ । ४. भावनिद्देसेन—से० ।

1. तु०—"सति पि वाग्गहणे इध वाग्गहणकरणं उभयेसम्पि हेट्ठा वुत्तनयेनोत्तरत्र नानुवत्तनत्तविञ्ञापनत्थं, भिन्नयोगकरणं व्याख्यानगारवपरिहारत्थं"—क० न्या०, पि० १७३ ।
2. तु०—"ब्रह्मततो निच्चं"—सद्द०, सु० ४०५ ।
3. तु०—"अद्ध-मुद्ध-कम्म-चम्म-घम्मावितो वा स्मिं नि"—सद्द०, सु० ४०४ ।
4. तु०—"ब्रह्मस्सुत्तं स-नं-नासु"—त०, सु० ४१० ।

5–6. तु०—"ब्रह्मग्गहणमत्थवसा विभत्तिविपरिणामतो छट्ठन्तवसेन सम्बन्धो होति"—क० न्या०, पि० १७४ ।

१९९. सत्थुपितादीनमा सिस्मिं सिलोपो च । २. ३. ३९ ।

सत्थुपितादीनमन्तो[१] आत्तमापज्जते सिस्मिं, सिलोपो च । सत्था, पिता, माता, भाता, कत्ता ।

सिस्मिं ति किमत्थं ? सत्थुस्स, पितुस्स[२], मातुस्स[३], भातुस्स, कत्तुस्स[४] ।

२००. अञ्ञेस्वारत्तं । २. ३. ४० ।

सत्थुपितु-आदीनमन्तो सिवचनतो[५] अञ्ञेसु वचनेसु आरत्तमापज्जते । सत्थारं, पितरं, मातरं, भातरं; सत्थारेहि, पितरेहि, मातरेहि, भातरेहि ।

अञ्ञेस्विति किमत्थं ? सत्था, पिता, माता, भाता ।

आरत्तग्गहणेन कत्थचि अनियमं[६] दस्सेति । सत्थुस्स, पितुस्स, मातुस्स, भातुस्स ।

---

१९९. सत्थुपितादीनमा सिस्मिं सिलोपो च[1] ति इदं 'सेसतो लोपं…' ति (२२०) सुत्ततो निक्खन्तं; तेन उकारन्ततो पि सिलोपस्स विधानतो । पञ्चपदं । सत्थुपितादीनं ति सम्बन्धछट्ठी*, आ ति कारियं, सिस्मिं ति निमित्तसत्तमी, सिलोपो ति कारियं, चा[2] ति सम्पिण्डनं[3] ।

सत्था, पिता, भाता, माता, कत्ता ति उदाहरणानि; तानि सुविञ्ञेय्यानेव । सत्थुस्स इत्यादीनि किमुदाहरणानि ? तत्थ सति पि सत्थुसद्दे सिस्साभावा ।

२००. अञ्ञेस्वारत्तं[4] ति इदं 'ततो च विभत्तियो' (५४), 'अम्मो निग्गहीतं….' (८२), 'घपतो च….' (११८), 'सुनंहिसु च' (८९), 'सागमो से' ति (६१) सुत्तेहि निक्खन्तं; तेहि लतो विभत्तीनं विधानत्ता, सुनंहिसु विभत्तिसु दीघागमानं सम्भवतो च । द्विपदं । निमित्तकारियनिद्देसा ।

---

१. सत्थुपितु इच्चेवमादीनं अन्तो—से० । २. सी० १ पोत्थके नत्थि । ३. से० पोत्थके नत्थि । ४. कत्तस्स । चसद्दग्गहणं दुतियत्थसम्पिण्डनत्थं—सी० १, सी० २ । ५. सी० १, सी० २ पोत्थकेसु नत्थि । ६. नियमं—से० ।

* ०छट्ठि—सी० (सब्बत्थ) ।

1. तु०—"सत्थुपितादीनमा सि-योसु, तं लोपो च"—सद्द०, सु० ४११; पा० ६.४.८, "ऋदुशनस्पुरुदंसोऽनेहसां च"—त०, ७.१.६४ ।

2–3. तु०—"चग्गहणं दुतियत्थसम्पिण्डनत्थं"—क० न्या०, पि० १७४ ।

4. तु०—"ग्वादिस्वारो वा"—सद्द०, सु० ४१२ ।

२०१. वा नम्हि । २. ३. ४१ ।

सत्थुपितु-आदीनमन्तो आरत्तमापज्जते वा[१] नम्हि विभत्तिम्हि । सत्थारानं, पितरानं, मातरानं, भातरानं ।

वा ति किमत्थं ? सत्थूनं, पितूनं, मातूनं, भातूनं ।

२०२. सत्थुनात्तञ्च । २. ३. ४२ ।

तस्स सत्थुसद्दस्स[२] अन्तो[३] सरो[३] आत्तं[४] होति[४] वा नम्हि विभत्तिम्हि । सत्थानं, पितानं, मातानं, भातानं, धीतानं, कत्तानं ।

वा ति किमत्थं ? सत्थारानं, पितरानं[५], मातरानं[६], भातरानं[७], धीतरानं[८] । चसद्दग्गहणं[९] अञ्ञेसम्पि संगहणत्थं—सत्थुसद्दतो अञ्ञेसं पितादिसद्दानं संगहणत्थं चसद्दग्गहणं कतं[९] ।

सत्थारं त्याद्युदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव । सत्था, पिता त्यादिसु सति पि सत्थु आदीनमन्ते एतेसमभावा । इमस्स पन सत्थारं, सत्थारो, सत्थारेन, सत्थारेहि, सत्थारेभि, सत्थारस्स, सत्थारानं, सत्थारे, सत्थरि, सत्थारस्मि, सत्थारेसू ति रूपानि । एवं पितु, मातु, भत्तु, कत्तु, धीतु आदिसु पि[1] ।

२०१. वा नम्ही[2] ति इदं 'अञ्ञेस्वारत्तं' ति (२००) सुत्ततो निक्खन्तं । इमिना[3] अञ्ञेसु विभत्तिसु आरत्ते सिद्धे सति पि नम्हि विकप्पनत्थं पुन विहितं[4] । द्विपदं । विकप्पनत्थनिमित्तनिद्देसा ।

सत्थारानं, पितरानं त्यादीनि उदाहरणानि; तानि सुविञ्ञेय्यानेव । सत्थानं, पितूनं त्यादोनि किमुदाहरणानि ? तत्थ च सत्थु-पितुसद्देहि नम्हि कते, वाग्गहणेन इमिनाकत्वा, इममेवाधिकिच्च 'सत्थुनात्तञ्चा' ति (२०२) सत्थुसद्दन्तस्स नम्हि अकारत्तं कत्वा, 'योसु कत....' (८८) त्यधिकिच्च 'सुनंहिसु चा' ति (८९) दीघे कते रूपानि । इतरानि तस्सदिसानि ।

२०२. सत्थुनात्तञ्चा[5] ति इदं 'अञ्ञेस्वारत्तं' ति (२००) सुत्ततो निक्खन्तं ।

---

१. से० पोत्थके नत्थि । २. सत्थुस्स—सी० १, सी० २ । ३–३. से० पोत्थके नत्थि । ४–४. आत्तमापज्जते—सी० १ । ५. पितूनं—से० । ६. मातूनं—से० । ७. से० पोत्थके नत्थि । ८. धीतूनं—से० । ९–९. से० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—"पितु-भातादितो सागमो स्मिं"—सद्द०, सु० ४३३; "आरत्तमितिभावनिद्देसेन कत्थचि अनियमं दस्सेति"—रूप०, सु० १५६ ।

2. तु०—सद्द०, सु० ४१८, "नम्हि"—त०, सु० ४१६ ।

3–4. तु०—"इदं पन अनन्तरसुत्तेन निच्चं सम्पत्तं विकप्पेति"—क० न्या०, पि० १७५ ।

5. तु०—"अत्तञ्च"—सद्द०, सु० ४१७; रूपसिद्धियं अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—

२०३. उ सस्मिं सलोपो च । २. ३. ४३. ।

सत्थु-पितु इच्चेवमादीनं अन्तस्स उत्तं होति वा सस्मिं, सलोपो च होति[1]। सत्थु, सत्थुस्स, सत्थुनो दीयते परिग्गहो वा; पितु, पितुस्स, पितुनो दीयते परिग्गहो वा; भातु, भातुस्स, भातुनो दीयते परिग्गहो वा ।

चसद्दग्गहणं[2] दुतियत्थसम्पिण्डनत्थं[2] ।

चतुप्पदं । सत्थू ति अन्तापेक्खछट्ठी, नं ति निमित्तं, अत्तं ति कारियं, चा ति समुच्चयो। अयमिहाधिप्पायो—'अञ्ञेस्वारत्तं' ति इमिना सम्पत्तमारत्तं नम्हि विभत्तिम्हि 'वा नम्ही' ति (२०१) इमिना सत्थारानं ति च सत्थानं ति च पितानं ति च विकप्पेत्वा, इमिना आरादेसतो विनिम्मुत्तो सत्थुसद्दन्तो निच्चमत्तं होति; तेन सत्थानं ति रूपं भवति। तस्मा सत्थुसद्दा नम्हि विभत्तिम्हि 'वा नम्ही' ति सुत्तवसेन सत्थारानं ति च, 'सत्थुनात्तञ्चे' ति सुत्तवसेन सत्थानं ति च रूपं भवति; चसद्देन सम्पिण्डितानं पितु-मातु-कत्तु-भातु-धीतु-आदिसद्दानं पन नम्हि पितरानं ति वा, पितूनं ति वा, पितानं ति वा रूपानि भवन्ति ।

सत्थानं, पितानं त्याद्युदाहरणानि; तानि सुविञ्ञेय्यानेव। सत्थारानं त्यादिसु सन्तेसु पि नंपरेसु एतेसमन्तेसु, वासद्देन निवारितत्ता ।

२०३. उ सस्मिं सलोपे चे[1] तिदं 'अञ्ञेस्वारत्तं' ति (२००) सुत्ततो निक्खन्तं।

"सत्थुसद्दन्तस्स पितादीनमन्तस्स च अत्तं होति वा नम्हि विभत्तिम्हि । पुन सत्थुग्गहणं सत्थुनो निच्चविधानत्थं"—रूप०, सु० १६४; न्यासे तु अस्स विवरणं एवं दिन्नं—"'सत्थुनात्तञ्च' किमत्थमिदं ? सत्थुसद्दन्तस्स अत्तं होति नम्हि विभत्तिम्हि विकप्पेना ति' ञापनत्थं । तिपदमिदं । नंगहणञ्च वाग्गहणञ्च वत्तते; अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । चग्गहणमञ्ञेसम्पि सङ्गहणत्थं । ननु सत्थादिग्गहणमेवेहानुवत्तते, अथ किमत्थं सत्थुग्गहणं कतं ? अञ्ञेसं सङ्गहणत्थं चा पि अत्थन्तरविञ्ञापनत्थं ति । सति पि सत्थादिग्गहणे सत्थुसद्दमेव सरूपेन गहेत्वा इतरेसं इतरवसेन गहणं—यदारादेसविनिम्मुत्तो सत्थुसद्दो सिया नम्हि विभत्तिम्हि, तदा तदन्तस्सत्तं होतेव, इतरेसम्पन अत्तविनिम्मुत्तो पि पयोगो सिया ति दीपेति, अञ्ञथा सब्बेसम्पि समानरूपप्पसङ्गो सिया । पकति हेसाचरियानं येन केनचि आकारेन अधिप्पायविञ्ञापनत्थं"—क० न्या०, पि० १७५–१७६ ।

१. से० पोत्थके नत्थि । २–२. से० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—"उ सम्हि, सलुत्ति च"—सद्द०, सु० ४१८; "ऋत उत्"—पा० ६.१.१११; "सत्थु-पितु इच्चेवमादीनमन्तस्स उत्तं होति वा सस्मिं, सलोपो च होति । आरादेसापवादोयं । सत्थु । अञ्ञत्थभावनिद्देसेनाराभावो"—रूप०, सु० १६४, वुत्तियं ।

२०४. सक्कमन्धातादीनञ्च[1] । २. ३. ४४ ।

सक्कमन्धातु[2] इच्चेवमादीनमन्तो[3] उत्तमापज्जते[4] सस्मिं, सलोपो च होति[5] । सक्कमन्धातु इव अस्स राजिनो विभवो; एवं कत्तु, गन्तु, दातु[6] इच्चेवमादि ।

पुनरारम्भग्गहणं[7] किमत्थं ? निच्चदीपनत्थं । सक्कमन्धातु ।

चसद्दग्गहणं दुतियत्थलोपसम्पिण्डनत्थं[7] ।

२०५. ततो योनमो तु । २. ३. ४५ ।

ततो आरादेसतो सब्बेसं योनं ओकारादेसो होति । सत्थारो, पितरो, मातरो, भातरो, कत्तारो, वत्तारो ।

तुसद्दग्गहणेन अञ्ञस्मा पि योनं ओकारादेसो[8] होति । चतुरो जना[9], उभो पुरिसा, नज्जो[10], गावो[10] ।

चतुप्पदं । ऊ ति कारियं, सस्मिं ति निमित्तसत्तमी, सलोपो ति कारियं, चा ति सम्पिण्डनं; विधिसुत्तं । वासद्दो वत्तते । सत्थु, सत्थुस्स, सत्थुनो त्याद्युदाहरणानि; तानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

२०४. सक्कमन्धातादीनञ्चा[1] तिदं 'उ सस्मिं सलोपो चे' ति (२०३) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । 'सक्कमन्धातादीनं' ति अन्तरापेक्खाछट्ठी कारी, चा ति अनुकड्ढन-निद्देसो; विधिसुत्तं । अनन्तरसुत्तेनेव* सिद्धे सति पुनारम्भग्गहणं निच्चदीपनत्थं[2] । सक्कमन्धातु इव अस्स राजिनो विभवो त्याद्युदाहरणानि; तानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

२०५. ततो योनमो तू[3] तिदं 'अञ्ञेस्वारत्तं' (२००), 'सब्बयोनीनमाए' ति

---

१. सक०—से०, सी० १, सी० २ । २. सक०—से०, सी० १, सी० २ । ३. इच्चेवमादीनं—से० । ४. उत्तं होति—से० । ५. से० पोत्थके नत्थि । ६. धातु—से० । ७-७. से० पोत्थके नत्थि । ८. ओकारो—सी० १, सी० २ । ९. जनितारो—से० । १०-१०. से० पोत्थके नत्थि ।

* सी० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—सद्द०, सु० ४१८; तत्थ अञ्ञे पि सुत्तानि आगतानि—"मन्धातुस्सत्तं समासे"—सु० ४१९, "मातादीनमा निच्चं"—सु० ४२०; रूपसिद्धियं तु अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—"सक्कमन्धातु इच्चेवमादीनमन्तो च उत्तमापज्जते सस्मिं, सलोपो च"—रू०, सु० १६७, वुत्तियं ।
2. "अनन्तरसुत्तेनेव सिद्धे सत्यारम्भो निच्चविधानत्थं"—क० न्या०, पि० १७६; "निच्चं पुनब्बिधाना"—रूप०, सु० वु० १६७ ।
3. तु०—"आरा योनमो"—सद्द०, सु० ४२१ ।

२०६. ततो स्मिमि । २. ३. ४६ ।

ततो आरादेसतो स्मि-वचनस्स इकारो[1] होति । सत्थरि, पितरि, मातरि, भातरि, कत्तरि, धीतरि[2], वत्तरि, भत्तरि[3] ।

पुन ततोग्गहणेन अञ्ञस्मा पि स्मि-वचनस्स इकारादेसो होति । भुवि ।

---

(१०७) सुत्तेहि निक्खन्तं । चतुप्पदं । ततो ति अवधि, योनं ति कारी, ओ ति कारियं, तू ति समुच्चयो; विधिसुत्तं । तुकारेण चेत्थ आरादेसं परामसति ।

सत्थारो, पितरो, मातरो, भातरो, कत्तारो, वत्तारो त्याद्युदाहरणानि । तत्थ सत्थारो, कत्तारो, वत्तारो त्यादिसु योम्हि कते, 'अञ्ञेस्वारत्तं' ति एतेसमन्तस्सारत्तं कत्वा, इमिना आरादेसतो योनमोकारे कते रूपानि; इतरेसु 'पितादीनमसिम्हि' ति(२०९) रस्सकरणमेव विसेसो । चतुरो गावो, उभो त्यादीनि तुग्गहणफलानि[1] । तत्थ चतुरो ति चतुसद्दतो योम्हि कते, चतुसद्दन्तस्स 'ओ सरे चे' ति (७८) एत्थ चग्गहणेन उरादेसं कत्वा वा, 'यवमदन....' ति (३५) रकारागमं कत्वा वा, इमिना तुग्गहणेन योनमोकारे कते, नेतब्बे नीते रूपं । गावो ति योम्हि कते, 'योसु चे' ति (७४) गोसद्दन्तस्सो-कारस्सवादेसं कत्वा, इमिना तुग्गहणेन योनमोकारादेसे कते रूपं । उभो ति द्विसद्दतो योम्हि कते, 'योसु द्विन्नं....' ति (१३२) एत्थ चग्गहणेन द्विसद्दस्स उभादेसं कत्वा, इमिना तुग्गहणेन योनमोकारादेसे कते रूपं । रूपसिद्धियम्पन पोक्खरणीसद्दतो योम्हि कते, तुग्गहणेन योनमोकारं कत्वा, ईकारस्स पसञ्ञं कत्वा, 'पसञ्ञस्स चा' ति (७२) तस्स यकारं कत्वा, नकारं यकारमानेत्वा, 'यवतं तलन....' ति (२७१) एत्थ कारग्गहणेन न्यकारस्स ञकारं कत्वा, तस्स द्वेभावं कत्वा, पोक्खरञ्ञो ति रूपं पि वुत्तं[2] ।

२०६. ततो स्मिमी[3] तिदं 'अञ्ञेस्वारत्तं' (२००), 'स्माहिस्मिन्नं....' ति (९९)

---

१. इकारादेसो—से० । २. धितरि—से० (सब्बत्थ 'धि' इति) । ३. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि ।

1. तु०—''तुग्गहणेन अञ्ञेहि पि चतु-उभ-नदी-गवादीहि योनमोकारो होति''—रूप०, सु० वु० १६० ।

2. तु०—'''ततो योनमो तु' ति सुत्ते तुग्गहणेन योनमोकारो च, ईकारस्स यकारो; 'यवत'मिच्चादिसुत्ते कारग्गहणेन न्यस्स ञकारो, द्वित्तं, पोक्खरञ्ञो पोक्खरणियो वा इच्चादि''—रूप०, सु० वु० १६४ ।

3. तु०—''स्मिमि''—सद्द०, सु० ४२२ ।

२०७. ना आ । २. ३. ४७ ।

ततो आरादेसतो ना-वचनस्स आ-आदेसो[1] होति । सत्थारा, पितरा, मातरा, भातरा, धीतरा, कत्तारा, वत्तारा ।

२०८. आरो रस्समिकारे । २. ३. ४८ ।

आरादेसो रस्समापज्जते इकारे परे । सत्थरि, पितरि, मातरि, भातरि, धीतरि, वत्तरि[2], कत्तरि[2] ।

सुत्तेहि निक्खन्तं । तिपदमिदं । ततो ति अवधि, स्मि ति कारी, ई ति कारियं; विधिसुत्तं ।

सत्थरि, पितरि, मातरि, भातरि, धीतरि, कत्तरि, वत्तरि, भत्तरि, नत्तरी त्याद्युदाहरणानि । तत्थ च सत्थु-पितु-आदीहि स्मिम्हि कते, 'अञ्ञेस्वारत्तं' ति आरादेसे च कते, इमिना स्मिवचनस्स इकारादेसं कत्वा, 'आरो रस्समिकारे' ति (२०८) रस्सत्ते कते रूपं । भुवि इति ततोग्गहणफलं[1] । तं पन भूसद्दतो स्मिवचनं कत्वा, इमिना ततोग्गहणेन स्मिवचनस्स इकारं कत्वा, भूसद्दन्तस्स लसञ्ञं कत्वा, 'झलानमियुवा….' ति (७०) तस्स उवादेसे कते रूपं ।

२०७. ना आ[2] तिदं 'अञ्ञेस्वारत्तं' (२००), 'अतो नेना' ति (१०३) सुत्तेहि निक्खन्तं । द्विपदं । वा ति सम्बन्धछट्ठी कारी, आ ति कारियं; विधिसुत्तं । ना ति एत्थ छट्ठ्यन्तपठमन्ता 'सब्बासमावुसो….' ति (२२१) एत्थादिसद्देन सिलोपो ।

सत्थारा, धीतरा, कत्तारा, वत्तारा त्याद्युदाहरणानि । तत्थ सत्थुसद्दतो नावचने कते, सत्थुसद्दन्तस्स आरादेसं कत्वा, नावचनस्स इमिना आ-आदेसे कते रूपं ।

२०८. आरो रस्समिकारे[3] तिदं 'अञ्ञेस्वारत्तं' (२००), 'ततो स्मिमी' ति (२०६) सुत्तेहि निक्खन्तं । तिपदं । कारिकारियनिमित्तसत्तमीनिद्देसा ।

---

१. आकारादेसो—से०, सी० १ । २–२. से० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—"सति पि अनन्तरसुत्ते ततोग्गहणे इध ततोग्गहणकरणमत्थन्तरविञ्ञापनत्थं, तं सयमेव वक्खति"—क० न्या०, पि० १७७; "पुन ततोग्गहणेन अञ्ञस्मा पि स्मिवचनस्स इकारो, यथा—भुवि, दिवि"—रूप०, सु० वु० १६५ ।

2. तु०—"नास्सा"—सद्द०, सु० ४२१ ।

3. तु०—"आरो रस्समिम्हि"—त०, सु० ४२४; न्यासे पन अस्स वण्णना एवमागता—"एत्थ पन किञ्चा पि आरो ति अनियमवसेन वुत्तं, आकारो व रस्सो होती ति दट्ठब्बं, तस्सेव रस्सानुरूपत्ता, एवञ्च सति पयोगसिज्झनतो पयोगसिद्धिया सुत्तोपदेसतो च"—क० न्या०, पि० १७८ ।

२०९. पितादीनमसिम्हि । २. ३. ४९ ।

पितादीनमारादेसो रस्समापज्जते असिम्हि विभत्तिम्हि[1] । पितरा, मातरा, भातरा, धीतरा; पितरो, मातरो, भातरो, धीतरो ।

असिम्हिग्गहणं तोम्हि इकारादेसस्स[2] ञापनत्थं[2] । मातितो, पितितो, भातितो, दुहितितो ।

सत्थरि, पितरी त्याद्युदाहरणानि। तत्थ च सत्थरी ति सत्थुसद्दतो स्मिवचने कते, 'अञ्ञेस्वारत्तं' ति आरत्तं कत्वा, 'ततो स्मिमी' ति स्मिवचनस्स इकारादेसं कत्वा, 'आरो रस्समिकारे' ति रस्सत्ते कते रूपं। सेसं तादिसमेव।

२०९. पितादीनमसिम्ही[1] तिदं 'आरो रस्समिकारे' ति (२०८) सुत्ततो निक्खन्तं। द्विपदं। पितादीनं ति सम्बन्धछट्ठी, असिम्ही ति निमित्तसत्तमी; विधिसुत्तं।

पितरं, मातरं, धीतरं अम्हि; पितरो, मातरो, धीतरो योम्हि; पितरा, मातरा, धीतरा नाम्हि; तानि वुत्तानुसारेन सुविञ्ञेय्यानि। सिम्हि[2] आरादेसाभावे पि 'असिम्ही' ति अधिवचनतो असिम्हिग्गहणं तोम्हि इकारादेसञापनत्थं ति वुत्तं[3]; मातितो, पितितो, दुहितितो ति तप्फलं। तत्थ मातितो ति मातुसद्दतो तोप्पच्चये कते, इमिना असिम्हिग्गहणेन उकारस्स इकारे कते रूपं। एवं पितितो। दुहितितो ति धितितो+; दुह धातु पूरणे, 'सब्बतो ण्वु....' ति (५२९) तुप्पच्चयो, 'यथागममिकारो' ति (६०७) इकारागमो; दुहेति कुलं पूरेती ति दुहिता[4], धीता; ततो दुहितुसद्दतो तोप्पच्चये कते इमिना इकारो[5]। रूपसिद्धियम्पन मातिपक्खो, पितिपक्खो त्यादि पि सङ्गण्हाति[6]।

---

१. च—से०। २–२. इकारादेससञ्ञापनत्थं—से०।

\+ धितुतो—सी०।

1. तु०—"असिस्मि पितादीनमा"—सद्द०, सु० ४२५।

2–3. तु०—"सिम्हि आरादेसस्साभावा 'असिम्ही' ति न वत्तब्बे पि एवं वचनं अत्थन्तरविञ्ञापनत्थं; तेनाह—'असिम्हिग्गहणं तोम्हि इकारादेसस्स ञापनत्थं' ति"—क० न्या०, पि० १७८; "सिस्मि आरादेसाभावे पि 'असिम्ही' ति अधिकवचनमत्थन्तरविञ्ञापनत्थं; तेन तो-आदिम्हि पितादीनमिकारो च; यथा—पितितो, मातितो, भातितो...."—रूप०, सु० वु० १६८; "मातादीनमन्तस्सि तो-भरादिसु"—सद्द०, सु० ४२७।

4. अभि० प०, गा० २४१; अभि० प० सू०, तस्सुपरि; सद्द०, भा० ३, पि० ६७०; ब० को० टी०, पि० २११।

5. तु०—क० न्या०, पि० १७८–१७९।

6. रूप०, सु० वु० १६८।

२१०. तयातयीनं तकारो त्वत्तं वा । २. ३. ५० ।

तया-तयि इच्चेतेसं तकारो त्वत्तमापज्जते वा । त्वया, तया; त्वयि, तयि ।

एतेस्विति किमत्थं ? तुवं, तवं[1] ।

इति नामकप्पे ततियो कण्डो ।

---

२१०. तयातयीनं तकारो त्वत्तं वा[1] तिदं 'नाम्हि तयामया' (१४५), 'तुम्हाम्हानं तयिमयी' ति (१३९) सुत्तेहि निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'नाम्हि·····' ति इमिना च नाम्हि तयामयादेसा वुत्ता, 'तुम्हाम्हानं·····' ति* इमिना तयिमयि ×-आदेसा वुत्ता; एवं सति त्वया, त्वयि रूपानि कथं भवेय्युन्ति पुच्छाय सति, तया-तयीनं तकारो त्वत्तं विकप्पेन आपज्जती ति दस्सेन्तेन, 'तयातयीनं·····' ति वुत्तं । चतुप्पदं । तया-तयीनं ति अवयवापेक्खसम्बन्धछट्ठी, तकारो ति कारी, त्वत्तं ति कारियं, वा ति विकप्पनत्थं; विधिसुत्तं ।

त्वया यि तुम्हसद्दतो नाविभत्तिं कत्वा, नाम्हि सविभत्तिस्स तुम्हसद्दस्स तया-आदेसं कत्वा, इमिना तकारस्स त्वत्ते कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं । त्वयी ति च तुम्हसद्दतो स्मिम्हि कते, 'तुम्हाम्हानं·····' ति (१३९) सविभत्तिस्स तुम्हसद्दस्स तयि-आदेसं कत्वा, इमिना तकारस्स त्वत्ते कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं । तुवं, तवं ति एत्थ सति पि तकारे एतेसं अभावा ।

इति कच्चायनवण्णनायं नामकप्पस्स
ततियकण्डवण्णना ।

---

१. त्वं—से० ।

*–× सी० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—"तया-तयीनं तो त्वत्तं" —सद्द०, सु० ४३५ ।

(४) चतुत्थो कण्डो

२११. अत्तान्तो[१] हिस्मिमनत्तं । २. ४. १ ।

तस्स अत्तनो अन्तो अनत्तमापज्जते हिस्मिं[२] विभत्तिम्हि । अत्तनेभि, अत्तनेहि ।

अत्तान्तो[३] ति किमत्थं ? राजेभि[४], राजेहि[४] । हिस्मि ति किमत्थं ? अत्तना ।

अनत्तमिति भावनिद्देसेन अत्तसद्दस्स सकादेसो[५] होति सब्बासु विभत्तीसु[६] । सको, सका, सकं[७], सके ।

२१२. ततो स्मिन्नि । २. ४. २ ।

ततो अत्ततो स्मिं-वचनस्स नि होति । अत्तनि ।

ततोग्गहणमवधारणत्थं । सके पेत्तिविसये[८] ।

---

(४) चतुत्थो कण्डो

२११. अत्तान्तो हिस्मिमनत्त[1] ति इदं 'सुहिस्वकारो ए' (१०१), 'स्माहिस्मिन्नं·····' ति (९९) सुत्तेहि निक्खन्तं*। तिपदं। कारिनिमित्तकारियनिद्देसा।

अत्तनेहि, अत्तनेभी त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ च अत्तनेही ति अत्तसद्दतो हिविभत्तिम्हि कते, इमिना अत्तन्तस्स अनत्तं कत्वा, हिविभत्तिम्हि 'सुहिस्वकारो ए' ति अकारस्सेत्ते कते रूपं। इतरेसु हिवचनस्स भि-आदेसकरणमेव विसेसो। राजेही ति एत्थ सति पि हिविभत्तिम्हि अत्तन्तस्साभावा; अत्तना ति एत्थ सति पि अत्तन्ते हिविभत्तियाभावा।

२१२. ततो स्मिन्नी[2] ति इदं 'स्माहिस्मिन्नं·····' ति सुत्ततो निक्खन्तं। तिपदं। अवधिकारिकारियनिद्देसा। अत्तनी ति उदाहरणं। तम्पन अत्तसद्दतो स्मिम्हि कते, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना नि-आदेसे कते रूपं।

---

१. अत्तन्तो—से०, सी० १। २. हिम्हि—सी० १, सी० २। ३. अत्तन्तो—से०, सी० १। ४–४ गज्जेहि; गज्जेभि—से०। ५. सकारादेसो—से०। ६. विभत्तिसु—सी० १, सी० २। ७. से० पोत्थके नत्थि। ८. पेतविसये—से०; पेत्तिके विसये—सी० १।

*. ०किन्निक्खन्तं—सी०।

1. तु०—"अत्तन्तो अनत्तं हिम्हि"—सद्द०, सु० ४३९।
2. तु०—"ब्रह्मत्ततो निच्चं"—त०, सु० ४०५।

२१३. सस्स नो । २. ४. ३ ।

ततो अत्ततो सस्स विभत्तिस्स नो होति । अत्तनो ।

२१४. स्मा ना । २. ४. ४ ।

ततो अत्तसद्दतो[1] स्मा-वचनस्स ना होति । अत्तना ।

पुन[2] ततोग्गहणेन[2] तस्स अत्तनो तकारस्स रकारो होति सब्बेसु वचनेसु । अत्तनि[3] जातो पुत्तो[3] अत्रजो, अत्रजं ।

---

२१३. सस्स नो[1] ति इदं 'सागमो से' ति (६१) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । कारिकारियनिद्देसा । अत्तनो ति अत्तसद्दतो से विभत्तिम्हि कते, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना नो-आदेसे कते रूपं ।

२१४. स्मा ना[2] ति इदं 'स्मास्मिन्नं वा' ति (१०८) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । कारिकारियनिद्देसा । स्मास्सना[3] ति वत्तब्बे 'सब्बासमावुसो····' ति (२२१) सविभत्ति-लोपं कत्वा एवं वुत्तं[4] ।

अत्तना ति अत्तसद्दतो स्मावचनं कत्वा, 'अत्तान्तो हिस्मिमनत्तं' (२११), 'ततो स्मिन्नी' ति (२१२) सुत्तद्वयमधिकिच्च इमिना तस्स नादेसे कते रूपं । 'ब्रह्मत्तसख····' ति (१८८) सुत्तेन सिद्धे सत्यारम्भो अत्थन्तरविञ्ञापनत्थो; तेन वुत्तं—"पुन ततोग्गह-णेना" त्यादि[5]; अत्रजो ति एकस्स तकारस्स रकारो ।

---

१. अत्ततो—सी० १, सी० २ । २–२. पुनग्गहणेन—सी० १ । ३–३. अत्तना०—सी० १; से० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—"तम्हा सस्स नो"—सद्द०, सु० ४४० ।
2. तु०—"स्मास्स ना"—त०, सु० ४४१ ।

3–4. "'स्मास्सना' ति वत्तब्बे 'सेसतो लोपं गसिपी' ति वत्तमाने 'सब्बासमावुसो···' ति विभत्तिलोपं कत्वा एवं वुत्तं ति दट्ठब्बं; समासनिद्देसो वा"—क० न्या०, पि० १८० ।

5. क० न्या०, पि० १८०; "नाभावातिदेसेनेव सिद्धे पि उत्तरसुत्तेन एकयोगमकत्वा भिन्न-योगकरणं अत्थन्तरविञ्ञापनत्थं; तेन अत्तन्ततकारस्स रकारो जकारे क्वचि"—रूप०, सु० वु० १२८ ।

२१५. झलतो च । २. ४. ५ ।

झ-ल इच्चेतेहि स्मा-वचनस्स ना होति । अग्गिना, पाणिना, दण्डिना, भिक्खुना, सयम्भुना ।

स्मा ति किमत्थं ? अग्गयो, मुनयो, इसयो ।

चसद्दग्गहणं[1] स्मानाग्गहणानुकड्ढनत्थं[1] ।

२१६. घपतो स्मिं यं वा । २. ४. ६ ।

तस्मा घपतो स्मिं-वचनस्स यं होति वा । कञ्ञायं, कञ्ञाय; गङ्गायं, गङ्गाय; रत्तियं, रत्तिया; इत्थियं, इत्थिया; वधुयं, वधुया; यागुयं, यागुया ।

---

२१५. झलतो च[1] ति इदं 'स्मा ना' ति (२१४) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । अवधिअनुकड्ढननिद्देसा ।

अग्गिना त्यादुदाहरणानि । तत्थ च अग्गिना ति अग्गिसद्दतो स्मावचने कते, 'आलपने सि.....' ति (५७) वत्तमाने, 'इवण्णुवण्णा-ज्झला**' ति (५८) झसञ्ञं कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना स्मावचनस्स ना-आदेसे कते रूपं । दण्डिना ति 'अघोरस्स.....' ति (८४) एकवचने परे रस्सत्ते कते रूपं । भिक्खुना ति लतो । सयम्भुना ति रस्सत्तमेव विसेसो । अग्गयो त्यादिसु सन्तेसु पि एतेसु स्मावचनस्साभावा ।

२१६. घपतो स्मिं यं वा[2] ति इदं 'पतो या' ति (११२) सुत्ततो निक्खन्तं । चतुप्पदं । अवधि*कारिकारियविकप्पनत्थनिद्देसा; विधिसुत्तं ।

कञ्ञायं त्यादुदाहरणानि । तत्थ च कञ्ञसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावं कत्वा, नेतब्बे नीते रूपं; ततो स्मिंवचनं कत्वा, तस्स घसञ्ञं कत्वा, इमिना स्मिंवचनस्स यमादेसे कते रूपं । कञ्ञाया ति वाग्गहणफलं । तत्थ वाग्गहणेनाकत्वा, 'घतो नादीनमि'ति (१११) स्मिंवचनस्स आयादेसे कते रूपं । रत्तियं ति पसञ्ञाकरणमेव विसेसो । इतरं वाग्गहणफलं । तत्थ 'पतो या' ति यादेसो । इत्थियं ति इकारन्तत्ता 'अघो रस्स.....' ति (८४) रस्सत्तं । इतरं वाग्गहणफलं । तत्था पि रस्सत्तं । वधुयं ति एत्था पि रस्सत्तं । वधुया + ति वाग्गहणफलं । यागुयं ति उकारन्तभावो व विसेसो । इतरं वाग्गहणफलं, तं सुविञ्ञेय्यमेव ।

१-१. नत्थि से० पोत्थके ।

** झला—सी० । * अवधी—सी० । + वधूया—सी० ।

1. तु०—"झ-लेहि च"—सद्द०, सु० ४४२; "आङो नाऽस्त्रियाम्"—पा० ७.३.१२० ।

2. तु०—"घ-पेहि स्मिं यं वा"—सद्द०, सु० ४४३; "याडापः"—पा० ७.३.११३ ।

२१७. योनञ्जि नपुंसकेहि । २. ४. ७. ।

सब्बेसं योनं नि होति वा नपुंसकेहि लिङ्गेहि । अट्ठीनि, अट्ठी; आयूनि, आयु; एवं दुतियायं ।

नपुंसकेही ति किमत्थं ? इत्थियो ।

२१८. अतो निच्चं । २. ४. ८ ।

अकारन्तेहि नपुंसकलिङ्गेहि योनं निच्चं नि होति । सब्बानि,[1] यानि[2], तानि, कानि, भयानि, रूपानि[2] ।

---

२१७. योनञ्जि नपुंसकेही[1] ति इदं 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं । कारि+कारियअवधिनिद्देसा; विधिसुत्तं । 'नपुंसकेही' ति सामञ्ञ-वसेन वुच्चमाने पि 'अतो निच्चं' ति (२१८) वक्खमानत्ता इवण्णुवण्णन्तेहि नपुंसक-लिङ्गेही ति दट्ठब्बं ।

अट्ठीनि, अट्ठी, आयूनि, आयू त्युदाहरणानि । तत्थ अट्ठीनी ति अट्ठिसद्दतो योवचनं कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना योवचनस्स नि-आदेसं कत्वा, 'योसु कत....' ति (८८) दीघे कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं । तत्थ च अट्ठी ति अट्ठिसद्दतो योम्हि कते, इकारस्स झसञ्ञं कत्वा, 'झलतो....' (११७) त्यधिकिच्च 'घपतो च....' ति (११८) योवचनस्स लोपं कत्वा, 'योसु कत....' ति दीघे कते रूपं । इतरं तस्सदिसमेव । इत्थियो ति एत्थ सति पि योवचने नपुंसकस्साभावा ।

२१८. अतो निच्चं[2] ति इदं 'ततो च विभत्तियो' (५४), 'योनञ्जि नपुंसकेही' ति (२१७) सुत्तेहि निक्खन्तं । द्विपदं । अवधितब्बिसेसननिद्देसा । अकारो एतस्स अत्थी ति अ, ततो ।

सब्बानि, यानि, तानी त्याद्युदाहरणानि । तत्थ सब्बानि, यानी त्यादीनि सब्ब-य-त-किसद्देहि योवचनानि कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना अकारतो योवचनस्स

---

१. नत्थि से० पोत्थके । २–२. यानि यानि, कानि कानि, तानि तानि, भयानि भयानि, रूपानि रूपानि—से० ।

+ कारी०—सी० ।

1. तु०—'नपुंसकेहि योनं नि'—सद्द०, सु० ४४४ ।

2. तु०—"निच्चं अतो"—त०, सु० ४४५; "नपुंसकस्य झलचः"—पा० ७.१.७२ ।

२१९. सिं । २. ४. ९ ।

अकारन्तेहि नपुंसकलिङ्गेहि सि-वचनस्स अं होति निच्चं । सब्बं, यं, तं, कं[1], रूपं ।

नि-आदेसं कत्वा, 'योसु कत....' ति (८८) दीघे कते रूपानि । कानी ति एत्थ 'किस्स क वे चे' ति (२२७) एत्थ चसद्देन कादेसकरणमेव विसेसो । एत्थ च पुरिमसुत्तेन निभावे* च, 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) सुत्तेन निकारस्स एत्तेव सिद्धे सति पि पुनारम्भो निच्चत्थो[1]; वुत्तञ्च—

"योनन्निभावे चा पि एत्ते सिद्धे पि अविसेसतो ।
अतो निच्चं ति आरम्हा** आ एत्तं क्वचि द्वेविधा[2]" ॥ ति ।

२१९. सिं[3] ति इदं 'ततो च विभत्तियो' (५४), 'सो' ति (१०४) सुत्तेहि निक्खन्तं । एकपदं[4]—सिस्स अं ति समासवसेन; सिअं × ति वा द्विपदं + +, असमासवसेन । समासे सिअं ति पकतिं कत्वा, इकारतो सकारं वियोजेत्वा, 'वा परो असरूपा' ति (१३) सुत्तेन बिन्दुतो निस्सयभूतस्स अकारस्स लोपो; असमासे पि एसेव नयो । न्यासे वुत्तो—"निस्सयभूते अकारे लुत्ते रुक्खसकुणनयेन निग्गहीतं पुब्बं इकारं गन्त्वा तिट्ठती" ति; वुत्तञ्च—

"यथा हि सकुणो रुक्खं यं निस्साय निलीयति ।
विनट्ठे च सरे तस्मिं अञ्ञं गन्त्वान तिट्ठती[5]" ॥ ति ।

---

१. कं चित्तं—से० ।

* नीभावे—सी० । ** आरम्भो—सी० । ×-++तु०—"'सि अं' इति द्विपदमिदं"—रूप०, सु० वु० १६५ ।

1. तु०—"इदं लक्खणं निच्चभावदीपकं भवती ति दट्ठब्बं"—सद्द०, सु० वु० ४४४; वित्थारत्थाय दट्ठब्बं—त०, भा० १, पि० २२६-२३०; रूपसिद्धियं तु अस्स सुत्तस्स विवरणं एवमागतं—"अकारन्तेहि नपुंसकलिङ्गेहि योनं निच्चं नि होति । 'सब्बयोनीनमाए' ति निस्स वा आकारो; अञ्ञत्थ 'योसु कत....' इच्चादिना दीघो—चित्ता, चित्तानि"—रूप०, सु० वु० १६६ ।

2. त०, १६६ ।

3. तु०—"सिवो अं"—सद्द०, सु० ४४६; "अतोऽम्"—पा० ७.१.२४ !

4-5. तु०—"द्विपदमिदं । नपुंसकग्गहणञ्च अतोग्गहणञ्च वत्तते । सिस्स अं ति विग्गहे 'नामानं समासो युत्तत्थो', 'उभे तप्पुरिसा' ति वत्तमाने, 'अमादयो परपदेही' ति सह तप्पुरिससञ्ञाय समासं कत्वा, 'तेसं विभत्तियो लोपा चे' ति विभत्तिलोपं कत्वा, 'सरा

२२०. सेसतो लोपं गसिपि । २. ४. १० ।

ततो निद्दिट्ठेहि लिङ्गेहि[1] सेसतो ग-सि इच्चेते लोपमापज्जन्ते । भोति इत्थि, सा इत्थी; भो दण्डि, सो दण्डी; भो सत्थ, सो सत्था; भो राज, सो राजा ।

सेसतो ति किमत्थं ? पुरिसो गच्छति । गसी[2] ति किमत्थं ? इत्थिया, सत्थुस्स ।

असमासे सी ति कारी, अं ति कारियं; विधिसुत्तं । समासे कारियनिद्देसो व—सिअं ति ठिते इकारस्स झसञ्ञं कत्वा, 'अम्मो निग्गहीतं·····' ति (८२) निग्गहीतं कातब्बं विय दिस्सति; अं ति पदस्स विभत्तिभूतस्स अंवचनस्साभावा एवं वुत्तं । सब्बं, यं, तं त्याद्युदाहरणानि; तानि सुविञ्ञेय्यानेवा ति ।

२२०. सेसतो लोपं गसिपी[1] ति इदं 'सो' (१०४), 'सिं' ति (२१९) सुत्तेहि निक्खन्तं । चतुप्पदं । अवधिकारिकारियसम्पिण्डननिद्देसा; विधिसुत्तं । सेसतो ति 'सो', 'सिं'. 'स्या च' (१८९), 'आ सिम्हि' (१२४), 'अं नपुंसके' (१२५), 'अवण्णा च गे' (१२६), 'पुमन्तस्सा सिम्हि' (१५२), 'सखातो गस्से वा' (११३), 'घते च' (११४), 'ब्रह्मातो गस्स चा' ति (१९३) एवमादीहि निद्दिट्ठेहि कारियेहि अवसेसेहि कारियेहि ग-सि इच्चेते लोपा होन्ति[2] ।

सरे लोपं' ति वत्तमाने, 'वा परो असरूपा' ति परसरस्स लोपं कत्वा, ततो स्युप्पत्तिं कत्वा, 'सेसतो लोपं गसिपी' ति सिम्हि लुत्ते 'सिं' ति रूपसिद्धि । अथ वा 'सी' ति पच्चत्तनिद्देसो, 'अं' ति उपयोगनिद्देसो; तदा वुत्तनयेन सन्धिविधानञ्च होति । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व''—क० न्या०, पि० १८२; वित्थारत्थाय तत्थेव दट्ठब्बं ।

१. नत्थि से० पोत्थके । २. गसिपी—से० ।

1. तु०—''सेसेहि लोपं गो, सि च''—सद्द०, सु० ४४७; ''श्रद्धायाः सिर्लोपम्''—का० २.१.३७ ।

2. तु०—'''सो', 'सिं,' 'स्या च', 'सखातो गस्से वा', 'घते चा' ति एवमादीहि निद्दिट्ठेहि अञ्ञो सेसो नाम; ततो सेसतो लिङ्गम्हा ग-सि इच्चेते लोपमापज्जन्ते । अपिग्गहणं दुतियत्थसम्पिण्डनत्थं—एत्थ च सति पि सिग्गहणे, ग इति वचनमेव ञापकमञ्ञत्था पि सिग्गहणे आलपनागहणस्स । केचि आलपनाभिब्यत्तिया भवन्त-सद्दं हेसद्दं वा पयुज्जन्ते—भो पुरिस तिट्ठ, हे पुरिस वा । बहुवचने न विसेसो—भवन्तो पुरिसा तिट्ठथ''—रूप०, सु० वु० ७४ ।

२२१. सब्बासमावुसोपसग्गनिपातादीहि च । २. ४. ११ ।

सब्बासं विभत्तीनं एकवचनबहुवचनानं पठमा-दुतिया-ततिया-चतुत्थी-पञ्चमी-छट्ठी-सत्तमीनं लोपो होति आवुसोपसग्गनिपात इच्चेवमादीहि च । त्वं पनावुसो, तुम्हे पनावुसो पदसो धम्मं वाचेय्य, विहारं स्वेव[1] उपगच्छिस्सति ।

भोति इत्थि, सा इत्थी, भो दण्डि, सो दण्डी, भो सत्था, सो सत्था, भो राज, सो राजा त्युदाहरणानि । तत्थ च भोती ति भवन्तसद्दतो ईप्पच्चयं कत्वा, 'भवतो भोतो' ति (२४२) भोतादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, इत्थिप्पच्चयन्तत्ता चसद्देन नाममिव कत्वा, 'आलपने चे' ति (२८७) सिम्हि कते, तस्स गसञ्ञं कत्वा, पुन वियोजेत्वा, पसञ्ञं कत्वा, 'अघो रस्स…' ति (८४) अघस्स रस्सं कत्वा, इमिना गलोपे कते रूपं । इत्थी ति इत्थीसद्दतो आलपनेकवचनं कत्वा, ईकारस्स पसञ्ञे कते, 'झलपा रस्सं' ति (२४७) रस्सत्तं । सा इत्थी ति सिलोपस्स उदाहरणं । तत्थ सा ति तसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, ततो सिम्हि कते, एततेसन्तो' ति (१७४) तकारस्स सकारं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपं । भो दण्डि, सो दण्डी ति वुत्तसदिसानि । भो सत्था ति एत्थ सत्थुसद्दतो सिवचनं कत्वा, तस्स गसञ्ञञ्च कत्वा, 'अकारपिताद्यन्तानमा' ति (२४६) सत्थुसद्दन्तस्साकारं कत्वा, 'आकारो वा' ति (२४८) आकारस्स रस्सं कत्वा, गम्हि लुत्ते रूपं । भो सत्था ति एत्थ रस्साभावो व विसेसो । भो राजा ति एत्था पि एसेव नयो । सो सत्था, सो राजा ति उदाहरणं न्यासरूपसिद्धिसु नत्थि, सद्दनीतिं निस्साय कत्थचि दिस्सति[1]; तं विचारेतब्बं । भो सख, पुरिसो त्यादिसु सन्तेसु गसीसु सेसस्स कारियस्स अभावा; इत्थिया त्यादिसु सति पि सेसकारिये एतेसमभावा ।

२२१. सब्बासमावुसोपसग्गनिपातादीहि चे[2] ति इदं 'सेसतो लोपं…' ति

---

१. स्वे—से० ।

1. द०—सद्द०, सु० वु० ४४७ ।

2. तु०—"सब्बासमाख्यातवज्जितोपसग्गनिपातादीहि यथारहं"—त०, सु० ४४८; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"नामाख्यातोपसग्गनिपातसंखातेसु चतुसु पदेसु आख्यातवज्जितेहि उपसग्ग-निपातादीहि च परासं सब्बासं विभत्तीनं एकवचन-बहुवचनिकानं पठमा-दुतिया-ततिया-चतुत्थी-पञ्चमी-छट्ठी-सत्तमीनं यथारहं लोपो होति । सद्दसत्थविदू असंख्यासद्दत्ता उपसग्ग-निपातेहि बहुवचनलोपं न इच्छन्ति, सासनिका पन इच्छन्ति…" ।

चसद्दग्गहणमवधारणत्थं[२] ।

प, परा, नि, नी, उ, दु, सं, वि, अव, अनु, परि, अधि, अभि, पति, सु, आ, अति, अपि, अप, उप इति[३] वीसति उपसग्गा[३] । पहारो, पराभवो, निहारो, नीहारो, उहारो, दुहारो, संहारो, विहारो, अवहारो, अनुहारो, परिहारो, अधिहारो, अभिहारो, पतिहारो, सुहारो, आहारो, अतिहारो, अपिहारो, अपहारो, उपहारो, एवं वीसति उपसग्गेहि च— यथा, तथा, एवं[४], खलु, खो, यत्र, तत्र, अथो, अथ, हि, तु, च, वा[५], वो, हं[६], अहं[६], अलं[७], एव[८], भो[९], अहो, हे[१०], रे, अरे, हरे[११] इच्चेवमादीहि निपातेहि च योजेतब्बा[१२] ।

---

(२२०) सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं । कारिअवधिअवधारणनिद्देसा[२] । एत्थादिसद्देन सुत्तपदानि सङ्गण्हन्ति[३] ।

आवुसो त्याद्युदाहरणानि । तत्थ आवुसोसद्दतो पठमाएकवचनबहुवचनानि कत्वा, तस्स इमिना लोपे कते रूपं । पदसो ति पदसोसद्दतो नाविभत्तिलोपे कते रूपं । स्वे ति

---

२. नत्थि से० पोत्थके । ३–३. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । ४. नत्थि से० पोत्थके । ५. वे—से० । ६–६. ह, अह—सी० १ । ७. नत्थि से० पोत्थके । ८. एवं—से० । ९. हो—से० । १०. हे, अहे—से० । ११. नत्थि से० पोत्थके । १२. योजेतब्बं—से० ।

2-3. तु०—चग्गहणं 'अघोरस्स…' ति एत्थ विय अवधारणत्थं । उपेच्च सजन्ती ति पादयो उपसग्गा ति वुत्ता; पदानमादिमज्झावसानेसु निपतन्ती ति यथादयो निपाता ति वुत्ता—" क० न्या०, पि० १८४; "आवुसो-सद्दतो उपसग्गनिपातेहि च परासं सब्बासं विभत्तीनं लोपो होति, आदिसद्देन क्वचि सुत्तपदादीहि च । एत्थ च आवुसो तिमस्स विसुं गहणं ससंख्यत्तदीपनत्थं ति दट्ठब्बं—

उपेच्चत्थं सजन्ती ति उपसग्गा हि पादयो ।
चादी पदादिमज्झन्ते निपाता निपतन्ति हि ॥…
धात्वत्थं बाधते कोचि कोचि तं अनुवत्तते ।
तमेवञ्ञो विसेसेति उपसग्गगती तिधा ॥…

समुच्चयविकप्पनपतिसेधपूरणादिअत्थं असत्ववाचिकं नेपातिकं…एवं नामाख्यातोपसग्गविनिम्मुत्तं यदब्ययलक्खणं तं सब्बं निपातपदं ति वेदितब्बं; वुत्तञ्च—

'मुत्तं पदत्तया तस्मा निपतत्यन्तरन्तरा ।
नेपातिकं ति तं वुत्तं यं अब्ययसलक्खणं''' ॥ ति ।

उपसग्ग-निपातानं तत्थ वित्थारतो वण्णनं विज्जति, यथा—"अथालिङ्गसंख्याविभत्तिभेदो उपसग्ग-निपाता वुच्चन्ते । प परा नि नी उ दु सं वि अव अनु परि अधि अभि पति सु

२२२. पुमस्स लिङ्गादिसु समासेसु । २. ४. १२ ।

पुम इच्चेतस्स अन्तो लोपमापज्जते लिङ्गादिसु परपदेसु समासेसु। पुल्लिङ्गं, पुम्भावो, पुङ्कोकिला[1] ।

पुमस्सेति किमत्थं ? इत्थिलिङ्गं[2] नपुंसकलिङ्गं । लिङ्गादिसू ति किमत्थं ? पुमित्थी । समासेसू ति किमत्थं ? पुमस्स लिङ्गं ।

स्वेसद्दतो सिम्हि लुत्ते रूपं। प परा त्यादीनि उपसग्गानं सरूपदस्सनानि। पहारो त्याद्युदाहरणानि। तत्थ पहारो ति एत्थ पकारतो च हारसद्दतो च सिम्हि कते, पकारतो सिस्स इमिना लोपो; हारसद्दतो सिस्सोकारादेसो। एवं सेसेसु उपसग्गेसु। यथा तथा त्यादिउपलक्खणवसेन निपातानं निदस्सनं। तत्थ यथासद्दतो सिम्हि कते, इमिना तस्स लोपो। एवं सेसनिपातेसु। आवुसोसद्दस्स निपातत्ते सति पि आवुसो ति सरूपवसेन वचनं आवुसोसद्दस्स एकवचनबहुवचनन्तालपनदस्सनत्थं। उपसग्गतो हि पठमेकवचनं च, निपाततो पन चुद्दस विभत्तियो लोपा होन्ती ति।

२२२. पुमस्स लिङ्गादिसु समासेसू[1] ति इदं 'तेसं विभत्तियो…' (३१९),

---

आ अति अपि अप उप इति वीसति उपसग्गा…"—वि० द०—रूप०, सु० वु० २८२; "उपसग्गा च नाम सद्दसत्थे वेय्याकरणेहि पसद्दं आदिं कत्वा ठपिता, सासने पन सासनिकेसु एकच्चेहि पि गरूहि पसद्दं आदिं कत्वा ठपिता, नेरुत्तिकेहि पन गरूहि सरानं निस्सयत्ता निस्सयभूतं सुद्धस्सरं आसद्दमेव आदिं कत्वा अञ्ञेन कमेन ठपिता, सेय्यथीदं–आ उ अति पति प परि अव परा अधि अभि अनु उप अप अपि सं वि नि नी सु दु—एते वीसति उपसग्गा…समुच्चय-विकप्पन-पटिसेध-पूरणत्थं असत्ववाचकं नेपातिकं। एत्थ च सत्वं वुच्चति दब्बं, ततो अञ्ञं असत्वं, समुच्चयादि येव, असत्वं वदती ति असत्ववाचकं; अथ वा सत्वं न वदती ति असत्ववाचकं, यथा अचन्दमुल्लोकिकानि मुखानी ति… आख्यातिकपदं हि सत्वनिस्सितं किरियं वदति, उपसग्गो च तं विसेसेती ति ते उभो पि सत्ववाचिनो विय होन्ति, निपातपदं पन दब्बतो दूरभूतं समुच्चयादिं वदती ति तदेव असत्ववाचकं…"—सद्द०, भा० ३, पि० ८८०-९०६; पणिनीयसत्थे निपाता एवं वण्णिता—"प्राग्रीश्वरान्निपाताः"—पा० १.४.५६, "चादयोऽसत्त्वे"—त०, १.४.५७; "अद्रव्यार्थाश्चादयो निपातसंज्ञाः स्युः"—सि० कौ०, त०; पाणिनीयसत्थे उपसग्गा एवं वण्णिता—"प्रादयः"—पा० १.४.५८, 'उपसर्गाः क्रियायोगे"—त०, १.४.५९, "गतिश्च"–त०, १.४.६०; 'सिद्धान्तकौमुदी' इति गन्थे 'प्रादयः' इति सुत्तस्स वण्णना एवमागता—"अद्रव्यार्थाः प्रादयस्तथा"; वित्थारत्थाय अस्मिं विसये 'महाभाष्य' इति गन्थं दट्ठब्बं, एतासं सुत्तानं उपरि विभिन्नटीकागन्था पि दट्ठब्बा।

१. पुङ्कोकिला—सी०१, सी०२ । २. इत्थीलिङ्गं—से० ।

1. तु०—"पुमस्स समासे लिङ्गादिसु"—सद्द०, सु० ४४६ ।

२२३. अं यमीतो पसञ्ञातो । २. ४. १३ ।

अं-वचनस्स यं होति वा ईतो पसञ्ञातो । इत्थियं, इत्थि ।

पसञ्ञातो ति किमत्थं ? दण्डिनं, भोगिनं । अमिति किमत्थं ? इत्थीहि ।

२२४. नं झतो कतरस्सा । २. ४. १४ ।

तस्मा झतो कतरस्सा अं-वचनस्स नं होति । दण्डिनं, भोगिनं ।

झतो ति किमत्थं ? वेस्सभुं । कतरस्सा ति किमत्थं ? कुच्छि ।

'पकति चस्स·····' ति (३२०) सुत्तेहि निक्खन्तं । तिपदं । पुमस्सा ति अन्तापेक्खाछट्ठी कारी*, लिङ्गादिसू ति निमित्तसत्तमी, समासेसू ति आधारसत्तमी; विधिसुत्तं ।

पुल्लिङ्गं, पुम्भावो, पुङ्कोकिलो त्युदाहरणानि । तत्थ पुल्लिङ्गं ति पुमस्स लिङ्गं ति समासं कत्वा, विभत्तिलोपपकतिभावे कते, अकारतो मकारं वियोजेत्वा, 'सेसतो लोपं····' (२२०) त्यधिकिच्च इमिना पुमसद्दन्तस्स अकारस्स लोपे कते, पुकारं उकारतो वियोजेत्वा, तस्स लसञ्ञं कत्वा, 'अम्मो निग्गहीतं ति····'(८२) निग्गहीते कते, रुक्खसकुणनयेन निग्गहीतं उकारं गन्त्वा तिट्ठति; तस्स 'ब्यञ्जने चे' ति (३९) लोपं कत्वा, लकारस्स द्वेभावे कते रूपं । पुम्भावो तिदं तंसदिसं, वग्गन्तकरणमेव विसेसो । पुङ्कोकिलो ति तंसदिसमेव, कम्मधारयो व विसेसो । इत्थिलिङ्गं त्यादिसु सति पि लिङ्गपरे समासे पुमसद्दस्साभावा; पुमित्थी × त्यादिसु सति पि समासे पुमसद्दे लिङ्गादीनमभावा; पुमस्स लिङ्गं त्यादिसु सन्ते पि लिङ्गादिपरे पुमसद्दे समासस्साभावा ।

२२३. अं यमीतो पसञ्ञातो[1] ति इदं 'अम्मो निग्गहीतं·····' ति (८२) सुत्ततो निक्खन्तं । चतुप्पदं । कारिकारियअवधितब्बिसेसननिद्देसा; विधिसुत्तं । ईतो ति इमिना इकारं निवत्तेति ।

इत्थियं ति उदाहरणं । तत्थ इत्थियं ति इत्थीसद्दतो अम्हि कते, पसञ्ञं कत्वा, इमिना पसञ्ञातो ईतो अंवचनस्स यमादेसं कत्वा, अधत्ता रस्सत्ते कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं । दण्डिनं त्यादिसु सति पि अंवचने पसञ्ञस्स ईकारस्साभावा; इत्थी त्यादिसु सति पि पसञ्ञे ईकारे अंवचनस्साभावा ।

२२४. नं झतो कतरस्सा[2] ति इदं 'अम्मो निग्गहीतं·····' ति (८२) सुत्ततो

---

*. कारि—सी० । ×. पुमित्थि—सी० ।

1. तु०—"अं यमिवण्ण-पा वा"—सद्द०, सु० ४५० ।

2. तु०—"झम्हा नं कतरस्सा"—त०, सु० ४५१ ।

२२५. योनन्नो । २. ४. १५ ।

सब्बेसं योनं झतो कतरस्सा नो होति । दण्डिनो, भोगिनो; हे दण्डिनो, हे भोगिनो ।

कतरस्सा ति किमत्थं ? अग्गयो, मुनयो, इसयो । झतो ति किमत्थं ? सयम्भुवो[1] । योनं ति किमत्थं ? दण्डिना, भोगिना ।

निक्खन्तं । तिपदं । कारियअवधितब्बिसेसननिद्देसा; विधिसुत्तं । कतो[1] रस्सो यस्सा ति कतरस्सो, ततो कतरस्सा[2] ।

दण्डिनं, भोगिनं ति उदाहरणं । तत्थ दण्डिनं ति दण्डीसद्दतो अम्हि कते, ईकारस्स झसञ्ञं कत्वा, 'अघो रस्स....' (८४) त्यादिना अम्हि अघस्स रस्सत्तं कत्वा, इमिना कतरस्सा झतो अं-वचनस्स नं-आदेसे कते रूपं । भोगिनं ति पि एसेव नयो । वेस्सभुं ति एत्थ सति पि अं-वचने झस्साभावा; कुच्छी ति एत्थ सति पि अम्हि परे झे कतरस्साभावा[3] ।

२२५. योनन्नो[4] ति इदं, 'घपतो च....' ति (११८) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । छट्ठिकारिकारियनिद्देसा ।

दण्डिनो, भोगिनो, हे दण्डिनो, हे भोगिनो त्युदाहरणानि । तत्थ दण्डिनो ति दण्डीसद्दतो योम्हि कते, ईकारस्स झसञ्ञं कत्वा, 'अघो रस्स....' त्यादिना योम्हि अघस्स रस्सत्तं कत्वा, इमिना कतरस्सा झतो योवचनस्स नो-आदेसे कते रूपं । भोगिनो ति पि एसेव नयो । इतरेसु आलपनमेव विसेसो । अग्गयो, मुनयो त्यादिसु सति पि योम्हि परे झे अकतरस्सस्स झस्साभावा; सयम्भुवो त्यादिसु सति पि योम्हि परे कतरस्सझस्साभावा; दण्डिना, भोगिना त्यादिसु सति पि अकतरस्से झे योनमभावा ।

---

१. सयम्भुनो—सी० १ ।

1–2. तु०—"कतो रस्सो यस्स सो कतरस्सो, तस्मा कतरस्सा; झतो तिमिना तुल्याधिकरणं"—क० न्या०, पि० १८५ ।

3. तु० द०—त०, पि० १८६ ।

4. तु०—"योनं तम्हा नो"—सद्द०, सु० ४५२; सब्बेसं योनं सालपनानं झतो कतरस्सा परेसं नो इच्चादेसो होति....

अधिकारं विना योनं नो ति योगविभागतो ।
क्वची अकतरस्सा पि नो सारमतिनो यथा"॥—रूप०, सु० वु० १५१ ।

२२६. स्मिन्नि । २. ४. १६ ।

तस्मा झतो कतरस्सा स्मिं-वचनस्स नि होति । दण्डिनि, भोगिनि ।

कतरस्सा ति किमत्थं ? व्याधिम्हि ।

२२७. किस्स क वे च । २. ४. १७ ।

किमिच्चेतस्स को होति वप्पच्चये परे । क्व गतोसि त्वं देवानम्पियतिस्स ।

चसद्दग्गहणेन अवप्पच्चये परे पि को होति । को[1] तं निन्दितुमरहति[1], कथं बोधेसि त्वं धम्मं ।

वेति किमत्थं ? कुतो आगतोसि त्वं ।

---

२२६. स्मिन्नी[1] ति इदं 'स्माहिस्मिन्नं.....' ति (९९) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । कारिकारियिनिद्देसा ।

दण्डिनि*, भोगिनी + त्याद्युदाहरणानि । तत्थ दण्डिनी ति दण्डीसद्दतो स्मिंवचने कते, ईकारस्स झसञ्ञं कत्वा, अघस्स रस्सत्तञ्च कत्वा, इमिना कतरस्सा झतो स्मिंवचनस्स नि-आदेसे कते रूपं। व्याधिम्ही ति एत्थ सति पि स्मिम्हि परे झे कतरस्साभावा ।

२२७. किस्स क वे चे[2] ति इदं 'किस्मा वो चे' ति (२५३) सुत्ततो निक्खन्तं । चतुप्पदं । कारिकारियनिमित्तसमुच्चयनिद्देसा; विधिसुत्तं ।

क्व ति उदाहरणं । तत्थ क्व ति किंसद्दतो 'किस्मा वो चे' ति सत्तम्यत्थे वप्पच्चयं कत्वा 'त्वादयो विभत्तिसञ्ञायो' ति (२४९) तस्स विभत्तिसञ्ञं कत्वा, इमिना कादेसं कत्वा, ककारं वियोजेत्वा, न्यासमतेन वकारसहितसरस्मि परे 'सरलोपोमादेस.....' ति (८३) सुत्तेन पुब्बसरलोपं परसरपकतिभावं कत्वा[3], नेतब्बे नीते रूपं;

१-१. नत्थि से० पोत्थके ।

*. दण्डीनि—सी० । +. भोगीनी—सी० ।

1. तु०—"सस्यादितो वा"—सद्द०, सु० ४०६, "वज्जदस्सावीनमिनो अं-यो-स्मि-सुसु"—त०, सु० ४५३ ।

2. तु०—"किस्स वे क"—त०, सु० ४५६; रूप०, सु० वु० २७०; "किम् कः"—का० २.३.३०; "किमः कः"—पा० ७.२.१०३ ।

3. द०—क० न्या०, पि० १८७ ।

२२८. कु हिंहंसु च । २. ४. १८ ।

किमिच्चेतस्स कु होति हिं-हं इच्चेतेसु परेसु[1] । कुहिं गच्छसि, कुहं गच्छसि ।

चसद्दग्गहणेन हिञ्चनं-दाचनं-पच्चयेसु परेसु[2] अञ्ञत्था पि[2] कु होति । कुहिञ्चनं, कुदाचनं ।

२२९. सेसेसु च । २. ४. १९ ।

किमिच्चेतस्स को होति सेसेसु विभत्तिप्पच्चयेसु परेसु । को पकारो कथं, कं पकारं कथं ।

चसद्दग्गहणं ककारानुकड्ढनत्थं ।

रूपसिद्धिमतेन 'तेसु वुद्धि·····' ति (४०६) सुत्तेन पुब्बसरस्स लोपं कत्वा नेतब्बं[1] । को तं निन्दितुं, कथं बोधेसी ति चग्गहणफलानि । तत्थ च को ति किंसद्दतो सिम्हि कते, चग्गहणेन कादेसो, सिस्स च ओकारो । कथं ति किंसद्दतो केन पकारेना त्यत्थे 'किमिमेहि थं' ति (४०१) सुत्तेन थंपच्चयं कत्वा, इमिना किंसद्दस्स कादेसं कत्वा, थंपच्चयस्स विभत्तिसञ्ञं कत्वा, ततो नावचनं कत्वा, थंपच्चयन्तस्स निपातत्ता 'सब्बास·····' ति (२२१) नाविभत्तिलोपे कते रूपं[2] । कुतो ति एत्थ सति पि किंसद्दे त्वप्पच्चयस्साभावा ।

२२८. कु हिंहंसु चे[3] ति इदं 'किस्स क वे चे' ति (२२७) सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं । कू* ति कारियं, हिंहंसू ति निमित्तं, चा ति समुच्चयो; विधिसुत्तं ।

कुहिं, कुहं त्याद्युदाहरणानि । तत्थ कुहिं, कुहं ति किंसद्दतो 'हिंहंहिञ्चनं' ति (२५४) हिंहंपच्चये कते, 'किस्स क वे चे' त्यधिकिच्च इमिना कु-आदेसे कते, 'त्वादयो विभत्तिसञ्ञायो' ति (२४९) विभत्तिसञ्ञं कत्वा रूपसिद्धि वेदितब्बा । कुहिञ्चनं, कुदाचनं ति चग्गहणफलानि । तत्थ किंसद्दतो हिञ्चनं-दाचनं-पच्चये कते, चग्गहणेन कु-आदेसे कते रूपानि ।

२२९. सेसेसु चे[4] ति इदं 'किस्स क वे चे' ति सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं[5] ।

---

१. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । २–२. नत्थि से०, सी० १ पोत्थकेसु ।

*. कु—सी० ।

1. द०—रूप०, सु० वु० २७० ।

2. द०—क० न्या०, पि० १८७ ।

3. तु०—"कु हि-हं-हिञ्चि-हिञ्चनं-त्र-तो-थ-दाचनं-दासु"—सद्द०, सु० ४६०; "तहोः कुः"—का० २.६.३३; "कु तिहोः"—पा० ७.२.१०४ ।

4. तु०—"तं-हं-स्यादिसु च"— सद्द०, सु०, ४५७; पा० ७.२.१०३ ।

२३०. त्रतोथेसु च । २. ४. २० ।

किमिच्चेतस्स कु होति त्र-तो-थ इच्चेतेसु । कुत्र, कुतो, कुत्थ ।
चसद्दग्गहणं किंसद्दमनुकड्ढनत्थं ।

निमित्तअनुकड्ढननिद्देसा; विधिसुत्तं । सेसेसू ति हिंहंपच्चयतो सेसेसु विभत्तिप्पच्चयेसु । इदं हि सुत्तं 'किस्स क वे चे' ति एत्थ चसद्दस्स अनियमत्थत्ता तस्स नियमत्थं वुत्तं; तेन हिंहंपच्चयतो सेसेसु विभत्तिप्पच्चयेसू ति अत्थो दट्ठब्बो । इमस्स सुत्तस्स इहुच्चारणञ्च कत्थचि हिंहंपच्चयानं पि सङ्गहणत्थं[6] ।

को पकारो[7] कथं त्याद्युदाहरणानि । तत्थ को पकारो ति इदं सिम्हि कादेसस्सुदाहरणं, कथं तिदं थंपच्चयम्हि कादेसस्सुदाहरणं । तत्थ को ति किंसद्दतो सिम्हि कते, इमिना कादेसो; कथं ति किंसद्दतो 'किमिमेहि थं' ति (४०१) थंपच्चये कते, इमिना कादेसं कत्वा, नाममिव कत्वा, सिम्हि कते, थंपच्चयन्तस्स निपातत्ता 'सब्बास....' ति (२२१) सिलोपे कते रूपं । किंपकारं कथं ति च, केन पकारेन कथं ति च विभत्तिपच्चयनिमित्तानं वसेन वुत्तं । इदं सुत्तं हि 'किस्स क वे चे' ति सुत्ते चसद्दस्स नियमनत्थञ्च विकप्पनत्थञ्च वुत्तं । किं नियामेति; किं विकप्पेति ? चसद्देन हि अवप्पच्चये ति वुत्तत्ता वप्पच्चयतो अञ्ञस्मिं पच्चये ति अत्थो वुत्तो; एवं सति अनियमत्थो होति; 'सेसेसु चे' ति वुत्ते सेसेसु विभत्तिप्पच्चयेसू ति अत्थो विसेसत्थो होति—एवं नियामेति । किं विकप्पेति ? चग्गहणेन अवप्पच्चयस्मिं कादेसे सिद्धे सति पि इमस्स पुनुच्चारणेन किं ते जटाहि, किं ते अजिनसाटिया, किमेविदं मुत्तकरीसपुण्णं ति आदिसु विकप्पत्थो होती ति—एवं विकप्पेति । 'सेसेसु चे' ति एत्थ चसद्देन विकप्पेती ति पि वदन्ति[8] ।

२३०. त्रतोथेसु चे[9] ति इदं 'त्रथ सत्तमिया....' ति (२५१) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । निमित्तअनुकड्ढननिद्देसा; विधिसुत्तं ।

कुत्र, कुतो, कुत्था त्युदाहरणानि । तत्थ कुत्रा ति किंसद्दतो त्रप्पच्चयं कत्वा, 'किस्स क वे च' (२२७), 'कु हिंहंसु चे' ति (२२८) वत्तमाने इमिना कु-आदेसं कत्वा, त्रप्पच्चये विभत्तिसञ्ञे कते रूपं । कुतो ति तोप्पच्चयो व विसेसो । कुत्था ति थप्पच्चयं कत्वा, 'वग्गे घोसाघोसानं....' ति (२९) द्वेभावकरणमेव विसेसो ।

5-6. तु०—"द्विपदमिदं । मण्डूकगत्या कग्गहणमिहानुवत्तते, यथाधिकतं किंग्गहणञ्च । चग्गहणं कग्गहणानुकड्ढनत्थं; तत्थ पयोजनं हेट्ठा वुत्तमेव । 'किस्स क वे चे' तिमस्सानन्तरमिमस्मिं वत्तब्बे पि इहोच्चारणं मण्डूकगतियोप्यधिकारा होन्ती ति ञापनत्थं । पकति हेसाचरियानं यथा यथा वुच्चमाने विना व गन्थगरुतायाधिप्पायविञ्ञापनं होति, तथा तथा वत्वा अधिप्पायविञ्ञापनं"—क० न्या०, पि० १८८ ।

7–8. वि० अ० द०—क० न्या०, पि० १८८–१८९ ।

9. तु०—सद्द०, सु० ४६०; पा० ७.२.१०४ ।

२३१. सब्बस्सेतस्सकारो[1] वा । २. ४. २१ ।

सब्बस्स एतसद्दस्स अकारो होति वा तो-थ इच्चेतेसु । अतो, अत्थ; एत्तो, एत्थ ।

२३२. त्रे निच्चं । २. ४. २२ ।

सब्बस्स एतसद्दस्स अकारो होति निच्चं त्रप्पच्चये[2] परे । अत्र ।

२३३. ए तोथेसु वा । २. ४. २३ ।

सब्बस्सेव एतसद्दस्स एकारो होति वा तो-थ इच्चेतेसु परेसु[3] । एत्तो, अतो; एत्थ, अत्थ ।

---

२३१. सब्बस्सेतस्सकारो वा[1] ति इदं 'क्वचि तो पञ्चम्यत्थे' (२५०), 'त्रथ सत्तमिया····' ति (२५१) सुत्तेहि निक्खन्तं। चतुप्पदं। तब्बिसेसनसम्बन्धछट्ठीकारीकारियनिद्देसा; विधिसुत्तं।

अतो, अत्थ आद्युदाहरणानि। तत्थ अतो ति एतसद्दतो तोप्पच्चयं कत्वा, अनन्तरसुत्तमधिकिच्च इमिना अकारादेसं कत्वा, तोप्पच्चये विभत्तिसञ्ञे कते रूपं। एत्था ति एतसद्दतो थप्पच्चयं कत्वा, विभत्तिसञ्ञञ्च कत्वा, असदिसभावेन द्वेभावे कते रूपं। इतरानि वाग्गहणफलानि। तत्थ[2] एत्तो ति एतसद्दतो तोप्पच्चये कते, वाग्गहणेन इमिना आदेसमकत्वा, 'सरलोपोमादेस····' ति (८३) तोप्पच्चयस्स तकारपटिबद्धओकारस्मि परे पुब्बे तकारपटिबद्धअकारस्स लोपं कत्वा, परस्स ओकारस्स पकतिभावं कत्वा, नेतब्बे नीते, विभत्तिसञ्ञे च कते रूपं। एत्था ति एत्था पि एसेव नयो[3]।

२३२. त्रे निच्चं[4] ति इदं 'सब्बस्सेतस्सकारो वा' ति (२३१) सुत्ततो निक्खन्तं। द्विपदं। निमित्तविसेसननिद्देसा; विधिसुत्तं। अत्रा ति एतसद्दतो त्रप्पच्चयं कत्वा, इमिना अकारादेसं कत्वा, विभत्तिसञ्ञे कते रूपं।

२३३. ए तोथेसु वा*[5] ति इदं 'सब्बस्सेतस्सकारो वा' ति सुत्ततो

---

१. ० तस्साकारो—सी० २। २. त्रे पच्चये - सी० २। ३. नत्थि से० पोत्थके।

* सी० पोत्थके नत्थि।

1. तु०—"सब्बस्सेतस्सत्तं तो-थेसु वा"—सद्द०, सु० ४६१।

2-3.—तु०—क० न्या०, पि० १६१-१९२।

4. तु०—"निच्चं त्रे"—सद्द०, सु० ४६२; "सप्तम्यास्त्रल्"—पा० ५.३.१०, "एतदोऽन्"—त०, ५.३.५।

5. तु०—सद्द०, सु० ४६१।

२३४. इमस्सित्थन्दानिहतोधेसु च । २. ४. २४ ।

सब्बस्सेव इमसद्दस्स इकारो होति थं-दानि-ह-तो-ध इच्चेतेसु । इत्थं, इदानि, इह, इतो, इध ।

चसद्दग्गहणमवधारणत्थं ।

निक्खन्तं । तिपदं[1] । कारियनिमित्तसत्तमीसम्पिण्डननिद्देसा ।

एत्तो त्याद्युदाहरणानि । तत्थ एत्तो ति एतसद्दतो तोप्पच्चयं कत्वा, तस्स विभत्तिसञ्ञञ्च कत्वा, इमिना एतसद्दस्स एकारादेसं कत्वा, द्वेभावे कते रूपं । एत्था ति एत्थ पि थप्पच्चयकरणमेव विसेसो । अतो, अत्था ति वाग्गहणफलानि । तं वुत्तनयानेव । इदं सुत्तं हि 'सरलोपोमादेस....' ति सुत्तेन सिज्झनतो न्यासे पटिक्खित्तं[2]; रूपसिद्धियम्पन मूलपालिवसेन आगतो[3] ।

२३४. इमस्सित्थन्दानिहतोधेसु चे[4] ति इदं 'किमिमेहि थं' (४०१), 'इमस्मा रहि....' (२६१), 'इमस्मा हधा च' (२५६), 'क्वचि तो पञ्चम्यत्थे' ति (२५०) सुत्तेहि निक्खन्तं । चतुप्पदं । छट्ठीकारिकारियनिमित्तअवधारणनिद्देसा । अघो रस्स....' ति (८४) एत्थ चसद्दो विय सन्निट्ठानं अवधारणं ।

इत्थं, इदानि, इह, इतो, इधा त्युदाहरणानि । तत्थ इत्थं ति थंपच्चये कते, 'सब्बस्सेतस्सकारो वा' ति वत्तमाने, इमिना इमसद्दस्स इकारादेसं कत्वा, असदिसद्वेभावञ्च कत्वा, तद्धितत्ता नाममिव कत्वा, ततियेकवचने कते, थंपच्चयन्तस्स निपातत्ता 'सब्बास....' ति (२२१) नावचनस्स लोपे कते रूपं । इदानी ति दानिप्पच्चयो व विसेसो । इहा ति हप्पच्चयो व विसेसो । इतो ति तोप्पच्चयविभत्तिसञ्ञाकरणमेव विसेसो । इधा ति धप्पच्चयो व विसेसो ।

1-2. तु०—"तिपदमिदं । सब्बग्गहणञ्च एतग्गहणञ्च वत्तते । अत्थो च विग्गहो च सुविञ्ञेय्यो व । एत्तो त्यादीनि उदाहरणानि । तानि हेट्ठा वुत्तानेव । हेट्ठा वुत्तनयेन सिज्झनतो निरत्थकमेविदं, न चेसो पुरिमपाठो"—क० न्या०, पि० १६२ ।

3. द०—रूप०, सु० २६४ ।

4. तु०—"इदमिस थं-दानि-ह-तो-धेसु"—सद्द०, सु० ४६३; पाणिनीयसत्थे दट्ठब्बा सुत्ता—"इदम इश्"—५.३.३, "पञ्चम्यास्तसिल्"—५.३.७, "इदमो हः"—५.३.११, "इदमोर्हिल्"—५.३.१६, "अधुना"—५.३.१७, "दानीं च"—५.३.१८, "इदमस्थमुः"—५.३.२४, "कु तिहोः"—७.२.१०४, "एतदस्त्रतसोस्त्रतसौ चानुदात्तौ"—२.४.३३ ।

२३५. अ धुनाम्हि च । २. ४. २५ ।

सब्बस्सेव इमसद्दस्स अकारो होति धुनाम्हि[1] पच्चये परे[1] । अधुना । चसद्दग्गहणमवधारणत्थं ।

२३६. एत रहिम्हि । २. ४. २६ ।

सब्बस्सेव इमसद्दस्स एतादेसो होति रहिम्हि पच्चये परे । एतरहि ।

२३७. इत्थियमतो आप्पच्चयो । २. ४. २७ ।

इत्थियं वत्तमानाय[2] अकारन्ततो[3] आप्पच्चयो होति । सब्बा, या, ता[4], सा, का, कञ्ञा ।

---

२३५. अ धुनाम्हि चे[1] ति इदं 'इमस्मा रहि.....' ति (२६१) सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं । कारियनिमित्तअवधारणनिद्देसा; पुब्बसुत्ते विय सन्निट्ठानावधारणं । अधुना ति उदाहरणं । तम्पन इमसद्दतो 'इमस्मा.....' ति धुनाप्पच्चये कते, 'सब्बस्सेतस्सकारो वा' (२३१), 'इमस्सित्थन्दानि.....' ति (२३४) वत्तमाने, इमिना सब्बस्सेव इमसद्दस्स अकारादेसे कते रूपं ।

२३६. एत रहिम्ही[2] ति इदं 'इमस्मा.....' ति (२६१) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । कारियनिमित्तनिद्देसा; विधिसुत्तं । एतरही ति इमसद्दतो रहिप्पच्चयं कत्वा, 'सब्बस्सेतस्सकारो वा', 'इमस्सित्थन्दानि.....' ति वत्तमाने, इमिना सब्बस्सेव इमसद्दस्स एतादेसं कत्वा, विभत्तिसञ्ञे कते रूपं ।

२३७. इत्थियमतो आप्पच्चयो[3] ति इदं 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं । आधारसत्तमीअवधिनिद्देसा; विधिसुत्तं ।

१-१. धुना इच्चेतम्हि--से० । २. वत्तमाना—सी० २ । ३. अकारतो—से०, सी० १ । ४. नत्थि से० पोत्थके ।

1. तु०—"धुनाम्हत्तं"—सद्द०, सु० ४६४; पा० ५. ३. १७ ।
2. तु०—"रहिम्हेत"—सद्द०, सु० ४६५; "एतेतौ रथोः"—पा० ५. ३. ४ ।
3. तु०—"अवण्णन्तित्थिया आप्पच्चयो"—सद्द०, सु० ४६६; "स्त्रियामादा"—का० २. ४. ४९; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"स्त्रियां वर्तमानाल्लिङ्गादकारान्ताद् आप्रत्ययो भवति, स्त्रीपुंनपुंसकानि लोकलिङ्गानुशासनगम्यानि"; "अजाद्यतष्टाप्"—पा० ४. १. ४; "अजादीनामकारान्तस्य च वाच्यं यत् स्त्रीत्वं तत्र द्योत्ये टाप् स्यात्"—सि० कौ०, तस्सुपरि; लिङ्गसद्दस्स वण्णना "स्त्रियाम्" (पा० ४. १. ३) इति सुत्तवण्णनाप्पसङ्गे महाभाष्ये एवमागता—"स्त्रियामित्युच्यते । का स्त्री नाम ?

२३८. नदादितो वा ई । २. ४. २८ ।

नदादितो वा अनदादितो वा इत्थियं वत्तमानाय[1] अकारन्ततो[2] ईप्पच्चयो होति । नदी, मही, कुमारी, तरुणी[3], वारुणी, सखी, हत्थी, इत्थी ।

सब्बा, या, सा, का, कञ्ञा, इतरा त्युदाहरणानि । तत्थ सब्बा ति सब्बसद्दतो इमिना आप्पच्चये कते, सरलोपपकतिभावं कत्वा, सकत्थवाचकआप्पच्चयन्तत्ता 'तद्धितसमास·····' ति (६०३) एत्थ चसद्देन नाममिव कत्वा, सिम्हि कते, 'सेसतो·····' ति (२२०) सिम्हि लुत्ते रूपं। सा ति एत्थ 'एततेसन्तो' ति (१७४) सकारकरणमेव विसेसो । इतरा ति इतरसद्दतो आप्पच्चयो ।

२३८. नदादितो वा ई[1] ति इदं 'इत्थियमतो·····' ति (२३७) सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं । अवधिसमुच्चयविसयनिद्देसा; विधिसुत्तं । नदसद्दो[2] आदि यस्स सद्दस्सा ति नदादि, ततो; वासद्देन अनदादिं समुच्चेति; आदिसद्दस्स पकारत्थत्ता नदादिसद्देन अविञ्ञाणकवाचकं संगण्हाति, अनदादिसद्देन सविञ्ञाणकवाचकं संगण्हाति[3] ।

लोकत एते शब्दाः प्रसिद्धाः स्त्रीपुमान्नपुंसकमिति···किं पुनर्लोके दृष्ट्वा एतदवसीयते··· लिङ्गम् । किं पुनस्तत् ?

स्तनकेशवती स्त्री स्याल्लोमशः पुरुषः स्मृतः ।
उभयोरन्तरं यच्च तदभावे नपुंसकम् ॥

···तटे च सर्वलिङ्गानि दृष्ट्वा कोध्यवसास्यति···तस्मान्न वैयाकरणैः शक्यं लौकिक लिङ्गमास्थातुम् । अवश्यं च कश्चित् स्वकृतान्त आस्थेयः···लिङ्गमशिष्यं लोकाश्रयत्वाल्लिङ्गस्य···''; 'तत्त्वबोधिनी' इति सिद्धान्तकौमुदीटीकायं अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—''लोकप्रसिद्धं स्तनाद्यवयसंस्थानविशेषात्मकं लिङ्गं न व्याकरणे आश्रीयते, दारानित्यादौ नत्वाभावप्रसङ्गात्, तटस्तटीतटमित्यादौ यथायथं लिङ्गत्रितयनिबन्धनकार्याणामसिद्धिप्रसङ्गाच्च, किन्तु पारिभाषिकमेव लिङ्गत्रयम्···'' ।

१. वत्तमाना—सी० २ । २. अकारतो—से०, सी० १ । ३. करुणी—से० ।

1. तु०—''ई नदादीहि वा''—सद्द०, सु० ४६७; ''टिड्ढाणञ्द्वय···''—पा० ४. १. १५ ।

2–3. तु०—''वाग्गहणमनदादयो सम्पिण्डेति; नदो आदि यस्स सद्दस्स सो नदादि, ततो; आदिसद्दो चेत्थ पकारत्थवाचको''—क० न्या०, पि० १९४; ''···वाग्गहणमनदादिसङ्गहणत्थं, तेन पुथुगवादितो च ई···''—रूप०, सु० वु० १८७; ''नदादितो ङी''—मो० ३. २७; नदादिगणस्स विवरणं तत्थ गणपाठे एवमागतं—''नद मह कुमार तरुण···गो (विकप्पेन); पुंयोगतो इत्थियं वत्तमाना पुमुनो सञ्ञाभूता अपालकन्ता सद्दा इच्चादि नदादि (आकतिगणोयं)''; कारिका०, गा० २१२, २१३; रूप०, सु० वु १८८।

२३९. णवणिकणेय्यणन्तूहि । २. ४. २९ ।

णव-णिक-णेय्य-णन्तु इच्चेतेहि इत्थियं वत्तमानेहि ईप्पच्चयो होति । माणवी, पण्डवी, नाविकी, वेणतेय्यी, कुन्तेय्यी, गोतमी, गुणवती, सोमवती[1]।

नदी, मही, कुमारी, तरुणी त्याद्युदाहरणानि । तत्थ नदी ति नदसद्दतो इमिना ईप्पच्चयं कत्वा, सकत्थवाचक-ईप्पच्चयन्तत्ता 'तद्धितसमास....' ति (६०३) एत्थ चसद्देन नाममिव कत्वा, सिविभत्तिं कत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपं। मही ति महिसद्दतो इमिना ईप्पच्चयो, सिलोपो । कुमार-तरुण-वारुण-सख-सद्दतो पि एसेव नयो । इत्थी ति एत्थ इत्थिसद्दतो ईप्पच्चयो, सिलोपो; इत्थिसद्दो तिप्पच्चयेन निप्फन्नत्ता इकारन्तो, इमिना ईप्पच्चये कते ईकारन्तो भवति ।

२३९. णवणिकणेय्यणन्तूही[1] ति इदं 'णवोपग्वादीहि' (३५०), 'येन वा संसट्ठं....' (३५२), 'तमधीते....' (३५३), 'णेय्यो कत्तिकादीहि' (३४८), 'वा णप्पच्चे' (३४६), 'गुणादितो वन्तू' (३७०) त्यादीहि सुत्तेहि निक्खन्तं। एकपदमिदं सुत्तं। अवधि; विधिसुत्तं।

मानवी त्याद्युदाहरणानि। तत्थ मानवी ति मनुसद्दतो छट्ठेकवचने कते, तस्स 'झलतो सस्स....' ति (११७) नो-आदेसं कत्वा, अपच्चसद्दतो सिविभत्तिं कत्वा, तस्स अमादेसे कते, नेतब्बे नीते रूपं*। मनुनो तिं मनुस्स अपच्चं त्यत्थे, 'वा णपच्चे' ति वत्तमाने 'णवोपग्वादीही' ति छट्ठन्ततो मनुसद्दतो णवप्पच्चयं कत्वा, 'वुत्तट्ठानमप्पयोगो' तिदं परिभासं कत्वा, 'तेसं विभत्तियो....' ति (३१९) एत्थ तेसं-गहणेन विभत्ति-अपच्च-सद्दानमप्पयोगं कत्वा, 'वुद्धादिसरस्स....' ति (४०२) आदिसरस्स वुद्धिं कत्वा, तस्सानियमप्पसङ्गे, 'अयुवण्णानं....' ति (४०७) अकारस्स आकारवुद्धिं कत्वा, 'तेसं णो लोपं' ति (३९८) णम्हि लुत्ते, सरलोपपकतिभावं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, मानवसद्दस्स णवप्पच्चयन्तत्ता 'इत्थियमतो....' (२३७), 'नदादितो वा ई' ति (२३८) वत्तमाने, इमिना ईप्पच्चयं कत्वा, नाममिव कत्वा, सिवचनं कत्वा, सिम्हि लुत्ते रूपं। पण्डवी तिदं वुत्तनयमेव। नाविकी तिदं नावसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावे कते, चसद्देन नाममिव कत्वा, ततो नावचने कते, घतो नावचनस्सायादेससरलोपपकतिभावो कातब्बो। तरति इदं आख्यातं; तस्मा नावाय तरती त्यत्थे 'येन वा संसट्ठं....' ति (३५२) ततियन्ततो नावासद्दतो णिकप्पच्चयं कत्वा, तेसं-गहणेन विभत्ति-तरतिसद्दान-मप्पयोगं कत्वा, 'वुद्धादिसरस्स....' ति इमिना पज्जुन्नगतिवसेन आदिवुद्धिं कत्वा, तस्सानियमप्पसङ्गे, 'अयुवण्णानं....' ति आकारवुद्धिं कत्वा, णिकप्पच्चयन्तत्ता इमिना

---

१. सामवती—से० ।　　*. सी० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—''णव-णिक-ण-न्तु-णेय्येहि''—सद्द०, सु० ४६६; पा० ४. १. १५ ।

२४०. पतिभिक्खुराजीकारन्तेहि इनी । २. ४. ३० ।

पति-भिक्खु-राजीकारन्तेहि इत्थियं वत्तमानेहि लिङ्गेहि[1] इनीप्पच्चयो[2] होति । गहपतानी, भिक्खुनी, राजिनी, हत्थिनी, दण्डिनी, मेधाविनी, तपस्सिनी ।

ईप्पच्चयं कत्वा, सरलोपादिम्हि कते रूपं । वेणतेय्यी ति विणतसद्दतो आप्पच्चये च छट्ठेकवचने आयादेसे× च, अपच्चसद्दतो सिवचनस्स अं-आदेस-सरलोपपकतिभावे च कते, विणताय अप्पच्चं ति अत्थे छट्ठ्यन्ततो विणतासद्दतो 'वा णप्पच्चे' ति (३४६) वत्तमाने 'णेय्यो कत्तिकादिही' ति (३४८) णेय्यप्पच्चयं कत्वा, वुत्तनयेन वुद्धि-णलोपञ्च सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, णेय्यप्पच्चयन्तत्ता इमिना ईप्पच्चयादिम्हि कते रूपं। कुन्तेय्यी ति एत्था पि एसेव नयो । गोतमी ति गोतमस्स अपच्चं ति अत्थे 'वा णप्पच्चे' ति णप्पच्चयकरणमेव विसेसो; णप्पच्चयन्तत्ता इमिना ईप्पच्चयादिम्हि कते रूपं। गुणवती ति गुणो अस्स अत्थी ति अत्थे 'तदस्सात्थीति वी चे' ति (३६६) वत्तमाने, 'गुणादितो वन्तू' ति (३७०) सुत्तेन गुणसद्दतो वन्तुम्हि कते, न्तुप्पच्चयन्तत्ता इमिना ईप्पच्चयं कत्वा, 'नदादितो वा ई' ति वत्तमाने, 'न्तुस्स तमीकारे' ति (२४१) न्तुस्स तकारं कत्वा, सरलोपपकतिभावं कत्वा, नाममिव कत्वा, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं । इतरं सुविञ्ञेय्यमेव ।

२४०. **पतिभिक्खु* राजी×कारन्तेहि इनी**[1] ति इदं 'णवणिक····' ति (२३९) सुत्ततो निक्खन्तं। पतिभिक्खुराजीकारन्तेही ति अवधि इनी ति विसयी; विधिसुत्तं। पति च भिक्खु च राजा च ईकारन्तो चा ति, तथा; 'नदादितो वा ई' ति (२३८) सुत्ततो वाधिकारत्ता विदुनि, यक्खिनी ति सिज्झन्ति। विदुनी+ ति सरलोपरस्सत्तानि ।

गहपतानी त्याद्युदाहरणानि । तत्थ च गहपतानी ति गहपतिसद्दतो इनिम्हि कते, 'पञ्चादीनमत्तं' ति (९०) वत्तमाने, 'पतिस्सिनिम्ही' ति (९१) इनिम्हि च, पतिसद्दन्तस्स अत्तं कत्वा, 'वा परो असरूपा' ति (१३) परस्सिकारस्स लोपे कते, 'पुब्बो चे' ति (१६) पुब्बसरस्स दीघे कते, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं । भिक्खुनी ति भिक्खुसद्दतो इनीप्पच्चयं कत्वा, परसरलोपं कत्वा, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं । राजिनी ति इनीप्पच्चयं कत्वा, पकतिभावे कते, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं । हत्थिनी ति ईकारन्तहत्थिसद्दतो

---

१. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । २. इनिपच्चयो—से० । ×. आयदेसे—सी० ।

*. भिक्खू०—सी०; क० न्या० । *. राजि०—सी० । +. विदूनी—सी० ।

1. तु०—"पत्यादि-भिक्खादि-राजादीदन्तेहि इनी"—सद्द०, सु० ४६६, "इद्धिमन्तुतो च" त०, सु० ४७०; "इन्द्रवरुण···मातुलाचार्याणामानुक्"—पा०·४. १. ४९ ।

२४१. न्तुस्स तमीकारे । २. ४. ३१ ।

सब्बस्सेव न्तुप्पच्चयस्स तकारो[१] होति वा ईकारे परे । गुणवती, गुणवन्ती; कुलवती, कुलवन्ती; सतिमती, सतिमन्ती; महती, महन्ती; गोत्तमती[२], गोत्तमन्ती[२] ।

२४२. भवतो भोतो । २. ४. ३२ ।

सब्बस्सेव भवन्तसद्दस्स भोतादेसो होति ईकारे इत्थियं[३] कते[३] परे । भोति अय्ये, भोति कञ्ञे, भोति घरादिये[४] ।

इनीप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं । दण्डिनी++ ति ईकारन्ततो दण्डीसद्दतो इनीम्हि पच्चये कते रूपं । मेधाविनी, तपस्सिनी ति ईकारन्ततो इनीप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपानि ।

२४१. न्तुस्स तमीकारे[1] ति इदं 'णवणिक....' ति (२३९) सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदमिदं । न्तुस्सा ति सम्बन्धछट्ठी कारी, तं ति कारियं, ईकारे ति निमित्तसत्तमी; विधिसुत्तं । 'नदादितो वा ई' ति (२३८) सुत्ततो वासद्दो मण्डूकगत्यानुवत्तते[2] ।

गुणवती ति गुणवन्तुसद्दतो 'णवणिक....' ति सुत्तेन ईप्पच्चये कते, इमिना ईकारे परे न्तुस्स तकारं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं । इतरं वागहणफलं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । सतिमती ति एत्थ मन्तुप्पच्चयो व विसेसो । इतरं वागहणफलं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । महती ति महन्तसद्दतो 'नदादितो वा ई' ति ईप्पच्चयं कत्वा, 'सेसेसु न्तुवे' ति (१८७) न्तकारस्स न्तुमिव कत्वा, इमिना न्तुस्स तकारादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं । इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

२४२. भवतो भोतो[3] ति इदं 'न्तुस्स तमीकारे' ति (२४१) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । भवतो ति कारी, भोतो ति कारियं; विधिसुत्तं ।

भोती ति भवन्तसद्दतो 'नदादितो वा ई' ति ईप्पच्चयं कत्वा, 'सेसेसु न्तुवे' ति न्तुमिव कत्वा, 'न्तुस्स तमीकारे' ति वत्तमाने, इमिना भोतादेसं कत्वा, स्युप्पत्तिं कत्वा, तस्स गसञ्ञं कत्वा, ईकारस्स पसञ्ञं कत्वा, 'झलपा रस्सं' ति (२४७) ईकारस्स रस्सं कत्वा, गम्हि लुत्ते रूपं । इतरानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

---

१. तो—से० । २-२. गोमती गोमन्ती—से०, सी० १ । ३-३. इत्थीकते—से० । ४. खरादिये—सी० १, सी० २ । ++. दण्डीनी—सी० ।

1. तु०—"न्तुस्स तो ईकारे"—सद्द०, सु० ४७१ ।

2. तु०—क० न्या०, पि० १६६ ।

3. तु०—"भवन्तस्स भोत"—सद्द०, सु० ४७२ ।

२४३. भो गे तु । २. ४. ३३ ।

सब्बस्सेव भवन्तसद्दस्स भो होति गे परे । भो पुरिस, भो अग्गि, भो राज, भो सत्थ[1], भो दण्डि, भो सयम्भु ।

गे ति किमत्थं ? भवतो[2], भवं ।

तुसद्दग्गहणेन अञ्ञस्मिम्पि वचने सब्बस्सेव[3] भवन्तसद्दस्स भोन्त-भन्ते[4]-भोन्तो-भद्दे[5]-भोता-भोतो इच्चेते आदेसा होन्ति । भोन्त, भन्ते[6], भोन्तो, भद्दे, भोता, भोतो गोतमस्स ।

---

२४३. भो गे तू[1] ति इदं 'भवतो भोतो' ति (२४२) सुत्ततो निक्खन्तं; 'सेसतो लोपं....' ति (२२०) सुत्ततो वा निक्खन्तं । तिपदं । भो ति कारियं, गे ति निमित्त-सत्तमी, तू ति समुच्चयो; विधिसुत्तं ।

भो पुरिसा त्याद्युदाहरणानि । तत्थ च भो ति भवन्तसद्दतो 'आलपने चे' ति (२८७) आलपनत्थे सिवचनं कत्वा, तस्स गसञ्ञं कत्वा, इमिना भवन्तसद्दस्स भो-आदेसं कत्वा, गम्हि लुत्ते रूपं । इतरानि वुत्तसदिसानि । भवता ति भवन्तसद्दतो नाम्हि कते, गस्साभावा इमिनादेसमकत्वा, 'सेसेसु न्तुवे' ति (१८७) न्तुमिव कत्वा, 'तोतिता....' ति (१२७) सविभत्तिस्स न्तुस्स तादेसो । भोन्त, भन्ते, भोन्तो, भद्दे ति रूपचतुक्कानि[2] सिविभत्तिवसेन वुत्तानि । तत्थ च भोन्ता[3] ति भवन्तसद्दतो 'आलपने चे' ति सिवचनं कत्वा, गम्हि परे भोन्त-आदेसं कत्वा, गम्हि लुत्ते रूपं । इतरेसु पि भन्ते-भोन्तो-भद्दे-आदेसं कत्वा, गस्स लोपे कते रूपानि । भोता ति भवन्तसद्दतो नाविभत्तिं कत्वा, 'तोतिता....' ति तादेसे सम्पत्ते, इध तुग्गहणेन भवन्तसद्दस्स भोतादेसं कत्वा, 'कवचि धातु....' ति (५१९) नावचनस्स लोपे कते रूपं । भोतो ति भवन्त-सद्दतो सविभत्तिं कत्वा, तुग्गहणेन भोतो-आदेसं कत्वा, वुत्तनयेन सविभत्तिलोपे कते रूपं[4] ।

---

१. सत्था—सी० २ । २. भवता—से० । ३. सब्बस्स—से०, सी० १ । ४. भोन्ते—से० । ५. नत्थि से० पोत्थके । ६. भोन्ते—से० ।

1. तु०—''भोगे''—त०, सु० ४७३, (अथवे)क-बन्हत्थेसु भो निपातो''—त०, सु० ४७४; वि० अ० द०— त०, भा० १, पि० ८९-९०, १७०-१७२ ।

2. तु०—''सद्दाधिका अत्थाधिको कत्वा, तप्फलं दस्सेन्तो, 'तुग्गहणेन अञ्ञस्मिम्पि वचने सब्बस्स भवन्तसद्दस्स भोन्त-भन्ते-भोन्तो-भद्दे-भोता-भोतो इच्चेते आदेसा होन्ती' ति आह । भोन्त इत्यादीनि चत्तारि सिम्हि रूपानि...''—क० न्या०, पि० १९७ ।

3–4. तु०—त० ।

२४४. ओभावो क्वचि योसु वकारस्स । २. ४. ३४ ।

भवन्त इच्चेतस्स वकारस्स ओभावो होति क्वचि यो इच्चेतेसु । इमं भोन्तो निसामेथ, भवन्तो वा ।

२४५. भदन्तस्स भद्दन्तभन्ते । २. ४. ३५ ।

सब्बस्सेव भदन्तसद्दस्स भद्दन्त-भन्ते इच्चेते आदेसा होन्ति क्वचि गे परे योसु च । हे भद्दन्त, भन्ते, भदन्ता वा ।

---

२४४. ओभावो क्वचि योसु वकारस्सा[1] ति इदं 'भोगे तू' ति (२४३) सुत्ततो निक्खन्तं । चतुप्पदं । ओभावो ति कारियं, क्वची ति क्वचत्थो, योसू ति निमित्तसत्तमी, वकारस्सा ति सम्बन्धछट्ठी कारी; विधिसुत्तं ।

भोन्तो ति भवन्तसद्दतो योम्हि कते, इमिना वकारस्स ओकारं कत्वा, 'सरा सरे लोपं ति (१२) पुब्बलोपपरनयनानि कत्वा, 'सेसेसु न्तुवे' ति (१८७) न्तुमिव कत्वा, 'न्तुस्स न्तो' ति (१२२) सविभत्तिस्स न्तुस्स न्तो-आदेसे कते रूपं । भवन्तो ति क्वचिग्गहणफलं[2] । तं पन भवन्तसद्दतो योम्हि कते, क्वचिसद्देन निवारितत्ता ओकारादेसमकत्वा, न्तुमिव कत्वा, 'न्तुस्स न्तो' ति सविभत्तिस्स न्तुस्स न्तो-आदेसे कते रूपं ।

२४५. भदन्तस्स* भद्दन्तभन्ते[3] ति इदं द्विपदं । भदन्तस्सा ति सम्बन्धछट्ठी कारी, भद्दन्तभन्ते ति कारियं; विधिसुत्तं ।

---

*. भवन्तस्स—क० न्या० (म०) ।

1. तु०—"(मतन्तरे) वस्सोभावो क्वचि योसु"—सद्द०, सु० ४८६; न्यासस्स मरम्मसंस्करणे इदं सुत्तं '२४३ (क)' इति आगतं; तस्स सीहलसंस्करणे तु '२४४' इति साधीनरूपेण आगतं ।

2. तु०—क० न्या०, पि० १९७ ।

3. तु०—"भद्दन्तस्स वा भदन्ते गे"—सद्द०, सु० ४८७,' "(मतन्तरे) भदन्त-भन्ते योसु च" —त०, सु० ४८८; कच्चायनन्यासस्स मरम्मसंस्करणे इदं सुत्तं '२४३ (ख)' इति आगतं; तस्स सीहलसंस्करणे तु साधीनरूपेण '२४४' इति । इमं सुत्तं पुरिमं सुत्तञ्च अधिकिच्च मरम्मसंस्करणे सुत्तानं संख्या अग्गे द्वीहि सुत्तेहि न्यूना होति, यथा सुत्तसंख्या ३१७ तत्थ ३१५ इति होति । न्यासे इदं सुत्तं निरत्थकं पि घोसितं ति विचारणीयमेतं । तत्थ वुत्तं—"भदन्त···भन्ते किमत्थमिदं ? भदन्तसद्दस्स भद्दन्तभन्ते इच्चेते आदेसा होन्ति क्वचि गे परे योसू ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । क्वचियोग्गहणमिहानुवत्तते । सेसं सुविञ्ञेय्यमेव । उदाहरणानि पि सुविञ्ञेय्यानेव । अनन्तरसुत्ते तुग्गहणेनेव सिज्झनतो निरत्थको वेसो, न चेसो पुरिमपाठो"—पि० १९८ ।

२४६. अकारपिताद्यन्तानमा । २. ४. ३६ ।

अकारो च पितादीनमन्तो च आकारत्तमापज्जते गे परे । भो पुरिसा, भो पिता, भो माता, भो सत्था ।

२४७. झलपा रस्सं । २. ४. ३७ ।

झ-ल-प[1] इच्चेते रस्समापज्जन्ते गे परे । भो दण्डि, भो सयम्भु, भोति इत्थि, भोति वधु ।

भद्दन्ता ति भदन्तसद्दतो आलपनेकवचनं कत्वा, इमिना भदन्तसद्दस्स भद्दन्त-आदेसं कत्वा, गम्हि लुत्ते रूपं । भन्ते ति एत्थ पि भदन्तसद्दस्स भन्ते-आदेसं कत्वा, गस्स लोपे कते रूपं । भद्दन्ता ति भदन्तसद्दतो योम्हि कते, भद्दन्त-आदेसे कते, 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) योवचनस्स आकारादेसे कते रूपं ।

२४६. अकारपिताद्यन्तानमा[1] ति इदं 'सेसतो लोपं गसिपी' ति (२२०) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । अकारपिताद्यन्तानं ति सम्बन्धछट्ठी कारी, आ ति कारियं; विधिसुत्तं । अकारो च पितादि-अन्तो च अकारपिताद्यन्ता, तेसं अकारपिताद्यन्तानं । भो पुरिसा, भो राजा ति अकारन्तो; भो पिता, भो सत्था, भो माता त्यादिसु+ पिताद्यन्तो ।

पुरिसा ति पुरिससद्दतो आलपनेकवचनं कत्वा, पुरिससद्दन्तभूतस्स अकारस्स इमिना गे परे आकारत्तं कत्वा, गम्हि लुत्ते रूपं । इतरं तस्सदिसं । भो पिता ति पितुसद्दतो आलपनेकवचनं कत्वा, गम्हि परे पितुसद्दन्तस्स आकारं कत्वा, गम्हि लुत्ते रूपं । इतरानि तस्सदिसानि ।

२४७. झलपा रस्सं[2] ति इदं 'सेसतो लोपं·····' ति (२२०) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं ।[3] कारिकारियनिद्देसा*; विधिसुत्तं । भो दण्डी ति दण्डीसद्दतो आलपनेकवचनं कत्वा, दण्डीसद्दन्तस्स झसञ्ञं कत्वा, इमिना गम्हि रस्से कते रूपं । सयम्भू ति लसञ्ञकरणमेव विसेसो । इत्थी, वधू ति पसञ्ञकरणमेव विसेसो ।

---

१. झला—से० । +. त्यादीसु—सी० । *. कारी०—सी० ।

1. तु०—"(मतन्तरे) अकार-पितादीनमा"—सद्द०, सु० ४७५ ।

2. तु०—"प-झ-ला निच्चं"—सद्द०, सु० ४७७ ।

3. तु०—"द्विपदमिदं । गेग्गहणमिहानुवत्तते । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व, विग्गहो च । नन्वसति पिमस्मि 'अघोरस्समेकवचनयो स्वपि चे' तिमिना व सिज्झति, झलपानमघत्ता ति ? सिज्झति; एवं सति पि नियमकरणत्थं; सिद्धे सत्यारम्भो नियमाय वा होति ञापनाय वा,

२४८. आकारो वा । २. ४. ३८ ।

आकारो रस्समापज्जते वा गे परे। भो राज, भो राजा; भो अत्त, भो अत्ता; भो सख, भो सखा; भो सत्थ, भो सत्था ।

इति नामकप्पे चतुत्थो कण्डो ।

---

२४८. आकारो वा[1] ति इदं 'झलपा रस्सं' ति (२४७) सुत्ततो निक्खन्तं। द्विपदं। कारियविकप्पनत्थनिद्देसा[2] ।

भो राजा त्याद्युदाहरणानि। तत्थ च राजा ति राजसद्दतो आलपनेकवचने कते, 'अकारपिताद्यन्तानमा' ति (२४६) राजसद्दन्तस्स आकारं कत्वा, इमिना गम्हि आकारस्स रस्सत्ते कते रूपं। इतरं वागहणफलं। सेसानि सुविञ्ञेय्यानेव। आकारस्स पुन रस्सकरणं अदुरट्ठालपनत्थं; वुत्तञ्च—"अदुरट्ठालपने वायं"[3] ति।

इति कच्चायनवण्णनायं नामकप्पस्स
चतुत्थकण्डवण्णना ।

अयं पनेत्थ नियमो; सचे गे परे रस्समापज्जन्ति उपरि सुत्तविसयं ठपेत्वा 'झलपा चा' ति, तेन भोति आदिसु भोसद्दन्तस्स गे परे न रस्सो होति"—क० न्या०, पि० १९८; "'अघो रस्सं....' ति आदिना व सिद्धे पि रस्सत्ते पुनारम्भो नियमत्थो; तेन भो गो ति आदिसु न भवति"—रूप०, सु० वु०१५२ ।

1. तु०—"सो रस्सं वा"—सद्द०, सु० ४७६ ।
2. तु०—"लिङ्गस्स सम्बन्धी आकारो रस्समापज्जते गे परे विकप्पेन"—रूप०, सु० वु० ७३ ।
3. व०—त० ।

(५) पञ्चमो कण्डो

२४९. त्वादयो विभत्तिसञ्ञायो । २. ५. १ ।

तो आदि येसं पच्चयानं ते होन्ति त्वादयो, ते पच्चया त्वादयो विभत्तिसञ्ञा व दट्ठब्बा । सब्बतो, यतो, ततो, कुतो, अतो, इतो, सब्बदा, यदा, तदा, कदा[1], इध, इदानि ।

---

(५) पञ्चमो कण्डो

२४९. त्वादयो विभत्तिसञ्ञायो[1] ति इदं 'क्वचि तो पञ्चम्यत्थे' ति (२५०) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । त्वादयो ति पकतिकम्मनिद्देसो, विभत्तिसञ्ञायो ति विकतिकम्मनिद्देसो; परिभासासुत्तं, सञ्ञङ्गपरिभासासुत्तं ति पि वदन्ति । तो आदि येसं ते त्वादयो, त्वादि-दानिपरियन्ता ये पच्चया ते पच्चया त्वादयो; विभत्तिसञ्ञा एतेसं ति विभत्तिसञ्ञायो, एतेसं त्वादीनं+ पच्चयानं विभत्तिसञ्ञायो । एत्थ च विभत्तिसञ्ञायो ति बहुब्बीहिसमासस्स++ अञ्ञपदत्थप्पधानत्ता पुल्लिङ्गे सञ्ञासद्दस्स चेत्थ रस्सत्ते कत्तब्बे, 'क्वचादि....' ति (४०५) एत्थ क्वचिग्गहणेन पुल्लिङ्गे रस्साभावो; त्वादयो ति इमिना तुल्याधिकरणं । त्वादयो[2] दानिपरियन्ता

---

१. नत्थि से० पोत्थके ।   +. त्वादिनं—सी० ।   ++. बहुब्बिहि०—सी० ।

1. तु०—"त्वादयो एक-बव्हत्थेसु विभत्तिसञ्ञा"—सद्द०, सु० ४९२; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"तो-आदयो पच्चया दाचनंपरियन्ता एकत्थे च बव्हत्थे च यथारहं वत्तमाना विभत्तिसञ्ञा भवति-—सब्बतो यतो..."; न्यासे तु अस्स विवरणमेवं आगतं—"'त्वादयो विभत्तिसञ्ञायो' किमत्थमिदमुच्चते ? यथा पुरिसो त्यादिसु विभत्त्यन्तत्ता न विभत्तियो होन्ति वत्तब्बस्सत्थविसेसस्साभावा, एवं पञ्चम्याद्यत्थेसु तोपच्चयादीनं सम्भूतत्ता वत्तब्बस्सत्थविसेसस्साभावा पञ्चम्यादयो न होन्ति, अतब्बिसयत्ता अञ्ञा विभत्तियो चा ति सब्बतो त्यादीनि अनिप्फन्नानि भवेय्युं; न हि नामनिपातोपसग्गाख्यातसद्दा यथानुरूपं स्यादित्यादि विभत्तिह्यनिप्फन्ना सन्तो ति चिन्तायं किमञ्ञेन विभत्तिकरणेन, त्वादयो पच्चया दानिप्पच्चयपरियन्ता विभत्तिसञ्ञा व दट्ठब्बा ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं..."—क० न्या०, पि० १९९ ।

२५०. क्वचि तो पञ्चम्यत्थे । २. ५. २ ।

क्वचि तोप्पच्चयो[1] होति पञ्चम्यत्थे । सब्बतो, यतो, ततो, कुतो, अतो, इतो ।

क्वची ति किमत्थं ? इमस्मा[2], सब्बस्मा ।

पच्चया विभत्तिसञ्ञायो होन्ती ति अत्थो[3] । केचि सञ्ञायो ति चेत्थ पुल्लिङ्गत्ता रस्सं कत्वा पुन दीघो कातब्बो ति वदन्ति ।

सब्बतो त्याद्युदाहरणानि । तत्थ च सब्बतो ति सब्बसद्दा सब्बस्मा सब्बेही ति वा अत्थे 'क्वचि तो....' ति (२५०) पञ्चम्यत्थे तोप्पच्चयं कत्वा, इमिना तोप्पच्चये विभत्तिसञ्ञे कते रूपं । यतो, ततो त्यादि वुत्तनयानेव । कुतो ति एत्थ किंसद्दस्स 'त्रतोथेसु चे' ति (२३०) कु-आदेसकरणमेव विसेसो । अतो ति एत्थ तसद्दस्स 'सब्बस्सेतस्सकारो वा' ति (२३१) अकारकरणमेव विसेसो । इतो ति एत्थ इमसद्दस्स 'इमस्सित्थन्दानि....' ति (२३४) इकारादेसकरणमेव विसेसो । सब्बदा ति सब्बसद्दतो सब्बस्मिं सब्बेसू ति वा अत्थे 'किंसब्बञ्ञेक....' ति (२५९) दाप्पच्चये कते, इमिना विभत्तिसञ्ञं कत्वा, रूपसिद्धि वेदितब्बा । यदा, तदा ति वुत्त-नया व । इधा ति इमसद्दतो 'त्रथ सत्तमिया....' ति (२५१) वत्तमाने, 'इमस्सा हधा चे' ति (२५६) धप्पच्चये कते, 'इमस्सित्थन्दानि....' ति इमसद्दस्स इकारकरणमेव विसेसो । इदानी ति दानिप्पच्चयो व विसेसो ।

२५०. क्वचि तो पञ्चम्यत्थे[1] ति इदं 'लिङ्गञ्च निपच्चते*' ति (५३) सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं । क्वची ति क्वचत्थो, तो ति विसयी, पञ्चम्यत्थे ति विसयो; विधि-सुत्तं । यतो, कुतो, अतो, इतो त्याद्युदाहरणानि; तानि हेट्ठा वुत्तानेवा ति । सब्बस्मा ति एत्थ सति पि पञ्चम्यत्थे क्वचिसद्देन निवारितत्ता ।

---

१. तो पच्चयो—से० । २. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि ।

*. निप्फज्जते—सी० (सब्बत्थ) ।

2-3. तु०—"तो आदि येसं दानिपरियन्तानं पच्चयानं ते होन्ति पच्चया त्वादयो; ते पच्चया विभत्तिसञ्ञा होन्ति । तेन तदन्तानं पि विभत्यन्तत्ता पदत्तं सिद्धं होति" —रूप०, सु० वु० २६१ ।

1. तु०—"ततिया-पञ्चमी-छट्ठी-सत्तमियत्थेसु तो क्वचि"—सद्द०, सु० ४६३; "पञ्चम्यास्तस्" —का० २. ६. २८; "सर्वनाम्नोऽब्व्यादेर्बहोश्चैव पञ्चम्यन्तात् तस्प्रत्ययो भवति वा"—त०, वुत्तियं; "पञ्चम्यास्तसिल्"—पा० ५. ३. ७ ।

२५१. त्र-थ सत्तमिया सब्बनामेहि । २. ५. ३ ।

त्र-थ इच्चेते पच्चया होन्ति सत्तम्यत्थे सब्बनामेहि । सब्बत्र, सब्बत्थ; यत्र, यत्थ; तत्र, तत्थ ।

२५२. सब्बतो धि[1] । २. ५. ४ ।

सब्ब इच्चेतस्मा धिप्पच्चयो[2] होति क्वचि सत्तम्यत्थे । सब्बधि[3], सब्बस्मि ।

२५३. किस्मा वो च[4] । २. ५. ५ ।

किमिच्चेतस्मा वप्पच्चयो होति सत्तम्यत्थे क्वचि । क्व गतोसि त्वं देवानम्पियतिस्स ।

क्वची[5] ति किमत्थं ? कस्मि गतोसि[5] ।

---

२५१. त्रथ सत्तमिया सब्बनामेही[1] ति इदं 'क्वचि तो पञ्चम्यत्थे' ति (२५०) सुत्ततो निक्खन्तं; 'लिङ्गञ्च निपच्चते', 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि पि निक्खन्तं। तिपदं । त्रथा ति विसयी, सत्तमिया ति विसयो, सब्बनामेही ति अवधि; विधिसुत्तं ।

सब्बत्र त्याद्युदाहरणानि । तत्थ सब्बत्रा ति सब्बसद्दतो सब्बस्मि सब्बेसू ति वा अत्थे इमिना त्रप्पच्चयं कत्वा, विभत्तिसञ्ञे कते रूपं । इतरस्मि थप्पच्चयो व विसेसो ।

२५२. सब्बतो धी[2] ति इदं 'त्रथ सत्तमिया....' ति सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । अवधिविसयीनिद्देसा । सब्बधी ति सब्बसद्दतो इमिना सत्तम्यत्थे धिप्पच्चयं कत्वा, विभत्तिसञ्ञे कते रूपं ।

२५३. किस्मा वो*[3] ति इदं 'त्रथ सत्तमिया....' ति सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं ।

---

१. धी—सी० २ । २. धीप्पच्चयो—सी० २ । ३. सब्बधी—सी० २ । ४. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । ५-५ से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । *. 'वो च' इति पाठभेदो सी० २ पोत्थके टिप्पणियं ।

1, तु०—"सत्तमिया त्र-थ सब्बनामतो"—सद्द०, सु० ४६४; "त्र सप्तम्याः"—का० २. ६. २९; "सर्वनाम्नोऽद्व्यादेर्बहोश्चैव सप्तम्यन्तात् त्रप्रत्ययो भवति वा"—त०, वुत्तियं; "सप्तम्यास्त्रल्"—पा० ५. ३. १० ।

2. तु०—"सब्बस्मा धि"—सद्द०, सु० ५०२ ।

3. तु०—"सत्तमिया व किम्हा"—त०, सु० ४९९; "अत् क्व च"—का० २. ६. ३२; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"किमः सप्तमयन्तादद् भवति, क्वादेशश्च"; "क्वाति"—पा० ७. २. १०५ ।

२५४. हिंहंहिञ्चनं । २. ५. ६ ।

किमिच्चेतस्मा हिं-हं-हिञ्चनं इच्चेते पच्चया होन्ति सत्तम्यत्थे। कुहिं, कुहं, कुहिञ्चनं ।

२५५. तम्हा च । २. ५. ७ ।

तम्हा च हिं-हं इच्चेते पच्चया होन्ति सत्तम्यत्थे । तहिं, तहं । चसद्दग्गहणं हिञ्चनग्गहणनिवत्तनत्थं ।

२५६. इमस्मा हधा च । २. ५. ८ ।

इमस्मा ह-ध इच्चेते पच्चया होन्ति सत्तम्यत्थे । इह, इध । चसद्दग्गहणमवधारणत्थं ।

अवधिविसयीनिद्देसा । क्व इति किंसद्दतो वप्पच्चयं कत्वा, 'किस्स क वे चे' ति (२२७) किंसद्दस्स कादेसं कत्वा, ककारं वियोजेत्वा, 'सरलोपोमादेस·····' ति (८३) सुत्तेन वप्पच्चये परे पुब्बस्स अकारस्स लोपं कत्वा, वकारावयवस्स अकारस्स पकतिभावं कत्वा, नेतब्ब नेत्वा, विभत्तिसञ्ञे कते रूपं ।

२५४. **हिंहंहिञ्चनं**[1] ति इदं 'त्रथ सत्तमिया·····' ति सुत्ततो निक्खन्तं। एकपदमेव । विसयो; विधिसुत्तं । कुहिं, कुहं, कुहिञ्चनं त्युदाहरणानि। तत्थ किंसद्दतो इमिना हिं-हं-हिञ्चनं-पच्चयं कत्वा, 'कु हिंहंसु चे' ति (२२८) कु-आदेसे कते रूपं ।

२५५. **तम्हा चे**[2] ति इदं 'हिंहंहिञ्चनं' ति सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । अवधिनिवत्तनत्थनिद्देसा । तहिं, तहं ति उदाहरणानि । तत्थ तहिं ति तसद्दतो इमिना हिंपच्चयं कत्वा, विभत्तिसञ्ञे कते रूपं । इतरस्मिं हंपच्चयो व विसेसो।

२५६. **इमस्मा हधा चे**[3] ति इदं 'त्रथ सत्तमिया·····' ति सुत्ततो निक्खन्तं। तिपदं । अवधिविसयीअवधारणनिद्देसा। इह, इधा ति उदाहरणानि । तानि पन इमसद्दतो

---

1. तु०—"हिं-हं-हिञ्चनं-हिञ्चि"—सद्द०, सु० ५००; "किमः"—का० २. ६. ३१; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"किमः सप्तम्यन्ताद् हो भवति वा" ।
2. तु०—"ततो हिं-हं"—सद्द०, सु० ५०१ ।
3. तु०—"इवतो ह-धा"—त०, सु० ५०३; "इदमो: ह:"—का० २. ६. ३०; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"इदमः सप्तम्यन्ताद् हो भवति वा"; "इदमो हः" —पा० ५. ३. ११ ।

२५७. यतो हिं । २. ५. ९ ।

तस्मा यतो हिं-पच्चयो होति सत्तम्यत्थे । यहिं ।

२५८. काले । २. ५. १० ।

काले इच्चेतमधिकारत्थं वेदितब्बं ।

२५९. किंसब्बञ्ञेकयकूहि[1] दादाचनं । २. ५. ११ ।

किं-सब्ब-अञ्ञ-एक-य-कु इच्चेतेहि दा-दाचनं इच्चेते पच्चया होन्ति काले सत्तम्यत्थे । कदा, सब्बदा, अञ्ञदा, एकदा, यदा, कुदाचनं ।

इमिना हप्पच्चय-धप्पच्चये कत्वा, इमसद्दस्स वुत्तनयेन इकारं कत्वा, विभत्तिसञ्ञे कते रूपानि ।

२५७. यतो हिं[1] ति इदं 'त्रथ सत्तमिया....' ति सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । अवधिविसयीनिद्देसा । यहिं ति यसद्दतो इमिना हिंपच्चयविभत्तिसञ्ञे कते रूपं ।

२५८. काले[2] ति इदं 'त्रथ सत्तमिया....' त्यादिपच्चयविधिसुत्तेहि निक्खन्तं । एकपदमेव । विसयनिद्देसो; अधिकारसुत्तं ।

२५९. किंसब्बञ्ञेकयकूहि दादाचनं[3] ति इदं 'त्रथ सत्तमिया....', 'किस्मा वो....' ति (२५३) सुत्तेहि निक्खन्तं । द्विपदमिदं । किंसब्बञ्ञेकयकूही ति अवधि, दादाचनं ति विसयी; विधिसुत्तं ।

कदा त्याद्युदाहरणानि । तत्थ कदा ति किंसद्दतो किस्मिं काले त्यत्थे इमिना दाप्पच्चयं कत्वा, 'सेसेसु चे' ति (२२९) कादेसे च विभत्तिसञ्ञे च कते रूपं । इतरानि वुत्तसदिसानि । कुदाचनं ति इमिना दाचनं-पच्चयं कत्वा, 'कु हिंहंसु चा' ति (२२८) एत्थ चग्गहणेन क्वादेसे च विभत्तिसञ्ञे च कते रूपं ।

---

१. ० यकुहि—से० ।

1. तु०—"यस्मा हिं"—सद्द०, सु० ५०४ ।

2–3. सु० सं० २५८ + २५९ = "किं-सब्बञ्ञेक-य-कूहि काले दा-दाचनं"—त०, सु० ५०५; "काले किंसर्वयदेकानेभ्य एव दा"—का० २, ६. ३४; त० वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"एभ्यः काले वर्तमानेभ्यः सप्तम्यन्तेभ्यो दाप्रत्ययो भवति"; "सर्वैकान्यकियत्तदः काले दा"—पा० ५.३.१५; अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—"सप्तम्यन्तेभ्यः कालार्थेभ्यः स्वार्थे दा स्यात्"—सि० कौ० ।

२६०. तम्हा दानि च । २. ५. १२ ।

त इच्चेतस्मा दानि-दा इच्चेते पच्चया होन्ति काले सत्तम्यत्थे। तदानि, तदा ।

चसद्दग्गहणं दापच्चयमनुकड्ढनत्थं ।

२६१. इमस्मा रहिधुनादानि च । २. ५. १३ ।

इमस्मा रहि-धुना-दानि इच्चेते पच्चया होन्ति काले सत्तम्यत्थे । एतरहि, अधुना, इदानि ।

चसद्दग्गहणमनुकड्ढनत्थं[१] ।

---

२६०. तम्हा दानि चे[1] ति इदं 'त्रथ सत्तमिया....' ति सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं । तम्हा ति अवधि, दानी ति विसयी, चा ति अनुकड्ढनं; विधिसुत्तं । तदानि, तदा ति उदाहरणानि । तत्थ तदानी ति तसद्दतो इमिना तस्मिं काले त्यत्थे दानिप्पच्चयं कत्वा, विभत्तिसञ्ञे कते रूपं । इतरस्मिं दाप्पचयो व विसेसो ।

२६१. इमस्मा रहिधुनादानि चे[2] ति इदं 'त्रथ सत्तमिया....' ति सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं । इमस्मा ति अवधि, रहिधुनादानी ति विसयी, चा ति अनुकड्ढनं; विधिसुत्तं ।

एतरही त्याद्युदाहरणानि । तत्थ च एतरही ति इमसद्दतो इमस्मिं काले त्यत्थे इमिना रहिम्हि कते, 'एत रहिम्ही' ति (२३६) इमसद्दस्स एतादेसं कत्वा, विभत्तिसञ्ञे

---

१. ०दानिपच्चयमनुकड्ढनत्थं—सी० २; दापच्चया०—से० ।

1. तु०—"तम्हा दा-दानि"—सद्द०, सु० ५०६; "तदो दा च"—पा० ५. ३.१९ ।

2. तु०—"इदतो रहि-धुना-दानि"—सद्द०, सु० ५०७; तत्थेव अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—"केचि पन गरू यदा तदा सदा इदानी ति इमेहि चतूहि पदेहि सद्धिं पच्चेक काले ति पदं योजेत्वा वदन्ति-'यदा काले' ति आदिना; तं न गहेतब्बं, दा-दानिपच्चयानं कालवाचकत्ता, 'यस्मिं काले' ति वुत्तसदिसतापज्जनतो च, साट्ठकथे तेपिटके बुद्धवचने तादिसस्स नयस्स अदस्सनतो च....लोकवोहारविसये 'यस्मा कारणा' ति आदीनि न वत्तब्बानि, परमत्थविसये पन वुत्तप्पकारं अत्थं पटिच्च वत्तब्बं ति"; "इदमो र्ह्यधुना दानीम्"—का० २. ६. ३५; अस्स सुत्तस्स अत्थवण्णना वुत्तियं एवमागता—"काले वर्तमानादिदमः सप्तम्यन्ताद् र्हि, धुना, दानीम् इत्येते प्रत्ययाः भवन्ति; "इदमो र्हिल्"—पा० ५.३.१६, "अनद्यतने र्हिलन्यतरस्याम्"—त०, ५. ३. २१, "अधुना"—त०, ५.३.१७, "दानीं च"—त०, ५.३.१८ ।

२६२. सब्बस्स सो दाम्हि वा । २. ५. १४ ।

सब्ब इच्चेतस्स सकारादेसो होति वा दाम्हि पच्चये परे । सदा, सब्बदा ।

२६३. अवण्णो ये लोपञ्च । २. ५. १५ ।

अवण्णो यप्पच्चये[1] परे लोपमापज्जते । बाहुसच्चं, पण्डिच्चं, वेपुल्लं, कारुञ्ञं, नेपुञ्ञं[2], कोसल्लं, सामञ्ञं, सोहज्जं ।

चसद्दग्गहणं वाग्गहणनिवत्तनत्थं[3] ।

कते रूपं । अधुना ति इमसद्दतो इमस्मि काले त्यत्थे इमिना धुनाप्पच्चयं कत्वा, 'अ धुनाम्हि चे' ति (२३५) धुनाम्हि पच्चये परे इमसद्दस्स अकारादेसं कत्वा, विभत्तिसञ्ञे कते रूपं । इदानी ति इमसद्दतो इमस्मि काले त्यत्थे इमिना दानिप्पच्चयं कत्वा, 'इमस्सित्थन्दानि.....' ति (२३४) दानिप्पच्चये परे इमसद्दस्सिकारादेसं कत्वा, विभत्तिसञ्ञे कते रूपं ।

२६२. **सब्बस्स सो दाम्हि वा**[1] ति इदं 'लिङ्गञ्च निपच्चते' ति (५३) सुत्ततो निक्खन्तं । चतुप्पदं ! सब्बस्सा ति कारी, सो ति कारियं, दाम्ही ति निमित्तसत्तमी, वा ति विकप्पनत्थं; विधिसुत्तं । सदा ति सब्बसद्दतो 'किंसब्बञ्ञेक.....' ति (२५९) दाप्पच्चयं कत्वा, इमिना सकारादेसे च विभत्तिसञ्ञे च कते रूपं । इतरं वाग्गहणफलं, तं सुविञ्ञेय्यमेव ।

२६३. **अवण्णो ये लोपञ्चे**[2] ति इदं 'सरलोपोमादेस.....' ति (८३) सुत्ततो निक्खन्तं । 'सरलोपोमादेस.....' ति इमिना अं-आदेसपच्चयादिम्हि पुब्बसरानं लोपो वुत्तो; एवं सन्ते किं पच्चये परे सब्बे सरा लोपं पप्पोन्ती ति पुच्छाय सति, यम्हि अवण्णो येव लोपं पप्पोती ति दस्सेतुं, 'अवण्णो ये लोपञ्चे' ति वुत्तं । चसद्देन इवण्णो पि लोपो[3]—आदिच्चो, धञ्ञो । कोण्डञ्ञो ति कुण्डनिया अपच्चं ति विग्गहे केचि

---

१. येप्पच्चये—सी० २; ये पच्चये—से० । २. नत्थि से० पोत्थके । ३. वागहण०—से० ।

1. तु०—''सब्बस्स दाम्हि सो वा''—सद्द०, सु० ५०८; ''सर्वस्य सोऽन्यतरस्यां दि''—पा० ५.३.६ ।
2. तु०—''अवण्णो यम्हि लोप''—सद्द०, सु० ५०९ ।
3. तु०—''चग्गहणं वाग्गहणनिवत्तनत्थं''—क०, न्या०, पि० २०३; ''चसद्देन इवण्णो पी ति''—रूप०, सु० वु० ३५४ ।

२६४. वुद्धस्स[1] जो इयिट्ठेसु । २. ५. १६ ।

सब्बस्सेव[2] वुद्धसद्दस्स जो-आदेसो होति इय-इट्ठ इच्चेतेसु पच्चयेसु परेसु[3]। सब्बे इमे वुद्धा अयमेतेसं[4] विसेसेन वुद्धो ति जेय्यो, सब्बे[5] इमे वुद्धा अयमेतेसं विसेसेन वुद्धो ति[5] जेट्ठो ।

अप्पच्चयो ति वदन्ति; रूपसिद्धियं ण्यप्पच्चयवसेन कोण्डञ्ञसद्दसिद्धि वुत्ता[1]। अवण्णो ति वुत्तत्ता वेधव्यं ति आदिम्हि आकारस्स इमिना सुत्तेनेव लोपो। इदं हि 'सरलोपोमादेस ....' ति सुत्तेन सिद्धे पुन वचनं यम्हि अवण्णिवण्णानं येव लोपनियमत्थं ।

बाहुसच्चं त्याद्युदाहरणानि। तत्थ बाहुसच्चं ति बहुस्सुतस्स भावो ति अत्थे 'ण्यत्तता* भावे तू' ति (३६२) छट्ठ्यन्ततो ण्यप्पच्चयं कत्वा, 'तेसं विभत्तियो....' ति (३१९) एत्थ तेसं-गहणेन विभत्तिभावपदानं लोपं कत्वा, वुद्धि-णलोप-सरलोप-पकतिभावं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, तकारगतस्स अकारस्स इमिना यम्हि लोपं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, त्यकारस्स 'यवतं ....' ति (२७१) यवतो तकारस्स चकारं कत्वा, 'परद्वेभावो ठाने' ति (२८) द्वेभावं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, तद्धितत्ता नाममिव कत्वा, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं। वेपुल्लं ति विपुलस्स भावो त्यत्थे ण्यप्पच्चये कते रूपं; ल्यकारस्स लकारकरणमेव विसेसो। कारुञ्ञं ति करुणस्स भावो त्यत्थे ण्यप्पच्चयो, यम्हि अकारलोपो, ण्यस्स ञकारो, द्वित्तं; करुणादिट्ठानापेक्खाय करुणस्सा ति वुत्तं, करुणस्स पुग्गलस्सा त्यत्थो। कोसल्लं ति कुसलस्स भावो त्यत्थे ण्यप्पच्चयो, अकारलोपे कते ल्यकारस्स लकारो, द्वित्तस्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं; कुसलाधिट्ठानापेक्खाय कुसलस्सा ति वुत्तं, कुसलस्स पुग्गलस्सा त्यत्थो। सामञ्ञं ति समणस्स भावो त्यत्थे ण्यप्पच्चयो, यम्हि अकारलोपे कते ण्यकारस्स ञकारो, द्वित्तं। सोहज्जं ति सुहदस्स भावो त्यत्थे ण्यप्पच्चये कते, यम्हि अकारलोपं कत्वा, द्यकारस्स जकारो, द्वित्तं ।

२६४. वुद्धस्स जो इयिट्ठेसू[2] ति इदं 'विसेसे तर....' ति (३६५) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं ? जेय्यो जेट्ठो त्यादिसु वुद्धसद्दतो विसेसत्थे इयिट्ठप्पच्चया वुत्ता;

---

१. वुड्ढस्स—से० (सब्बत्थ)। २. सब्बस्स—से०। ३. नत्थि से० पोत्थके। ४. अयं इमेसं—से०। ५-५. नत्थि सी० १ पोत्थके।

*. ण्यत्तत्ता—सी०।

1. रूप०, सु० ३५४, ३५५।

2. तु०—"जो वुड्ढस्स"—सद्द०, सु० ५१३; "वृद्धस्य च"—पा० ५.३.६२; अस्स सुत्तस्स वण्णना सिद्धान्तकौमुदी' इति गन्थे एवमागता—"ज्यादेशः स्यादजाद्योः"।

२६५. पसत्थस्स[1] सो च । २. ५. १७ ।

सब्बस्स पसत्थसद्दस्स सो-आदेसो होति जो-आदेसो[2] च इय-इट्ठ इच्चेतेसु पच्चयेसु परेसु । सब्बे इमे पसत्था अयमिमेसं विसेसेन पसत्थो ति सेय्यो, सब्बे[3] इमे पसत्था अयमिमेसं विसेसेन पसत्थो ति[3] सेट्ठो ; जेय्यो, जेट्ठो ।

चसद्दग्गहणं दुतियादेससम्पिण्डनत्थं ।

एवं सति जेय्यो जेट्ठो त्यादीनि रूपानि कथं सिज्झेय्युन्ति पुच्छाय सति, वुद्धसद्दस्स इयिट्ठेसु जादेसं कत्वा सिज्झन्ती ति दस्सेतुं, 'वुद्धस्स जो....' ति वुत्तं ।

जेय्यो, जेट्ठो ति उदाहरणानि । तत्थ च जेय्यो, जेट्ठो ति वुद्धसद्दतो सब्बे इमे वुद्धा, अयमिमेसं विसेसेन वुद्धो त्यत्थे 'विसेसे....' ति इय-इट्ठप्पच्चये कते, 'तेसं विभत्तियो ....' ति (३१९) एत्थ तेसं-गहणेन विभत्तिपदानं लोपमेव, सब्बे इमे वुद्धा त्यादिवाक्यास्साप्पयोगं च कत्वा, वुद्धसद्दस्स इमिना जादेसं कत्वा, 'सरलोपो ...' ति (८३) सुत्तेन पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, पकतिग्गहणसामत्थेन पकतिभावं बाधेत्वा, 'क्वचासवण्णं लुत्ते' ति (१४) असवण्णं कत्वा, तद्धितत्ता नाममिव कत्वा, सिस्सोकारादेसे कते रूपानि ।

२६५. पसत्थस्स सो च[1] तिदं 'विसेसे....' ति (३६५) सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं । पसत्थस्सा ति सम्बन्धछट्ठी, सो ति कारियं, चा ति सम्पिण्डनं; विधिसुत्तं ।

सेय्यो, सेट्ठो, जेय्यो, जेट्ठो ति उदाहरणानि । तत्थ च सेय्यो, सेट्ठो ति अयञ्च पसत्थो अयञ्च पसत्थो, अयमिमेसं विसेसेन पसत्थो त्यत्थे इय-इट्ठप्पच्चयं कत्वा, तेसंगहणेन विभत्तिपदानमप्पयोगं कत्वा, इमिना इयिट्ठेसु सादेसं कत्वा, वुत्तनयेन पुब्बसरस्स लोपं कत्वा, पकतिग्गहणसामत्थेन परसरस्स पकतिभावं बाधेत्वा, सन्धिवसेन परसरस्स लोपं कत्वा, परसरस्सासवण्णं कत्वा, नाममिव कत्वा, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपानि । जेय्यो, जेट्ठो पि एसेव नयो ।

---

१. पसद्दस्स—से० (सब्बत्थ) । २. जादेसो—से०, सी० १ । ३–३. नत्थि सी० १ पोत्थके ।

1. तु०—"पसत्थस्स इयिट्ठेसु"—सद्द०, सु० ५१२; "प्रशस्यस्य श्रः"—पा० ५.३.६० ।

२६६. अन्तिकस्स नेदो । २. ५. १८ ।

सब्बस्स अन्तिकसद्दस्स नेदादेसो होति इय-इट्ठ इच्चेतेसु पच्चयेसु[1] परेसु । नेदियो, नेदिट्ठो ।

२६७. बाळ्हस्स साधो[2] । २. ५. १९ ।

सब्बस्स बाळ्हसद्दस्स साधादेसो[3] होति इय-इट्ठ इच्चेतेसु पच्चयेसु परेसु । साधियो[4], साधिट्ठो[4] ।

२६८. अप्पस्स कणं । २. ५. २० ।

सब्बस्स अप्पसद्दस्स कणादेसो[5] होति इय-इट्ठ इच्चेतेसु पच्चयेसु परेसु । कणियो, कणिट्ठो ।

---

२६६. **अन्तिकस्स नेदो**[1] तिदं 'विसेसे·····' ति (३६५) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदमिदं । सम्बन्धछट्ठीकारीकारियनिद्देसा । नेदियो, नेदिट्ठो ति उदाहरणानि । तानि पन अन्तिकसद्दतो सब्बे इमे अन्तिका, अयमिमेसं विसेसेन अन्तिको ति अत्थे वुत्तनयेन इयिट्ठे पच्चये कते रूपानि ।

२६७. **बाळहस्स साधो**[2] तिदं 'विसेसे·····' ति सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । कारीकारियनिद्देसा । साधियो, साधिट्ठो ति उदाहरणानि । तानि पन बाळहसद्दतो सब्बे इमे बाळहा, अयमिमेसं विसेसेन बाळहो त्यत्थे इय-इट्ठप्पच्चये कते रूपानि ।

२६८. **अप्पस्स कण्***[3] इतिदं 'विसेसे·····' ति सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । कारीकारियनिद्देसा । कणियो, कणिट्ठो ति उदाहरणानि । तानि पन अप्पसद्दतो सब्बे इमे अप्पा, अयमिमेसं विसेसेन अप्पो त्यत्थे इय-इट्ठप्पच्चये कते रूपानि ।

---

१. से०, सी०२ पोत्थकेसु नत्थि । २. सावो—सी०२ । ३. सादादेसो—सी०२ । ४–४. सादियो, सादिट्ठो—सी०२ । ५. कणं आदेसो—सी० १, सी० २ ।

*. 'कणं' इति पाठभेदो कत्थचि—सी० ।

1. तु०—''नेदन्तिकस्स''—सद्द०, सु० ५१४; ''अन्तिकबाढयोर्नेदसाधौ''—पा० ५.३.६३ ।
2. तु०—''साधो बाळहस्स''—सद्द०, सु० ५१५; पा० ५.३.६३ ।
3. तु०—''खुद्दकस्स कण्''—सद्द०, सु० ५१६; ''युवाल्पयोः कनन्यतरस्याम्''—पा० ५.३.६४ ।

२६९. युवानञ्च । २. ५. २१ ।

सब्बस्स युवसद्दस्स कणादेसो[1] होति इय-इट्ठ इच्चेतेसु पच्चयेसु परेसु । कनियो, कनिट्ठो ।

चसद्दग्गहणं कणगहणमनुकड्ढनत्थं ।

---

२६९. युवानञ्चा[1] तिदं पुरिमेहि सदिसं निक्खन्तं । द्विपदं[2] । कारी-अनुकड्ढननिद्देसा । युवस्सा ति वत्तब्बे युवानं ति वचनविपल्लासेन वुत्तं[3] । विपल्लासा[4] च नाम छब्बिधा भवन्ति—तत्थ च 'सिविपुत्तानि चाव्हये' ति एत्थ लिङ्गविपल्लासो, पुत्तसद्दस्स पुल्लिङ्गत्ता, 'सब्बयोनीनमाए' ति (१०७) अकारन्ततो योवचनस्सेत्तं कत्वा, पुत्ते ति वत्तब्बे नपुंसकलिङ्गवसेन पुत्तानी ति वुत्तं; 'इदम्पि सीलस्मिं' ति विभत्तिविपल्लासो, एत्थ सीलं ति पठमत्थेन वत्तब्बे सीलस्मि ति सत्तम्यत्थेन वुत्तं ; 'नज्जो सन्दती' ति वचनविपल्लासो, एत्थ च नदी ति एकवचनेन वत्तब्बे नज्जो ति बहुवचनेन वुत्तं, सन्दन्ती ति वत्तब्बे सन्दती ति वुत्तत्ता ति वदन्ति; 'छ वस्सानि यापेस्सती' ति कालविपल्लासो, एत्थ च यापेती ति वत्तमानवचनेन वत्तब्बे यापेस्सती ति अनागतवचनेन वुत्तं; 'पुत्तं लभेथा' ति पुरिसविपल्लासो, लभेमा ति उत्तमपुरिसेन वत्तब्बे लभेथा ति मज्झिमपुरिसेन वुत्तं; 'सुगतो' ति अक्खरविपल्लासो, सुगदो ति दकारेन वत्तब्बे सुगतो ति तकारेन वुत्तं[5] ।

---

१. कणं आदेसो—सी० १, सी० २ ।

1. तु०—"(मतन्तरे) युवस्स च"—सद्द०, सु० ५१७; पा० ५.३.६४ ।

2–3. तु०—"'युवानञ्च' किमत्थमिदं ? सब्बस्स युवसद्दस्स कणादेसो होति इय-इट्ठप्पच्चयेसू ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । इयिट्ठग्गहणमिहानुवत्तते, कण्गहणञ्च । चग्गहणं कण्गहणानुकड्ढनत्थं; तत्थ पयोजनं हेट्ठा वुत्तमेव । इह पन युवसद्दस्स युवसद्दवाचकत्ता युवस्सा ति वत्तब्बे एवमवत्वा युवानं ति बहुवचननिद्देसो वचनविपल्लासलक्खणाविकरणत्थं । पकति हेसाचरियानं येन केनचि आकारेन अधिप्पायविञ्ञापनं । उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव । केवलं पनेत्थ 'ववचादिमज्झुत्तरानं·····' ति (४०५) वत्तमाने, 'तेसु वुद्धि·····' ति (४०६) णकारस्स नकारादेसो व विसेसो"—क० न्या०, पि० २०६ ।

4–5. तु०—'लिङ्गविभत्तिवचनकालपुरिसक्खरस्स च ।
वसेन हि विपल्लासो छब्बिधो ति पवुच्चति ॥
तत्थ लिङ्गविपल्लासे हीनमुक्कट्ठमज्झिमे ।
कुलानि अविवज्जेन्तो एवं लभति यापनं ॥
सिविपुत्तानि अव्हये वेदितब्बं विभाविना ।
विभत्तिया विपल्लासे होति इदम्पि सीलस्मि ॥

२७०. वन्तुमन्तुवीनञ्च लोपो । २. ५. २२ ।

वन्तु-मन्तु-वी इच्चेतेसं पच्चयानं लोपो होति इय-इट्ठ इच्चेतेसु पच्चयेसु परेसु । गुणियो, गुणिट्ठो; गणियो[1] गणिट्ठो[1]; सतियो, सतिट्ठो; मेधियो, मेधिट्ठो ।

चसद्दग्गहणं[2] इय-इट्ठग्गहणमनुकड्ढनत्थं[2] ।

कनियो, कनिट्ठो ति उदाहरणानि । तानि पन सब्बे इमे युवा, अयमिमेसं विसेसेन युवा त्यत्थे इयिट्ठप्पच्चयं कत्वा, इमिना युवसद्दस्स कणादेसं कत्वा, 'तेसु वुद्धि....' (४०६) त्यादिना णकारस्स नकारादिम्हि कते रूपानि ।

२७०. वन्तुमन्तुवीनञ्च* लोपो[1] तिदं 'विसेसे तर....' ति (३६५) सुत्ततो निक्खन्तं । तिपदं[2] । वन्तुमन्तुवीनं ति सम्बन्धछट्ठी कारी, चा ति अनुकड्ढनं, लोपो ति कारियं; विधिसुत्तं ।

गुणियो त्याद्युदाहरणानि । तत्थ च गुणियो ति गुणवन्तुसद्दतो सब्बे इमे गुणवन्ता, अयमिमेसं विसेसेन गुणवा त्यत्थे इय-इट्ठप्पच्चये कते, इमिना वन्तुप्पच्चयस्स लोपं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं । सतियो, सतिट्ठो ति एत्थ मन्तुप्पच्चयलोपो व विसेसो । मेधियो, मेधिट्ठो ति वी+प्पच्चयलोपो ।

वचनस्स विपल्लासे नज्जोनुपरियायति ।
कालस्स च विपल्लासे छब्बस्सानि यापेस्सति ।।
पुरिसस्स विपल्लासे पुत्तं लभेथ किञ्चि मे ।
अक्खरस्स विपल्लासे सुगतो सुगदो मतो ।
यंकारट्ठाने म्हिकारो एके आचरियाब्रवुं" ।।—सद्दसार०, का० ७२-७६; वित्थारत्थाय द०—"लिङ्ग-विभत्ति-वचन-काल-पुरिसक्खरानं विपल्लासो"—सद्द०, सु० ६७२, तस्स वुत्ति पि ।

१-१. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । २-२. नत्थि से० पोत्थके; चसद्दग्गहणम०—सी० १ ।

* ०विनञ्च—सी० । + वि०—सी० ।

1. तु०—'लुत्ति वन्तु-मन्तु-वीनं"—सद्द०, सु० ५१८ ।
2. तु०—"तिपदमिदं । इय-इट्ठग्गहणमिहानुवत्तते; चग्गहणं तदनुकड्ढनत्थं । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । वन्तु च मन्तु च वी च वन्तुमन्तुविनो, तेसं वन्तुमन्तुवीनं"—क० न्या०, पि० २०७ ।

२७१. यवतं तलनदकारानं ब्यञ्जनानि[1] चलञ-जकारत्तं । २. ५. २३ ।

यवतं[2] तलनदकारानं ब्यञ्जनानि च-ल-ञ-जकारत्तमापज्जन्ते यथा-सङ्ख्यं । बाहुसच्चं, पण्डिच्चं, वेपुल्लं, नेपुञ्ञं, कारुञ्ञं, सामञ्ञं, सोहज्जं ।

यवतमिति किमत्थं ? तिणदलं । तलनदकारानमिति किमत्थं ? आलस्यं, आरोग्यं । ब्यञ्जनानी ति किमत्थं ? मच्चुना । कारग्गहणं[3] किमत्थं ? यकारस्स सकार-भकार-मकारादेसञापनत्थं[4]—पुरिसस्स भावो पोरिस्सं, उसभस्स भावो ओसब्भं, उपमाय[5] भावो ओपम्मं ।

---

२७१. **यवतं तलनदकारानं ब्यञ्जनानि चलञजकारत्तं** तिदं 'अवण्णो ये लोपञ्चे' ति (२६२) सुत्ततो निक्खन्तं । चतुप्पदं । यवतं ति तब्बिसेसनं, तलनदकारानं ति अवयवापेक्खछट्ठी, ब्यञ्जनानी ति कारी, चलञजकारत्तं ति कारियं, विधिसुत्तं । यवतं तिदं तलनदकारं तिमिना तुल्याधिकरणं[1], अभेदोपचारेन यवतं तलनदकारानं ब्यञ्जनानी ति वुत्तं[2] ।

बाहुसच्चं, पण्डिच्चं, वेपुल्लं,नेपुञ्ञं, कारुञ्ञं, सामञ्ञं, सोहज्जं ति उदाहरणानि । तानि पन हेट्ठा वुत्तानेव ।

यवतमिति किमत्थं ? तिणदलं[3] त्यादिसु सन्तेसु पि तलनदकारेसु यवन्तत्ताभावा । तलनदकारानमिति किमत्थं ? आलस्यं, आरोग्यं ति एत्थ सन्तेसु पि यवन्तत्तेसु तलनदकारानमभावा । ब्यञ्जनानमिति किमत्थं ? मच्चुना त्यादिसु सन्तेसु पि तलनदकारेसु ब्यञ्जनानमभावा; इदं वुत्तं होति—मच्चू तिदं मत्यु इति लिङ्गं ठपेत्वा, यवन्तत्ता पि इमिना तकारस्स वुत्तविधानमकत्वा, उकारतो त्यकारे वियोजिते पुन यवतो तकारस्स इमिना वुत्तविधानं च द्वेभावं च कत्वा, नाममिव कते रूपं । इमिना व नयेन बाहुसच्चं त्यादिसु पि सरतो वियोजेत्वा व आदेसो कातब्बो[4] ।

---

१. ब्यञ्जनानं—सी० १ । २. यवन्तानं—सी० १ । ३. ०णन्ति—से० । ४. ०देसं सञ्ञापनत्थं—से० । ५. उपमस्स—से० ।

1–2. तु०—"यकारो येसमत्थि ते यवन्तो, तेसं यवतं; तलनदकारानं तिमिना तुल्याधिकरणं । इध पन यवन्तेहि तलनदकारेहि विसुं किञ्चि पि ब्यञ्जना न सन्ति, तथा पि सिलापुत्तकस्स सरीरं, राहुनो मुख ति आदिसु विय अभेदोपचारवसेन 'यवतं....' ति वुत्तं"—क० न्या०, पि० २०७ ।

3–4. तु०—"तिणदलं ति आदीनि किमुदाहरणानि ? तत्थ च तिणदलं ति एत्थ सति पि ताविम्हि यकारस्साभावा इध वुत्तविधानं न होति । आलस्यं ति एत्थ सति पि यकारस्मि

२७२. अम्हतुम्हन्तुराजब्रह्मत्तसखसत्थुपितादीहि स्मा नाव। २. ५. २४।

अम्हतुम्हन्तुराजब्रह्मत्तसखसत्थुपितु इच्चेवमादीहि स्मा नाव दट्ठब्बा। मया, तया, गुणवता, रञ्ञा, ब्रह्मुना, अत्तना, सखिना, सत्थारा, पितरा, मातरा, भातरा, धीतरा[१]।

ओपम्मं ति कारग्गहणफलं[1]। तम्पन उपमाय भावो ति उपमासद्दतो ण्यप्पच्चयं कत्वा, विभत्तिभावपदणानुबन्धानं लोपं कत्वा, यम्हि मकारे आकारलोपं कत्वा, नेतब्बे नीते, कारग्गहणेन मकारं कत्वा, मकारस्स द्वेभावं कत्वा, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं। इदमेत्थ उपलक्खणं। सोमनस्सं, दोमनस्सं, सोवचस्सं, दोवचस्सं त्यादिसु भावत्थे ण्यप्पच्चये, णलोपं कत्वा, 'तेसु वुद्धि·····' ति (४०६) सुत्तेन यकारस्मिं सकारागमं कत्वा, नेतब्बं नेत्वा, स्यकारस्स कारग्गहणेन सकारं कत्वा, द्वेभावं कत्वा, स्युप्पत्तादिम्हि कते रूपं। नेपक्कं, आधिक्कं, दोभग्गं ति निपक-अधिक-दुभगसद्देहि ण्यप्पच्चये कते, क्यकार-ग्यकारानं कारग्गहणेन कवग्गो, द्वेभावो च। निज्जं, रज्जं ति वा निज-राजसद्देहि ण्यप्पच्चये कते, कारग्गहणेन ज्यकारानं चवग्गो, द्वेभावो च। सारुप्पं ति सरूपसद्दतो ण्यम्हि कते, ण्यकारस्सिमिना पवग्गो, द्वेभावो च। एवं सोरम्मं, तच्छं, दुमेज्झं ति सुरम-तथ-दुमेधसद्देहि ण्यम्हि कते, म्यकार-थ्यकार-ध्यकारानं मकार-छकार-झकारादेसा, द्वेभावो च। इमानि कारग्गहणप्पयोजनानि।

२७२. अम्हतुम्हन्तुराजब्रह्मत्तसखसत्थुपितादीहि स्मा नावे[2] तिदं 'लिङ्गञ्च

तादीनमभावा न होति। आरोग्यं ति एत्था पि एसेव नयो। 'यवतं तलनदकारानं' ति वुत्तत्ता ब्यञ्जनानं ति विञ्ञायमाने पि ब्यञ्जनग्गहणकरणं तदन्तोगतानं सरानं वुत्त-विधानाभावदस्सनत्थं; तेनाह—'ब्यञ्जनानी ति किमत्थं? मच्चुना' ति। तस्स पन मुस पाणचागे तिमस्स परेसं पाणं चजती ति अत्थे 'वजादीहि पब्बज्जादयो निपच्चन्ते' ति स्युप्पच्चयं कत्वा, तेनेव धात्वन्तस्स लोपं कत्वा, उकारस्स च अकारादेसं कत्वा, मत्यु-सद्दतो ततियेकवचनं कत्वा यवतो पि सरस्स इध वुत्तविधानमकत्वा, यवतो पन तकारस्स यथावुत्तयुत्तिसम्भवतो इध वुत्तविधानं कत्वा, द्वेभावादिम्हि कते रूपं"—क० न्या०, पि० २०७।

१. धितरा—से०।

1. तु०—"'यवतं तलनदकारानं' ति वुत्ते येव सिद्धे सत्यारम्भस्स कारग्गहणस्स पयोजनं दस्सेन्तो 'कारग्गहणं किमत्थं' ति आदिमाह। ओपम्मं ति तत्थोदाहरणं; तम्पि सुविञ्ञेय्यमेव"—क०, न्या० पि० २०८; "कारग्गहणं यवतं सकार-क-च-ट-पवग्गानं सकार-क-च-ट-पवग्गादेसत्थं"—रूप०, सु० वु० ४१।

2. तु०—"अम्ह-तुम्ह-न्तु-राज-ब्रह्मत्त-सख-सत्थु-पितादितो स्मा ना वा"–सद्द०, सु० ५४२।

एवमादीहि[1] ति किमत्थं ? पुरिसा ।

इति नामकप्पे पञ्चमो कण्डो ।

निपच्चते' (५३), 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्तेहि निक्खन्तं; 'स्मास्मिन्नं वा' (१०८), 'स्मा ना' (२१४), 'झलतो चे' ति (२१५) सुत्तेहि वा निक्खन्तं। चतुप्पदं। अम्हतुम्ह....दीही ति अवधि, स्मा ति कारी, ना ति कारियं, इवे ति उपमाजोतकनिद्देसो; हेट्ठा वुत्तेसु छब्बिधेसु अतिदेससुत्तेसु तं-रूपातिदेसत्ता स्मावचनस्स ना-आदेसो[1] ।

तेन, मया, तया त्यादिसु स्मावचनस्स नाकारं कत्वा, 'नाम्हि तयामया' ति (१४५) सविभत्तिकानं अम्हतुम्हसद्दानं मया-तया-आदेसा। गुणवता ति गुणवन्तुसद्दतो स्मावचनस्स नाकारे कते, 'तोतिता....' ति (१२७) सविभत्तिकस्स न्तुसद्दस्स तादेसो। रञ्ञा ति राजसद्दतो स्मावचनस्स नाकारं कत्वा, 'नाम्हि रञ्ञा वा' ति (१३७) रञ्ञादेसो। ब्रह्मुना ति ब्रह्मसद्दतो स्मावचनस्स नाकारं कत्वा, 'उत्तं सनासू' ति (१९८) ब्रह्मसद्दन्तस्स उकारादेसो। अत्तना ति अत्तसद्दतो इमिना स्मावचनस्स नाकारो। सखिना ति 'सखान्तस्सि....' ति (१९४) इकारकरणमेव विसेसो। सत्थारा, पितरा, मातरा, भातरा, धीतरा ति स्मावचनस्स नाकारं कत्वा, 'अञ्ञेस्वारत्तं' ति (२००) तस्मारत्तं। पुरिसा ति एत्थ सति पि स्मावचने, न एतेसमभावा। आचरिया पन—नावा ति एत्थ 'नानावा' ति वत्तब्बे एकसेसं कत्वा नावा ति वुत्तं; तस्मा मया दट्ठब्बा, अत्तना त्यादिसु नाकारो कातब्बो ति—वदन्ति। तं-सरूपातिदेसत्ता नकारकरणं युत्तं विय दिस्सति।

इति कच्चायनवण्णनायं नामकप्पस्स
पञ्चमकण्डवण्णना।

---

१. एतेही—से०, सी० १।

१. रूपसिद्धियं अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—"'अम्ह...ना इव दट्ठब्बं' ति स्मावचनस्स नाव्यपदेसातिदेसो। अतिदेसो पन छब्बिधो; वुत्तञ्च—

'व्यपदेसो निमित्तञ्च तं-रूपं तं-सभावता।
सुत्तं चेव तथा कारियमतिदेसो ति छब्बिधो'॥

ति। तत्रायं ब्रह्मत्तसखादिसु पाठसामत्थियतो रूपातिदेसो; सेसं ततियासमं"-सु० वु० १२०।

(६) छट्ठो कण्डो
(कारककण्डो)

---

(६) छट्ठो कण्डो
(कारककण्डो)

एवं 'ततो च विभत्तियो' (५४) त्यादिना जिनवचनयुत्तलिङ्गतो विसयीभूतं विभत्तुप्पत्तिं दस्सेत्वा, विसयभूतं कारकादिमत्थविसेसं दस्सेतुं, 'यस्मादपेति···' त्यादिकं कारकाकारकविधानमारभीयते[1]; वुत्तञ्च—

> "कत्तुकम्मञ्च करणं सम्पदानमथापरं ।
> अपादानं च ओकासं कारकं छब्बिधं मतं"[2] ॥ ति च ।

> "भावलक्खणहेतू च सम्बन्धालपनम्पि च ।
> विसेसनं निद्धारणं वसा अकारकं मतं"[3] ॥ ति च ।

---

1. तु०—"एवं सेय्यत्थिकानं सत्त विभत्यन्तं दुविधं नामपदं दस्सेत्वा, इदानि तस्स नामपदस्स सञ्ञापुब्बङ्गमं अत्थं दस्सेतुं, 'यस्मादपेति···' ति आदि आरद्धं । तत्थ अत्थो नामेस दुविधो—कारको, अकारको ति"—सुत्तनि०, पि० ८४ ।

2. तु०—त०; "तं पन कारकं छब्बिधं···तत्थ सभावतो परिकप्पतो वा कम्मादिम्हि सति येव क्रियाभावतो कम्मादीनं छन्नं पि कारकवोहारो सिद्धो व होति"—रूप०, सु० वु० २८३; क० भे०, गा० ५५; सद्द०, सु० वु० ५४७ ।

3. तु०—"भावलक्खणहेत्वादिक्रियत्थस्स अभावतो ।
तं-योगे तं-निमित्ते पि कारकं ति न वुच्चति ॥···
साम्यालपननिद्धारणभाग्यादिमकारकं ।
क्रियायोगा तदाभावा इति लक्खेय्य पण्डितो" ॥—सद्दसार०, गा० २२४, २३०, २३१–२३६; "····आमन्तणं नाम पगेव लद्धसरूपस्स सद्देन अभिमुखीकरणं; कताभिमुखो पन गच्छा ति आदिना नयेन किरियाय योजीयति, तस्मा आमन्तणसमये किरियायोगाभावतो इदं कारकवोहारं न लभति"—रूप०, सु० वु० ४८३; "एत्थ च क्रियाभिसम्बन्धाभावा न कारकता सम्भवति"—त०, सु० वु० ३००; "न छट्ठीविहितत्थो कारकं, यथामन्तणं"—सद्द०, सु० ५७४; "यथा आमन्तणसंखातो अत्थो कारकसञ्ञो न होति, तथा छट्ठिया विहितो अत्थो कारकसञ्ञो न होति"—त०, वु०; "किरियाभि-

तेसु पधानत्ता कारकं पठमं वुत्तं[1]। कारकेसु च बहुविसयत्ता पठममपादानं

सम्बन्धाभावा नेसा कारकता सम्भवति····एत्थाह····''—त०, सु० वु० ५७५; ''आमन्तणसमये किरियायोगाभावतो नेतं कारकवोहारो लभति···''—त०, सु० वु० ५७६; ''अकारको नाम आलपनसाम्यत्थादि''—सुत्तनि०, पि० ८४; "As Kāraka is the relationship of the substantive with the verb, the Genitive which is generally concerned with the relationship between substantives is not reckoned among the cases. Sanskrit grammarians do not regard the Vocative as a separate case for the same reason.... Śaunaka appears to stand alone in regarding the Vocative as a Vibhakti in the well-known line in BD—'अष्टौ यत्र प्रयुज्यन्ते नानार्थेषु विभक्तयः'''—मञ्जूषा, जुलाई, १९५३; 'षष्ठी शेषे''—पा० २.३.५०; अस्स सुत्तस्स विवरणं सिद्धान्तकौमुदीगन्थे एवमागतं—''कारकप्रातिपदिकार्थव्यतिरिक्तः स्वस्वामिभावादिः सम्बन्धः शेषस्तत्र षष्ठी स्यात्''; ''तदुक्तम्—

''संबन्धः कारकेभ्योऽन्यः क्रियाकारकपूर्वकः।
श्रुतायामश्रुतायां वा क्रियायां सोऽभीधीयत्'' ॥

—प्र० टी०, अस्स सुत्तस्सुपरि।

1. द०—''क्रियानिमित्तं कारकं''—सद्द०, सु० ५०७; ''यं साधनसभावत्ता मुख्यवसेन वा उपचारवसेन वा किरियाभिनिप्फत्तिया निमित्तं, तं वत्थु कारकं नाम भवति; मुख्योपचारवसेन हि किरियं करोती ति कारकं''—त०, वु०; ''गमनपचनादिकं कत्तुकम्मट्ठं किरियं निप्फादकहेतुवसेन करोति निप्फादेती ति कारको'', ''यम्पन अत्थजातं पट्ठानापट्ठानवसेन किरियानिप्फत्तिनिमित्तभूतं तं कारकं नाम''—सुत्तनि०, पि० ८४;

''क्रियानिमित्तभावेन यं किञ्चि अभिधीयते।
कारकं नाम तं ञेय्यं धीमता कारकञ्ञुना'' ॥—कारिका०, गा० २५२;

''निप्फादेति पदत्थो यो गमनपचनादिकं।
इति सो कारको नाम कारकञ्ञूहि जानियो ॥
कारकत्ता क्रिया येव सत्ति मुख्येन कारकं।
दब्बं ठान्युपचारेन तदा धारणभावतो।
सद्दो पि अत्थद्वारेन कारको ति पवुच्चति'' ॥—क० भे०, गा० ५१-५३;

''यं करोति च तं किच्चं साधनं नातिवत्तति।
तेन कारकभावेन कारकं ति पवुच्चति'' ॥—सद्दसार०, गा० ३१९;

वुत्तं[1] । तेसु पि भययोगापादानस्स पाकटत्ता पठमं भययोगापादानं दस्सेतुं

"क्रियानिमित्तभावेन कारकं ति उदीरितं ।
कम्मादिके असन्ते पि क्रिया पि च न सिज्झति" ।।—त०, गा० ३७८;

"The word 'Kāraka' occurs for the first time in Pāṇini. It is not found in the Nirukta nor in the Prātśākhyas. It is formed from the root 'kṛ' 'to do' with the agent suffix 'ṇvul' and means literally 'doer' or 'agent', but as the good old word 'kartā' was used in this sense, the sense of 'Kārka' was generalised and it was used for 'Case'. Pāṇini used 'Kāraka' as an 'adhikāra' rule (1.4.23) without defining it. The author of the Vārttikas discusses the meaning of Kāraka under 'Kārake' (1.4.23) and shows that other cases also may be used as the agent, consequently the etymology "करोतीति कारकम्" applies to them also····Later grammarians generally use the word 'Kāraka'....The name for Kāraka is 'case' in Latin. It comes from 'casus' meaning 'a falling'. The Nominative Case was regarded as the original case and the other cases as a falling away from this original form····"—मञ्जूषा, जुलाई, १९५३; "कारक इति महती संज्ञा क्रियते, संज्ञा च नाम यतो न लघीयः···तत्र महत्याः संज्ञायाः करणे एतत्प्रयोजनमन्वर्थसंज्ञा यथा विज्ञायेत करोतीति कारकमिति····"—म० भा०, पा० १.४.२३ ।

1. द०—"Now a word as to the order of the cases. In the Kāraka sections of Pāṇini, Kātantra and most other grammars that distinguish between Kāraka and Vibhakti, the order of the cases is as follows: Ablative, Dative, Instrumental, Locative, Accusative and Nominative. This order is fixed according to Pāṇini's Paribhāṣā : 'विप्रतिषेधे परं कार्यम्', 1.4.42, i. e., in cases of conflict between two rules the later is to prevail over the earlier. Thus the order of the cases in Pāṇini shows the relative importance of the cases according to the view-point of Indian grammarians. The Kātantra also says: 'तेषां परमुभयप्राप्तौ', 2.4.16. The Ablative probably comes first because it is the local case par excellence. Then comes the Dative and then the Instrumental because of similarity of forms. The Locative is intimately connected with the Kartā (Nominative) and the Karman (Accusative), so it comes just before them

२७३. यस्मादपेति भयमादत्ते वा तदपादानं । २. ६. १ ।

यस्मा वा अपेति, यस्मा वा भयं जायते, यस्मा वा आदत्ते, तं कारकं अपादानसञ्ञं होति; तं[1] यथा[1]–गामा अपेन्ति मुनयो, नगरा निग्गतो राजा, पापा चित्तं निवारये, चोरा भयं जायते, आचरियुपज्झायेहि सिक्खं गण्हाति सिस्सो ।

अपादानमिच्चेतेन क्वत्थो ? "अपादाने पञ्चमी" (२९७) ।

---

२७३. यस्मादपेति भयमादत्ते वा तदपादानं[1] ति सुत्तं वुत्तं । इदं सुत्तं किम्पभवं किन्निदानं कुतो निक्खन्तन्ति ? 'अपादाने पञ्चमी' ति (२९७) सुत्तप्पभवं तन्निदानं ततो निक्खन्तन्ति* । 'अपादाने पञ्चमी' ति एत्थ किमपादानं ति पुच्छाय सति, यतो अपेति, यतो भयं जायते, यतो आदत्ते, तदपादानं ति दस्सेतुं 'यस्मादपेति....' ति वुत्तं । अयमस्स

---

and since the subject is more important and of more frequent occurrence than the object, the Kartā comes last of all"—मञ्जूषा, जुलाई, १९५३; अनेनेव कारणेन पालिसद्दविदूहि पठममपादानं वुत्तं । तथा हि आगतं सुत्तनिद्देसे—"ननु च अपादानादयो विसेससञ्ञा नाम, कारकसञ्ञा पन सब्बसाधारणत्ता सामञ्ञसञ्ञा नाम; कस्मा 'नामानं समासो युत्तत्थो' ति विय पठमं सामञ्ञसञ्ञा न विहिता ति चे ? 'परसमञ्ञा पयोगे' ति सुत्तेन सिज्झनतो, अन्वत्थवसेन पाकटत्ता च । एवं होतु, विभत्तिक्कमेन 'कत्तुकम्मञ्च करणं' ति आदिना वुत्तानं कारकानं कमेन वा कत्तुसञ्ञा पठमं वत्तब्बा ति चे ? महाविसयत्ता अपादानसञ्ञा व पठमं वुत्ता ति"—पि० ८७ ।

१–१. से० पोत्थके नत्थि ।

*. निक्खन्तं–सी० ।

1. तु०–"यतो अपेति यतो वा आगच्छति, तदपादानं"–सद्द०, सु० ५५५, "भयादुप्पत्तिहेतु"–त०, सु० ५५६; 'यतोऽपेति भयमादत्ते वा तदपादानम्' – का० २. ४. ८; "यस्मादपैति, यस्माद् भयं भवति, यस्मादादत्ते वा तत्कारकमपादानसंज्ञं भवति"–त०, वृ०; "ध्रुवमपायेऽपादानम्" –पा० १. ४. २४, "भीत्रार्थानां भयहेतुः"–त०, १. ४. २५;

"अपाये यदुदासीनं चलं वा यदि वाऽचलम् ।
ध्रुवमेवातदावेशात् तदपादानमुच्यते" ॥—वाक्य० २. ३० ।

निक्खन्ति। किमत्थमिदमुच्चते? यस्मा[1] वा अपेति, यस्मा वा भयं जायते, यस्मा वा आदत्ते, तं कारकं अपादानसञ्ञं होती ति ञापनत्थं। यस्मा ति एकं पदं, अपेती ति एकं पदं, भयं ति एकं पदं, आदत्ते ति एकं पदं, वा ति एकं पदं, तं ति एकं पदं, अपादानं ति एकं पदं ति सत्तपदं[2]। यस्मा ति अनियतसञ्ञी, अपेती ति साद्ध्यक्रिया, भयं ति सिद्धक्रिया, आदत्ते ति साद्ध्यक्रिया, वा ति विकप्पसमुच्चयो, तं ति नियतसञ्ञी, अपादानं ति सञ्ञा, सञ्ञा····पे०····सञ्ञासुत्तं। यस्मा वा गामादिका कारका मुन्यादयो अपेन्ति, यस्मा वा चोरादिका कारका भयं जायते, यस्मा वा आचरियुपज्झायादिका कारका सिस्सो सिक्खं आदत्ते गण्हाति, तं गामादिकं कारकं अपादानसञ्ञं होती त्यत्थो[3]। कारकसमुच्चयोयं। यस्मा गामादिका कारका अपेति वा, यस्मा चोरादिका कारका भयं जायते वा, यस्मा आचरियुपज्झायादिका कारका आदत्ते वा, तं गामादिकं कारकं अपादानसञ्ञं होती ति वा योजेतब्बं—क्रियाकारकसमुच्चयो, वाक्यसमुच्चयो ति पि वत्तब्बो; किरियासमुच्चयो ति सुत्ते पाकटो व—यस्मा ति पञ्चम्यन्तं सब्बनामपदं, अपेती ति उपसग्गसहितं आख्यातपदं, भयं ति भीयते भयं, आदत्ते ति आख्यातपदं, वा ति निपातपदं, तं ति पठमन्तं सब्बनामपदं[4]; अपनेत्वा इतो अञ्ञं ठानं आददाति गण्हातो ति अपादानं[5]। अप[6]-आपुब्ब-दाधातुतो 'कत्तुकरणप्पदेसेसु

1–2. तु०– क० न्या०, पि० २११।

3–4. तु०–सुत्तनि०, पि० ८५–८६।

5. तु०—"अपनेत्वा इतो आददाती ति अपादानं। इध पन सञ्ञासञ्ञिनो एकवचनेन निद्दिट्ठत्ता चोरा भयं जायते त्यादिस्वेवापादानसञ्ञाय भवितब्बं, न पन गामा अपेन्ति मुनयो, आचरियुपज्झायेहि सिक्खं गण्हातो त्यादिसू ति ···तस्मा असप्पथमनोतरित्वा यतो अपगच्छति, यतो अपगच्छन्ति, येहि वा अपगच्छति, येहि वा अपगच्छन्ति होतेव तत्थापादानसञ्ञा ति अवगन्तब्बं"—क० न्या०, पि० २११; "अपनेत्वा इतो आददाती ति अपादानं। तं पन तिविधं विसयभेदेन—निद्दिट्ठविसयं, उपात्तविसयं, अनुमेय्यविसयं चा ति····"—रूप०, सु० वु० २९७; "अपनेत्वा इतो आददाती ति अपादानं; इतो अवधिभूतातो गामादिकारकतो मुनिआदिकत्तुभूतो कारको कायेन वा चित्तेन वा अपनेत्वा अञ्ञं ठानं आददाति; इति तस्मा तं अवधिभूतं गामादिकारकं अपादानं नामा ति अत्थो"—सुत्तनि०, पि० ८७;

"अवधिभूततो यस्मा क्रियापुब्बं कुहिञ्चनं।
निस्सरते चलं तञ्ञं अपादानं तदुच्चते॥
अपादानं द्विधा वुत्तं सद्दलक्खणविञ्ञुना।
कायसंयोगपुब्बं च चित्तसंयोगपुब्बकं"॥—कारिका०, गा० २६६-२६७; क० भे०, गा० ६९–७२; सद्दसार०, गा० ३५९, ३६२।

२७४. धातुनामानमुपसग्गयोगादिस्वपि च । २. ६. २ ।

धातुनामानं पयोगे च उपसग्गयोगादिस्वपि च तं कारकं अपादानसञ्ञं होति ।

धातूनं पयोगे ताव—जि इच्चेतस्स धातुस्स परापुब्बस्स पयोगे यो

चे' ति (५५०) सुत्ते चसद्देन अपादानत्थे युप्पच्चयो; अञ्ञस्स पुब्बे वुत्तस्स कस्सचि अपादानसञ्ञासुत्तस्साभावा केन सुत्तेन यस्मा ति एत्थ अपादानसञ्ञा सिया, अत्तानमङ्गुलि परामसितुं न सक्का यथा इमिना व अपादानसञ्ञं कातुं न सक्का भवेय्या ति चोदना। यथा पदीपो आलोकञ्च दस्सेति, तिमिरम्पि नासेति, एकतो वट्टिञ्च झापेति, एवमिदं दट्ठब्बं ति परिहारो[7] ।

गामा अपेन्ती त्याद्युदाहरणानि। तत्थ च गामा ति गामसद्दं ठपेत्वा, इमिना अपादानसञ्ञं कत्वा, स्मावचनस्साकारादेसे कते रूपं। नगरा चोरा ति पि एसेव नयो। आचरियुपज्झायेही ति बहुवचनमेव विसेसो। 'अपादानमिच्चनेन क्वत्थो' ति विसयपुच्छा। 'अपादाने पञ्चमी' ति विसयविस्सज्जना।

२७४. धातुनामानमुपसग्गयोगादिस्वपि चे[8] तिदं 'यस्मादपेति·····' ति (२७३) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं? 'यस्मादपेति·····' ति सुत्तेन अपाययोगभययोगादानयोगेस्वेवापादानसञ्ञा कता; एवं सति धातुयोगोपसग्गयोगादिसु कथमपादानसञ्ञा भवेय्या ति पुच्छाय सति, धातुयोगोपसग्गयोगादिसु पि अपादानसञ्ञा होतेवा ति दस्सेतुं, 'धातुनामान ···' ति वुत्तं। किमत्थमिदमुच्चते? धातुनामानं पयोगे च उपसग्ग-

---

6-7. तु०—क० न्या०, पि० २११–२१२; सुत्तनि०, पि० ८६।

8. तु०—"परादिपुब्बजिधातादिप्पयोगे"—सद्द०, सु० ५५८, "अञ्ञादिनामयोगे"—त०, सु० ५५९, "वज्जनत्थाप-परियोगे"—त०, सु० ५६०, "उद्धं-समन्तत्थु-परियोगे"—त०, सु० ५६१, "मरियादाभिविधत्थआ-यावयोगे"—त०, सु० ५६२, "पतिनिधिपतिदानत्थपतियोगे"–त०, सु० ५६३, "विसुं-पुथुयोगे"—त०, सु० ५६४, "अन्तरायोगे पञ्चमी, ततिया च"—त०, सु० ५६५, "रिते-विनायोगे दुतिया च"—त०, सु० ५६६, "पभुत्याद्यत्थे तदत्थप्पयोगे च"—त०, सु० ५६७, "कारककिरियानं मज्झट्ठा कालद्धा च"—त०, सु० ५६८; वित्थारत्थाय द०—रूप०, सु० २९८; "अपपरी वर्जने"—पा० १.४.८८; "पराजेरसोढः"—त०, १.४.२६; "जनिकर्तुः प्रकृतिः"—त०, १.४.३०, "भुवः प्रभवः"—त०, १.४.३१, "अन्याराद···जाहियुक्ते"—त०, २.३.२९।

असय्हो[१] सो अपादानसञ्ञो होति, तं यथा—बुद्धस्मा पराजेन्ति अञ्ञतित्थिया; भू इच्चेतस्स धातुस्स पपुब्बस्स पयोगे यतो अच्छिन्नप्पभवो सो अपादानसञ्ञो होति, तं यथा—हिमवता[२] पभवन्ति पञ्च महानदियो, अनवतत्तम्हा पभवन्ति महासरा, अचिरवतिया पभवन्ति कुन्नदियो[३] ।

नामप्पयोगे पि तं कारकं अपादानसञ्ञं होति, तं यथा—उरस्मा

योगादिसु पि च यं कारकं पवत्तं, तमपादानसञ्ञं होती ति ञापनत्थं । चतुप्पदं । धातुनामानं ति सम्बन्धछट्ठी, उपसग्गयोगादिसू ति आधारसत्तमी, अपी ति समुच्चयो, चा ति समुच्चयो, सञ्ञासुत्तं[1] । पुब्बापरसुत्तेहि अविहितानं क्रियावाचकानं धातुनामानं पयोगे च, अप-परि-पति-उपसग्गयोगादिसु पि च, यं कारकं पवत्तं तमपादानसञ्ञं होती ति अत्थो[2] । धातवो[3] च नामानि च धातुनामानि, तेसं धातुनामानं; उपसग्गानं उपसग्गेहि वा योगो, तथा; उपसग्गयोगो आदि येसं ते उपसग्गयोगादयो, तेसु उपसग्गयोगादिसू[4] । धातुनामानमुपसग्गयोगादिसु[5] पि वा ति सामञ्ञेन वुत्तत्ता सब्बेसु धातुनामुपसग्गयोगेसुमिना व अपादानसञ्ञा भवितब्बन्ति ? न भवितब्बं, धातुविसेसनामविसेसयोगवसेन वुत्तत्ता[6] ।

बुद्धस्मा त्यादीनि उदाहरणानि । तत्थ च बुद्धस्मा ति बुद्धसद्दस्स परा-पुब्बजिधातु-योगत्ता दुतियापसङ्गेमिनापादानसञ्ञं कत्वा, स्माविभत्तिम्हि कते रूपं[7] । हिमवता ति हिमवन्तुसद्दस्स पभवन्ती ति एत्थ पपुब्ब-भूधातुयोगत्ता सत्तमीपसङ्गेमिनापादानसञ्ञं कत्वा, स्मावचने कते, तस्स 'अम्हतुम्हन्तुराज....' ति (२७२) सुत्तेन

---

१. असहो–सी०२ । २. हिमवन्ता–से० । ३. कुनदियो–से० ।

1. तु०—सुत्तनि०, पि० ८८–८९ ।
2. द०—त०, पि० ८९; "...तेसं अविहितलक्खणानं धातुनामानं पयोगे उपसग्गयोगे च, आदिसद्देन निपातयोगे च तं सुत्तं कारकमपादानसञ्ञं होति...चसद्दग्गहणेन पभुत्यादिअत्थे तदत्थप्पयोगे च"—रूप०, सु० वु० २६८ ।
3–4. तु०—क० न्या०, पि० २१३–२१४ ।
5–6. तु०—'इध पन धात्वादीनि अनियमेत्वा किञ्चा पि वुत्तानि, तथा पि येसु सम्पयुत्तेस्वपादानसञ्ञाय अत्थो सम्भवति, तानियेविध गहितानी ति दट्ठब्बं; अञ्ञथा धातूनमुपसग्गनिपातेहि अञ्ञेसमभावा सरूपनिद्देसो व निरत्थको सिया"—त०, पि० २१४; सुत्तनि०, पि० ८९ ।
7. तु०—क० न्या०, पि० २१४ ।

जातो पुत्तो, भूमितो निग्गतो रसो, उभतो सुजातो पुत्तो मातितो[1] च पितितो च[1]।

उपसग्गयोगादिस्वपि च तं कारकं अपादानसञ्ञं होति, तं यथा—अप सालाय आयन्ति वाणिजा[2], आ ब्रह्मलोका सद्दो अब्भुग्गच्छति, उपरि पब्बता देवो वस्सति, बुद्धस्मा पति सारिपुत्तो धम्मदेसनाय भिक्खु[3] आलपति तेमासं,

---

नाकारं कत्वा, 'अम्हस्स ममं·····' (१२०), 'न्तुस्स न्तो' (१२२), 'न्तस्स से वा' ति (१२३) वत्तमाने, 'तोतिता ···' ति (१२७) सविभत्तिस्स न्तुस्स तादेसे कते रूपं। अनवतत्तम्हा ति भूधातुयोगेमिनापादानसञ्ञं कत्वा, स्मावचनं कत्वा, तस्स म्हादेसे कते रूपं। अचिरवतिया ति अचिरवतीसद्दस्स भूधातुयोगत्तामिनापादानसञ्ञं कत्वा, स्मावचने कते, अचिरवतीसद्दस्सिकारस्स पसञ्ञं कत्वा, 'पतो या' ति (११२) यादेसे कते रूपं। उरस्मा ति सत्तमीपसङ्गे जातो ति कितन्तनामयोगत्तामिनापादानसञ्ञं कत्वा, स्मावचने कते रूपं। इतरेसु तोप्पच्चयो व विसेसो। अपसालाया ति सालं वज्जेत्वा त्यत्थो। तत्थ सालाया ति सालसद्दतो आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकतिभावञ्च कत्वा, अपसद्दस्स परिवज्जनत्थस्स कम्मप्पवचनीयत्ता दुतियापसङ्गे अपसद्दप्पयोगत्तामिनापादान-सञ्ञं कत्वा, वुत्तनयेन पञ्चमेकवचनं कत्वा, 'घतो नादीनं' ति (१११) नावचनस्सायादेसे कते रूपं[1]। आ ब्रह्मलोका[2] ति ब्रह्मलोकं ब्यापेत्वा ति अत्थो। तत्थ ब्रह्मलोकसद्दतो अभिविधिवाचकस्स आसद्दस्स कम्मप्पवचनीयत्ता दुतियापसङ्गेमिनापादानसञ्ञं कत्वा, स्मावचनञ्च कत्वा, तस्स 'स्मास्मिन्नं वा' ति (१०८) आकारादेसे कते रूपं। उपरि पब्बता ति एत्थ उकारो उग्गमनत्थो, परिसद्दो परिवज्जनत्थो; तस्मा देवो मेघो उग्गन्त्वा पब्बतं वज्जेत्वा वस्सती त्यथो। तत्थ च पब्बता ति दुतियापसङ्गे कम्मप्पवचनीययुत्तत्ता अपादानसञ्ञा व। बुद्धस्मा पती ति बुद्धस्स पतिभूतो ति अत्थो; सारिपुत्तो तिमिना तुल्याधिकरणं, पतियोगत्ता छट्ठ्यन्तापादानं। तेलस्मा ति तेलस्स पटिभागं कत्वा ददाती त्यत्थो; छट्ठीपसङ्गेमिनापादानसञ्ञा। हिरञ्ञस्मा ति हिरञ्ञस्स पटिभागं कत्वा, पदुमस्मा ति पदुमस्स पटिभागं कत्वा, छट्ठीपसङ्गे+ पतियोगापादानं[3]।

"आदिग्गहणेन कारकमज्झे पि पञ्चमीविभत्ति होती" ति इदं फलूपचारवसेन

१–१. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। २. वानिजा–सी० २। ३. से० पोत्थके नत्थि।

+ छट्ठि०—सी०।

1. तु०—क० न्या०, पि० २१५; सुत्तनि०, पि० ९०।

2–3. त०, पि० ६०–६१।

घतमस्स तेलस्मा पति ददाति, उप्पलमस्स पदुमस्मा पति ददाति, कनकमस्स हिरञ्ञस्मा पति ददाति ।

आदिग्गहणेन कारकमज्झे पि पञ्चमी[१] विभत्ति[२] होति, तं यथा—इतो[३] पक्खस्मा विज्झति मिगं लुद्दको[४], इतो[५] कोसा विज्झति कुञ्जरं, मासस्मा भुञ्जति भोजनं ।

वुत्तं; तस्मा कारकानं मज्झे काले च अद्धाने च अपादानसञ्ञा होती त्यत्थो[1] । लुद्दको पक्खस्मा विज्झती त्यत्र कत्तुक्रियानं मज्झभूते काले 'कालभावेसु चे' ति (३१५) सुत्तेन पत्तविधिं निवारेत्वा, आदिग्गहणेन अपादानसञ्ञा, 'अपादाने पञ्चमी' ति (२९७) सुत्तेन कारकमज्झे पञ्चमी; लुद्दको पक्खस्मा पक्खे अतिक्कन्ते विज्झती त्यत्थो[2] । मासस्मा भुञ्जती ति एत्था पि मन्तयोगी इसि मासस्मा मासे अतिक्कन्ते भुञ्जती त्यत्थो। काले ति एत्थ वुत्तकालं दस्सेतुं—

"पक्खो पञ्चदसाहानि द्वे पक्खा मासमुच्चते ।
मासद्वादसकञ्चेव संवच्छरन्ति वुच्चती"[3] ॥

ति वुत्तं।

कोसा विज्झति कुञ्जरं ति एत्थ लुद्दको कोसा कोसे अतिक्कन्ते विज्झती त्यत्थो। एत्थ च लुद्दको विज्झती ति कत्तुक्रियानं मज्झभूते अद्धाने सत्तमीपसङ्गे आदिग्गहणेन अपादानसञ्ञा; विभत्ति वुत्तनया व । एत्थ च अद्धानंदस्सेतुं—

---

१. घटं अस्स–से० । २–२. पञ्चमिविभत्ति–सी० २; पञ्चमी०–सी० १ । ३. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । ४. से० पोत्थके नत्थि । ५. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि ।

1–2. तु०—"लुद्दको इतो पक्खस्मा मिगं विज्झती ति । तेनाह—'आदिग्गहणेन कारकमज्झे पि' त्यादि । अथ वा करणं कारो, कारो एव कारको; किं तं ? किरिया; तस्सा पि मज्झो कारकमज्झो नाम । तदायमेत्थ सम्बन्धो—लुद्दको अज्ज विज्झित्वा पक्खस्मा विज्झती ति । तेनाह—'आदिग्गहणेन कारकमज्झे पि' त्यादि । 'कालभावेसु चे' ति सुत्तस्स अपवादोयं..."—क० न्या०, पि० ११५; "आदिग्गहणेन कारकमज्झे पि किरियामज्झे वा पञ्चमी विभत्ति होति, पञ्चमी विभत्ती ति फलूपचारेन वुत्तं; सेम्हो गुळो ति आदिसु विय कारकमज्झे ये कालद्धाना सन्ति ते अपादानसञ्ञा होन्ती ति अत्थो दट्ठब्बो..."—सुत्तनि०, पि० ९१ ।

3. त०, पि० ९२ ।

अपिग्गहणेन निपातप्पयोगे पि पञ्चमी विभत्ति होति दुतिया च[1] ततिया च। रहिता मातुजा पुञ्ञं कत्वा दानं[2] देति, रहिता मातुजं, रहिता मातुजेन वा; रिते सद्धम्मा कुतो सुखं भवति[3], रिते सद्धम्मं, रिते सद्धम्मेन वा; ते भिक्खू नाना कुला पब्बजिता, नाना[4] कुलं, नाना कुलेन वा[4]; विना सद्धम्मा नत्थञ्ञो कोचि नाथो लोके विज्जति, विना सद्धम्मं, विना सद्धम्मेन वा; विना बुद्धस्मा, विना बुद्धं, विना बुद्धेन वा।

"धनुपञ्चसतं कोसं चतुकोसं च गावुतं।
गावुतानि च चत्तारि योजनन्ति पवुच्चती"[1] ॥

ति वुत्तं।

एत्थ च लुद्दको पक्खस्स पठमदिवसे विज्झित्वा पक्खस्मा विज्झती ति च द्विन्नं पुब्बकालापरकालसंखातानं क्रियानं मज्झे पक्खस्मा ति पञ्चमी विभत्ति होति। एत्थ च क्रियाकरणं कारो, कारो एव कारको[2] ति वचनत्थेन कारको लुद्दको पक्खस्मा मिगं विज्झती ति च; कत्तुकम्मानं मज्झे लुद्दको इतो दिवसतो पक्खस्मा मिगं विज्झती ति च, अपादानकम्मानं मज्झे लुद्दको पठमदिवसे पक्खस्मा मिगं विज्झती ति च ओकास-कम्मानं मज्झे कालं योजेन्ति; वुत्तञ्च—

"कत्तूनं कत्तुकम्मानं कम्मापादानसन्तिनं।
कम्मोकासक्रियानञ्च कालद्धा दीपिता मज्झे"[3]॥ ति।

अथ वा आदिग्गहणेन कारकमज्झे पि पञ्चमी विभत्ती ति वुत्तत्ता आदिग्गहण-सञ्ञाविधिविधानं होति; तस्मा आदिग्गहणेनेव कारकमज्झे अपादानसञ्ञाविधानञ्च विभत्ति होती ति वदन्ति। दुविधं हि आदिसद्दस्स पयोजनं—मुख्यपयोजनञ्च, परम्पर-पयोजनञ्च; सञ्ञाविधानं मुख्यं, विभत्तिविधानं परम्परपयोजनं ति।

---

१. सी० १ पोत्थके नत्थि। २. फलं–से० ; सी० १ पोत्थके नत्थि। ३. लभति–से०, सी० १। ४–४. सी० १, सी० २ पोत्थकेसु नत्थि।

1. तु०—अभिधान०, गा० १९७।
2. द०—क० न्या०, पि० २१५।
3. द०—सुत्तनि०, पि० ६२; तु०—"अत्थयोजनक्कमवसेन पन द्विन्नं अपादान-कम्मकारकानं वा पुब्बापरकिरियानं वा मज्झे ठिता कालद्धा च अपादानसञ्ञा होन्ति"—सद्द०, सु० वु० ५६८; "यतश्चाध्वकालनिर्माणं तत्र पञ्चमी"—सि० कौ०, वा०, सु० ५९५।

चसद्दग्गहणेन अञ्ञत्था पि पञ्चमी विभत्ति होति। यतोहं भगिनि अरियाय जातिया जातो; यतोहं[१] सरामि अत्तानं, यतो पत्तोस्मि विञ्ञुतं, यत्वाधिकरणमेनं अभिज्झादयो[२] पापका[३] अकुसला धम्मा[३] अन्वास्सवेय्युं।

"अपिग्गहणेन निपातपयोगे पि पञ्चमी" ति इदम्पि फलूपचारेन वुत्तं, तथा "दुतिया च, ततिया चा" ति[1]। तत्थ रहिता मातुजा ति पुत्तका रहिता माता, पुञ्ञं कत्वा देती ति भागं देति, मातुजा तिमिनां रहितानिपातपयोगत्ता अपादानसञ्ञा। 'क्वचि दुतिया छट्ठीनमत्थे' ति (३०८) छट्ठ्यन्तभूते पञ्चम्यत्थे दुतिया; मातुजेना ति 'कत्तरि चे' ति (२९०) चसद्देन पञ्चम्यत्थे ततिया, रिते सद्धम्मा, रिते सद्धम्मं, रिते सद्धम्मेना ति आदिसु पि रिते-पयोगो व विसेसो। ते भिक्खू नानाकुला ति एत्थ विवज्जनत्थवाचकेन नाना ति निपातेन योगत्ता ते भिक्खू कुलं वज्जेत्वा पब्बजिता त्यत्थो। विना सद्धम्मा, विना सद्धम्मं, विना सद्धम्मेना ति आदिसु पि रितेपयोगसदिसं। विना बुद्धस्मा, विना बुद्धं, विना बुद्धेना त्यादिसु पि वुत्तनयमेव। नत्थञ्ञो कोचि विज्जती ति एत्थ नत्थी ति च आख्यातक्रियापदं, विज्जती ति पदं आख्यातपदेन समानम्पि नत्थी ति क्रियापद-मपेक्खित्वा कत्तुपदं भवति; तं दस्सेतुं—

"कत्तुत्थञ्च कम्मत्थं आख्यातेसु पि लब्भति।
मिगं धावति पस्सामि नत्थञ्ञो कोचि विज्जती" ॥

ति वुत्तं। मिगं धावती ति एत्थ धावती ति आख्यातपदं, पस्सामो ति आख्यातपदस्स कम्मं भवति।

"चसद्दग्गहणेन अञ्ञत्था पि पञ्चमी विभत्ति होति"; इदम्पि फलूपचारेन वुत्तं। अञ्ञत्था पी ति धातुनामेहि च, उपसग्गनिपातपयोगकारकमज्झेहि च, अञ्ञत्थ अञ्ञस्मि पयोगे पि अपादानसञ्ञा होती ति अत्थो। तत्थ च यतोहं ति यतोप्पभुति अहं त्यत्थो[2]; यतो सरामी ति यतो पट्ठाय सरामी त्यत्थो। यत्वाधिकरणं ति यं कारणा चक्खुन्द्रिया-

---

१. यतो–से०, सी०१। २. अभिज्झादोमनस्सा–से०,सी० १। ३–३. सी० १ पोत्थके नत्थि।

1. तु०—"अपिग्गहणेन कम्मापादानकारकमज्झे पि पञ्चमी कालद्धानेहि"—रूप०, सु० वु० २६८; "…फलूपचारवसेन वुत्तत्ता अपिग्गहणेन अपादानसञ्ञा च कम्मसञ्ञा च कत्तुसञ्ञा च होती ति वदन्ति, सुत्तेन अपादानसञ्ञा; अपिग्गहणेन पञ्चमी दुतिया-ततियाविभत्तियो होन्ती ति पि वदन्ति। रूपसिद्धियं पन आदिग्गहणेन निपात-योगापादानं संगण्हाति, अपिग्गहणेन कारकमज्झे अपादानं संगण्हाति, दुतिया च ततिया चा ति योजनं पन नत्थि, कच्चायन-अत्थब्याख्यान-सद्दनीतिपकरणेसु पन अत्थि; मातुजा ति रहितानिपातयोगसद्दत्थापादानं…"—सुत्तनि०, पि० ९२–९३।

2. तु०—त०।

२७५. रक्खणत्थानमिच्छितं[1] । २. ६. ३ ।

रक्खणत्थानं[2] धातूनं पयोगे यं इच्छितं तं कारकं अपादानसञ्ञं होति । काके रक्खन्ति तण्डुला, यवा पटिसेधेन्ति गावो ।

दिअसंवुतकारणा त्यत्थो; यत्वाधिकरणं ति यतो अधिकरणतो त्यत्थो । तत्थ यतो ति अधिकरणयोगापादानं; अधिकरणं ति एत्थ हेत्वत्थे पठमा, यं कारणा ति संवण्णनाय अधिकरणं ति दुतिया, तं हेत्वत्थापादानं ति वदन्ति[1] । यतो अधिकरणं ति एत्थ तोप्पच्चयो पञ्चम्यत्थो; अधिकरणं ति एत्थ च पञ्चम्यत्थे पठमा विभत्ति, तस्मा यं कारणा ति पञ्चम्यत्थे पठमन्तेन तुल्याधिकरणं कत्वा संवण्णेति, यस्मा अधिकरणा त्यत्थो । यत्वाधिकरणं ति इमस्स च हेत्वत्थे चसद्देन सङ्गण्हाति । तेन वुत्तं—"चसद्देन अञ्ञत्था पी" ति[2] ।

२७५. रक्खणत्थानमिच्छितं[3] तिदं 'धातुनामान....' ति (२७४) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'धातुनामान....' ति सुत्तेन परा-पुब्बस्स जिधातुयोगे च प-पुब्बस्स भूधातुयोगे च अपादानसञ्ञा वुत्ता; एवं सति रक्खणत्थधातुयोगे कथमपादान-सञ्ञा सिया ति पुच्छाय सति, रक्खणत्थानं धातूनं पयोगे सति यमिच्छितं तमपादान-सञ्ञं होती ति दस्सेतुं, 'रक्खण....' ति वुत्तं । किमत्थमिदं ? रक्खणत्थानं धातूनं पयोगे यमिच्छितं तमपादानसञ्ञं होती ति ञापनत्थं । द्विपदं । निद्धारणछट्ठीक्रियानिद्देसा । पदत्थो सुविञ्ञेय्यो व । रक्खणं[4] अत्थो येसन्ते ति रक्खणत्था, रक्ख-पाल-गुप-ता-अवा ति धातवो; रक्खितब्बा वा रक्खणा, रक्खणा एव अत्था रक्खणत्था, काकतण्डुलादि-अत्था[5]; रक्खणत्थानं धातूनं पयोगे सति रक्खितब्बेसु अत्थेसु जनेन यमिच्छितं तमपा-दानसञ्ञं होती ति अधिप्पायो । एत्थ च 'धातुनामान....' ति सुत्ततो अनुवत्तमानचसद्देन अनिच्छितपयोगे अपादानसञ्ञं[6]; पापा चित्तं निवारये, पापा निवारेन्ति, राजतो वा

---

१. रक्खन०-से०, सी० १ । २. रक्खन०-से०, सी० १ ।

1. तु०—"केचि पन यतो ति अधिकरणयोगापादानं अधिकरणं ति हेत्वत्थापादानं ति वदन्ति, तं यं कारणा ति वण्णनाय विरुज्झति"—सुत्तनि०, पि० ६४ ।

2. तु०—"चसद्दग्गहणेन पभुत्यादिअत्थे तदत्थप्पयोगे च"—रूप०, सु० वु० २६८ ।

3. तु०—"रक्खणत्थानमिच्छितमनिच्छितञ्च"—सद्द०, सु० ५६६; "ईप्सितं च रक्षार्थानाम्"—का० २.४.६; "वारणार्थानामीप्सितः—पा० १.४.२७ ।

4-5. द०—क० न्या०, पि० २१६ ।

6. तु०—"चकाराधिकारतो अनिच्छितं च"—रूप०, सु० वु० २६६; "आचरिया पन इध अनुवत्तनचग्गहणेन अनिच्छितअपादानसञ्ञा सङ्गहिता ति वदन्ति"—सुत्तनि०, पि० ९४ ।

२७६. येन वादस्सनं । २. ६. ४ ।

येन वा अदस्सनमिच्छितं तं कारकं अपादानसञ्ञं होति । उपज्झाया अन्तरधायति सिस्सो, मातरा च पितरा च अन्तरधायति पुत्तो ।

वा ति किमत्थं ? सत्तमीविभत्यत्थं । जेतवने अन्तरहितो[1], वेलुवने[2] अन्तरहितो[3] भगवा ।

चोरतो वा····पे०····आरक्खं गण्हन्तू त्यादिसु । कस्मा पनिदं वुत्तं, ननु च पुब्बसुत्तेनेव धातुपयोगा सिद्धा ति ? इमिना पन विसेसधातुपयोगे इच्छितानिच्छितत्थेसु इच्छितत्थस्स अपादानसञ्ञा ञापनत्थं वुत्ता ।

तण्डुला, यवा त्याद्युदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

२७६. येन वादस्सनं[1] तिदं 'रक्खणत्थानमिच्छितं' ति (२७५) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? रक्खणत्थानं धातूनं पयोगे इच्छितत्थस्स अपादानसञ्ञा वुत्ता; एवं सति अन्तरधाननिलीयनयोगे अदस्सनिच्छायं कथमपादानसञ्ञा सिया ति पुच्छाय सति, अन्तरधाननिलीयनयोगे पि अदस्सनिच्छायं अपादानसञ्ञा होती ति दस्सेन्तेन, 'येन वादस्सनं' ति वुत्तं । तिपदं । येना ति अदस्सनक्रियाय कत्तुनिद्देसो अदस्सनं ति क्रियानिद्देसो, वा ति विकप्पनत्थनिद्देसो, विधिसमुच्चयो वा, येना ति आचरियेन; अदस्सनं ति एत्थ, छट्ठ्यत्थततिया वा कत्वत्थततिया वा, आचरियस्स आचरियेन अदस्सनं सिस्सादिना कारकेन इच्छितं, तं अदस्सनक्रियाय कत्तुभूतं सम्बन्धभूतं वा उपज्झायादिकारकं अपादानसञ्ञं होती ति अत्थो[2] ।

उपज्झाया ति उपज्झायसद्दतो स्मावचनं कत्वा, 'स्मास्मिन्नं वा' ति (१०८) स्मावचनस्स आकारादेसे कते रूपं[3] । मातरा[4] ति मातुसद्दतो स्मावचनं

---

१. अन्तरधायति—सी० १ । २. जेतवने—से० । ३. अन्तरधायति—सी० १ ।

1. तु०—"यस्सादस्सनमिच्छमन्तरधायति"—सद्द०, सु० ५७०; "अन्तर्धौ येनादर्शनमिच्छति"—पा० १.४.२८ ।

2. तु०—"दिट्ठि दस्सनं, न दस्सनं ति अदस्सनं"—क० न्या०, पि० २१६; "अदर्शनं लोपः"—पा० १.१.६०; सुत्तनि०, पि० ६४-६५ ।

3. तु०—क० न्या०, पि० २१६ ।

कत्वा, तस्स 'अम्हतुम्हन्तु.....' ति (२७२) नाव्यपदेसं कत्वा, 'अञ्ञेस्वारत्तं' ति (२००) मातुसद्दन्तस्सारादेसं कत्वा, 'आरो रस्समिकारे' (२०८) त्यधिकिच्च 'पितादीनमसिम्ही' ति (२०९) आरादेसस्स आकारस्स रस्सं कत्वा, 'ना आ' ति (२०७) नावचनस्स आकारादेसे कते रूपं[5] । इतरानि पि वुत्तनयानेव । जेतवने[6] ति जेतवनसद्दतो इमिना सुत्तेन अदस्सनिच्छायोगे अपादानसञ्ञं कत्वा, एत्थ वासद्देन पञ्चम्यत्थे सत्तमीविभत्ति कत्वा, तस्स 'स्मास्मिन्नं वा' ति एकारादेसे कते रूपं। सञ्ञासुत्ते वासद्देन विधिसमुच्चयो होती ति न्यासाचरियेन वुत्तं[7] । अपरे सत्तमी विभत्यत्थं तिदं फलूपचारवसेन वुत्तत्ता वासद्देन अपादानसञ्ञा, 'पञ्चम्यत्थे चे' ति (३१४) सुत्तेन सत्तमी ति वदन्ति, जेतवने ति जेतवनट्ठा महाजनतो त्यत्थो। फलूपचारोयं, सद्दनीतिरूपसिद्धिसु पन इमिना भयेन अदस्सनभूते अन्तरधाने येव विहितत्ता[8] ।

जेतवने अन्तरधायि सो भगवा, सा देवता अन्तरहिता पब्बते गन्धमादने, ततो सो दुम्मनो यक्खो तत्थेवन्तरधायति, अप्पेकच्चे मं अभिवादेत्वा तत्थेवन्तरधायिंसू ति इद्धिया अन्तरधायने अपादानसञ्ञा न होति; तस्मा वाग्गहणेन अपादानसञ्ञं बाधेत्वा, ओकासे सत्तमी विभत्ति होती ति वदन्ति[9] ।

4–5. क० न्या०, पि० २१६–२१७।

6–7. तु०—"जेतवने अन्तरहितो ति वाग्गहणफलं। तत्थ जेतवने ति जेतवनट्ठा भिक्खू वुत्ता, यथा मञ्चसद्देन मञ्चट्ठा, चक्खुसद्देन चक्खुट्ठं चक्खुविञ्ञाणं; अञ्ञथा तेनादस्सनेच्छा च न सम्भवेय्य....."—त०, पि० २१७।

8. तु०—"वा ति पदं किमत्थं आचरियेन वुत्तं? सत्तमीविभत्यत्थं....जेतवने ति सत्तम्यत्थप्पसङ्गे अदस्सनत्थयोगअत्थापादानं, इमिना सुत्तेन अपादानसञ्ञ कत्वा वासद्देन पञ्चमीविभत्ति निवारेत्वा, 'पञ्चम्यत्थे चे' ति सुत्तेन सत्तमी विभत्ति होति....अपरे आचरिया पन फलूपचारेन वुत्तत्ता वाग्गहणेन अपादानसञ्ञा, 'पञ्चम्यत्थे चे' ति सुत्तेन सत्तमी ति वदन्ति; जेतवने ति जेतवनट्ठा महाजनतो अन्तरहितो अदस्सनं गतो ति अत्थो। एत्थ हि जेतवनसद्देन जेतवनट्ठमहाजना ठानूपचारेन गहिता...परत्थं परिणामेत्वा सकत्थे च पवत्तती ति। अयं न्यास-बालावतार-अत्थब्याख्यानानं समानकता; सद्दनीति-रूपसिद्धीसु पन अपादानसञ्ञा न विहिता, इमिना हि सुत्तेन भयेन अदस्सनभूते अन्तरधायनयोगे अपादानसञ्ञा विहिता, न इद्धिया..."—सुत्तनि०, पि० ६५; "इदं लक्खणं भयेन अन्तरधानं सन्धाय वुत्तं"—सद्द०, सु० वु० ५७०; रूप०, सु० वु० ३००।

9. तु०—सुत्तनि०, पि० ९५; सद्द०, सु० वु० ५७०, "यत्थिद्धियन्तरधायति"—त०, सु० ५७२।

२७७. दूरन्तिकद्धकालनिम्मान[1]त्वालोपदिसायोगविभत्तारप्पयोगसुद्धप्पमोचनहेतुविवित्तप्पमाण[2]पुब्बयोगबन्धनगुणवचनपञ्ह[3]कथनथोकाकत्तूसु च । २. ६. ५ ।

दूरत्थे अन्तिकत्थे अद्धनिम्माने[4] कालनिम्माने[4] त्वालोपे दिसायोगे विभत्ते आरप्पयोगे सुद्धत्थे पमोचनत्थे हेत्वत्थे विवित्तत्थे पमाणे[5] पुब्बयोगे बन्धने गुणवचने पञ्हे कथने थोके अकत्तरि इच्चेतेस्वत्थेसु पयोगेसु[6] तं कारकं अपादानसञ्ञं होति ।

---

२७७. **दूरन्तिकद्धकालनिम्मान... पञ्हकथनथोकाकत्तुसु चे**[1] तिदं 'धातुनानामान....' ति (२७४) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'धातुनामान....' ति सुत्तेन धातुनामोपसग्गनिपातप्पयोगादिसु अपादानसञ्ञा वुत्ता; एवं सति दूरत्थादिसु कथमपादानसञ्ञा ति पुच्छाय सति, दूरत्थादिसु पि अपादानसञ्ञा होती ति दस्सेतुं, 'दूरन्तिकद्ध....' ति वुत्तं । किमत्थमिदमुच्चते ? दूरत्थे[2] अन्तिकत्थे.... अकत्तरि च यं कारकं पवत्तं, तमपादानसञ्ञं होती ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं[3] । दूरो[4] च दूरत्थो च दूरयोगो च दूरो नाम, तस्मा दूरो च दूरत्थो च दूरयोगो चा ति एकसेसो कातब्बो । दूरञ्च अन्तिकञ्चा ति दूरन्तिकं, अद्धा च कालो च अद्धकाला, तेसं निम्मानं अद्धकालनिम्मानं; त्वापच्चयन्तसद्दस्स लोपो त्वालोपो; दिसाहि योगो, तथा; विभज्जनं विभत्ति; आरतिसद्दप्पयोगो आरप्पयोगो, तिकारलोपवसेन; दूरन्तिकञ्च अद्धकालनिम्मानञ्च त्वालोपो च दिसायोगो च विभत्ति च आरप्पयोगो च सुद्धञ्च पमोचनञ्च हेतु च विवित्तञ्च पमाणञ्च पुब्बयोगो च बन्धनञ्च गुणवचनञ्च पञ्हकथनञ्च थोकञ्च अकत्ता चा ति, तथा[5] ।

---

१. ०निम्माण०—सी० २ । २. प्पमान०—से० । ३. पण्ह०—से० । ४-४. अद्धकालनिम्माने—से०, सी० १ । ५. पमाने—से० । ६. पयोगेसु च—से० ।

1. तु०—"दूरन्तिकद्धकालनिम्मान....थोक-किच्छ-कतिपयाकत्तुसु च"—सद्द०, सु० ५७१; अकर्तर्यृणे पञ्चमी"—पा० २.३.२४; "अन्यारादितरर्ते....युक्ते"—त०, २.३.२९, "करणे च स्तोकाल्पकृच्छ्रकति....वचनस्य"—त०, २.३.३३, "दूरान्तिकार्थेभ्यो द्वितीया च"—त०, २. ३. ३५ ।

2–3. तु०—क० न्या०, पि० २१७ ।

4–5. तु०—"एत्थ च दूरत्थो नाम अनासन्नट्ठो; दूरानासन्नासन्तिकासमीपारकादयो दूरत्थपरियाया । अन्तिकत्थो नाम आसन्नट्ठो; अन्तिकासन्नाविदूरसमीपसन्तिकादयो अन्तिकत्थपरियाया । अद्धनिम्मानं नाम अद्धानस्स निम्मानं । कालनिम्मानं नाम कालस्स

दूरत्थे[1] ताव—कीव[2] दूरो[2] इतो नळकारगामो, दूरतो वागम्म, आरका ते मोघपुरिसा इमस्मा धम्मविनया। दुतिया च[3] ततिया च—दूरं

कीवदूरो इतो त्याद्युदाहरणानि[5]। तत्थ इतो ति दूरयोगापादानं; इतो तिह

निम्मानं; निम्मानं ति हि निपुब्बस्स मा परिणामे तिमस्स रूपं। त्वालोपो नाम त्वाप्पच्चयन्तस्स सद्दस्स अत्थसम्भवे पि अविज्जमानता। दिसायोगो नाम दिसत्थदीपकेहि सद्देहि सम्पयोगो। नन्वेवं सन्ते इतो सा दक्खिणा दिसा, इतो सा पच्छिमा, दिसा, अवीचितो उपरि भवग्गमन्तरे त्यादीस्वेवापादानसञ्ञाय भवितब्बं, अथ कथं पुब्बतो त्यादीसु होती ति? सरूपेकसेसवसेन गहितत्ता; दिसा च दिसायोगो च दिसादिसायोगो ति वत्तब्बे 'सरूपानमेकसेसेस्वकि' ति एकसेसं कत्वा दिसायोगे ति वुत्तं, तेनोभयत्था पि सिद्धावापादानसञ्ञा। विभत्तं विभजनं पुथक्करणं; विभत्तं ति हि विपुब्बस्स भज पुथक्करणे तिमस्स रूपं; विभजनं पन दुविधं—अविभत्तविभजनं, विभत्तविभजनञ्च····'आरप्पयोगो नाम विरमनत्थसद्दप्पयोगो; आरतिप्पयोगे ति वत्तब्बे सुखुच्चारणत्थं तिलोपं कतं, एवञ्च कुब्बता पयोगे पि सुखुच्चारणत्थमक्खरलोपं कातब्बं ति दस्सितं होति; पकति हेसाचरियानं येन केनचि आकारेन अधिप्पायविञ्ञापनं। सुद्धे ति सुध संसिद्धिम्ही तिमस्सत्थवाचके सङ्गण्हाति। पमोचने ति पपुब्बस्स मुच मोचने तिमस्सत्थवाचके सङ्गण्हाति। हेत्वत्थे ति कारणत्थवाचके सङ्गण्हाति। विवित्ते ति विच विवेचने तिमस्सत्थवाचके सङ्गण्हाति। पमाणे ति दीघायामतिरियादिपमाणत्थवाचके सङ्गण्हाति, न सङ्ख्यत्थवाचके ति; अञ्ञथा सङ्ख्ये ति वत्तब्बं भवेय्य, लब्बक्खरत्ता सङ्ख्यासद्दस्स। पुब्बयोगे ति पठमत्थवाचकपुब्बसद्दस्स पयोगमाह, न दिसत्थवाचकस्स; अञ्ञथा दिसायोगे तिमिना व सिज्झनतो विसुं न वत्तब्बं भवेय्य। बन्धने ति बध बन्धने तिमस्सत्थवाचके सङ्गण्हाति। गुणवचने ति गुणकथने, पञ्हे ति पुच्छने, कथने ति उदीरणे, थोके ति अप्पत्थवाचके सङ्गण्हाति। अकत्तरी ति हेत्वत्थे सङ्गण्हाति, तत्थ हि कत्तुबुद्धि सञ्ञायते। सो च कत्ता न होती ति अकत्ता ति वत्तुं सक्का; हेतुग्गहणेनेव सिद्धे पुन अकत्तरिग्गहणकरणमत्थन्तरविञ्ञापनत्थं, सिद्धे सत्यारम्भो हि नियमाय वा होति, अत्थन्तरविञ्ञापनाय वा, तेन यत्थ हेतुग्गहणेन पञ्चमी विभत्ति होति, तत्थानेकरूपानि पि भवन्ति, तं यथा—कस्मा हेतुना····किस्स हेतु, किं कारणं ति आदीनि; यन्नत्वनेन भवति, न तत्रान्यरूपानि भवन्ति, तं यथा—कतत्ता उपचितत्ता उसन्नत्ता विपुलत्ता ति आदीनि"—त०, पि० २१७–२१९; रूप०, सु० वु० ३०१; वि० व०—सुत्तनि०, पि० ६६–६६।

१. दूरत्थप्पयोगे—से०, सी० १। २-२. कीवदूरो—से०। ३. सी० १ पोत्थके नत्थि।

गामं आगतो, दूरेन गामेन वा आगतो[1]; आरका इमं धम्मविनयं[2], अनेन धम्मविनयेन वा इच्चेवमादि।

अन्तिकत्थे—अन्तिकं गामा, आसन्नं गामा, समीपं गामा, समीपं सद्धम्मा। दुतिया[3] ततिया च—अन्तिकं गामं, अन्तिकं[4] गामेन वा; आसन्नं गामं, आसन्नं[5] गामेन वा; समीपं गामं, समीपं[6] गामेन वा; समीपं सद्धम्मं, समीपं[7] सद्धम्मेन वा इच्चेवमादि।

अद्धनिम्माने[8]—इतो मधुराय चतूसु[9] योजनेसु सङ्कस्सं[10] नाम नगरं[10] तत्थ बहुजना[11] वसन्ति इच्चेवमादि।

कालनिम्माने[12]—इतो खो[13] भिक्खवे एकनवुति कप्पे विपस्सी नाम भगवा[14] लोके उदपादि[15], इतो तिण्णं मासानं अच्चयेन परिनिब्बायिस्सामि इच्चेवमादि।

त्वालोपे कम्माधिकरणेसु—पासादा सङ्कमेय्य, पासादमभिरुहित्वा[16] वा; पब्बता सङ्कमेय्य, पब्बतमभिरुहित्वा वा; हत्थिक्खन्धा सङ्कमेय्य, हत्थिक्खन्धमभिरुहित्वा वा; आसना वुट्ठहेय्य, आसने निसीदित्वा वा इच्चेवमादि।

दिसायोगे—अवीचितो याव[17] उपरि भवग्गमन्तरे बहुसत्तनिकाया[18] वसन्ति[18], यतो खेमं ततो भयं, पुरत्थिमतो दक्खिणतो पच्छिमतो उत्तरतो अग्गि[19] पज्जलति[19], यतो अस्सोसुं भगवन्तं[20], उद्धं पादतला अधो केस-

---

इमसद्दस्सिमिना अपादानसञ्ञं कत्वा, 'क्वचि तो ....' ति (२५०) तोप्पच्चये कते, तस्स 'त्वादयो विभत्तिसञ्ञायो' ति (२४९) विभत्तिसञ्ञे च कते, 'इमस्सित्थन्दानि ....' ति (२३४) इमसद्दस्सिकारे कते रूपं; तत्थ च कीवा ति कित्तकं अद्धानं दूरे

---

१. से० पोत्थके नत्थि। २. विनयं—से०। ३. दुतिया च—से०। ४. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। ५. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि ६. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। ७. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। ८. अद्धकालनिम्माने—से०, सी० १। ९. चतुसु—सी० २। १०-१०. सङ्कस्सनगरं अत्थि—से०। ११. बहू जना—से०; बहूजना—सी० १। १२. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। १३. से० पोत्थके नत्थि। १४. सम्मासम्बुद्धो—से०। १५. उप्पज्जि—से०। १६. ०भिरुय्हित्वा—से०। १७. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। १८-१८. से० पोत्थके नत्थि। १९-१९. से० पोत्थके नत्थि; अग्गिनि०—सी० १। २०. भगवतो कित्तिसद्दं—से०।

मत्थका इच्चेवमादि ।

विभत्ते—यतो पणीततरो वा, विसिट्ठतरो वा नत्थि । छट्ठी च—छन्नवुतीनं पासण्डानं धम्मानं पवरं यदिदं सुगतविनयं इच्चेवमादि ।

आरप्पयोगे—गामधम्मा वसलधम्मा असद्धम्मा आरति विरति पटिविरति, पाणातिपाता वेरमणी इच्चेवमादि ।

सुद्धत्थे—लोभनीयेहि धम्मेहि सुद्धो असंसट्ठो[1], मातितो च पितितो च सुद्धो असंसट्ठो अनुपकुट्ठो अगरहितो इच्चेवमादि ।

पमोचनत्थे—परिमुत्तो दुक्खस्मा ति वदामि, मुत्तोस्मि मारबन्धना, न[2] ते[2] मुच्चन्ति मच्चुना इच्चेवमादि ।

हेत्वत्थे—कस्मा हेतुना, केन[3] हेतुना, किस्स हेतु[3], कस्मा नु तुम्हे दहरा न मीयरे[4], कस्मा इधेव मरणं भविस्सति इच्चेवमादि ।

विवित्तत्थे—विवित्तो पापका धम्मा, विविच्चेव कामेहि विविच्चाकुसलेहि धम्मेहि इच्चेवमादि ।

पमाणत्थे—दीघसो नव विदत्थियो सुगतविदत्थिया पमाणिका कारेतब्बा[5], मज्झिमस्स पुरिसस्स अड्ढतेळसहत्था[6] इच्चेवमादि ।

पुब्बयोगे—पुब्बेव मे भिक्खवे सम्बोधा इच्चेवमादि ।

बन्धनत्थे—सतस्मा बद्धो[7] नरो रञ्ञा[8] इणत्थेन[8] । ततिया च—सतेन वा बद्धो[9] नरो[10] रञ्ञा[10] इच्चेवमादि ।

गुणवचने—पुञ्ञाय[11] सुगतिं यन्ति, चागाय विपुलं धनं, पञ्ञाय मुत्तो[12] मनो[12], इस्सरिया जनं रक्खति राजा इच्चेवमादि ।

पञ्हे[13] त्वालोपे कम्माधिकरणेसु—अभिधम्मा पुच्छन्ति, अभि-

त्यत्थो । तत्थ किं परिमाणमस्सा ति कीवा ति परिमाणतद्धितं, यावा यावन्तो तावा तावन्तो ति यथा; दूरतो वा ति दूरापादानं; आरका त्यादि दूरत्थापादानं; दूरं गामं,

---

१. से० पोत्थके नत्थि । २-२. ततो—से० । ३-३. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । ४. मिय्यथ—से० । ५. ०सुगतसङ्घाटी—से० । ६. ०तेलस०—से० । ७. बन्धो—से० । ८-८. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । ९. बन्धो—से० । १०-१०. से० पोत्थके नत्थि; ०इणत्थेन—सी० १ । ११. पञ्ञाय—से० । १२-१२. विमुत्तमनो—से० । १३. पण्हे—से० ।

धम्मं[१] सुत्वा वा, अभिधम्मे ठत्वा वा विनया पुच्छन्ति, विनयं सुत्वा, विनये ठत्वा वा[१]। दुतिया च ततिया च---अभिधम्मं, अभिधम्मेन वा विनयं, विनयेन वा; एवं सुत्ता, गेय्या[२], गाथा[३], वेय्याकरणा[३], उदाना, इति-वुत्तका, जातका, अब्भुतधम्मा, वेदल्ला इच्चेवमादि।

कथने त्वालोपे कम्माधिकरणेसु—अभिधम्मा कथयन्ति, अभिधम्मं[४], अभिधम्मेन वा; विनयं आकड्ढित्वा विनया कथयन्ति, विनयं, विनयेन वा[४]; एवं सुत्ता, गेय्या[५], गाथा[६], वेय्याकरणा[६], उदाना, इतिवुत्तका, जातका, अब्भुतधम्मा, वेदल्ला इच्चेवमादि।

थोकत्थे—थोका मुच्चति, अप्पमत्तका मुच्चति, किच्छा मुच्चति। ततिया[७] च—थोकेन[८], अप्पमत्तकेन[८], किच्छेन वा इच्चेवमादि।

दूरेन गामेन त्यादिसु इमिना सुत्तेन अपादानसञ्ञा, चसद्देन दुतिया-ततिया-विभत्तियो होन्ति। केचि पन फलूपचारवसेन वुत्तत्ता इमिना सुत्तेन अपादानसञ्ञा, 'दुतियापञ्चमी-नञ्चे' ति (३११) सुत्ते चसद्देन पञ्चम्यत्थे दुतिया, 'कत्तरि चे' ति (२९०) सुत्ते चसद्देन पञ्चम्यत्थे ततिया ति वदन्ति। आरका इमस्मा धम्मविनया, धम्मविनयं, धम्म-विनयेन वा ति दूरत्थयोगे; अन्तिकत्थे अन्तिकं गामा, आसन्नं गामा, समीपं गामा, समीपं सद्धम्मा; अन्तिकं गामेन, आसन्नं गामेन, समीपं गामेन, समीपं सद्धम्मेना ति; तत्थ च अन्तिकं गामा ति अन्तिकयोगे। इतो मधुरातो ति अद्धनिम्मानयोगापादानं। इतो कप्पतो एकूननवुतिकप्पे, इतो मासतो तिन्नं मासानं अच्चयेना ति कालनिम्मान-योगापादानं। पासादा सङ्कमेय्य, पब्बता सङ्कमेय्य, हत्थिक्खन्धा सङ्कमेय्या ति त्वालोपे कम्मे; त्वालोपो ति च त्वापच्चयन्तस्स सद्दस्स लोपो, तस्सालोपे पासादमभिरुहित्वा ति कम्मपदं भवति; आसना वुट्ठहेय्या ति त्वालोपे अधिकरणे, तस्सालोपे सति आसने ति अधिकरणपदं भवति। अवीचितो उपरि; यतो अस्सोसुं, उद्धं पादतला अधो केसमत्थका ति दिसायोगापादानं; यतो खेमं, यतो भयं, पुरत्थिमतो दक्खिणतो पच्छिमतो उत्तरतो ति दिसायोगापादानं; दिसा च दिसायोगो चा ति दिसायोगो ति वुत्तत्ता। यतो पणीत-तरो वा विसिट्ठतरो वा नत्थी ति विभज्जनं विभत्यत्थापादानं; छन्नवुतीनं पासण्डानं

१-१. सें० पोत्थके नत्थि। २. गाथा—सें०। ३-३. सें० पोत्थके नत्थि। ४-४. अभिधम्मं कथेत्वा अभिधम्मे ठत्वा वा विनया कथयन्ति विनयं आकड्ढित्वा विनये ठत्वा वा—सी० १। ५. सें० पोत्थके नत्थि। ६-६. गाथा—सें०; वेय्याकरण-गाथाय—सी० १। ७. दुतिया च०—सें०। ८-८. थोकं थोकेन वा अपमत्तकं अपमत्तकेन वा किच्छं—सें०।

अकत्तरि—कम्मस्स[1] कतत्ता, उपचितत्ता, उस्सन्नत्ता, विपुलत्ता, उप्पन्नं चक्खुविञ्ञाणं इच्चेवमादि[2]।

ति च; विभत्ति विभज्जने इमिनापादानसञ्ञं कत्वा, इध चग्गहणेन छट्ठीविभत्ति कातब्बा; तत्थ यदिदं पवरं सुगतविनयं ति यो एसो सुगतविनयो पवरं पवरो त्यत्थो—लिङ्गविपल्लासोयं। गामधम्मा वसलधम्मा असद्धम्मा आरतिप्पयोगापादानं; तत्थ आरती ति दूरं, विरती ति पतिविरति, पुनप्पुनविरति; पाणातिपाता वेरमणी ति ति आरकत्तापादानं। लोभनीयेहि धम्मेहि सुद्धो, मातितो च पितितो च सुद्धो ति अनुपकुट्ठो अगरहितो ति सुद्धयोगे; एत्थ मातितो पितितो ति मातु-पितुसद्देहि तोप्पच्चये कते, 'पितादीनमसिम्ही' ति (२०९) एत्थ असिम्हिग्गहणेन तोम्हि इकारादेसे कते रूपं। परिमुत्तो दुक्खस्मा, मुत्तोस्मि मारबन्धना, न ते मुच्चन्ति मच्चुना ति पमोचनयोगे; तत्थ मच्चुना ति मच्चुसद्दतो स्मावचनं कत्वा 'अम्हतुम्हन्तु ....' ति (२७२) स्मावचनस्स नादेसे कते रूपं। कस्मा हेतुना, कस्मा न तुम्हे दहरा न मिय्यरे, कस्मा इधेव मरणं भविस्सती ति हेतुयोगे, हेत्वत्थे च। विवित्तो पापका धम्मा, विविच्चेव कामेहि विविच्च अकुसलेहि धम्मेही ति विवित्तयोगे। दीघसो नव विदत्थियो पमाणिका कारेतब्बा, मज्झिमस्स पुरिसस्स अड्ढतेळसहत्था ति पमाण-योगे। पुब्बेव सम्बोधा ति पठमवाचकपुब्बसद्दयोगे। सतस्मा बद्धो नरो, सतेन वा बद्धो ति बन्धनयोगे; सतेना ति इध चग्गहणेन ततिया। पुञ्ञाय सुगतिं यन्ति, चागाय विपुलं धनं, पञ्ञाय मुत्तो मनो, इस्सरियाय जनं रक्खति राजा ति गुणवचनयोगे; तत्थ पुञ्ञाया ति पुञ्ञेना त्यत्थो—विभत्तिविपल्लासोयं। तत्थ च पुञ्ञाया ति पुञ्ञसद्दतो चतुत्थेकवचनं कत्वा, तत्थ विभत्या विपल्लासट्ठानत्ता 'आय....' ति (१०९) ति एत्थ तुग्गहणेन आयादेसे कते रूपं। चागाया ति एत्था पि एसेव नयो। पञ्ञाया तिदं 'घतो नादीनं' (१११) तिमस्स विसयं। इस्सरियाया ति स्मावचनस्स आयादेसो[6]। न्यासे[7] पन पुञ्ञाया ति इदं इत्थिलिङ्गरूपवसेनेव वुत्तं[8]; विभत्तिविपल्लासट्ठानत्ता तं

---

१. से० पोत्थके नत्थि। २. से० पोत्थके नत्थि।

5-6. तु०—क० न्या०, पि० २१९।

7-8. तु०—"पुञ्ञाया ति पुञ्ञसद्दतो 'इत्थियमतो...' ति आप्पच्चयं कत्वा, सरलोपपकति-भावादिञ्च कत्वा, वुत्तनयेन स्मावचनं कत्वा, 'आलपने सि...', 'ते इत्थिख्या पो' ति वत्तमाने, 'आ घो' ति आकारस्स घसञ्ञं कत्वा, 'आय...' ति वत्तमाने, 'घतो नादीनं' ति स्मावचनस्सायादेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूप"—त०, पि० २१९।

चसद्दग्गहणेन सेसेस्वपि ये मया नोपदिट्ठा अपादानप्पयोगिका ते पयोगविचक्खणेहि योजेतब्बा ।

विचारेतब्बं। पञ्हे त्वालोपे—अभिधम्मं सुत्वा, अभिधम्मे ठत्वा, अभिधम्मा पुच्छन्ति; एत्थ त्वापच्चयन्तस्स सद्दस्स अलोपे अभिधम्मं ति कम्मपदञ्च, अभिधम्मे ति अधिकरणञ्च भवति; त्वापच्चयसद्दस्स लोपे सति अभिधम्मा ति पञ्चम्यन्तं पदं भवति; अभिधम्मं, अभिधम्मेना ति एत्थ इध चग्गहणेन कम्माधिकरणपसङ्गे दुतिया ततिया भवति; विनयं सुत्वा, विनये ठत्वा, विनया पुच्छन्ती ति विनयं, विनयेना ति आदिसु पि एसेव नयो। कथने त्वालोपे कम्माधिकरणेसु—अभिधम्मं कथेत्वा, अभिधम्मे ठत्वा, वसिं पत्वा, अभिधम्मा कथयन्ति; अभिधम्मं, अभिधम्मेन वा त्यादिसु पि एसेव नयो। थोका मुच्चति, थोकेन मुच्चति, अप्पमत्तका मुच्चति, किच्छा मुच्चती ति थोकत्थे; थोकेन किच्चेना ति इध चग्गहणेन ततिया। कुसलस्स कम्मस्स कतत्ता उपचितत्ता उस्सन्नत्ता विपुलत्ता ति अकत्तरि; एत्थ अकारो अञ्ञत्थो, अकत्तरी ति कत्तुकारकतो अञ्ञस्मि अकारकस्मि ञापकहेतुम्ही ति अत्थो। एत्थ च कत्तुवचनेन मुख्यतो कत्तुकारकं उपचारतो क्रियानिमित्तभूतं सेसकारकञ्च जनकहेतुञ्च सम्पापकहेतुञ्च संगण्हाति। तस्मा अकत्तरी ति एत्थ अकारो कत्तुवचनस्स मुख्योपचारत्तं निवत्तेत्वा, ततो अञ्ञं ञापकहेतुं जोतेति; एत्थ च उदाहरणे बलवकम्मेनेव चक्खुविञ्ञाणं परिपुण्णं उप्पज्जति नो दुब्बलकम्मेना ति विञ्ञायति; तस्मा कतत्ता उपचितत्ता उस्सन्नत्ता ति ञापकहेतु भवति।

"चग्गहणेन सेसेस्वपि ये मया नोपदिट्ठा अपादानप्पयोगिका, ते पयोगविचक्खणेहि योजेतब्बा" ति एत्थ इह सुत्ते चसद्देन सुत्तागतपयोगतो अञ्ञत्थ अञ्ञेसु पयोगेसु अपादानसञ्ञा च, छट्ठीदुतियादयो विभत्तियो च कातब्बा त्यत्थो[1]। चग्गहणेनेव सञ्ञाविधानञ्च विधिविधानञ्च होती ति अधिप्पायो[2]।

1-2. तु०—"चग्गहणेन अञ्ञत्था पि पञ्चमीविभत्तिञ्च छट्ठी-दुतिया-ततिया-विभत्तियो च सङ्गण्हाति"—त०, पि० २१७; "चग्गहणेन दूरन्तिकाद्धादीहि सेसेसु अत्थेसु ये अपादानपयोगिका सद्दपयोगा मया नोपदिट्ठा, ते सद्दपयोगा विचक्खणेहि पण्डितेहि यथायोगं नामुपसग्गनिपातकिरियापदानुरूपं योजेतब्बा ति। न्यासे पन…न्यासपदीपिकायञ्च चग्गहणेन कारणभूतेन सुत्तागतपयोगतो अञ्ञत्थ पयोगे पञ्चमीविभत्तिञ्च इह अपादानकारके छट्ठी-दुतिया-ततिया-विभत्तियो च सङ्गण्हाती ति वुत्तं"—सुत्तनि०, पि० ९९।

२७८. यस्स दातुकामो रोचते[1] धारयते वा तं सम्पदानं । २. ६. ६ ।

यस्स वा दातुकामो, यस्स वा रोचते, यस्स वा धारयते[2], तं कारकं सम्पदानसञ्ञं होति । समणस्स चीवरं ददाति, समणस्स रोचते सच्चं, देवदत्तस्स सुवण्णच्छत्तं[3] धारयते यञ्ञदत्तो ।

सम्पदानमिच्चनेन क्वत्थो ? "सम्पदाने चतुत्थी" (२९५) ।

वा ति विकप्पनत्थं—धातुनामानं पयोगे वा उपसग्गप्पयोगे वा निपातप्पयोगे वा नवायोगे[4] वा[4] सति अत्थविकप्पनत्थं वासद्दो[5] पयुज्जति ।

एवं महाविसयं अपादानकारकं पञ्चहि सुत्तेहि दस्सेत्वा, सेसेसु कारकेसु महाविसयं सम्पदानकारकं दस्सेतुं—

२७८. यस्स दातुकामो रोचते धारयते वा तं सम्पदानं[1] त्यादिमाह । इदं सुत्तं 'सम्पदाने चतुत्थी' ति (२९५) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'सम्पदाने....' ति सुत्तेन सम्पदाने चतुत्थी विभत्ति वुत्ता; किमेत्थ सम्पदानं ति पुच्छाय सति, यस्स दातुकामो वा रोचते वा धारयते वा तं सम्पदानं नामा ति दस्सेतुं, 'यस्स....' ति आह । अयमिह सुत्तनिक्खन्ति; विसेसानुसन्धी ति पि वत्तब्बं । सत्तपदं[2] । यस्सा ति अनियतसञ्ञी*, दातुकामो ति च रोचते ति च धारयते ति च क्रियानिद्देसा, चा ति समुच्चयो, तं ति नियतसञ्ञी, सम्पदानं ति सञ्ञा, सञ्ञाधिकारपरिभासाविधिसुत्तेसु सञ्ञासुत्तं ति वेदितब्बं[3] । अत्थो सुविञ्ञेय्यो व । सम्मा दीयते अस्सा ति सम्पदानं; अस्स पटिग्गाहकस्स सम्मापूजनचागाकारेन पदीयते, इति अस्सा ति पदेन निद्दिट्ठं तं कारकं सम्पदानं नामा त्यत्थो[4] । इमिना रजकस्स वत्थं ददाती त्यादीनि निवत्तेति पूजादीनम-

---

१. ०वा—से० । २. धारीयते—सी० २ । ३. सुवण्णछत्तं—से० । ४-४. नप्पयोगे वा—सी० १; से० पोत्थके नत्थि । ५. वासद्दं—से०; वाति पदं—सी० १ ।

*. ०सञ्ञि—सी० ।

1. तु०—"यस्स दातुकामो यस्स वा रुच्चति तं सम्पदानं"—सद्द०, सु० ५५३; "यस्मै दित्सा रोचते धारयते वा तत्संप्रदानम्"—का० २.४.१०; "कर्मणा यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्" पा० १.४.३२; "रुच्यर्थानां प्रीयमाणः"—त०, १.४.३३, "धारेरुत्तमर्णः"—त०, १.४.३५ ।

2-3. तु०—क० न्या०, पि० २२० ।

4. तु०—"सम्पज्ज अस्स ददाती ति सम्पदानं । एकवचननिद्देसे सम्पदानस्स कारकत्ते च

भावतो[1]। सम्पज्ज अस्स ददाती ति वा सम्पदानं, सम्पज्ज उपगन्त्वा अस्स पटिग्गा-

विचारणा हेट्ठा वुत्तनया व। तं तिविधं—कोचि याचित्वा धनं गण्हाति, याचकानं भोजनमुपगच्छती त्यादिसु; कोचि नेव याचति, अपि तु खलु दत्तं सादियति, नारायनस्स बलिं ददाती त्यादिसु; कोचि नेव याचति ना पि दिन्नं गण्हाति, अपि च तथा वोहरीयति, बुद्धस्स पुप्फं पूजयती त्यादिसु। तं सब्बमिह सम्पदानं ति अधिप्पेतं"—त०; रूप०, सु० वु० २९३; "सम्मा पदीयते यस्सा ति सम्पदानं"—सुत्तनि०, पि० १००; "सम्मा पकारेन अस्स ददाती ति सम्पदानं पटिग्गाहको। पटिग्गहणलक्खणं सम्पदानकारकं" सद्द०, सु० वु० ५५३;।

"सम्मा पदीयते यस्स दिय्यमानेन योगतो।
दिन्नस्स यदि सामित्तं सम्पदानं तदुच्चते॥
पूजानुग्गहकामेन दिन्नं होति यदा तदा।
दिन्नस्स सामिकत्तानं सम्पदानं विजानियं"॥—कारिका०, गा० २९१-२९२; एत्थेव तस्स तिधा पकारो पि निद्दिट्ठो—

"अनिराकरणमाराधनाब्भनुञ्ञवसेन हि।
सम्पदानं तिधा वुत्तं रुक्खयाचकभिक्खवो"—त०, गा० २९४; सद्द०, सु० वु० ५५३; सुत्तनि०, पि० १००;।

"सम्मा पदीयते यस्स सम्पदानं तदुच्चते।
अनुमत्यानिराकत्तअज्झेसनवसा तिधा"॥—सद्दसार०, गा० ३९०; 'वाक्यपदीय' गन्थानुसारमेव अयं विचारो तत्थमागतो; वुत्तं हि तत्थ—

"अनिराकरणात् कर्त्तुः त्यागाङ्गं कर्मणेप्सितम्।
प्रेरणानुमतिभ्यां वा लभते सम्प्रदानताम्"।—त०, ३.७.१२९;
"पूजानुग्रहकाम्याभिः स्वद्रव्यस्य परार्पणम्।
दानं तस्यार्पणस्थानं सम्प्रदानं प्रकीर्त्तितम्"॥—मुग्ध० टी०, सु० २९४; "The next case Sampradāna (Dative) also occurs for the first time in the Aṣṭādhyāyī as a technical term. In VP. it is used in the sense of 'handing down by tradition' and in the Kauṣītaki Upaniṣad it means 'gift'; in the next stage it meant the person to whom the gift is made and is the name of the Dative in all systems of grammar except Mu. where it is replaced by the monosyllable 'bha' "—मञ्जूषा, जुलाई, १९५३।

1. तु०—"रजकस्स ददे वत्थं रञ्ञो दण्डन्ति आदिसु।
न भवे सम्पदानत्थं पूजादीनमभावतो"॥—सुत्तनि०, पि० १००;
"तेन वत्थं रजकस्स रञ्ञो दण्डं ददाति च।
इतिआदिपयोगेसु न भवे सम्पदानियं"॥—कारिका, गा० २९३; "एत्थ

२७९. सिलाघहनुठास[१]पधारपिहकुधदुहिस्सा[२]सूय[३]राधिक्ख-[४]पच्चासुणअनुपतिगिणपुब्बकत्तारोचनत्थतदत्थतुमत्थालमत्थमञ्ञा[५]नादरप्पाणिनि गत्यत्थकम्मनिसंस[६]नत्थसम्मुतिभिय्य[७]सत्तम्यत्थेसु च । २. ६. ७ ।

सिलाघ-हनु-ठा-सप-धार-पिह-कुध-दुह-इस्स इच्चेतेसं धातूनं पयोगे, उसूयत्थानं[८] च पयोगे, राधिक्खपयोगे, पच्चासुणअनुपतिगिणानं[९] पुब्ब-

---

हकस्स ददाती त्यत्थो[1] । एवमत्थे सति रजकस्स वत्थं ददाती त्यादयो पि संगण्हाति[2] । उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव । धातुनामानं पयोगे वा उपसग्गनिपातपयोगे वा तिमिना अपादानकारके वुत्तप्पयोगं संगण्हाति । नवा पयोगे ति एत्थ नकारो अञ्ञत्थो, यथावुत्तप्पयोगतो अञ्ञस्मिम्पि पयोगे ति अत्थो । इमिना चा अवसेसकारकमज्झरक्खणत्थअदस्सनादिधातुपयोगे संगण्हाति ।

२७९. सिलाघहनुठासप····सत्तम्यत्थेसु चा[3] तिदं 'यस्स दातुकामो····' ति सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'यस्स दातुकामो····' तिमिना दानरोचनधारणयोगे

पन ठत्वा किञ्चि वदाम—सद्दसत्थविदूनं मतवसेन हि 'रजकस्स वत्थं ददाति···' आदिसु सम्पदानसञ्ञाय न भवितब्बं, सद्दसत्थेसु हि 'यस्स सम्मा पूजाबुद्धिया अनुग्गहबुद्धिया वा दीयते, तं सम्पदानं' ति वुत्तं, रजकस्स वत्थदानं···पूजावसेन वा अनुग्गहवसेन वा न होति, अच्चन्तवचनञ्च न होति, तस्मा 'सम्मा····' ति अत्थेन विरोधनतो सम्पदानसञ्ञा न होती ति तेसं लद्धि···"—सद्द०, सु० वु० ५५४; "···दानं चाऽपुनर्ग्रहणाय स्वस्वत्वनिवृत्तिपूर्वकं परस्वत्वोत्पादनम् । अत एव 'रजकस्य वस्त्रं ददाती'-त्यादौ न भवति । तत्र हि ददातिर्भाक्तः । एतच्च वृत्तिमतम् । भाष्यमते तु नाऽन्वर्थतायामाग्रहः, 'खण्डिकोपाध्यायः शिष्याय चपेटां ददाति' इत्यादिप्रयोगात् । 'रजकस्य ददाती' ति प्रयोगस्तु शेषत्वविवक्षायां भविष्यति····"—तत्त्व०, सि० कौ०, सु० ५७०; वि० द०—महा०, काशिका, पा० १.४.३२ ।

१. ०ट्ठा०—सें०, सी० १ । २. ० स्सो०—सी० २ । ३. ० सुय्य०—सें० । ४. ० प्प०—सें० । ५. ० ञ्ञ०—सें० । ६. ० णि०—सें०, सी० १ । ७. भीय०—सी० २ । ८. उसुय्यत्थानं—सें० । ९. ० गिनानं—सी० २ ।

1-2. तु०—"सम्पेच्च अस्स ददाती ति सम्पदानं, सम्पेच्च उपगन्त्वा अस्स पटिग्गाहकस्स ददाती ति अत्थो । एवमत्थे सति रजकस्सादयो पि सङ्गण्हाति"—सुत्तनि०, पि० १०० ।

3. तु०—"सिलाघ-हनु-ठा···"—सद्द०, सु० ५५४; "श्लाघह्नुङ्स्थाशपां ज्ञीप्स्यमानः"

कत्तरि च, आरोचनत्थे, तदत्थे, तुमत्थे, अलमत्थे, मञ्ञतिप्पयोगे अनादरे अप्पाणिनि, गत्यत्थानं धातूनं कम्मनि, आसिसनत्थे[२], सम्मुतिभिय्यसत्तम्यत्थेसु च तं कारकं सम्पदानसञ्ञं होति।

सिलाघप्पयोगे ताव—बुद्धस्स सिलाघते, धम्मस्स सिलाघते, सङ्घस्स सिलाघते, सकउपज्झायस्स सिलाघते, तव सिलाघते, मम सिलाघते इच्चेवमादि।

हनुप्पयोगे—हनुते मय्हमेव, हनुते तुय्हमेव लाभं[३] इच्चेवमादि।

ठाप्पयोगे[४]—उपतिट्ठेय्य सक्यपुत्तानं वड्ढकी, भिक्खुस्स भुञ्जमानस्स पानियेन[५] वा विधूपनेन वा उपतिट्ठेय्य इच्चेवमादि।

सपप्पयोगे—मय्हं सपते, तुय्हं सपते इच्चेवमादि।

सम्पदानं वुत्तं; एवं सति सिलाघादियोगे कथं सम्पदानसञ्ञा भवेय्या ति पुच्छाय सति, सिलाघादियोगेस्वपि सम्पदानसञ्ञा होतेवा ति दस्सेतुं, 'सिलाघ....' ति आह। सम्बन्धो सुविञ्ञेय्यो व। चतुप्पदं। सिलाघ....अप्पाणिनी ति आधारसत्तमी, गत्यत्थकम्मनी ति च तथा, संसट्ठ....सत्तम्यत्थेसू ति तथा, चा ति अनुकड्ढनं, सञ्ञासुत्तं ति वेदितब्बं। सिलाघो[१] च हनु च ठा च सपो च धारो च पिहो च कुधो च दुहो च इस्सा च उसूया च राधो च इक्खो च पच्चासुणअनुपति-गिण-पुब्बकत्ता च आरोचनत्थो च तदत्थो च तुमत्थो च अलमत्थो च मञ्ञनादरप्पाणि च, तथा, तस्मिं सिलाघ... अप्पाणिनि; गत्यत्थानं कम्मं गत्यत्थकम्मं, तस्मिं गत्यत्थकम्मनि; आसिसट्ठो च सम्मुति च भिय्यो च सत्तम्यत्थो चा ति (द्वन्द्वो), तस्मिं, आसिसट्ठसम्मुतिभिय्यसत्तम्यत्थे[२]।

—पा० १.४.३४, "क्रुधद्रुहे..."—त०, १.४.३७, "राधीक्ष्योर्यस्य विप्रश्नः"—त०, १.४.३६, "प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः पूर्वस्य कर्ता"—१.४.४०, "अनुपतिगृणश्च"—त०, १.४.४१, "गत्यर्थकर्मणि...."—त०, २.३.१२, तुमर्थाच्च भाववचनात्"—२.३.१५, "नमःस्वस्तिस्वाहा...."—त०, २.३.१६, "मन्यकर्मण्यनादरे...."—त०, २.३.१७।

१. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। २. आसिसत्थे—से०। ३. से० पोत्थके नत्थि। ४. ठापयोगे—से०। ५. पानीयेन—सी० १।

1-2. तु०—क० ब्या०, पि० २२०--२२१।

धारप्पयोगे—सुवण्णं[1] ते धारयते[1] इच्चेवमादि ।

पिहप्पयोगे—बुद्धस्स अञ्ञतित्थिया पिहयन्ति, देवा दस्सनकामा ते, यतो इच्छामि भदन्तस्स[2], समिद्धानं पिहयन्ति दलिद्दा[3] इच्चेवमादि ।

कुध-दुह-इस्स-उसूयप्पयोगे—कोधयति देवदत्तस्स, तस्स मा[4] कुज्झ महावीर, दुहयति दिसानं मेघो, तित्थिया इस्सयन्ति समणानं गुणगिद्धेन, तित्थिया समणानं उसूयन्ति[5] लाभगिद्धेन, दुज्जना गुणवन्तानं उसूयन्ति[6] गुणगिद्धेन[7], का उसूया[8] विजानतं इच्चेवमादि ।

राध-इक्ख इच्चेतेसं धातूनं पयोगे यस्स अकथितस्स पुन विपुच्छनं कम्मविख्यापनत्थञ्च[9] तं कारकं सम्पदानसञ्ञं होति दुतिया च—आराधो

बुद्धस्स सिलाघते····मम सिलाघते ति सिलाघपयोगा; तत्थ सिलाघते ति थोमेती ति अत्थो[1] । हनुते तुय्हमेवा त्यादि हनुपयोगा; तत्थ हनुते ति अपनेति, अल्लापसल्लापं न करोती त्यत्थो[2] । उपतिट्ठेय्य[3] सक्यपुत्तानं वड्ढकी, भिक्खुस्स भुञ्जमानस्स पानियेन विधूपनेन वा ति ठापयोगे, विधूपनेना ति वीजनीकम्मेन । मय्हं सपते, तुय्हं सपते ति सपप्पयोगा, सपते ति सच्चकिरियं करोती त्यत्थो[4] । सुवण्णं ते धारयते ति धारप्पयोगो, इणभूतं सुवण्णं धारयते पतिददाती ति अत्थो[5] । बुद्धस्स अञ्ञतित्थिया पिहयन्ति त्यादि पिहप्पयोगा, पिहयन्ती ति इच्छन्ति; देवा दस्सनकामा ते ति पिहत्थपयोगो; कमुधातुया इच्छत्थे; यतो इच्छामि भद्दन्तस्सा ति च पिहत्थो, समिद्धानं पिहयन्ती ति च, पिहो च पिहत्थो चा ति पिहो ति एकसेसो दट्ठब्बो[6] । कोधयति देवदत्तस्स, तस्स कुज्झ

१-१. सुवण्णं मे धारयते—से० । २. भद्दं तस्स—से० । ३. दळिद्दा—सी० १ । ४. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । ५. उसुय्यन्ति—से० । ६. उसुय्यन्ति—से० । ७. गुणवड्ढेन—से० । ८. उसुय्या—से० । ९. ०नत्थं—से० ।

1. तु०—"एत्थ हि सिलाघनं नाम थोमनं, वण्णकथनं"—क० न्या०, पि० २२१ ।
2. तु०—"एत्थ च अपनयनं नाम अपलपनं नाम अपलपनं, निब्बचनकरणं"—त० ।
3. तु०—"एत्थ च उपट्ठानं नाम उपगमनं····"—त० ।
4. तु०—"एत्थ च सपनं नाम तोसनत्थं सच्चकरणं"—त० ।
5. तु०—"एत्थ च धारणं नाम इणदेय्यता"—त० ।
6. तु०—"एत्थ च पिहनं नाम पत्थनं····"—त०; सुत्तनि०, पि० १०१; सद्द०, सु० सु० ५५४ ।

मे रञ्ञो, आराधो मे राजानं, क्याहं अय्यानं अपरज्झामि, क्याहं[1] अय्ये अपरज्झामि[1], चक्खु जनस्स दस्सनाय, तं विय मञ्ञे, आयस्मतो उपालित्थेरस्स उपसम्पदापेक्खो[2] उपतिस्सो, आयस्मन्तं वा इच्चेवमादि[3]।

पच्चासुणअनुपतिगिणानं[4] पुब्बकत्तरि च—सुणोतिस्स धातुस्स पच्चायोगे यस्स कम्मुनो[5] पुब्बस्स यो कत्ता सो सम्पदानसञ्ञो होति, तं यथा—भगवा भिक्खू एतदवोच—भिक्खू ति अकथितकम्मं, एतं ति कथितकम्मं, यस्स कम्मुनो[6] पुब्बस्स यो कत्ता[7] सो भगवा ति—"यो करोति स कत्ता"

महावीरा ति कुधधातुपयोगो, कुध कोपे ति धातु[1]। दुहयति दिसानं मेघो ति दुहप्पयोगो, दुह पूरणे ति धातु[2]। इस्सयन्ति समणानं त्यादि इस्सप्पयोगो, इस्सयन्ती ति इस्सं करोन्ती ति अत्थो[3]। गुणवन्तानं उसूयन्ति, का उसूया विजानतं ति उसूयपयोगा, उसूयन्ती ति दोसं आविकरोन्ती ति अत्थो। आराधो मे रञ्ञो, आराधो मे राजानं ति राधप्पयोगा; आराधो मे राजानं ति एत्थ वाधिकारत्ता कम्मत्थे दुतिया, आराधो तेहं, तमहं आराधो ति वुत्तनयेन दुतिया; सेसेसु पि एसेव नयो[4]। चक्खुं दस्सनाय, तं

१-१. से० पोत्थके नत्थि। २. ०पेखो—सी० १, सी० २। ३. से०, सी०१ पोत्थकेसु नत्थि। ४. ०गिनानं—सी० २। ५. कम्मनो—से०। ६. कम्मनो—से०। ७. कत्ताति—सी० १।

1-2. तु०—"एत्थ च कुज्झनं नाम कुप्पनं, दुहनं नाम आहननं विलुम्पनं वा…"—क० न्या०, पि० २२१-२२२; सुत्तनि०, पि० १०२; सद्द०, सु० वु० ५५४।

3-4. तु०—क० न्या०, पि० २२२; "…आराधो मे रञ्ञो आराधो मे राजानं ति एत्तका येव पयोगा सीहळपोत्थकेसु दिस्सन्ति, न आराधो मे राजा, आराधो मे राजा ति पयोगा। तत्थायमधिप्पायो—एको किर राजा पच्चूससमये सुभनिमित्तं सुपिनं पस्सति। तदा किमिदं सुभनिमित्तं वा दुन्निमित्तं वा ति मञ्ञित्वा, ससोको हुत्वा, पातो व सरीरप्पटिजग्गनकिच्चं कत्वा, अत्तनो सुभासुभनिमित्तं विख्यापने समत्थस्स पुरोहितस्सागमनमेव ओलोकेत्वा निसीदि। तदा पुरोहितो पि सीतभावेन अग्गिं निस्साय किञ्चि चिरायित्वागतो। राजा दुम्मनो तुण्हीभूतो निसीदति। अथ पुरोहितो रञ्ञो मनं ञत्वा 'दक्खिणेय्यो गतो सूरियो…पगेव इतरो जनो' ति सीतभयं निस्साय अत्तनो चिरायनभावं आरोचित्वा 'आराधो मे रञ्ञो, आराधो मे राजानं, को पन मम दोसो महाराजा' ति आह…"—सुत्तनि०, पि० १०२-१०३।

ति (२८३) सुत्तवचनेन; एवं यस्स कम्मुनो पुब्बस्स यो कत्ता सो सम्पदानसञ्ञो होति, तं यथा—ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं, आसुणन्ति बुद्धस्स भिक्खू ।

अनुपतिपुब्बस्स[1] गिणस्स धातुस्स पयोगे[2] यस्स कम्मुनो पुब्बस्स यो कत्ता सो सम्पदानसञ्ञो होति, तं यथा—भिक्खु जनं धम्मं सावेति, तस्स हि[3] भिक्खुनो जनो अनुगिणाति, तस्स भिक्खुनो जनो[4] पतिगिणाति ।

यो वदेति[5] स कत्ता ति वुत्तं कम्मं ति वुच्चति ।
यो पटिग्गाहको तस्स सम्पदानं विजानिया[6] ॥

इच्चेवमादि[7] ।

विय मञ्ञे, आयस्मतो उपालित्थेरस्स उपसम्पदापेखो उपतिस्सो ति इक्खप्पयोगो[1]; तं भगवन्तं जनस्स दस्सनाय चक्खुं विय मञ्ञे ति अत्थो । इक्खत्थयोगोयं, इक्खधातुया दस्सनत्थत्ता, आयस्मन्तं ति कम्मत्थे येव दुतिया । भगवा भिक्खु एतदवोच, ते भिक्खू भगवतो पच्चस्सोसुं ति पतिपुब्बसुधातुप्पयोगो; एत्थ च भगवा ति अवोचा ति वचनक्रियाय कत्ता, सो च कत्ता अस्सोसुं ति परक्रियाय सम्पदानं भवति—भगवतो पच्चस्सोसुं ति, भिक्खु जनं धम्मं सावेति, तस्स भिक्खुनो जनो अनुगिणाति पतिगिणाती ति अनुपुब्बपतिपुब्बगिधातुप्पयोगो; एत्थ च भिक्खू ति सवणक्रियाय कत्ता, सो च अनुगिणाति पतिगिणाती ति अपरक्रियाय सम्पदानं भवति—तस्स भिक्खुनो जनो अनुगिणाति, तस्स भिक्खुनो जनो पतिगिणाती ति; एत्थ पच्चस्सोसुं ति एवं भन्ते ति पटिजानिंसु, साधुकारं अदंसू ति अत्थो । अनुगिणाति, पतिगिणाती ति साधुकारदानादीहि तं उस्साहयती ति अत्थो[2] । कत्तुकम्मसम्पदानविसेसं दस्सेतुं—

"यो वदेति स कत्ता ति वुत्तं कम्मं ति वुच्चति ।
यो पटिग्गाहको तस्स सम्पदानं ति वुच्चती" ॥

ति वुत्तं ।

तत्थ यो भगवादिको कारको वदेति च सावेति च सो कत्ता ति वुच्चति । वुत्तं वचनक्रियं कम्मं ति कम्मं इति वुच्चति । यो भगवादिको कारको साधुकारादिदानस्स

---

१. से० पोत्थके नत्थि । २. अनुपतियोगे—से० । ३. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । ४. से० पोत्थके नत्थि । ५. वादेति—से० । ६. विजानियं—से० । ७. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि ।

1. सु०—क० व्या०, पि० २२२; रूप०, सु० वु० २९४; सुत्तनि०, पि० १०३–१०५; सद्द०, सु० वु० ५५४ ।

आरोचनत्थे—आरोचयामि वो भिक्खवे, आमन्तयामि वो भिक्खवे, पटिवेदयामि[1] वो भिक्खवे, आरोचयामि ते महाराज, आमन्तयामि[2] ते महाराज,[2] पटिवेदयामि ते महाराज इच्चेवमादि[3] ।

तदत्थे—ऊनस्स पारिपूरिया[4] वत्थं[5] निक्खिपितब्बं[6], बुद्धस्स अत्थाय धम्मस्स अत्थाय सङ्घस्स अत्थाय जीवितं परिच्चजामि इच्चेवमादि ।

तुमत्थे—लोकानुकम्पाय[7] अत्थाय हिताय सुखाय भिक्खूनं फासुविहाराय इच्चेवमादि ।

अलमत्थे—अलमिति अरहति च पटिक्खित्ते च—अलम्मे बुद्धो, अलम्मे रज्जं, अलं भिक्खुपत्तस्स, अलं[8] मल्लो मल्लस्स[9] ।

पटिक्खित्ते—अलं ते रूपं कारणीयं, अलं मे हिरञ्जसुवण्णेन इच्चेवमादि[9] ।

पटिग्गाहको तस्स भगवादिकारकस्स सम्पदानसञ्ञं विजानेय्या ति अत्थो[1] ।

आरोचयामि वो भिक्खवो ति आरोचनप्पयोगो[a]; आमन्तयामि वो भिक्खवो, पटिवेदयामि वो भिक्खवो ति आरोचनत्थपयोगो; आरोचनञ्च आरोचनत्थो चा ति आरोचनं ति एकसेसो; आरोचन-आरोचनत्थयोगे ति वुत्तं होति। ऊनस्स पारिपूरिया त्यादि तदत्थे; तस्सा क्रियाय अत्थो ति तदत्थो, तस्मिं तदत्थे; ऊनस्स पारिपूरिया चीवरं निक्खिपितब्बं ति एत्थ पारिपूरणं फलं निक्खिपिनं हेतुफलभूतं पारिपूरणं हेतुभूताय निक्खिपनक्रियाय सम्पदानं भवति पारिपूरिया निक्खिपितब्बं ति, तस्मा तस्सा क्रियाय फलभूतत्ता तत्थ सम्पदानं नाम। लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय सुखाय बुद्धो लोके उदपादी त्यादि तुमत्थे; एत्थ च तुमत्थे ति तुंपच्चयस्स अत्थे, लोकानुकम्पाया ति लोकमनुकम्पितुं ति अत्थो; तुंपच्चयस्स अत्थे चतुत्थिया विधानत्ता तुमत्थे ति वुत्तं। एवं सेसेसु। अलं मे बुद्धो, अलं मे रज्जं, अलं भिक्खुपत्तस्स, अलं मल्लो मल्लस्सा ति

---

१. पति०—सी० १, सी० २। २-२. से० पोत्थके नत्थि। ३. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। ४. परिपुरिया—से०। ५. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। ६. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। ७. ०कम्पकाय—सी० १, सी० २। ८. अलं मे—से०। ९-९. मल्लस्स, अरहति मल्लो मल्लस्स०—सी० १; मल्लस्स, एवं अरहति; अलं ते रूपं करणीयं, अलं मे हिरञ्ञसुवण्णेहि, एवं पटिक्खित्ते—से०।

1. तु०—क० न्या०, पि० २२२-२२३; "कत्तुकम्मसम्पदानविसेसं वस्सेतुं यो वदेती ति आदिमाह। तत्थ यो भगवादिकारको वदेति सावेति च, सो कारको कत्ता ति च वुच्चति।

मञ्ञतिप्पयोगे अनादरे अप्पाणिनि——कट्ठस्स तुवं मञ्ञे, कलिङ्गरस्स तुवं मञ्ञे। अनादरे ति किमत्थं? सुवण्णं त्वं[1] मञ्ञे। अप्पाणिनी ति किमत्थं? गद्रभं त्वं[2] मञ्ञे।

गत्यत्थकम्मनि[3]——गामस्स पादेन गतो, नगरस्स पादेन गतो; अप्पो सग्गाय गच्छति, सग्गस्स गमनेन वा, मूलाय पटिकस्सेय्य सङ्घो। दुतिया च——गामं पादेन गतो, नगरं पादेन गतो; अप्पो सग्गं गच्छति, सग्गं गमनेन वा, मूलं पटिकस्सेय्य सङ्घो इच्चेवमादि।

आसिसनत्थे[4]——आयस्मतो दीघायु होतु, कुसलं भवतो होतु, भद्दं भवतो होतु, अनामयं भवतो होतु, सुखं भवतो होतु, स्वागतं भवतो होतु, अत्थं[5] भवतो होतु, हितं भवतो होतु[5] इच्चेवमादि।

सम्मुतिप्पयोगे——अञ्ञत्र सङ्घसम्मुतिया भिक्खुस्स विप्पवत्थुं न वट्टति, साधुसम्मुतिया[6] मे[7] भगवतो दस्सनाय इच्चेवमादि[8]।

अरहतिवाचकस्स अलंसद्दस्स पयोगे, अलं अरहती त्यत्थो; अरहति मल्लो मल्लस्सा ति अलमत्थपयोगे, अलं च अलमत्थो चा ति एकसेसोयं। अलं ते रूपं करणीयं, अलं मे हिरञ्ञसुवण्णेना ति पटिक्खित्ते, अलं अयुत्तं अप्पटिरूपं त्यत्थो। कट्ठस्स तुवं मञ्ञे, कलिङ्गरस्स तुवं मञ्ञे ति मञ्ञतिप्पयोगो; अनादरे अप्पाणिनी ति कट्ठस्सा ति कम्मत्थे पि सम्पदानसञ्ञा[3]।

वुत्तं वत्तब्बं वचनं कम्मं वा। यो भगवादिकारको पटिग्गाहको साधुकारादिदानप्पटिग्गाहको तस्स कारकस्स सम्पदानं सम्पदानसञ्ञं विजानिया विजानेय्य। एत्थ हि वदेति वुत्तन्ति वदेति सावेति धम्मं ति किरियाकम्मानि पि संगण्हाति। पुब्बे वचनसवनकिरियं पटिच्च कत्ता नाम। पच्छा किरियापटिग्गाहकं पटिच्च सम्पदानं नामा ति अत्थो"—सुत्तनि०, पि० १०५।

2-3. तु०—त०, पि० १०५-१०७।

१. त—से०। २. तुवं—से०। ३. ०कम्मणि—से०, सी० १। ४. आसिसत्थे—से०। ५-५. से० पोत्थके नत्थि। ६. ०सम्मुति—से०, सी० १। ७. मे तस्स—से०। ८. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि।

भिय्यप्पयोगे[१]——भिय्यो[२] सोमत्ताय इच्चेवमादि ।

सत्तम्यत्थे च[३]——तुय्हं चस्स आविकरोमि, तस्स मे सक्को पातुरहोसि इच्चेवमादि ।

अत्थग्गहणेन बहूसु अक्खरप्पयोगेसु दिस्सति, तं यथा—उपमं ते करिस्सामि, धम्मं वो भिक्खवे देसिस्सामि इच्चेवमादि ।

सारत्थे[४] च——देसेतु भन्ते भगवा धम्मं भिक्खूनं,[५] तस्स फासु होति,[६] एतस्स[७] पहिणेय्य, यथा नो भगवा व्याकरेय्य[८] तथा पि तेसं व्याकरिस्साम, कप्पति समणानं आयोगो,[९] अम्हाकं मणिना अत्थो, किमत्थो मे बुद्धेन, सेय्यो मे अत्थो, बहूपकारा[१०] भन्ते महापजापती[११] गोतमी भगवतो, बहूपकारा भिक्खवे मातापितरो पुत्तानं इच्चेवमादि ।

बहूसु[१२] अक्खरप्पयोगेसु अञ्ञे पि पयोगविचक्खणेहि योजेतब्बा ।

सुवण्णं त्वं मञ्ञे ति एत्थ असति पि अप्पाणिनीभूते मञ्ञतिप्पयोगे अनादरस्साभावा सम्पदानसञ्ञा न होति, कम्मत्थे दुतिया[1] । गद्रभं त्वं मञ्ञे ति एत्थ सति पि मञ्ञतिप्पयोगे अनादरे अप्पाणिनो अभावा सम्पदानसञ्ञा न होति, कम्मत्थे दुतिया व[2] । गामस्स पादेन गतो, नगरस्स पादेन गतो, अप्पो सग्गाय गच्छति, सग्गस्स गमनेन वा, मूलाय पटिकस्सेय्या ति गत्यत्थकम्मनि[3] ।

दुतिया च—गामं पादेन गतो, नगरं पादेन गतो, अप्पोसग्गं गतो, सग्गं गमनेन, वा, मूलं पटिकस्सेय्या ति । एत्थ चसद्देन सम्पदानमेव, अत्थो पन कम्मत्थो व । सग्गाय मूलाया ति एत्थ विभत्तिविपल्लासे चतुत्थेकवचनस्स, 'आय....' ति (१०९) आयादेसो, अत्थो पन कमत्थो व; अप्पो अप्पको सत्तो त्यत्थो[4] । आयस्मतो दीघायु होतू त्यादि आसिंसनत्थे; तानि सुविञ्ञेय्यानेव । अञ्ञत्र सङ्घसम्मुतिया भिक्खुस्स विप्पवत्थुं न

---

१. भीय०—सी०२ । २. भीयो—सी०२ । ३. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । ४. सादरत्थे—सी० २ । ५. भिक्खुनो—सी० २ । ६. से० पोत्थके नत्थि । ७. तस्स—से० । ८. ब्याकरेय्य—से० । ९. अयोगो—सी० १ । १०. बहुकारा—सी० १ । ११. ०पति—सी० १ । १२. से० पोत्थके नत्थि ।

1-2. तु०—क० न्या०, पि० १०५-१०७; सद्द०, सु० वु० ५५४ ।

3. तु०—त०; "एत्थ गति धातु कम्मनी ति अवत्वा अत्थग्गहणेन आगमनत्थसङ्खताय पटिकस्सनकिरियाकम्मं सङ्गण्हाति । गत्यत्थकम्मनो ति सामञ्ञेन वुत्ते पि अचलकम्ममेव इच्छन्ति । तेन मनुस्सा पाटलिपुत्तं गच्छन्ती ति आदीसु सम्पदानसञ्ञा न होति...."—सुत्तनि०, पि० १०७ ।

4. तु०—त० ।

चसद्दग्गहणं विकप्पनत्थं वाग्गहणानुकड्ढनत्थं--ये केचि सम्पदानप्पयोगिका मया नोपदिट्ठा तेसं गहणत्थमिति विकप्पयति, तं यथा--भिक्खुसङ्घस्स पभु[1] अयं भगवा, देसस्स पभु अयं राजा, खेत्तस्स पभु अयं गहपति, अरञ्ञस्स पभु अयं लुद्दको इच्चेवमादि ।

क्वचि दुतिया-ततिया छट्ठी-सत्तम्यत्थेसु च ।

वट्टति, सम्मुति मे तस्स भगवतो साधू ति सम्मुतिपयोगो ! तत्थ भिक्खुस्सा ति च, मे ति च सम्मुतियोगे सम्पदानसञ्ञा। भिय्यो सोमत्ताया ति भिय्यप्पयोगो*; सो ति कुक्कुरो, मत्ताया ति पमाणतो, भिय्यो ति अतिरेकतरो, चण्डो ति अत्थो; मत्ताया ति भिय्यप्पयोगे इमिना सम्पदानसञ्ञा, अत्थो पन पञ्चम्यत्थो[1]; एत्था पि विभत्तिविपल्लासवसेन चतुत्थेकवचनस्स आयादेसो। तुय्हञ्चस्साविकरोमि, तस्स मे सक्को पातुरहोसी ति सत्तम्यत्थे; आविकरणपातुभावादिके एवायं; अस्सा ति अस्मि ति अत्थो; तस्स मे ति तस्मि मे त्यत्थो; सद्दो सम्पादनमेव, अत्थो पन सत्तम्यत्थो ।

अत्थग्गहणेना ति सत्तम्यत्थेसु चा ति एत्थ अत्थग्गहणेन; उपमं ते करिस्सामी त्यादीनि उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव । एत्थ च सारत्थो ति उत्तमत्थो[2] ।

"चग्गहणं विकप्पनत्थस्स वाग्गहणस्सानुकड्ढनत्थं" ति एत्थ सुत्ते चग्गहणं हेट्ठा वुत्तस्स विकप्पनत्थवाचकस्स वासद्दस्सानयनत्थं त्यत्थो[3] । तप्फलं दस्सेतुं ये केची

---

१. पभू ०—से० (सब्बत्थ) ।

*. भीय्य०—सी० ।

1. तु०—सुत्तनि०, पि० १०७; "अय हि भिय्योसो मत्ताया ति पयोगो पञ्चमीपयोगो.... तत्थ भिय्यो-सो ति इदं भिय्योसद्देन अतिरेकत्थवाचकेन निपातेन समानत्थं निपातपदं.... तस्मा संसयं अकत्वा भिय्यो-सो मत्ताया ति एत्थ 'मत्ततो भिय्यो' ति अत्थो गहेतब्बो.... इममत्थं येव सन्धाय पोराणा 'भिय्योसो मत्ताया ति अतिरेकप्पमाणेना' ति ततियाविभत्तिवसेन अत्थं कथयिंसु....केचि पन एत्थ वदेय्युं...."—सद्द०, सु० वु० ५५४।

2. तु०—"अस्मि येव योगे हेट्ठा अत्थग्गहणस्स कतत्ता 'आसिसनत्थसम्मुतिभिय्यसत्तमीनञ्चे' ति वुत्ते येव सिद्धे सत्यारम्भस्स अत्थन्तरविञ्ञापनतो तप्फलं दस्सेन्तो 'अत्थग्गहणेना' ति आदिमाह । तत्थ सादरत्थो नाम उत्तमत्थो चिन्तापनत्थो वा"—क० न्या०, पि० २२३; सुत्तनि०, पि० १०८ ।

3. तु०—"चग्गहणं अत्थन्तरविकप्पनत्थस्स अनन्तरसुत्ते वाग्गहणस्सानयनत्थं ति । तेन च पिहनीया विभूतयो ति एत्थ कम्मसञ्ञा पि भवति"—क० न्या०, पि० २२४; सुत्तनि०, पि० १०८; "कच्चायने पन 'सत्तम्यत्थेसु चा' ति चसद्दग्गहणं विकप्पनत्थवाग्गहणानुकड्ढनत्थमेव"—सद्द०, सु० वु० ५५४ ।

२८०. योधारो तमोकासं । २, ६, ८ ।

यो आधारो तं ओकाससञ्ञं होति। स्वाधारो चतुब्बिधो— ब्यापिको, ओपसिलेसिको, वेसयिको, सामीपिको ति। तत्थ ब्यापिको ताव—जलेसु खीरं, तिलेसु तेलं, उच्छुसु[1] रसो। ओपसिलेसिको—परियङ्के राजा सेति, आसने उपविट्ठो सङ्घो। वेसयिको—भूमीसु मनुस्सा चरन्ति, अन्तलिक्खे[2] वायू वायन्ति, आकासे सकुणा पक्खन्दन्ति। सामीपिको—वने हत्थिनो चरन्ति[3], गङ्गायं[4] घोसो तिट्ठति[5], वजे गावो[6] दुहयन्ति[7], सावत्थियं विहरति जेतवने।

ओकास इच्चनेन क्वत्थो? "ओकासे सत्तमी" (३०४)।

त्यादिमाह। भिक्खुसङ्घस्स पभू त्यादीनि तस्स उदाहरणानि। तत्थ सङ्घस्सा ति सङ्घ-सद्दस्स वासद्देन सम्पदानसञ्ञा; 'सम्पदाने चतुत्थी' ति (२९५) चतुत्थेकवचनं सकारागमञ्च; वाग्गहणस्स विकप्पनत्थत्ता 'सामिस्सराधिपति....' ति (३०५) सुत्तं विकप्पेति; तस्सानियतत्ता तेन भिक्खुसङ्घस्स पभू ति एत्थ भिक्खुसङ्घस्सा ति सम्पदानं भवति; गोणानं पभू ति, गोणेसु पभू ति पि छट्ठत्थसत्तम्यत्थेसु छट्ठिसत्तमिविभत्तियो भवन्ति, क्वचि दुतिया ततिया च; सत्तम्यत्थे तिदं न पोराणिकं।

इदानि अवसेसेसु चतूसु कारकेसु ओकासकारकस्स महाविसयत्ता तं दस्सेतुं—

२८०. योधारो तमोकासं[1] ति आह। इदं सुत्तं 'ओकासे सत्तमी' ति (३०४) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं? 'ओकासे सत्तमी' ति वुत्तं; एत्थ किमोकासं ति

---

१. उच्छूसु—से०। २. अन्तरिक्खे—से०। ३. से० पोत्थके नत्थि। ४. गङ्गाय—सी० २। ५. से० पोत्थके नत्थि। ६. गावि—से०। ७. दुहन्ति—से०, सी० १।

*. ०संखाते—सी० (सब्बत्थ)

1. तु०——सद्द०, सु० वु० ५७२; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—'यो कत्तु-कम्म-समवेतानं निसज्जपचनादिकिरियानं आधारकट्ठेन आधारो, तं कारकं ओकाससञ्ञं होति। भुसो किरियं धारेती ति आधारो, सो एव तासं किरियानं पतिट्ठानट्ठेन ओकासत्ता ओकासं नामा ति वुच्चति....' "य आधारस्तमधिकरणम्"—का० २.४.११; "आधारोऽधिकरणम्"—पा० १.४.४५; 'सिद्धान्तकौमुदी' इति गन्थे अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—"कर्तृकर्मद्वारा तन्निष्ठक्रियाया आधारः कारकमधिकरणसंज्ञं स्यात्";

"कर्तृकर्मव्यवहितामसाक्षाद्धारयत् क्रियाम्।
उपकुर्वत् क्रियासिद्धौ शास्त्रेऽधिकरणं स्मृतम्" ॥—वाक्य०, ३.७.१४८।

पुच्छाय सति, यो कत्तुकम्मानमाधारो तमोकासं ति दस्सेतुं, 'योधारो तमोकासं' त्याह। सम्बन्धो सुविञ्ञेय्यो व। चतुप्पदं। यो ति अनियतसञ्ञी, आधारो ति तब्बिसेसनं, तं ति नियतसञ्ञी, ओकासं ति सञ्ञा; सञ्ञासुत्तं। आभुसो धारेती ति आधारो[1]। किं धारेति? कत्तुट्ठं क्रियं वा कम्मट्ठं क्रियं वा धारेति। कत्थ कत्तुट्ठं धारेति, कत्थ कम्मट्ठं धारेती ति? परियङ्के राजा सेती ति एत्थ कत्तुट्ठं क्रियं धारेति। कथं धारेती ति? सेती ति एत्थ सयनक्रिया राजसङ्खाते कत्तुदब्बे तिट्ठति, कत्तुदब्बसङ्खातो राजा परियङ्कसङ्खाते आधारे तिट्ठति; तस्मा परियङ्कसङ्खातो कटो कत्तुसङ्खातं राजदब्बम्पि, तस्मिं सन्निस्सितं सयनक्रियम्पि फलूपचारतो धारेति। थालियं ओदनं पचती ति एत्थ मुदुभावसङ्खाता क्रिया ओदनदब्बे तिट्ठति, ओदनदब्बं थालिसङ्खाताधारे तिट्ठति; तस्मा थालिङ्खातो आधारो ओदनदब्बसङ्खातं कम्मम्पि, तन्निस्सितं मुदुभावसङ्खातं क्रियम्पि धारेती ति। अवकसन्ति पतिट्ठन्ती ति ओकासं; एत्थ कटादिदब्बे कत्तुट्ठकम्मट्ठा क्रिया अवकसन्ति पतिट्ठन्ती ति एत्था ति पदेन निद्दिट्ठो सो कटादिअत्थो ओकासो नामा त्यत्थो[2]। इमं सुत्तं 'यमधिकरणं तमोकासं' ति समान-

1. तु०—"आधारो कत्तुकम्मानं किरियायत्थकारके।
स आधारो ति विञ्ञेय्यो चतुधा ब्यापिकादितो" ॥—सद्दसार०, गा० ३६३; सुत्तनि०, पि० १०८; "आध्रियन्ते क्रिया यस्मिन्नित्याधारः—का० २.४.११, सु० बु०; सि० कौ०, तत्त्व०, सु० ६३३।

2. तु०—"अवकसन्ति एत्था ति ओकासं। यत्थ कारके निसज्जनपचनादिकिरियानि मुख्य-परम्परादिवसेन अवकसन्ति तिट्ठन्ति, तस्मा तं कारक ओकासं ति अत्थो—

'किरियाय कत्तुकम्मानं यत्थ होति पतिट्ठितो।
ओकासो ति पवुत्तो सो चतुधा ब्यापिकादितो'" ॥—सुत्तवि०, पि० १०६;

"यो क्रियं कत्तुकम्मान आधारेति पदत्थको।
ओकासकारकं नाम तं चतुब्बिधमेव च"—कारिका०, गा० २६६; "सब्बो पि चायमाधारो पधानवसेन परिकप्पितवसेन वा क्रियाय पतिट्ठा भवती ति ओकासो त्वेव वुत्तो ति वेदितब्बो"—रूप०, सु०वु० ३०५; "यथा हि दब्बानं पतिट्ठा ओकासो ति वुच्चति तथायम्पि कत्तुकम्मानं किरियाय पतिट्ठत्ता ओकासो ति वुत्तं....इध पन कत्तुकम्मानं किरियाय पतिट्ठत्ता तेसंयेवोकाससञ्ञाय भवितब्बं, अथ कथं जेतवनादीनमोकाससञ्ञा? लोकियानम्हि लक्खिताकारवसेन लोकाभिमतवसेन हि सद्दप्पयोगा सिज्झन्ति; लोकिया च कत्तुकम्मानं किरियायाधारकत्तेन जेतवनादीनि समधिगच्छन्ति, न पन कत्तुकम्मानि; तेसं च तेनाकारेनभिमतभावो जेतवनादीनं सत्तमीनिद्देसकरणतो विञ्ञायति..."—क० न्या०, पि० २२४–२२५।

२८१. येन वा कयिरते तं करणं । २. ६. ९ ।

येन वा कयिरति[1] येन वा पस्सति, येन वा सुणाति, तं कारकं करण-सञ्ञं होति । दात्तेन[2] वीहिं लुनाति, वासिया रुक्खं तच्छति, फरसुना रुक्खं छिन्दति, कुद्दालेन आवाटं[3] खणति, हत्थेन कम्मं करोति, चक्खुना रूपं पस्सति, सोतेन सद्दं सुणाति ।

करण इच्चनेन क्वत्थो ? "करणे ततिया" (२८८) ।

लिङ्गवसेन वत्तब्बं ति[1] ? सुखुच्चारणवसेन एवं वुत्तं[2] ।

जलेसु खीरं, तिलेसु तेलं, उच्छुसु रसो ति ब्यापिकाधारो[3] । परियङ्के राजा सेति, आसने उपविट्ठो सङ्घो ति ओपसिलेसिकाधारो । भूमिसु मनुस्सा चरन्ति, अन्तलिक्खे वायु वायन्ति, आकासे सकुणा* पक्खन्दन्ती ति वेसयिकाधारो । वने हत्थिनो चरन्ति, गङ्गायं घोसो तिट्ठति, वजे गावो दुय्हन्ति, सावत्थियं विहरति जेतवने ति समीपाधारो । एत्थ गङ्गायं घोसो ति गङ्गाय समीपे गोपकगामो ति वुत्तं होति[4] ।

इदानि अवसिट्ठकारकेसु करणकारकस्स सति पि अपविसयभावकत्तुट्ठकम्मट्ठानं क्रियानं साधकमत्ता, तं दस्सेतुं—

२८१. येन वा कयिरते तं करणं[5] ति वुत्तं । इदं सुत्तं 'करणे ततिया' ति

---

१. कयिरते—से० । २. दत्तेन—से० । ३. रुक्खं—से० ।

*. सकुना—सी० ।

1-2. तु०—सुत्तनि०, पि० १०८ ।

3-4. तु०—रूप०, सु०वु० ३०५; कारिका०, गा० ३००; सुत्तनि०, पि० १०९–११०; सद्द०, सु० वु० ५७२ ।

5. तु०—'येन कुरुते येन वा पस्सति, तम्पि करणं"–सद्द०, सु० ५५२; वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"करियति किरियं जनेति अनेन कत्तुनो उपकरणभूतेन वत्थुना ति करणं । एत्थ च सति पि सब्बकारकानं किरियासाधकत्ते, 'येन कुरुते' ति आदि विसेसेत्वा-वचनं कत्तूपकरणभूतेसु साधनेसु साधकतमस्सेव गहणत्थं । किरियासम्भारलक्खणं करणकारकं"; "येन क्रियते तत्करणम्"—का० २.४.१२; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"कर्त्रा येन क्रियते तत्कारकं करणसंज्ञं भवति; "साधकतमं करणम्"—पा० १.४.४२;

"क्रियायाः परिनिष्पत्तिर्यद् व्यापारादनन्तरम् ।
विवक्ष्यते यदा तत्र करणत्वं तदा स्मृतम् ॥
वस्तुतस्तदनिर्देश्यं न हि वस्तु व्यवस्थितम् ।
स्थाल्या पच्यत इत्येषा विवक्षा दृश्यते यतः ॥"—वाक्य० ३.७.९०-९१ ।

(२८८) सुत्ततो निक्खन्तं। किन्निक्खन्तं ? 'करणे ततिया' ति वुत्तं; किमत्थे करणं ति पुच्छाय सति, येन वा कयिरते तं करणं ति दस्सेतुं, 'येन वा.....' ति आह। किमत्थमिदमुच्चते ? येन[1] वा कयिरते, येन वा पस्सति, येन वा सुणाति, तं करणं नामा ति ञापनत्थमिदमुच्चते। पञ्चपदमिदं[2]। येना ति अनियतसञ्ञी, वा ति समुच्चयो[3], कयिरते ति क्रिया, तं ति नियतसञ्ञी, करणं ति सञ्ञा[4]; सञ्ञासुत्तं ति वेदितब्बं[5]। वासद्देन अवुत्तत्थं समुच्चेति—येन वा कयिरते, येन वा पस्सति, येन वा सुणाती ति। करीयते[6] अनेना ति करणं[7]; अनेना ति कत्तुनो उपकरणभूतेन हत्थादिना करीयते इति अनेना ति पदेन निद्दिट्ठो सो हत्थादिको अत्थो करणं नामा त्यत्थो। दात्तेन, वासिया, फरसुना, कुठारेन त्यादि बाहिरकरणं नाम[8]। दात्तादीनं करणानं कत्तुसन्तानेन असम्बन्धत्ता। हत्थेन, चक्खुना, सोतेन त्यादि अज्झत्तकरणं नाम, कत्तुसन्तानेन सम्बन्धत्ता[9]।

इदानि अवसिट्ठेसु कत्तुकम्मकारकेसु कम्मकारकस्स सति पि अपविसयभावे कम्मकरणे एकतो दस्सेतुं—

1-2. तु०—क० न्या०, पि० २२७।

3. तु०–त०।

4. तु०—"करणं ति गरुसञ्ञाकरणं करीयते अनेना ति करणं ति अन्वत्थसञ्ञाय कारकसभावपरिदीपनत्थं"—त०।

5. तु०—सुत्तनि०, पि० ११०।

6-7. तु०—'येन वा कत्ता उपकरणभूतेन वत्थुना किरियं अब्यवधानेन करोति, येन वा विकरोति येन वा पापुणाति, तं कारकं करणसञ्ञं होति। 'करीयतेनेना ति करणं' एत्थ सति पि सब्बकारकानं किरियासाधकत्ते येन वा कयिरते ति विसेसेत्वा-वचनं कत्तूपकरणभूतेसु साधनेसु साधकतमस्सेव गहणत्थं। वुत्तञ्च—

'यस्स सब्बविसेसेन क्रियासंसिद्धिहेतुता।
सम्भावीयति तं वुत्तं करणं नाम कारकं'" ॥—रूप०, सु० वु० २८७;

"करियते अनेना ति करणं...करियते ति हि कत्तुवाचको। वुत्तञ्च—

'यं वत्थुमिच्छितं कत्तुक्रियामच्चन्तसाधकं।
करणं तं विसेसस्स गहितत्ता येनादिना' ॥ ति"–सुत्तनि०, पि० ११०;
"कत्तुक्रियाभिसम्बन्धकारकेसु पधानतो।
करणं ति वुच्चति यन्तं कारणञ्ञूहि नामतो"॥–सद्दसार०, गा० ३३८;
"कत्तुक्रिया पसिद्धेयं साधनं परमिक्खते।
करणं ति पि दूतेन क्रियं कत्ता करोति च" ॥—कारिका०, गा० २८८;

महाभा०, पा० १.४.४२; सि० कौ०, सु० ५६१।

8-9. तु०—सुत्तनि०, पि० ११०; सद्द०, सु० ५५२; कारिका०, गा० २८९।

२८२. यं करोति तं कम्मं । २. ६. १० ।

यं वा करोति, यं वा पस्सति, यं वा सुणाति, तं कारकं कम्मसञ्ञं होति । कटं[1] करोति, छत्तं करोति, रथं[2] करोति[2], धजं करोति, रूपं पस्सति, सद्दं सुणाति, कण्टकं मद्दति, विसं गिलति ।

कम्ममिच्चनेन क्वत्थो ? "कम्मत्थे दुतिया" (२९९) ।

---

२८२. यं करोति तं कम्मं[1] ति वुत्तं । इदं सुत्तं 'कम्मत्थे दुतिया' ति(२९९)सुत्ततो निक्खन्तं । सम्बन्धादयो सुविञ्ञेय्या व । चतुप्पदं । यं ति अनियतसञ्ञी*, करोती ति क्रिया, तं ति नियतसञ्ञी, कम्मं ति सञ्ञा; सञ्ञासुत्तं । करीयते ति किरिया सम्बन्धयती त्यत्थो[2] । उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव[3] ।

एवं अप्पधानभूते कारके दस्सेत्वा, इदानि पधानभूतं कत्तुकारकं दस्सेतुं—

---

१. रथं—से० । २-२. से० पोत्थके नत्थि ।

*. ०सञ्ञि०—सी० ।

1. तु०—"यं कुरुते यं वा पस्सति, तं कम्मं"—सद्द०, सु० ५५१; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"करीयते, तं किरियाय पापुणीयते ति कम्मं । किरियापत्तिलक्खणं कम्मकारकं । तं तिविधं निब्बत्तनीयादिवसेन; सत्तविधमपि केचि इच्छन्ति इच्छितादिवसेन....."; "यत् क्रियते तत् कर्म"—का० २.४.१३; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"कर्त्रा यत् क्रियते तत्कारकं कर्मसंज्ञं भवति"; 'कर्तुरीप्सिततमं कर्म"—पा० १.४.४९, "तथायुक्तं चानीप्सितम्"—त०, १.४.५० ।

2. तु०—"यं वा करोति, यं वा पस्सति, यं वा सुणाति, तं कारकं कम्मसञ्ञं होती ति... कम्मं ति गरुसञ्ञाकरणं करीयती ति कम्मं ति अन्वत्थसञ्ञाय कारकसभावपरिदीपनत्थं" —क० न्या०, पि० २२७; कारिका०, गा० २८१; वि० द०—रूप०, सु० वु० २८३; सुत्तनि०, पि० ११०-११४;

"सम्बज्झते क्रिया येव तस्मा कम्मं ति वुच्चति ।
निप्फत्तिविकतिपत्तिभेदेन तिविधं मतं' ॥—सद्दसार०, गा० ३८४;

"The next case is Karman, the Accusative, which in its original sense of 'act' 'action' goes back to RV. It is used in the Nir. as also in some rules of P. in its earlier sense. From meaning 'action' Karman came to mean the object towards which the action is directed and in this sense it appears first in P."—मञ्जूषा, जुलाई, १९५३.

3. कच्चायनन्यासे 'रथं करोती' ति उदाहरणविसये वित्थारतो विचारो वट्टति; सो तु तत्थेव दट्ठब्बो—द०—त०, पि० २२७ ।

२८३. यो[1] करोति स[1] कत्ता[1] । २. ६. ११ ।

यो करोति सो कत्तुसञ्ञो होति । अहिना दट्ठो नरो, गरुळेन हतो नागो, बुद्धेन जितो मारो, उपगुत्तेन बद्धो[2] मारो ।

कत्तु[3] इच्चनेन[3] क्वत्थो ? "कत्तरि च" (२९०) ।

---

२८३. **यो करोति स कत्ता**[1] ति आह । इदं सुत्तं 'कत्तरि चे' ति (२९०) सुत्ततो निक्खन्तं । चतुप्पदं । यो ति अनियतसञ्ञी, करोती ति क्रिया, सो ति नियतसञ्ञी, कत्ता ति सञ्ञा । अत्तप्पधानो हुत्वा कत्तुट्ठकम्मट्ठं क्रियं करोती ति कत्ता[2] । अहिना त्याद्युदाहरणानि, तानि सुविञ्ञेय्यानेव[3] ।

१-१. सकत्ता—सी० २ । २. बन्धो—से० । ३-३. ०मिच्च०—सी०२ ।

1. तु०—"यो कुरुते यो वा जायति, सो कत्ता"—सद्द०, सु० ५४८; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"यो अत्तप्पधानो हुत्वा गमनपचनादिकं किरियं कुरुते, यो वा जायति, सो कारको कत्ता नाम भवति । वासद्दो विकप्पनत्थो, तेन अञ्ञो पि अत्थो योजेतब्बो । किरियं करोती ति कत्ता; सो तिविधो—सुद्धकत्ता, हेतुकत्ता, कम्मकत्ता ति···"; "यः करोति स कर्ता"—का० २.४.१४; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता —"यः क्रियां करोति स कर्तृसंज्ञो भवति"; "स्वतन्त्रः कर्ता"—पा० १.४.५४ ;

   "प्रागन्यतः शक्तिलाभात् न्यग्भावापादनादपि ।
   तदधीनप्रवृत्तित्वात् प्रवृत्तानां निवर्त्तनात् ॥
   अदृष्टत्वात् प्रतिनिधेः प्रविवेके च दर्शनात् ।
   आरादप्युपकारित्वे स्वातन्त्र्यं कर्त्तुरुच्यते" ॥-वाक्य०, ३.७.१०१-१०२ ।

2. तु०—"अत्तप्पधानो हुत्वा गमनपचनादिकं किरियं करोति निप्फादेती ति कत्ता । सो हि वुत्तावुत्तवसेन दुविधो होति···"—सुत्तनि०, पि० ११४-११७; "इध च गरुसञ्ञाकरणं करोती ति कत्ता ति अन्वत्थसञ्ञाय कारकसभावपरिदीपनत्थं । सब्बेसम्पि किरियोपनिस्सयत्ता कारकत्ते सति पि पुनेवं वुत्तत्ता यथा राजराजा···ति आदिसु विसिट्ठतरा राजादयो विञ्ञायन्ते, एवं सब्बकारकसमोधाने यो सप्पधानो सो कत्ता नामा ति दट्ठब्बं"—क० न्या०, पि० २२८; "यो किरियं अत्तप्पधानो हुत्वा करोति सो कत्तुसञ्ञो होति । सो तिविधो—सुद्धकत्ता, हेतुकत्ता, कम्मकत्ता ति····"—रूप०, सु० वु० २८७;

   "तस्मा सेव भवे कत्ता यो पधानं पतीयते ।
   पाकादिकं क्रियं कुब्बं करणादिपुरेस्सरो" ॥—कारिका०, गा० २७६;
   "सकतन्तेन तु क्रियं यो तु साधेति कारको ।
   स कत्ता ति पवुच्चति करोती ति पधानतो" ॥—सद्दसार०, गा० ३८०;

२८४. यो कारेति स[1] हेतु[1]। २. ६. १२।

यो कत्तारं कारेति सो हेतुसञ्ञो होति कत्ता[2] च। सो पुरिसो तं पुरिसं कम्मं कारेति, सो पुरिसो तेन पुरिसेन तस्स[3] पुरिसस्स[3] कम्मं कारेति[4]—एवं हारेति[5], पाठेति, पाचेति, धारेति[6]।

हेतु इच्चनेन क्वत्थो? "धातूहि णे[7]-णय[7]-णापे-णापया कारितानि हेत्वत्थे" (४४०)।

इमिना सुत्तेन पुरिसो गच्छती त्यादिसु उत्तकत्तुसु पि अञ्ञकारकसञ्ञानिवत्तनत्थं कत्तुसञ्ञा कातब्बा। कस्मा विञ्ञायती ति? 'यो करोति स कत्ता' ति सामञ्ञवसेन वुत्तत्ता च पुब्बस्स कम्मुनो यो कत्ता सो भगवादिको कारको 'करोति स कत्ता' ति सुत्तवचनेन कत्ता ति च वचनतो उपरि आख्याते 'कत्तरि परस्सपदं' ति (४५८) सुत्ते को कत्ता ति पुच्छाय* सति, 'यो करोति स कत्ता' ति वत्तब्बत्ता च विञ्ञायती ति।

एवं सुद्धकत्तुकारकं दस्सेत्वा, हेतुकारकं दस्सेतुं—

२८४. यो कारेति स हेतू[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं 'धातूहि 'णेणयणापेणापया.....' ति

वि० द०—महा० भा०, पा० १.४.५४, १.४.५५; "The nominative is Kartā which means exactly the same thing as Kāraka but is the older word going back to RV. In its technical sense it appears to occur first in Pāṇini"—मञ्जूषा, जुलाई, १९५३।

3. तु०—"इहाभिनिप्फन्नवत्थुं किरियाभिनिप्फत्तिया पवत्तं साधनमिति सवका वत्तुं ति। यम्पन अविज्जमानसरूपता किरियोपजननसमत्थतासुञ्ञं तं कथं साधनं सिया..."—क० न्या०, पि० २२८-२३२।

१-१. सहेतु—सी० २। २. कत्तुसञ्ञो—से०। ३-३. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। ४. ०सो पुरिसो तस्स पुरिसस्स कम्मं कारेति—से०, सी० १। ५. विहारेति पालेति—से०। ६. ०नायेति—से०। ७-७. ने-नय—से०।

*. पुच्छायं—सी०।

1. तु०—"यो कारेति यो वा उपट्ठापयति, सो हेतु"—सद्द०, सु० ५५०; "कारयति यः स हेतुश्च"—का० २.४.१५; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"तमेव कर्तारं यः कारयति स हेतुसंज्ञो भवति, चकारात् कर्तृसंज्ञश्च"; "तत्प्रयोजको हेतुश्च"—पा० १.४.५५।

(४४०) सुत्ततो निक्खन्तं। चतुप्पदं। यो ति अनियतसञ्ञी, कारेती ति क्रिया, सो ति नियतसञ्ञी, हेतू ति सञ्ञा; सञ्ञासुत्तं। अञ्ञब्यापारं पटिच्च गमनपचनादिकं क्रियं हिनोति पवत्तती ति हेतु, कत्ता व[1]।

सो[2] पुरिसो तं पुरिसं कम्मं कारेति आदीनि उदाहरणानि। सो पुरिसो ति इदं कारेती ति एत्थ च तिविभत्ति-कारितप्पच्चयेन सम्बन्धे वुत्तकत्ता नाम हेतुकत्ता च; तं पुरिसं तिदं कारितप्पच्चयेन सम्बन्धितब्बं; कम्मं तिदं करधातुया सम्बन्धितब्बं। एत्थ कारितकत्ता, कारितकम्मं, धातुकत्ता, धातुकम्मं ति चतुब्बिधं। तत्थ सो पुरिसो ति कारितकत्ता, तं पुरिसं ति कारितकम्मं, सुद्धकत्तुकारितकम्मस्स अभिन्नत्ता पुरिसं ति कारितकम्ममेव। पुरिसेना ति धातुया कत्ता भवति, कम्मं ति धातुया कम्मपदं भवति। एवं सेसेसु कारितपयोगेसु[3]। सो[4] पुरिसो, तेन पुरिसेन, तस्स पुरिसस्सा ति एत्थ पन तेन पुरिसेन, तस्स पुरिसस्सा ति न्यासमते 'गतिबुद्धि.....' ति (३०२) एत्थ वासद्दो कम्मसञ्ञापवादो न विभत्तिविकप्पनत्थो ति कत्वा, तेना ति एत्थ 'यो करोति स कत्ता' ति सुत्तेन कत्तुसञ्ञं कत्वा, 'कत्तरि चे' ति (२९०) सुत्तेन कत्वत्थे ततिया; पुरिसस्सा ति एत्थ 'छट्ठी चे' ति (३१०) सुत्तेन कत्वत्थे छट्ठी ति वुत्तं[5]। पुरिसो, पुरिसेना ति एत्थ पुरिसो ति हेतुकत्ता; पुरिसेना ति सुद्धकत्ता; पुरिसो, पुरिसेन कत्तुभूतेना ति अत्थो। पुरिसो, पुरिसस्सा ति एत्थ पुरिसो ति हेतुकत्ता; पुरिसस्सा ति सुद्धकत्ता; पुरिसो, पुरिसस्स कत्तुभूतेन पुरिसेना ति अत्थो[6]। रूपसिद्धिमते 'गतिबुद्धि.....' ति एत्थ वासद्दो विभत्तिविकप्पत्थो। तेन तीसु पि विकप्पेसु कम्मत्थे येव दुतियादयो होन्ति; तस्मा पुरिसेना ति एत्थ कम्मसञ्ञे कते, 'कत्तरि चे' ति एत्थ चग्गहणेन कम्मत्थे ततिया विभत्ति च, 'दुतियापञ्चमीनञ्चे' ति (३११) सुत्तेन कम्मत्थे छट्ठी च वुत्ता[7]।

---

1. तु०—"अञ्ञं ब्यापारं पटिच्च गमनपचनादिकं किरियं हिनोति पवत्तेती ति हेतु; सो व हेतुकारको अत्तनो ब्यापारं पटिच्च कत्ता च नाम होति। तस्स वुत्तावुत्तभेदो हेट्ठा वुत्तो। मुख्योपचारवसेन पन दुविधो....."—सुत्तनि०, पि० ११७; वि० द०—रूप०, सु० वु० २८८; क० न्या०, पि० २३२-२३३।

2-3. तु०—क० न्या०, पि० २३२-२३३; सुत्तनि०, पि० ११७-११८; 'तं पुरिसं इच्चस्स व्याख्यानं न्यासे एवमागतं—"तं पुरिसं ति एत्थ पन किं पयोजकब्यापारं पटिच्च कत्तुसञ्ञा ति ? बलवतरत्ता कम्मसञ्ञाय भवितब्बं; एत्थ हि कम्मभावो पधानभूतपयोजकब्यापारसम्बन्धिताय पधानो....."—क० न्या०, पि० २३३-२३४।

4-5. द०—त०, पि० २३३।

6. द०—त०, पि० २३३-२३४; सुत्तनि०, पि० ११८।

7. रूप०, सु० वु० २८३; रूप० टी०, त०।

२८५. यस्स वा परिग्गहो तं सामी । २. ६. १३ ।

यस्स वा परिग्गहो तं सामिसञ्ञं होति । अत्तनो मुखं, तस्स भिक्खुनो पटिविंसो[1], तस्स भिक्खुनो पत्तं, तस्स भिक्खुनो चीवरं ।

सामि इच्चनेन क्वत्थो ? ''सामिस्मिं छट्ठी'' (३०३) ।

एवं कारकं दस्सेत्वा, इदानि अकारकं दस्सेतुं[1]—

२८५. यस्स वा परिग्गहो तं सामी[2] ति आह । इदं सुत्तं 'सामिस्मिं छट्ठी' ति (३०३) सुत्ततो निक्खन्तं । पञ्चपदं[3] । यस्सा ति अनियतसञ्ञी, वा ति समुच्चयो, परिग्गहो ति क्रिया, तं ति नियतसञ्ञी, सामी ति सञ्ञा; सञ्ञासुत्तं । सं एतेसं अत्थी ति सामी । सामीसद्दो ईकारन्तो पुल्लिङ्गो; एसो सब्बसङ्गाहको वचनत्थो; एवं विग्गहे कते सब्बेसं सामी-आदीनं सङ्गहो होति[4] । उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव[5] ।

---

१. पटिविसं—से० ।

1. दि० द०—पि० २९२-२९३ टि० ।

2. तु०—''यस्स सं यस्स वा पति, तं सामी''—सद्द०, सु० ५७५; वुत्तियं तत्थ अस्स वण्णना एवमागता—''यस्स अत्थजातस्स धनं यस्स वा पति यस्स वा सामी, यस्स वा समूहो यस्स वा अवयवो, तं अत्थजातं सामिसञ्ञं होति; इधा पि वासद्दो विकप्पनत्थो, तेन अञ्ञे पि अत्था योजेतब्बा…'' ।

3-4 तु०—''पञ्चपदमिदं…किरियाभिसम्बन्धाभावा नेह कारकता सम्भवति । एत्थ च परिग्गहो ति संसद्दाभिधेय्यो वुत्तो; सो हि परिगय्हती ति परिग्गहो ति वुच्चति । वाग्गहणेनेत्थ विकप्पेन सामि-समूह-समीप-विकारावयवादिभेदे सङ्गण्हाति; तेन यस्स वा परिग्गहो, यस्स वा सामी, येसं वा समूहो ति आदिना नयेन अत्थो योजेतब्बो । सामी ति गरुसञ्ञाकरणं सञ्ञिनो सभावपरिदीपनत्थं । सामी ति हि संसद्दतो सं अस्स अत्थी ति अत्थे 'तदस्सत्थी ति वी चे' ति वत्तमाने 'दण्डादितो इकई' ति ईप्पच्चयं कत्वा, 'तेसु बुद्धिलोपागम…' ति मज्झे ठितस्स दीघं कत्वा, अन्तस्स च मकारादेसं कत्वा, नेतब्बे नीते, स्यादुप्पत्तादिम्हि कते रूपं''—क० न्या०, पि० २३५; वि० द०—रूप०, सु० वु० ३०३; सुत्तनि०, पि० ११९-१२१ ।

5. एत्थ कच्चायनन्यासस्स सीहलसंस्करणे एकं उपसुत्तम्पि दिन्नमत्थि—''तेसं परमुभयपत्तिम्हि (तु०—'तेषां परमुभयप्राप्तौ''—का० २.४.१६; ''उभयप्राप्तौ कर्मणि''—पा० २.३.६६) । अस्स वण्णना तत्थ एवमागता—''तेसं अपादानादीनं छन्नं कारकानं उभयम्हि सम्पत्ते यं परं तञ्ञेव होती ति ञापनत्थं'' । तत्थेव एवमपि वुत्तं—''अलं सुत्तवचनेन । न चेतो पुरिमपाठो'' । वित्थारत्थाय तत्थेव दट्ठब्बं—पि० २३५-२३७ ।

२८६. लिङ्गत्थेपठमा । २. ६. १४ ।

लिङ्गत्थाभिधानमत्ते पठमा विभत्ति होति । पुरिसो[१], एको, द्वे, चे[२], वा, आह[३], हे, रे[३], हरे, अरे ।

एवं विसयभूतं सामिसञ्ञं दस्सेत्वा, इदानि विसयोभूतं विभत्तुप्पत्तिं दस्सेतुं—

२८६. लिङ्गत्थे पठमा[1] ति आह । इदं सुत्तं 'ततो च विभत्तियो' ति (५४) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'ततो च....'ति इमिना जिनवचनयुत्तलिङ्गतो पठमा-सिविभत्तुप्पत्ति वुत्ता; तासु विभत्तिसु कस्मिं अत्थे पठमा विभत्ति होती ति पुच्छाय सति, लिङ्गत्थे पठमा विभत्ति होती ति दस्सेन्तो, 'लिङ्गत्थे पठमा' ति आह । द्विपदं[2] । विसयविसयीनिद्देसा । लिङ्गत्थाभिधानमत्ते पठमा विभत्ति होती ति अत्थो[3] । लीनं[4] अङ्गं ति लिङ्गं; लीनं ति अपाकटं, अङ्गं ति अवयवो । एत्थ च पुरिसो ति आदीनं निप्फन्नपदानं पुरिस इति विभत्तिरहितं अवयवभूतं पकतिरूपं अनिप्फन्नत्ता अपाकटं; तस्स निप्फन्नपदस्स अवयवत्ता च अङ्गं । इमिना निप्फन्नपदस्स अवयवभूतं पुरिस इति विभत्तिरहितं पकतिरूपमेव लिङ्गं ति वुत्तं । लीनं अत्थं गमयति बोधेती ति वा लिङ्गं । इमिना पि तं पकतिरूपमेव लिङ्गं ति वुत्तं । लिङ्गस्स अत्थो लिङ्गत्थो । एत्थ च अत्थो नाम सजीवसन्तानेसु कम्मसमुट्ठानादिकलापसन्ततिप्पबन्धविसेसाकारेन अजीवसन्तानेसु उतुजकलापसन्ततिप्पबन्धविसेसाकारेन पवत्तमाने वत्थुधम्मे उपादाय पञ्ञापियमानो इत्थि-पुरिस-घट-पटादि-वोहारत्थो च, पठवी-फस्सादीनं सभावधम्मानं कक्खलत्थफुसनादिसामञ्ञाकारो च; इमस्स पन अत्थस्स दीपकं

---

१. पुरिसा—से० । २. च—से०, सी० १ । ३-३. ह अङ्ग—सी० १; हि अहं—से० ।

1. तु०—"लिङ्गत्थे पठमा"—सद्द०, सु० ५७७; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"लिङ्गत्थाभिधानमत्ते पठमा विभत्ति होति; "प्रथमा विभक्तिर्लिङ्गार्थवचने"—का० २.४.१७; वुत्तियं अस्स वण्णना तत्थेव एवमागता—"अव्यतिरिक्तलिङ्गार्थवचने प्रथमा विभक्तिर्भवति"; "प्रातिपदिकार्थलिङ्गपरिमाणवचनमात्रे प्रथमा"—पा० २.३.४६ ।

2-3. तु०—"द्विपदमिदं । लिङ्गस्स अत्थो लिङ्गत्थो, तस्मिं लिङ्गत्थे; विभत्तुप्पत्ताभावा लिङ्गत्थाभिधाने ति अत्थो युज्जति"—क० न्या०, पि० २३७; "वुत्तियं पन न केवलं लिङ्गत्थे येव पठमा विभत्ति होति, अथ खो तदत्थाभिधानसद्दे पि होती ति दस्सेतुं लिङ्गत्थाभिधानमत्ते ति वुत्तं । तत्थ लिङ्गत्थो च अभिधानञ्च लिङ्गत्थाभिधानं; तमेव मत्तं पमाणं ति लिङ्गत्थाभिधानमत्तं ति विग्गहो । एत्थ च मत्तसद्दो पि विसेसनिवत्ति-अत्थो । तेन लिङ्गत्थो ति एत्थ कारकं निवत्तेति; अभिधानं ति एत्थ अत्थं निवत्तेति; लिङ्गत्थमत्ते सद्दमत्ते च पठमा विभत्ति होती ति अत्थो...."—सुत्तनि०, पि० १२२-१२३; रूप०, सु० वु० २८३ ।

पुरिस त्यादिकं अनिप्फन्नपदं लिङ्गं नाम[5]। सो च लिङ्गत्थो संसट्ठ-सुद्धत्थवसेन दुविधो[6]—तत्थ किरियानपेक्खो सकत्थदब्बलिङ्गत्थमत्तो तथागतो, जिनो त्यादीनमत्थो सुद्धत्थो नाम[7]; जितिन्द्रियो, समणो, वासिट्ठो, पुरिसो गच्छति, बुद्धो भगवा त्यादिको समासादीहि अभिहितो लिङ्गत्थो संसट्ठलिङ्गत्थो नाम; पुरिसो, पुरिसा ति सुद्धलिङ्गत्थवाचकस्स उदाहरणं; एको, द्वे ति संख्यस्स सुद्धलिङ्गत्थवाचकस्स उदाहरणञ्च; च, वा,

---

4–5. द०-पि० ९१-९२, टि०२;"एत्थ च लीनं अङ्गं ति लिङ्गं, लीनं ति अपाकटं, अङ्गं ति अवयवो। इदं वुत्त होति—यथा पन कदलिरुक्खादीनं गब्भपत्तमपाकटं अङ्गं, एवं पुरिसो ति आदीनं निप्फन्नपदानं पठमं ठपेतब्बरूपमपाकटत्तावयवत्ता च लिङ्गं ति वुत्तं; तेन तद्धितसमासकितकाख्यातविभत्यन्तानं लिङ्गता विञ्ञायति···अथ वा लिङ्गं नाम पाटिपदिकं, तं सद्दानं समानत्थत्ता सक्कतगन्थे चात्थवतो धातुप्पचयविभत्तिविवज्जितस्स पाटिपदिकसञ्ञाय विहितत्ता 'परसमञ्ञा पयोगे' ति वचनतो सक्कतगन्थे निद्दिट्ठानं घोसाघोसुपधादिसञ्ञानञ्चापरिच्चागा अञ्ञतरस्मिं वा सक्कतगन्थे 'धातुप्पच्चयविभत्तिवज्जितमत्थवं लिङ्गं' ति वचनतो परसमञ्ञावसेनाह—'लिङ्गत्थे पठमा' ति। अञ्ञत्र पन पाटिपदिकत्थमत्ते लिङ्गमत्ते परिमाणमत्ते वचनमत्ते पठमा विभत्ति होति····एवं अतिपपञ्चितं। निप्पपञ्चेन पन महाकच्चायनेन विसदाविसदोभयविरहिताकारसहितस्स तब्बिनिम्मुत्तस्स चोपसग्गादिपदत्थस्स लीनस्स गमनतो लिङ्गनतो परसमञ्ञावसेन वा सद्दमेव गहेत्वा, हत्थिपदं विय पदजातसङ्गाहकं भगवतो वरपादपङ्कजसमभिनिविट्ठचक्कलक्खणं विय च विविधलक्खणसङ्गाहकं वुत्तप्पकारत्थसङ्गाहकं लक्खणमारभता 'लिङ्गत्थे पठमा' ति वुत्तं···"—क० न्या०, पि० २३७–२३८; "···एत्थ च लीनं अङ्गं ति लिङ्गं, अपाकटो अवयवो; पुरिसो ति आदीनं हि पकतिप्पच्चयादिविभागकप्पनाय निप्फादितानं सद्दपतिरूपकानं नामिकपदानं पठमं ठपेतब्बं पकतिरूपं अपाकटत्ता अवयवत्ता च लिङ्गं ति वुच्चति। अथ वा विसदाविसदोभयरहिताकारवोहारसंखातेन तिविधलिङ्गेन सहितत्थस्स तब्बिनिम्मुत्तस्सूपसग्गादीनमत्थस्स च लीनस्स गमनतो लिङ्गनतो वा लिङ्गं ति; अन्वत्थनामवसेन वा धातुप्पच्चयविभत्तिवज्जितमत्थवं लिङ्गं ति वचनतो परसमञ्ञावसेन वा लिङ्गं ति; इध पाटिपदिकापरनामधेय्यं स्यादिविभत्यन्तपदपकतिरूपमेव वुत्तं ति दट्ठब्बं···"—रूप०, सु० वु० २८३; "तत्थ लीनस्स अपाकटत्थस्स गमनतो नामुपसग्गनिपाततद्धितसमासपदानि लिङ्गं नाम। अथ वा 'नत्थञ्ञो कोचि विज्जति, अत्थि आपत्तिकिरियाय आपज्जती' ति हि पयोगदस्सनतो आख्यातेन सह पञ्च नामपदानि लिङ्गं नाम। तस्स अत्थो लिङ्गत्थो····"—सुत्तनि०, पि० १२१-१२२; सद्द०, सु० वु० ५७७; मोग्ग०, सु० २.३९; मोग्ग० प०, त०; महा० भा०, पा० २.३.४६।

6. वु०—सुत्तनि०, पि० १२१–१२२; रूप०, सु० वु० २८३।

अह, हे, रे, हरे, अरे ति पाटिपदिकत्थस्स सुद्धलिङ्गत्थवाचकस्स उदाहरणं। संसट्ठलिङ्गत्थवाचकस्स उदाहरणम्पनेत्थ अनुदाहटं पि एवं दट्ठब्बं—जितिन्द्रियो समणो ति पयोगे समासाभिहितसंसट्ठलिङ्गत्थो; वासिट्ठो, पुरिसो ति पयोगे तद्धिताविहितसंसट्ठलिङ्गत्थो; पुरिसो गच्छती ति पयोगे आख्याताभिहितसंसट्ठलिङ्गत्थो; बुद्धो भगवा ति पयोगे कितकाभिहितसंसट्ठलिङ्गत्थो ति एवं अनुदाहटउदाहरणं दट्ठब्बं[8]।

अयं च पठमा विभत्ति लिङ्गत्थे कत्वत्थे कम्मत्थे करणत्थे सम्पदानत्थे अपादानत्थे साम्यत्थे भुम्मत्थे दिसायोगे आलपनत्थे ति दससु अत्थेसु पवत्तति[9]। तेसु लिङ्गत्थे पवत्ति वुत्तानुसारेन जानितब्बा; कत्वत्थे—यो बोधिरुक्खं रोपेती त्यादि; कम्मत्थे—धम्मो च विनयो च देसितो त्यादि; करणत्थे—थेय्यचित्तो आविकता हिस्स फासु होति अज्झासयं त्यादि, एत्थ च थेय्यचित्तेन आविकताय अज्झासयेना त्यत्थो; सम्पदानत्थे—नदेति नरकं तं ते न च पस्सामि इस्सरे त्यादि, एत्थ च ते ति पठमाबहुवचनन्तपदं तेसं नदेती ति सम्पदानवसेन सम्बन्धितब्बं; अपादानत्थे—मिच्छादयो इमे धम्मा बुद्धो दूरतरो भवे त्यादि, मिच्छादयो इमे धम्मा ति पठमाबहुवचनन्तपदं, मिच्छापकारेहि इमेहि धम्मेही ति अपादानत्थवसेन सम्बन्धितब्बं; साम्यत्थे—सब्बे बुद्धा बलप्पत्ता त्यादि, बलप्पत्तानं सब्बेसं बुद्धानं ति छट्ठ्यत्थवसेन सम्बन्धितब्बं; भुम्मत्थे—भगवा चित्तमिस्सरो त्यादि, चित्तं ति पठमेकवचनं, चित्ते इस्सरो ति सत्तम्यन्तवसेन सम्बन्धितब्बं; दिसायोगे—येन भगवा तेनुपसङ्कमी त्यादि; आलपनत्थे—अभिक्कन्तं भो गोतमा त्यादि। इमेसु अत्थेसु पठमा विभत्ति अप्पकवसेन पवत्तति।

न केवलं इमेस्वत्थेस्वेव पवत्तति, अथ खो यतो निदानं, यत्वाधिकरणं, जयं वेरं पसवती त्यादिसु हेत्वत्थे; एत्थेसा तण्हा उप्पज्जमाना उप्पज्जति, निविसमाना निविसति, निरुज्झमाना निरुज्झती त्यादिसु लक्खणत्थे पवत्तति। तेस्वत्थेसु करणत्थादिसु पञ्चस्वत्थेसु च हेत्वत्थे लक्खणेसु च इध सुत्ते अत्थग्गहणेन पठमा विभत्ति होति।

एवं लिङ्गत्थे विभत्तुप्पत्तिं दस्सेत्वा, आलपनत्थादिके लिङ्गत्थे विभत्तुप्पत्तिं दस्सेतुं—

7–8. द०—त०।

9. तु०—"सङ्गहकारो पन लिङ्ग-कत्तु-कम्म-करण-सम्पदानापदान-सामि-भुम्म-दिसायोग-आलपनेसु पठमा होती ति आह...."—क० न्या०, पि० २३९–२४१; "एत्थ चग्गहणेन अयं पठमा विभत्ति अत्तनो अत्थभूतेसु द्वीसु लिङ्गत्थालपने स्वेव न होति, अञ्ञत्थेसु कत्तु-कम्म-करण-सम्पदानापदान-सामि-भुम्म-दिसायोगत्थेसु पि होति; वुत्तञ्च सङ्गहकारेहि ...."—सुत्तनि०, पि० १२३–१२४।

२८७. आलपने च । २. ६. १५ ।

आलपनत्थाधिके लिङ्गत्थाभिधानमत्ते च पठमा विभत्ति होति । भो पुरिस, भवन्तो पुरिसा; भो राज, भवन्तो राजानो; हे सखे[१], हे सखिनो ।

चसद्दग्गहणं पठमग्गहणानुकड्ढनत्थं ।

---

२८७. आलपने चा[1] ति वुत्तं । इदं सुत्तं 'लिङ्गत्थे पठमा' ति (२८६) सुत्ततो निक्खन्तं । 'लिङ्गत्थे पठमा' ति सुत्तेन लिङ्गत्थे पठमा विभत्तुप्पत्ति वुत्ता; आलपनत्थादिके लिङ्गत्थे का विभत्ती ति पुच्छाय सति, आलपनत्थादिके लिङ्गत्थे पि पठमा विभत्ति होती ति दस्सेतुं, 'आलपने चे' ति आह । द्विपदं । विसयाधारसमुच्चय-निद्देसा । आलपनत्थादिके लिङ्गत्थे पठमा विभत्ति होती ति अत्थो । अभिमुखं कत्वा लपनं आलपनं, तस्मिं आलपने[2] ।

भो पुरिस[3] त्याद्युदाहरणानि । तत्थ च भो ति भवन्तसद्दतोमिना आलपनत्थे सिवचनं कत्वा, तस्स गसञ्ञं च कत्वा, 'भवतो भोतो' ति (२४२) वत्तमाने, 'भो गे तु' ति (२४३) भवन्तसद्दस्स भो-आदेसं कत्वा, 'सेसतो लोपं…' ति (३२०) सिम्हि लुत्ते रूपं । पुरिसा ति च पुरिससद्दतो आलपनत्थेमिना सिम्हि कते, गसञ्ञं च कत्वा, 'अकारपिताद्यन्तानमा' ति (२४६) पुरिससद्दस्स अकारस्स आकारं

---

१. सख—से० ।

1. तु०—सद्द०, सु० ५७८; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"आलपनत्थाधिके लिङ्गत्थाभिधानमत्ते च पठमा विभत्ति होति"; "आमन्त्रणे च"—का० २.४.१८; "संबोधने च"—पा० २.३.३७ ।

2. तु०—"अभिमुखं कत्वा लपनं आलपनं, तस्मिं आलपने । इमस्स विसुं वचनं सिद्धे सत्यारम्भस्स नियमाय संवत्तनतो आलपने सति लिङ्गत्थे पि पठमा व होती ति ञापनत्थं । चग्गहणं पठमग्गहणानुकड्ढनत्थं—क० न्या०, पि० २४१; अभिमुखं कत्वा लपनं आलपनं, आमन्तणं अव्हानं ति अत्थो । एत्थ च आमन्तणं नाम पगेव लद्धसरूपस्स सद्देन अभिमुखीकरणं, कताभिमुखो पन गच्छा ति आदिना नयेन किरियाय योजीयति, तस्मा आमन्तणसमये किरियायोगाभावतो इदं कारकवोहारं न लभति; वुत्तञ्च—

> 'सद्देनाभिमुखीकारो विज्जमानस्स वत्थुनो ।
> आमन्तणं विधातब्बे नत्थि राजा भवे ति तं' ।। ति"—रूप०, सु०वु०

२८३; "अभिमुखं कत्वा लपनं आलपनं आमन्तणं । एत्थ आमन्तणं नाम विज्जमानवत्थुस्स सद्देन अभिमुखीकरणं; तञ्च किरियानिप्फादनसत्तिविरहितं, तस्मा कारकं न होति, किरियाविसेसनमत्तमेव होति…"—सुत्तनि०, पि० १२३; वि० द०—पि० २६२, टि० ३ ।

२८८. करणे ततिया । २. ६. १६ ।

करणकारके ततिया विभत्ति होति । अग्गिना कुटिं झापेति, मनसा चे पदुट्ठेन, मनसा चे पसन्नेन, कायेन कम्मं करोति ।

कत्वा, 'आकारो वा' ति (२४८) आकारस्स रस्सं कत्वा, गलोपे कते रूपं। भवन्तो ति भवन्तसद्दतोमिना योम्हि कते, 'सेसेसु न्तुवे' ति (१८७) न्तसद्दस्स न्तुव्यपदेसं कत्वा, 'न्तुस्स न्तो' ति (१२२) सविभत्तिस्स न्तुस्स न्तो-आदेसे कते रूपं । राजा ति वुत्तनयो व । भवन्तो ति च वुत्तनयो व । राजानो ति राजसद्दतोमिना योम्हि कते, 'योनमानो' ति (१९०) योवचनस्स आनो-आदेसं कत्वा, सरलोपपकतिभावादिम्हि कते रूपं । हे सखे ति एत्थ हेसद्दतोमिना सिम्हि कते, गसञ्ञं च कत्वा, गलोपे कते रूपं । सखे ति सखसद्दतो सिम्हि कते गसञ्ञं च कत्वा, 'सखातो गस्सेवा' ति (११३) गस्सेकारे कते रूपं । सखिनो ति योम्हि कते, 'सखातो चायो नो' ति (१९१) योवचनस्स नो-आदेसं कत्वा, 'सखान्तस्सि…' ति (१९४) अन्तस्सिकारादेसे कते रूपं[4] ।

एवं आलपनत्थादिके लिङ्गत्थे पठमाविभत्तुप्पत्तिं दस्सेत्वा, इदानि उपकरणभूते करणत्थे ततियाविभत्तुप्पत्तिं दस्सेतुं—

२८८. करणे ततिया[5] ति आह। इदं सुत्तं 'येन वा कयिरते…' ति (२८१) सुत्ततो निक्खन्तं, तं सुविञ्ञेय्यमेव। द्विपदं। विसयविसयीनिद्देसा। करणकारके

3–4. तु०—क० न्या०, पि० २४१–२४२; एत्थ न्यासे एकं उपसुत्तम्पि वट्टति—"सेसा कम्मकरणसम्पदानापादानसाम्यादिनिद्देसेसु" । अस्स तुलना "शेषाः कर्मकरणसम्प्रदानापादानस्वाम्याद्यधिकरणेषु" इच्चनेन कातन्तसुत्तेन (का० २.४.१६) सह करणीया । तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"शेषाः द्वितीयाद्याः षड् विभक्तयः कर्मादिष्वर्थेषु षट्सु यथासंख्यं भवन्ति" । न्यासे तु अस्स उपसुत्तस्स विसये एवमागतं—"किमत्थमिदं ? सेसा दुतिया-ततिया-चतुत्थी-पञ्चमी-छट्ठी-सत्तमी-विभत्तियो कम्मकरणसम्पदानापादानसाम्यादिनिद्देसेसु होन्ती ति विञ्ञापनत्थं…न चेतं पोराणकसुत्तं…अथा पि चेतं पोराणकसुत्तं सिया, सेसग्गहणेन पठमञ्ञेव ठपेत्वा सेसा गहेतब्बा भवेय्युं । एव सन्ते कत्तरि ततियाविधायकं कत्तुग्गहणं नापविट्ठं । तस्मा यानेत्थ अधिकानी ति वुत्तानि, तेस्वपेमनीये ठाने पेमस्स अकत्तब्बतो पेममकत्वा यथावुत्तेस्वेव सुत्तेस्वादरो कातब्बो । एवं हि सुय्यते—सङ्खेपोपजनितविब्भन्तबुद्धीहि मन्देहि ऊनमिदं ति मञ्ञमानेहि सुवत्तफिसिवनिरुत्तिमहानिरुत्तितो कानिचि सुत्तानि पक्खित्तानी ति; न च तानि सुपरिसुद्धे पुरिमपोत्थके सन्दिस्सन्ती ति"—क० न्या०, पि० २४२–२४३ ।

5. तु०—सद्द०, सु० ५९१; "कर्तृकरणयोस्तृतीया"—पा० २.३.१८ ।

२८९. सहादियोगे च । २. ६. १७ ।

सहादियोगत्थे च[1] ततिया विभत्ति होति । सहा पि गग्गेन सङ्घो उपोसथं करेय्य, विना[2] गग्गेन[2], महता भिक्खुसङ्घेन सद्धिं, सहस्सेन समं मिता ।

ततिया विभत्ति होती ति अत्थो[1] । करीयते अनेना ति करणं । अग्गिना ति बाहिरकरणं, कत्तुसन्तानेनासम्बन्धत्ता; मनसा, कायेना त्यादि अज्झत्तकरणं, कत्तुसन्तानेन सम्बन्धत्ता ।

तत्थ मनसा ति मनसद्दतो नावचने कते, 'मनोगणादितो....' ति (१८१) नावचनस्साकारं कत्वा, 'ससरे वागमो' ति (१८४) सकारागमे कते रूपं ।

एवं करणत्थे ततियाविभत्तुप्पत्तिं दस्सेत्वा, निपातपयोगे अकारके पि ततियाविभत्तुप्पत्तिं दस्सेतुं—

२८९. सहादियोगे चे[2] ति वुत्तं । इदं सुत्तं 'करणे ततिया' ति (२८८) सुत्ततो निक्खन्तं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । द्विपदं । विसयसमुच्चयनिद्देसा । सहसद्दो[3] आदि येसं ते सहादयो (सद्धिं समं नाना विना अलमिच्चेवमादयो), तेसं योगो, तथा, तस्मिं सहादियोगे । चसद्देन तेसं अत्थसम्भवे सति पि ततिया विभत्ति होती ति[4] ।

---

१. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । २-२. विना पि०—सी० १; से० पोत्थके नत्थि ।

1. तु०—"....अपरे पन करणत्थाभिधाने ततिया विभत्ति होती ति वदन्ति, सहादियोगत्थे त्यादीसु पन न वदन्ति, तस्मा तं तेसं मतिमत्तमेव...."— सुत्तनि०, पि० १२४; "सङ्गहकारो पन करण-कत्तु-कम्म-पञ्चमी-सत्तम्यत्थे निपातप्पयोगे पटिक्खेपे पच्चत्ते कुच्छितत्थे इत्थम्भूते किरियापवग्गे पुब्ब-सदिस-समानून-कलह-निपुण-मिस्सक-सखिलादियोगे हेत्वत्थे कालद्धाने विसेसने मण्डितुस्सुक्के ततिया होती ति आह...."—क० न्या०, पि० २४३–२४४ ।

2. तु०—सद्द०, सु० ५९२, ५९३; "तृतीया सहयोगे"—का० २.४.२९; "सहयुक्तेऽप्रधाने" —पा० २.३.१९ ।

3–4. तु०—"सहसद्दो आदि येसं ते सहादयो; आदिग्गहणेन सद्धिं-समं-नाना-विना-अलमिच्चेवमादयो गहिता; तेसं योगो सहादियोगो; तस्मिं सहादियोगे, भावसत्तमी । चसद्दग्गहणेन सहादिसद्दानं अत्थसम्भवे पि होती ति दस्सेति; तेनेव सिज्झति 'देवदत्तो राजगहं पाविसि कोकालिकेन पच्छासमणेना' ति आदि । तेनाह—'सहादियोगत्थे' ति । अयं पनेत्थ पदच्छेदो—सहादियोगे अत्थे चा ति । सहसद्देन च योगो किरियागुणदब्बसमवायेसु सम्भवति...."—क० न्या० पि० २४५; सुत्तनि०, पि० १२४; सद्द० सु० ५६३; "सह...मिच्चेवमादीहि योगे लिङ्गम्हा ततिया विभत्ति होति; चसद्देन सहत्थे पि...." —रूप०, सु० वु० २८६ ।

२९०. कत्तरि च । २. ६. १८ ।

कत्तरि च[1] ततिया विभत्ति होति। रञ्ञा हतो पोसो, सक्केन[2] दिन्नो वरो, अहिना दट्ठो नरो ।

सहा पि गग्गेन सङ्घो उपोसथं करेय्या ति सहयोगे; महता भिक्खुसङ्घेन सद्धिं, सहस्सेन समं मिता ति सहादियोगे; सहत्थे च—देवदत्तो राजगहं पाविसि कोकालिकेन पच्छासमणेना त्यादि। एत्थ च पुत्तेन सह थूलो ति गुणसमवायो पुत्तेन सह गोमा ति दब्बसमवायो, पुत्तेन सह गच्छती ति किरियासमवायो ।

एवं सहादियोगे ततियाविभत्तुप्पत्तिं दस्सेत्वा, कत्वत्थे ततियाविभत्तुप्पत्तिं दस्सेतुं—

२९०. कत्तरि चे[1] ति वुत्तं। इदं सुत्तं 'करणे ततिया' ति (२८८) सुत्ततो निक्खन्तं, तं सुविञ्ञेय्यमेव। द्विपदं। विसयसमुच्चयनिद्देसा। करोती ति कत्ता, तस्मिं कत्तरि। उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव। इध[2] चग्गहणेन इत्थम्भूते किरियापवग्गे पुब्बसदिससमकलहनिपुणमिस्सकसखिलादियोगे कालद्धानेसु पच्चत्तत्थे कम्मत्थे पञ्चम्यत्थे सत्तम्यत्थे च ततिया होति[3] ।

तत्थ यो पन भिक्खु ऊनपञ्चबन्धनेन पत्तेन अञ्ञं नवं पत्तं चेतापेय्या ति एत्थ ऊनपञ्चबन्धनेन पत्तेना ति एत्थ ततिया विभत्ति इत्थम्भूतस्स लक्खणे होति; भिक्खू ति

---

१. च कारके—से० । २. यक्खेन—से० ।

1. तु०—"कत्तरि पठमा ततिया च"—सद्द०, सु० ५९४; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"आख्याताभिहिते कत्तरि पठमा विभत्ति होति, किताख्यातेहि अनभिहिते कत्तरि ततिया विभत्ति होति"; "कर्तरि च"—का० २.४.३३; "कर्तृकरणयोस्तृतीया"—पा० २.३.१८; काशिकागन्थे अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—"कर्तरि करणे च कारके तृतीया विभक्तिर्भवति"; "अनभिहिते कर्तरि करणे च तृतीया स्यात्"—सि० कौ०, त० ।

2–3. तु०—"चग्गहणेनित्थम्भूतलक्खणादिसु पि होति, तं 'करणे ततिया' ति सुत्ते येव वुत्तं"—क० न्या०, पि० २४५; "चग्गहणेन इत्थम्भूतलक्खणे किरियापवग्गे पुब्बसदिससमोनत्थकलहनिपुणमिस्सकसखिलत्थादियोगे कालद्धानेसु पच्चत्तकम्मत्थपञ्चमियत्थादिसु च ततिया"—रूप०, सु० वु०२८७; सुत्तनि०, पि०१२४–१२५; "दुतियत्थे ततिया"—सद्द०, सु० ५९५, "पञ्चमियत्थे"—त०, सु० ५९६, "पच्चत्ते"—त०, सु० ५९७, "इत्थम्भूतलक्खणे"—त०, सु० ५९८, "किरियापवग्गे—त०, सु० ५९९, "पुब्ब-सदिस-समून-कलह-निपुण-मिस्सक-सखिलादियोगे"—त०, सु० ६००; "इत्थम्भूतलक्खणे"—पा० २.३.२१ ।

२९१. हेत्वत्थे च । २. ६. १९ ।

हेत्वत्थे च ततिया विभत्ति होति । अन्नेन वसति, धम्मेन वसति, विज्जाय वसति, सक्कारेन वसति ।

लक्खितब्बो च इत्थम्भूतो च, ऊनपञ्चबन्धनेन पत्तेन लक्खितो सो भिक्खू ति अत्थो; पत्तो येव पधानवसेन इत्थम्भूतो, तेन सह चरितताय भिक्खु पि इत्थम्भूतो येव, ऊनपञ्चबन्धनो हुत्वा ति पि अत्थं वदन्ति । सा काली भिन्नेन सीसेन पग्घरन्तेन लोहितेन पटिविस्सकानं उज्झापेसी ति एत्था पि भिन्नेन सीसेन पग्घरन्तेन लोहितेना ति एत्थ ततिया विभत्ति इत्थम्भूतस्स लक्खणे होति; काली ति लक्खितब्बा च इत्थम्भूता च, भिन्नेन सीसेन पग्घरन्तेन लोहितेन अभिलक्खिता सा काली त्यत्थो; भिन्नेन सीसेन भिन्नसीसा हुत्वा, पग्घरन्तेन लोहितेन पग्घरितलोहिता हुत्वा ति पि अत्थो; पटिविस्सकानं ति समीपघरवासीनं; उज्झापेसी ति अवजानित्वा ओलोकनं कारापेसी ति अत्थो। तिदण्डकेन कमण्डलुना परिब्बाजकमदक्खी ति एत्थ तिदण्डकेन कमण्डलुना ति एत्थ ततिया विभत्ति इत्थम्भूतस्स लक्खणे होति; परिब्बाजकं ति लक्खितब्बो च इत्थम्भूतो च, तिदण्डकेन च कमण्डलुना चाभिलक्खितं परिब्बाजकं त्यत्थो । किरियापवग्गे—एकाहेनेव बाराणसिं पायासी त्यादि; किरियापवग्गो ति च किरियाय आसुपरिनिट्ठापनं । पुब्बादियोगे—मासेन पुब्बो, पितरा सदिसो, मातरा समो, असिना कलहो, वाचाय निपुणो, गुळेन मिस्सको, वाचाय सखिलो त्यादि । काले—कालेन धम्मसाकच्छा । अद्धाने—योजनेन धावति । पच्चत्ते—मणिना मे अत्थो, अत्तना व अत्तानं सम्मन्नती त्यादि । कम्मत्थे—तिलेहि वपति खेत्ते, संविभजेथ नो रज्जेन त्यादि । पञ्चम्यत्थे—सुमुत्ता मयं तेन महासमणेना त्यादि । सत्तम्यत्थे—दक्खिणेन विरुळ्हको त्यादि ।

२९१. हेत्वत्थे च[1] तिदं 'करणे ततिया' ति (२८८) सुत्ततो निक्खन्तं, तं वुत्तनयेन सुविञ्ञेय्यमेव । द्विपदं । विसयाधारअनुकड्ढननिद्देसा । हेत्वत्थे[2] हेतुयोगे च ततिया विभत्ति होती ति अत्थो[3] ।

---

1. तु०—"हेतुत्थप्पयोगे"—सद्द०, सु० ६०१; "हेत्वर्थे"—का० २.४.३०; "हेतौ"—पा० २.३.२३ ।

2-3. तु०—द०—सद्द०, सु० ४५; "हेत्वत्थे हेतुप्पयोगे च ततिया विभत्ति होती ति ञापनत्थं । द्विपदमिदं । ततियग्गहणमिहानुवत्तते । चग्गहणं योग्गहणानुकड्ढनत्थं । तेनायमत्थो सम्भवति—हेतुप्पयोगे हेत्वत्थे चा ति; तेनेविदं सिज्झति—केन हेतुना वसती ति"—क० न्या०, पि० २४५-२४६; सद्द०, सु०वु० ६०१; "योग्गहणमिहानुवत्तते । हेत्वत्थे हेत्वत्थप्पयोगे च लिङ्गम्हा ततिया विभत्ति होति । किस्मिचि फले दिट्ठसामत्थियं कारणं हेतु, सो येव अत्थो, तस्मिं हेत्वत्थे"—रूप०, सु० वु० २९०; "योग्यतामात्रयुक्तोऽनाश्रितव्यापारोर्थो द्रव्यगुणक्रियाविशेषो हेतुः"—महा० प्र०, पा० २.३.२३;" फलसाधनयोग्य:

२९२. सत्तम्यत्थे च । २. ६. २० ।

सत्तम्यत्थे च ततिया विभत्ति होति । तेन कालेन, तेन समयेन, तेन खो पन समयेन ।

२९३. येनङ्गविकारो । २. ६. २१ ।

येन ब्याधिमता अङ्गेन अङ्गिनो विकारो लक्खीयते[1] तत्थ ततिया विभत्ति होति । अक्खिना काणो, हत्थेन कुणी[2], काणं पस्सति[3] नेत्तेन, पादेन खञ्जो, पिट्ठिया खुज्जो ।

अन्नेन वसति अन्नहेतुना वसती त्यत्थो । एवं सेसेसु पि । इध च हेत्वत्थप्पयोगमेव आगतं । केन हेतुना त्यादि हेतुप्पयोगे उदाहरणानि, तानि न्यासरूपसिद्धिसु आगतानि[1] ।

२९२. सत्तम्यत्थे चे[2] तिदं यथावुत्तसुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । विसयसमुच्चयनिद्देसा । उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

२९३. येनङ्गविकारो[3] तिदं यथावुत्तसुत्ततो निक्खन्तं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । द्विपदं । करणकम्मनिद्देसा । ब्याधिमता[4] येन सरीरावयवेन अङ्गिनो सरीरस्स विकारो विकतिभावो अञ्ञथाभावो लक्खीयते, तत्थ ततिया विभत्ति होती त्यत्थो[5] । उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव ।

पदार्थो लोके हेतुरुच्यते"—काशिका, त०; "द्रव्यादिसाधारणं निर्व्यापारसाधारणं च हेतुत्वम्...."—सि० कौ०, त० ।

१. लक्खते—से० । २. कुणि—से० । ३. पस्सतु—से० ।

1. क० न्या०, पि० २४६; रूप०, सु० वु० २९० ।

2. तु०—"सत्तमियत्थे"—सद्द०, सु० ६०२; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"सत्तमियत्थे च ततिया विभत्ति होति; कालद्धान-दिसा-देसादिसु-चायं...."; रूप०, सु० वु० २९१; "एत्थ चग्गहणं अवुत्तसमुच्चयत्थं; पञ्चमिसत्तम्यत्थेसु ततियाविभत्ति समुच्चिनोति । चग्गहणं पदपूरणं ति पि वदन्ति । सत्तम्यत्थे ति इमिना कालद्ध-दिसाद्यत्था गहेतब्बा"—सुत्तनि०, पि० १२५ ।

3. तु०—सद्द०, सु० ६०३; "कुत्सितेऽङ्गे—का० २.४.३१; "येनाङ्गविकारः"—पा० २.३.२० ।

4-5. तु०—"येन ब्याधिमता अङ्गेन अङ्गिनो विकारो लक्खीयते तत्थ ततिया विभत्ति होती ति ञापनत्थं....इध पन अङ्गसद्दो समूहवाचको, विकारसद्दो अञ्ञथाभाववाचको । तेन येन ब्याधिना सरीरस्स विकत्यञ्ञथाभावो विञ्ञायति, तत्थ ततिया होती ति अत्थो । अङ्गसद्दो पन रथङ्गं झानङ्गं ति आदिसु किञ्चा पि अवयवे दिस्सति तथा पि अङ्गस्स

२९४. विसेसने च । २. ६. २२ ।

विसेसनत्थे च ततिया विभत्ति होति । गोत्तेन गोतमो नाथो, सुवण्णेन अभिरूपो, तपसा उत्तमो[1] ।

२९५. सम्पदाने चतुत्थी । २. ६. २३ ।

सम्पदानकारके चतुत्थी विभत्ति होति । बुद्धस्स वा धम्मस्स वा सङ्घस्स वा दानं देति, दाता होति समणस्स वा ब्राह्मणस्स वा ।

---

२९४. विसेसने च[1] तिदं यथावुत्तसुत्ततो निक्खन्तं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । द्विपदं । विसयाधारअनुकड्ढननिद्देसा । चग्गहणस्स[2] समुच्चयत्थत्ता दब्बगोत्तनामजातिसिप्पवयगुणभावेन विसेसनं वा, पकति येभुय्येन दोणादिकं वा सब्बं सङ्गण्हाति[3] ।

२९५. सम्पदाने चतुत्थी[4] तिदं 'यस्स दातु…' ति (२७८) सुत्ततो निक्खन्तं,

---

अत्थी ति अत्थे 'सद्धादितो णो' ति णप्पच्चयन्तो; अङ्ग गतियम्हि इच्चेतस्स अङ्गीयते इति कम्मनि 'सब्बतो ण्वुत्वावी वा' ति अप्पच्चयन्तो वा अधिप्पेतो ति; समुदायवाचको वा, यथा नङ्गो ति आदिसु''– क० न्या०, पि० २४६; ''एत्थ च अङ्गमस्स अत्थी ति अङ्गं सरीरं''—रूप०, सु० वु० २९२; वि० द०—सुत्तनि०, पि० १२५-१२६; ''अङ्गशब्दोऽत्राङ्गसमुदाये शरीरे वर्तते, येनेति च तदवयवो हेतुत्वेन निर्दिश्यते । येनाङ्गेन विकृतेनाङ्गिनो विकारो लक्ष्यते ततस्तृतीया विभक्तिर्भवति….''—काशिका, पा० २.३.२०; ''अङ्गशब्दोऽयं समुदायशब्दः….''—महा०, त० ।

१. उत्तमो । चसद्दग्गहणं ततियग्गहणानुकड्ढनत्थं—सी० १, सी० २ ।

1. तु०—''विसेसने पकतिआदिसु च''—सद्द०, सु० ६०४; ''विशेषणे''—का० २.४.३२; ''प्रकृत्यादिभ्य उपसङ्ख्यानम्''—वा०, पा० २.३.१८; ''विसेसीयति विसेसितब्बं येन तं विसेसनं, तस्मि विसेसने''—क० न्या०, पि० २४६; ''विसेसीयति विसेसितब्बमनेना ति विसेसनं, गोत्तादि; तस्मि गोत्तनामजातिसिप्पवयोगुणसंखाते विसेसनत्थे ततिया विभत्ति होति''—रूप०, सु० वु० २१३; '…एत्थ विसेसने ति इमिना गोत्तनामजाति…गुणभावेन विसेसनं गहेतब्बं….विसेसने ति च किरियागुणविसेसनमेव गहेतब्बं, न दब्बविसेसनं; तेन नीलो पटो त्यादीसु ततिया न होती ति''—सुत्तनि०, पि० १२६ ।

2-3. तु०—''…चग्गहणेन पकतियाभिरूपो, येभुय्येन चम्पेय्यका ब्राह्मणगहपतिका भगवन्तं दस्सनायोपगमिंसु…'कत्तरि चे' ति सुत्ते चग्गहणेनेव सिज्झनतो ततियग्गहणानुकड्ढनत्थं वा । तत्थ पयोजनं हेट्ठा वुत्तमेव''—क० न्या०, पि० २४७; ''चसद्देन पकति-आदीहि च''—रूप०, सु० वु० २९३; ''चग्गहणेन पकति-येभुय्य-दोण-सहस्सादिं सङ्गण्हाति, अयं आचरियानं मति । भदन्तमहाकच्चायनत्थेरेन पन विसेसने ति सामञ्ञेन वुत्तत्ता सब्बं असङ्गहितं नाम नत्थि, तस्मा चग्गहणस्स ततियानुकड्ढनमेव पयोजनं…''– सुत्तनि०, पि० १२६ ।

4. तु०—सद्द०, सु० ६०५; ''शेषाः कर्मकरणसंप्रदानापदानस्वामाद्यधिकरणेषु''—का० २.४.१९; ''चतुर्थी सम्प्रदाने''—पा० २.३.१३ ।

२९६. नमोयोगादिस्वपि च । २. ६. २४ ।

नमोयोगादिस्वपि च चतुत्थी विभत्ति होति । नमो ते बुद्धवीरत्थु, सोत्थि पजानं, नमो करोहि नागस्स, स्वागतं ते महाराज ।

चसद्दग्गहणं चतुत्थीग्गहणानुकड्ढनत्थं ।

२९७. अपादाने पञ्चमी । २. ६. २५ ।

अपादानकारके पञ्चमी विभत्ति होति । पापा चित्तं निवारये, अब्भा मुत्तो व चन्दिमा, भया मुच्चति सो नरो ।

तं सुविञ्ञेय्यमेव । विसयविसयीनिद्देसा । सम्पदानग्गहणेन दानारोचनसिलाघादिपयोगमेव सङ्गण्हाति[1]; तेन नमोयोगादिपयोगो विसुं वुत्तो । चतुत्थी ति योगविभागेन कत्वत्थे कम्मत्थे करणत्थे निस्सक्कत्थे छट्ठयत्थे सत्तम्यत्थे अच्चन्तसंयोगे चतुत्थी विभत्ति होति ।

'हेत्वत्थे चे' ति (२६१) एत्थ चसद्देन हेत्वत्थे चतुत्थी होति । असक्कता धनञ्जयाया ति एत्थ कत्वत्थे चतुत्थी विभत्ति होति, धनञ्जयाया ति धनञ्जयेन असक्कता त्यत्थो; नरकाय नेति, सग्गाय गच्छती ति एत्थ कम्मत्थे, नरकाय नरकं नेति, सग्गाय सग्गं गच्छती त्यत्थो; अक्खराय मरणवण्णं संवण्णेती ति एत्थ करणत्थे, अक्खराया ति अक्खरेना त्यत्थो; विरमथायस्मन्तो मम वचनाया ति एत्थ निसक्कत्थे, मम वचनाया ति मम वचनतो ति अत्थो; महतो गणाय भत्ता ति एत्थ छट्ठयत्थे, गणाय भत्ता ति गणस्स भत्ता त्यत्थो; भगवतो सितपातुकम्माया ति एत्थ सत्तम्यत्थे, सितपातुकरणे त्यत्थो; चिररत्ताया ति एत्थ अच्चन्तसंयोगे, चिररत्तं त्यत्थो, 'आय चतुत्थेक....' (१०९) तिमस्स विसयो; हेत्वत्थे पुञ्ञाय सुगतिं यन्ति, चागाय विपुलं धनं त्यादि, पुञ्ञहेतु चागहेतू त्यत्थो ।

२९६. नमोयोगादिस्वपि च[2] सुत्तनिक्खन्तं वुत्तनयमेव । तिपदं । विसयअवधारणअनुकड्ढननिद्देसा[3] । अपिग्गहणेन नमोयोगादिसु पि कत्थचि पटिसेधेति[4] । नागस्सा ति खीणासवस्स ।

२९७. अपादाने पञ्चमी[5] तिदं 'यस्मादपेति....' ति (२७३) सुत्ततो

---

1. तु०—"सम्पदानग्गहणेन चेत्थ दानारोचनधारण...सम्मुतिभिय्यसत्तम्यत्थादिके सङ्गण्हाति"— क० न्या०, पि० २४७ ।
2. तु०—"नमो-सोत्थि-स्वागतादियोगे च"— सद्द०, सु० ६०६; "नमःस्वस्ति....वषड्योगे चतुर्थी"—का० २.४.२६; "नमःस्वस्ति..."—पा० २.३.१६ ।
3-4. तु०—' चग्गहणं चतुत्थिग्गहणानुकड्ढनत्थं । अपिसद्दो चतुत्थि येव समुच्चेति"— क० न्या०, पि० २४७; रूप०, सु० वु० २९६; सुत्तनि०, पि० १२६ ।
5. तु०—सद्द० सु० ६०७; का० २.४.१९; पा० २. ३.२८ ।

२९८. कारणत्थे च । २. ६. २६ ।

कारणत्थे च पञ्चमी विभत्ति होति । अननुबोधा अप्पटिवेधा चतुन्नं अरियसच्चानं यथाभूतं अदस्सना ।

चसद्दग्गहणं पञ्चमीग्गहणानुकड्ढनत्थं ।

२९९. कम्मत्थे दुतिया । २. ६. २७ ।

कम्मत्थे दुतिया विभत्ति होति । रथं करोति, कटं करोति, छत्तं करोति, धम्मं सुणाति, बुद्धं पूजयति[१], वाचं भासति, तण्डुलं पचति, चोरं घातेति, गवं हन्ति[२], वीहयो लुनाति ।

निक्खन्तं । द्विपदं । विसयविसयीनिद्देसा । उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव[1] । 'दूरन्तिकद्ध....' ति (२७७) चसद्देन पञ्चमी विभत्ति कम्मत्थे करणत्थे च पवत्तति । कम्मत्थे—अपसालाया त्यादि, सालं वज्जेत्वा त्यत्थो । करणत्थे—थोकाय मुच्चति, सतस्मा बद्धो नरो त्यादि; थोकेन मुच्चति, सतेन बद्धो त्यत्थो ।

२९८. कारणत्थे च[2] तिदं यथावुत्तसुत्ततो निक्खन्तं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । द्विपदं । विसयअनुकड्ढननिद्देसा[3] । इमिना हेत्वत्थे ततियाविभत्ति विकप्पेति[4] ।

२९९. कम्मत्थे दुतिया[5] तिदं 'यं करोति तं कम्मं' ति (२८२) सुत्ततो निक्खन्तं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । द्विपदं । विसयविसयीनिद्देसा । दुतिया विभत्ति पच्चत्ते, ततियत्थे, सम्पदानत्थे, पञ्चम्यत्थे, सत्तम्यत्थे, अच्चन्तसंयोगे पवत्तति[6] । पच्चत्ते

---

१. पूजेति—से० । २. हनति—से० ।

1. द०—"अपादानग्गहणेन चेत्थ अपायभयादानधातुनामोपसग्गनिपातप्पयोगकारकमज्झ... थोकाकत्तादिके सङ्गण्हाति"—क०, न्या०, पि० २४७ ।

2. तु०—सद्द०, सु० ६०८; रूपसिद्धियं अस्स वण्णना एवमागता—"करोति अत्तनो फलं ति कारणं कारकहेतु; तस्मिं कारणत्थे च पञ्चमी विभत्ति होति"—त०, सु० वु० ३०३ ।

3. तु०—"चग्गहणं पञ्चमीग्गहणानुकड्ढनत्थं"—क० न्या०, पि०, २४८ ।

4. तु०—"विकप्पेनायं, हेत्वत्थे ततिया च विहितत्ता"—रूप० सु० वु० ३०३ ।

5. तु०—"सद्द०, सु० ५८०; का० २.४.१९; "कर्मणि द्वितीया"—पा० २.३.२ ।

३००. कालद्धानमच्चन्तसंयोगे । २. ६. २८ ।

कालद्धानमच्चन्तसंयोगे दुतिया विभत्ति होति । मासमधीते, योजनं कलहं करोन्तो गच्छति ।

अच्चन्तसंयोगे ति किमत्थं ? संवच्छरे भुञ्जति ।

'कम्मत्थे दुतिया' ति एत्थ अत्थग्गहणेन दुतिया[7]—अत्तना व अत्तानं सम्मन्नितब्बं त्यादि; एत्थ च अत्तानं ति दुतिया विभत्ति, तब्बप्पच्चयो कम्मवाचको; ततियत्थे 'ततियासत्तमीनञ्चे' ति (३०९) सुत्तेन ततिया—सचे मं समणो गोतमो नालपिस्सती त्यादि, त्वञ्च मं नालपिस्ससी त्यादि; 'ततियासत्तमीनञ्चे' ति एत्थ चसद्देन सम्पदानत्थे दुतिया विभत्ति—पच्चारोचेमि तं देव सब्बभूतानमिस्सर त्यादि; पञ्चम्यत्थे तेनेव चसद्देन दुतिया—पुब्बेन गामं रमणीयं त्यादि, पुब्बेन गामम्हा रमणीयं त्यत्थो; सत्तम्यत्थे 'ततियासत्तमीनञ्चे' ति सुत्तेन दुतिया—पुब्बण्हसमयं, एकं समयं त्यादि; पुब्बण्हसमये, एकस्मि समये त्यत्थो ।

३००. **कालद्धानमच्चन्तसंयोगे**[8] तिदं 'कम्मत्थे दुतिया' ति (२९९) सुत्ततो निक्खन्तं, तं सुविञ्ञेय्यमेव । द्विपदं । सम्बन्धछट्ठीविसयाधारनिद्देसा । कालद्धानदब्बगुणक्रियाहि अच्चन्तसंयोगे निरन्तरसंयोगे सति कालद्धानवाचिलिङ्गम्हा दुतिया विभत्ति होती ति अत्थो[9] । मासमधीते ति काल-अच्चन्तसंयोगो; योजनं कलहं करोन्तो ति अद्धानच्चन्तसंयोगो ।

6-7. तु०—"सङ्गहकारो पन कम्मत्थे ततियाछट्ठीसत्तम्यत्थेसु येन योगे चतुत्थ्यत्थे कालद्धानमच्चन्तसंयोगे कम्मप्पवचनीययुत्ते च दुतिया होती ति आह । कम्मत्थे इमिना व सिज्झति…एवञ्च सति ततियासत्तमीनम्पि छट्ठचत्थत्ता 'ततियासत्तमीनञ्चे' ति न वत्तब्बं ति चे, उत्तरसुत्तत्थं…"—क० न्या०, पि० २४८-२४९; सुत्तनि०, पि० १२७ ।

8. तु०—सद्द०, सु० ५८१; "कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे"—पा० २.३.५; "कालशब्देभ्योऽध्वशब्देभ्यश्च द्वितीया विभक्तिर्भवति"—काशिका, त० ।

9. तु०—"कालद्धानं दब्बगुणक्रियाहि अच्चन्तसंयुत्ते दुतिया विभत्ति होती ति ञापनत्थं… अच्चन्तसंयोगो निरन्तरसंयोगो ति वुत्तं होति…"—क० न्या०, पि० २४९; "अच्चन्तं निरन्तरं संयोगो अच्चन्तसंयोगो; कालद्धानं दब्बगुणक्रियाहि अच्चन्तसंयोगे तेहि कालद्धानवाचीहि लिङ्गेहि दुतिया विभत्ति होति"—रूप०, सु० वु० २८४; सुत्तनि०, पि० १२७-१२८; सद्द०, सु० वु० ५८१; "क्रियागुणद्रव्यैः साकल्येन कालाध्वनोः संबन्धोऽत्यन्तसंयोगः"—काशिका, पा० २.३.५ ।

३०१. कम्मप्पवचनीययुत्ते[1] । २. ६. २९ ।

कम्मप्पवचनीययुत्ते दुतिया विभत्ति होति । तं खो पन भवन्तं[2] गोतमं एवं कल्याणो कित्तिसद्दो अब्भुग्गतो, पब्बजितमनुपब्बजिंसु ।

---

३०१. कम्मप्पवचनीययुत्ते[1] तिदं यथावुत्तसुत्ततो निक्खन्तं। एकपदमेव[2]। विसयीनिद्देसो। कम्मं पवुच्चति इमेही ति कम्मप्पवचनीया। के ते? अभि-अनु त्यादयो; तेहि युत्तन्ति कम्मप्पवचनीययुत्तं, तस्मिं[3]।

---

१. ०च—सी० २। २. भगवन्तं—से०, सी० २।

1. तु०—सद्द०, सु० ५८६; "कर्मप्रवचनीयैश्च"—का० २.४.२३; "कर्मप्रवचनीययुक्ते द्वितीया"—पा० २.३.८।

2-3. तु०—"एकपदमेविदं। दुतियग्गहणमिहानुवत्तते⋯कम्मप्पवचनीयेहि युत्तं कम्मप्पवचनीययुत्तं, तस्मिं कम्मप्पवचनीययुत्ते। कम्मप्पवचनीया ति चेत्थ सक्कतगन्थे विहितसञ्ञानिद्देसो। तथा हि पब्बजितमनुपब्बजिंसू ति आदिसु लक्खणे वत्तमानस्स अनुसद्दस्स कम्मप्पवचनीयसञ्ञा वुत्ता। एत्थ हि पुरिमस्स पब्बजितभावो पच्छिमस्स पब्बजितभावस्स उपलक्खणं। नदिमन्वसिता बाराणसी ति आदिसु तस्सेव ततियत्थस्स कम्मप्पवचनीयसञ्ञा वुत्ता⋯लक्खणे इत्थम्भूताख्याने भागे वीच्छायोगे पति-परि-अनु इच्चेतेसं कम्मप्पवचनीयसञ्ञा वुत्ता। लक्खणे ताव—रुक्खं पति विज्जोतते चन्दो, रुक्खं परि, रुक्खमनू ति। तत्थ हि रुक्खो विज्जोतमानस्स चन्दस्स उपलक्खणभावेन गहितो ति⋯साधु देवदत्तो मातरं पति⋯इत्थम्भूताख्याने। अनेन पकारेन इत्थं पवत्तं भूतं, इदंपकारमापन्नं ति इत्थम्भूतं, तस्साख्यानं इत्थम्भूताख्यानं, तस्मिं इत्थम्भूताख्याने। तत्थ च पच्चादीहि युत्तत्ता देवदत्तस्स मातरि साधु⋯रुक्खं रुक्खं पति विज्जोतति⋯ति वीच्छायोगे। नानाधिकरणानं एकक्खणे वत्तुमिच्छत्तो ब्यापितुं इच्छा वीच्छा⋯कानिचि⋯कानिचि एकसञ्ञाधिकारत्ता निघातसरसाधकगतिसञ्ञाबाधनत्थं गहितानि, इध पन सरविसेसानं सब्बथा नाधिपेतत्ता; यानि कम्मतापाबानत्थं गहितानि तानेवाधिप्पेतानि, तेनेविदं सिज्झति—तं खो⋯अब्भुग्गतो त्यादि। सक्कतगन्थे निद्दिट्ठाय पि सञ्ञाय गहणं 'परसमञ्ञा पयोगे' ति वचनतो बिञ्ञायति। अथ वा कम्मं पवचनीयं येसं ते कम्मप्पवचनीया, तेहि युत्तं कम्मप्पवचनीययुत्तं। इदं वुत्तं होति—येसं निपातोपसग्गानं युत्तट्ठाने कम्मप्पवचनीयं होति, तेहि युत्तट्ठाने दुतिया होती ति"—क० न्या०, पि० २४९-२५१; "कम्मप्पवचनीयेहि निपातोपसग्गेहि युत्ते योगे सति लिङ्गम्हा दुतिया विभत्ति होति। कम्मं पवचनीयं येसं ते कम्मप्पवचनीया। परसमञ्ञावसेन वा अन्वादयो कम्मप्पवचनीया। तत्थ

तं[4] खो पन भवन्तं गोतमं एवं कल्याणो कित्तिसद्दो अब्भुग्गतो ति एत्थ तं खो पन भवन्तं गोतमं ति साम्यत्थे दुतियावचनं, तस्स पन भोतो गोतमस्स एवं कल्याणो कित्तिसद्दो अब्भुग्गतो त्यत्थो। एत्थ च तं खो पन भवन्तं गोतमं एवं कल्याणो कित्तिसद्दो अब्भुग्गतो ति पदसमदायो इत्थम्भताख्यानं: इत्थम्भतेन कित्तिसद्देन सह चरितत्ता भगवा पि इत्थम्भूतत्थो; अभिसद्दो कम्मप्पवचनोयो; तेन युत्तत्ता इत्थम्भूताख्याने भवन्तं गोतमं ति पदे साम्यत्थे दुतिया, तस्स पन भोतो गोतमस्सा ति अत्थो। पब्बजितमनुपब्बजिंसू ति एत्थ बोधिसत्ते पब्बजिते तं अनुलक्खणं कत्वा पब्बजिंसू त्यत्थो; लक्खणवाचकेन कम्मप्पवचनीयभूतेन अनुसद्देन युत्तत्ता सत्तम्यत्थे दुतिया[5]*।

अनुसद्दस्स लक्खणे सहत्थे हीने च कम्मप्पवचनीयसञ्ञा वुत्ता…लक्खणादिसु 'लक्खणित्थम्भूतक्खानभागवीच्छासु पतिपरिअनुनो' ति पतिपरिअनूनं कम्मप्पवचनीयसञ्ञा वुत्ता… 'अभिरभागे' ति अभिस्स भागवज्जितेसु लक्खणादिसु कम्मप्पवचनीयसञ्ञा वुत्ता…निपाते 'धि ब्राह्मणस्स हन्तारं' इच्चेवमादि"—रूप०, सु० वु० २८५; सुत्तनि०, पि० १२८; "कम्मं पवचनीयं येसं ते कम्मप्पवचनीया"—सद्द०, सु०वु० ५८२; "किमर्थं महती संज्ञा क्रियते ? अन्वर्थसंज्ञा यथा विज्ञायते। कर्म प्रोक्तवन्तः कर्मप्रवचनीया इति। के पुनः कर्म प्रोक्तवन्तः ? ये संप्रति क्रियां नाहुः। के च संप्रति क्रियां नाहुः ? ये अप्रयुज्यमानस्य क्रियामाहुः ते कर्मप्रवचनीया."—महा०, पा० १.४.८३; "कर्म प्रोक्तवन्त इति। प्रयुज्यमाने क्रियापदे क्रियाविशेषं द्योतितवन्त इत्यर्थः। क्रियां नाहुरिति। क्रियाविशेषं न द्योतयन्तीत्यर्थः…क्रियायास्तावदयं न वाचकः, कारकविभक्तिप्रसङ्गात्, शेषविभक्तिसंबन्धस्याप्रतीतिप्रसङ्गाच्च। अत एव न क्रियापदाक्षेपकः…तथा चोक्तं हरिणा—

'क्रियाया द्योतको नायं संबन्धस्य न वाचकः।
नापि क्रियापदाक्षेपी संबन्धस्य तु भेदकः'॥ इति।

तत्र क्रियामाहुरिति क्रियाशब्देन तदुपजनितसंबन्धविशेष उपचारादुच्यते। आहुरित्यस्यापि द्योतयन्तीत्ययमर्थः। क्वचित्तु प्रवृत्तिनिमित्ताभावेऽपि वचनसामर्थ्यादियं संज्ञा प्रवर्तते। यथा सुः पूजायामिति षत्वादिनिवृत्तये गत्युपसर्गसंज्ञा बाधनार्था:"—म० भा० प्र०, पा० १.४.८३; द०—"अनुर्लक्षणे"—पा० १.४.८४, "तृतीयार्थे"—त०, १.४.८५, "हीने"—त०, १.४.८६, "उपोऽधिके च"—त०, १.४.८७, "अपपरी वर्जने"—त०, १.४.८८, "आङ्मर्यादावचने"—त०, १.४.८९, "लक्षणेत्थंभूताख्यानभागवीप्सासु प्रतिपर्यनवः"—त०, १.४.९०, "अभिरभागे"—त०, १.४.९१, "प्रतिः प्रतिनिधिप्रतिदानयोः"—त०, १.४.९२, "अधिपरी अनर्थकौ"—त०, १.४.९३, "सुः पूजायाम्"—त०, १.४.९४, "अतिरतिक्रमणे च"—त०, १.४.९५, "अपिः पदार्थसंभावनाऽन्ववसर्गगर्हासमुच्चयेषु"—त०, १.४.९६, "अधिरीश्वरे"—त०, १.४.९७; वि० द०—सद्द०, सु० ५८२–५८५ अ।

*. एत्थ कच्चायनन्यासस्स सीहलसंस्करणे एकं उपसुत्तं 'गत्यत्थे च' इति आगतं; तस्स मरम्मसंस्करणे तं तु सुत्तसंख्या ३०२ इच्चस्स पच्छा आगतं; अतो तत्थेव तस्स विसये विचारो भविस्सति।

4-5. तु०—सुत्तनि०, पि० १२८–१३१।

३०२. गतिबुद्धिभुजपठहरकरसयादीनं कारिते वा । २. ६. ३० ।

गति-बुद्धि-भुज-पठ-हर-कर-सयादीनं धातूनं[१] पयोगे[२] कारिते सति दुतिया विभत्ति होति वा । पुरिसो पुरिसं गामं[३] गमयति, पुरिसो पुरिसेन वा, पुरिसो[४] पुरिसस्स वा[४]; एवं बोधयति, भोजयति, पाठयति, हारयति, कारयति, सयापयति[५]—एवं सब्बत्थ कारिते ।

---

३०२. गतिबुद्धिभुजपठहरकरसयादीनं कारिते वा[6] ति 'कम्मत्थे दुतिया' ति (२९९) सुत्ततो निक्खन्तं । किन्निक्खन्तं ? 'कम्मत्थे दुतिया' ति सुत्तेन कुटिं करोती त्यादिसु धातुया कम्मभूतेसु कुटिं त्यादिसु दुतिया विभत्ति विहिता; एवं सति पुरिसो पुरिसं कम्मं कारेती त्यादिसु पुरिसं ति कारितकम्मेसु कथं दुतिया विभत्ति भवेय्या ति पुच्छाय सति, पुरिसं त्यादिसु कारितकम्मेसु पि दुतिया विभत्ति होती ति दस्सेतुं, 'गतिबुद्धि····' ति आह । तिपदं । सम्बन्धछट्ठीभावसत्तमीविकप्पनत्थनिद्देसा । गतिबुद्धिभुजपठहरकरसयादीनं धातूनं पयोगे कारिते सति विकप्पेन दुतिया विभत्ति होती ति अत्थो[7] । पुब्बसुत्तेनेव सिज्झनतो इमस्सुच्चारणं विकप्पनत्थं[8] । तेन[9] पुरिसो

---

१. सी०१, सी०२ पोत्थकेसु नत्थि । २. सी०१, सी०२ पोत्थकेसु नत्थि । ३. सी०२ पोत्थके नत्थि । ४-४. सी० १, सी०२ पोत्थकेसु नत्थि । ५. साययति—से० ।

6. तु०—सद्द०, सु० ५८७; "गत्यर्थकर्मणि द्वितीयाचतुर्थ्यौ चेष्टायामनध्वनि"—का० २.४.२४; "गतिबुद्धिप्रत्यवसानार्थशब्दकर्माकर्मकाणमणि कर्त्ता स णौ"—पा० १.४.५२; काशिकागन्थे अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—"अर्थशब्दः प्रत्येकमभिसंबध्यते । गत्यर्थानां बुद्धयर्थानां प्रत्यवसानार्थानां च धातूनां तथा शब्दकर्मकाणामकर्मकाणां च अण्यन्तानां यः कर्त्ता स ण्यन्तानां कर्मसंज्ञो भवति" ।

7-8. तु०—"गमु सप्पगतिम्हि, बुध ञाणे····कारिते ति 'धातूहि णेणयणापे'····' ति विहितकारितपच्चये सङ्गण्हाति । 'यो कारेति····' ति एत्थ वुत्तनयेन पधाननिबन्धनेन भवितब्बं ति । 'कम्मत्थे दुतिया' तिमिना व सिज्झनतो इमस्सुच्चारणं विकप्पनत्थं"—क० न्या०, पि० २५१; "गमु सप्पगतिम्हि, बुध बोधने बुध अवगमने वा, भुज पालनब्यवहरणेसु, पठ ब्यत्तियं, हर हरणे, कर करणे, सि सये इच्चेवमादीनं धातूनं पयोगे कारिते सति पयोजककत्तुभूते कम्मणि लिङ्गम्हा दुतिया विभत्ति होति वा । निच्चं सम्पत्ते विकप्पत्थोयं"—रूप०, सु० वु० २८३; "ननु च कारिते पयोजकब्यापारं पटिच्च कम्मसञ्ञाय विहितत्ता 'कम्मत्थे दुतिया' ति इमिना व दुतिया सिज्झति, कस्मा पुनिदं वुत्तं ति····कारितकम्मधातुकम्मानं वा विसेसदस्सनत्थं, तथा हि कारिते ति वुत्तं ति"—सुत्तनि०, पि० १३१ ।

३०३. सामिस्मिं छट्ठी । २, ६. ३१ ।

सामिस्मिं छट्ठी विभत्ति होति । तस्स भिक्खुनो पटिविंसो[1], तस्स भिक्खुनो मुखं, तस्स भिक्खुनो पत्तचीवरं ।

पुरिसं कम्मं कारेती ति एत्थ दुतिया विभत्ति, पुरिसेना ति एत्थ 'कत्तरि चे' ति (२९०) सुत्ते चसद्देन कम्मत्थे ततिया विभत्ति च; पुरिसस्सा ति एत्थ 'दुतियापञ्चमीनञ्चे' ति (३११) सुत्तेन कम्मत्थे छट्ठी विभत्ति होती ति अयं रूपसिद्धि-कारकस्स बुद्धप्पियाचरियस्स मति[10] । 'अथ वा इमिना सुत्तेन पुरिमसुत्तं विकप्पेति; तस्मा इध वासद्दो अधिको ति वासद्देन कम्मसञ्ञं बाधेत्वा, तेन पुरिसेन तस्स पुरिसस्सा ति एतेसु कत्तुसञ्ञं कत्वा, कत्तरि ततिया विभत्ति[11], 'निद्धारणे चे' ति (३०६) सुत्ते चसद्देन कत्वत्थे छट्ठी च होति, विधिसुत्ते वासद्देन कम्मसञ्ञं बाधेत्वा सञ्ञासुत्ते वासद्देन पि विभत्तिविधानं विदधाती ति—अयं न्यासाचरियस्स मति[12] । वुत्तञ्च—

"फलक्रियाय कत्ता पि अञ्ञथानुपपत्तितो" । ति ।

वाविधानतो ति 'गतिबुद्धि....' ति सुत्ते वासद्दस्स विधानतो फलक्रियाय कत्ता ति पि कारेती ति एत्थ फलभूत-करणक्रियाय कत्ता पि होति; अञ्ञथानुपपत्तितो ति फलभूतकरणक्रियाय अपेक्खभावे सति कम्मभावेन अनुपपत्तितो ति फलक्रियाय कत्ता पि होती ति अत्थो[13] ।

३०३. सामिस्मिं छट्ठी[14] तिदं 'यस्स वा....' ति (२८५) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । विसयविसयीनिद्देसा । उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव[15] ।

---

१. पटिविसं—से० ।

9–10. द०—रूप० सु० २८३ ।

11. तु०—"अपरे पन इध वासद्देन कम्मसञ्ञं निवत्तेन्ति...."—सुत्तनि०, पि० १३१ ।

12. द०—क० न्या०, पि० २५१ ।

13. द०—क० न्या०, पि० २५१; तत्थेव कच्चायनन्यासस्स मरम्मसंस्करणे एकं उपसुत्तं पि वट्टति—'गत्यत्थे च' । अस्स विवरणं तत्थ एवमागतं—"किमत्थमिदं ? गमु सप्पगतिम्ही तिमस्सत्थे गम्यमाने युत्तट्ठाने दुतिया विभत्ति होती ति ञापनत्थं । इदं पन 'गत्यत्थस्स कम्मुनो दुतिया', 'कम्मत्थे दुतिया' तिमिना व सिज्झति, सिलाघादिसुत्ते गत्यत्थकम्मनि चतुत्थिया विहितत्ता तदपवादं ति चे, तन्न, तस्सानियतत्ता । तत्थेव हि वुत्तियं वुत्तं—'गत्यत्थकम्मनि दुतिया चे' ति; तस्मा अलमस्स वचनेन, न चेतं पोराणकं" ।

३०४. ओकासे सत्तमी । २. ६. ३२ ।

ओकासकारके सत्तमी विभत्ति होति । गम्भीरे ओदकण्णवे[1], पापस्मिं रमति[2] मनो, भगवति ब्रह्मचरियं वुस्सति[3] कुलपुत्तो ।

३०५. सामिस्सराधिपतिदायादसक्खिपतिभू[4]पसूतकुसलेहि च । २.६.३३ ।

सामि-इस्सर-अधिपति-दायाद-सक्खि-पतिभू-पसूत-कुसल इच्चेतेहि पयोगेहि[5] छट्ठी विभत्ति होति सत्तमी च । गोणानं सामी, गोणेसु[6] सामी; गोणानं इस्सरो[6], गोणेसु इस्सरो; गोणानं अधिपति, गोणेसु अधिपति; गोणानं दायादो, गोणेसु दायादो; गोणानं सक्खि, गोणेसु सक्खि; गोणानं पतिभू, गोणेसु पतिभू; गोणानं पसूतो, गोणेसु पसूतो; गोणानं कुसलो, गोणेसु कुसलो ।

---

३०४. **ओकासे सत्तमी**[1] तिदं 'योधारो तमोकासं' ति (२८०) सुत्ततो निक्खन्तं । द्विपदं । विसयविसयीनिद्देसा । उदाहरणानि सुविञ्ञेय्यानेव[2] ।

एवं असाधारणत्थवसेन विभत्तुप्पत्तिं दस्सेत्वा, इदानि साधारणत्थवसेन छट्ठीसत्तमीनं उप्पत्तिं दस्सेतुं—

३०५. **सामिस्सराधिपतिदायादसक्खिपतिभूपसूत*कुसलेहि च**+[3] ति आह । इदं सुत्तं 'सामिस्मिं छट्ठी' (३०३), 'ओकासे सत्तमी' ति (३०४) सुत्तेहि निक्खन्तं ।

---

14. तु०—"छट्ठी सामिम्हि"—सद्द०, सु० ६०६; का० २.४.१९; "षष्ठी शेषे"—पा० २.३.५० ।

15. वि० द०—क० न्या०, पि० २५१–२५४ ।

१. ओदकन्तिके—सी०१, सी०२ । २. रमती—सी० २ । ३. वसति—से०, सी०१ । ४. ०प्पभूत०—से० । ५. पयोगे—सी०१; योगे सति—से० । ६-६. से० पोत्थके नत्थि ।

*. ०पसुत०—क० न्या० । +. क० न्यासे नत्थि ।

1. तु०—सद्द०, सु० ६३०; का० २.४.१९; "सप्तम्यधिकरणे च"—पा० २. ३. ३६ ।

2. वि० द०—क० न्या०, पि० २५४-२५६; सुत्तनि०, पि० १३२ ।

3. तु०—सद्द०, सु० ६३१; "स्वामीश्वराधिपति····प्रसूतैः षष्ठी च"—का० २.४.३५; "स्वामीश्वराधिपति····प्रसूतैश्च"—पा० २.३.३९, "आयुक्तकुशलाभ्यां चासेवायाम्"—पा०, २.३.४० ।

३०६. निद्धारणे च । २. ६. ३४ ।

निद्धारणत्थे[1] च[2] छट्ठी विभत्ति होति सत्तमी च। कण्हा गावीनं सम्पन्नखीरतमा, कण्हा गावीसु सम्पन्नखीरतमा; सामा नारीनं दस्सनीयतमा, सामा नारीसु दस्सनीयतमा; मनुस्सानं खत्तियो सूरतमो, मनुस्सेसु खत्तियो सूरतमो; पथिकानं धावन्तो[3] सीघतमो, पथिकेसु धावन्तो सीघतमो ।

किन्निक्खन्तं[1]? 'सामिस्मि छट्ठी' ति च 'ओकासे सत्तमी' ति च असाधारणवसेन छट्ठी-सत्तमी-विभत्तुप्पत्ति वुत्ता; एवं सति साधारणत्थे कथं छट्ठी-सत्तमी-विभत्तियो भवेय्युं ति पुच्छाय सति, ता साधरणत्थे पि भवन्ती ति दस्सेतुं, 'सामिस्सरा.....' ति आह। द्विपदं। सहत्थे ततियासमुच्चयनिद्देसा। सामिस्सराधिपति".....कुसलेहि योगे सति छट्ठ्यत्थे पि छट्ठी सत्तमी होति, सत्तम्यत्थे पि सत्तमी छट्ठी विभत्ति होती ति अत्थो[2]। गोणानं सामी त्यादिसु सामियोगत्ता छट्ठ्यत्थसत्तम्यत्थवसेन अत्थद्वयं सम्भवति; एवं सेसेसु पि।

३०६. निद्धारणे च[3] तिदं 'सामिस्मि छट्ठी' (३०३), 'ओकासे सत्तमी' ति (३०४) सुत्तेहि निक्खन्तं। तं* सुविञ्ञेय्यमेव।

कण्हागावीनं सम्पन्नखीरतमा, कण्हा गावीसु+ सम्पन्नखीरतमा त्यादीनि उदाहरणानि। तत्थ[4] च निद्धारणं, निद्धारणसमुदायो, निद्धारणीयं, निद्धारणहेतू ति चतुब्बिधं। तत्थ पुथक्करणसंखाता क्रिया निद्धारणं नाम, गावीनं ति निद्धारण-

---

१. निद्धारणे—से०, सी० १। २. सी० १ पोत्थके नत्थि। ३. धवन्तो—से०।

*. सी० पोत्थके नत्थि। +. गाविसु—सी०।

1-2. तु०—"किमत्थमिदं? सामि-इस्सर-अधिपति.....इच्चेतेहि योगे सति छट्ठी विभत्ति होति, सत्तमी चे ति ञापनत्थं। युत्ते ति वचनसेसो। छट्ठीग्गहणसत्तमीग्गहणञ्च वत्तते....."—क० न्या०, पि० २५६; "सामि.....कुसलेहि योगे सति छट्ठ्यत्थ.....सत्तम्यत्थे च छट्ठी सत्तमी च विभत्ति होती ति अत्थो। ननु छट्ठ्यत्थे 'सामिस्मि छट्ठी' ति सुत्तेन, सत्तम्यत्थो 'छट्ठी चा' ति सुत्तेन छट्ठी विभत्ति सिज्झति; तथा सत्तम्यत्थे 'ओकासे सत्तमी' ति सुत्तेन छट्ठ्यत्थो, 'सम्पदाने चा'ति चग्गहणेन वा,'पञ्चम्यत्थो चा'ति चग्गहणेन वा सत्तमी विभत्ति सिज्झति; कस्मा सुत्तमिदं वुत्तं ति? सच्चं; तथा पि उभयत्थेसु एकेकत्थस्मि वचनद्वयविधानत्थमिदं वुत्तं ति....."—सुत्तनि०, पि० १३२।

3. तु०—"उब्बाहने च"—सद्द०, सु० ६३२; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"उब्बाहनसंखाते निद्धारणे छट्ठी विभत्ति होति, सत्तमी च। एत्थ च उब्बाहनं ति सासने वोहारो, निद्धारणं ति सद्दसत्थे। तत्थुब्बाहनं नाम जाति-गुण-किरियाहि रासितो उद्धरित्वा नीहरणं, निद्धारणं नाम तेहि एव जाति-आदीहि समुदायतो एकस्स पुथक्करणं, नीहरित्वा धारणं; उभयम्पि पनेतं ब्यञ्जनमत्तेन नानं, अत्थतो पन निन्नानाकरणं। तस्मि निद्धारणे गम्ममाने समुदायवाचिलिङ्गम्हा छट्ठी विभत्ति होति सत्तमी च"; "निर्धारणे च"—का० २.४.३६; "यतश्च निर्धारणम्"—पा० २.३.४१।

३०७. अनादरे च । २. ६. ३५ ।

अनादरे च[1] छट्ठी विभत्ति होति सत्तमी च। रुदतो दारकस्स पब्बजि, रुदन्तस्मि दारके पब्बजि ।

चसद्दग्गहणं छट्ठीसत्तमीग्गहणानुकड्ढनत्थं ।

समुदायो नाम, कण्हगुणेन लक्खितं कण्हदब्बं निद्धारणीयं नाम, कण्हगुणो निद्धारणहेतु नामा ति अम्हाकं खन्ति । क्रियानिद्धारणं नाम समुदायो गवादिको, कण्हा निद्धारणीयं, हेतु; खीरतमादिको ति अञ्ञे । कण्हा गावीनं सम्पन्नखीरतमा ति एत्थ गुणनिद्धारणं, कण्हगुणेन निद्धारितत्ता; अरहतं आनन्दो बहुस्सुतो ति एत्थ नामनिद्धारणं, नामेन निद्धारितत्ता; मनुस्सेसु राजा सूरतमो ति जातिनिद्धारणं, जातिया निद्धारितत्ता; पथिकेसु धावन्तो सीघतमो ति एत्थ क्रियानिद्धारणं, क्रियाय निद्धारितत्ता—एवं चतुब्बिधो होति[5] ।

इध चग्गहणेन वुत्तावसेसं सब्बं सङ्गण्हाति[6]—इदं पि सीलस्मि, मणिम्हि पस्स निमित्तं त्यादिसु पि पच्चत्थे सत्तमी विभत्ति होति ।

३०७. अनादरे च[7] तिदं 'सामिस्मि छट्ठी', (३०३), 'ओकासे सत्तमी' ति(३०४)

4-5. तु०—"निद्धारणं नाम क्रियाजातिगुणेहि समुदायतो एकस्स पुथक्करणं; नीहरित्वा धारणं निद्धारणं"—क० न्या०, पि० २५६; रूप०,सु०वु०३०७; सद्द०, सु० वु० ६३२; "निद्धारणं नाम विभजितसमुदायतो वा अविभजितसमुदायतो वा विभजनं पुथक्करणं.... तञ्च निद्धारणं जाति-गुण-किरिया-दब्बवसेन चतुब्बिधं; तत्था पि एकेकं निद्धारणीय-हेतु-किरियाबलेन चतुब्बिधं होति"—सुत्तनि०, पि० १३२-१३३;

"नीहरित्वा धारणतो निद्धारणन्ति वुच्चति ।
नीहरितब्बं भावेन निद्धारणीयो गम्यते" ॥—सद्दसार०, गा० २२८; "जाति-गुण-क्रियाभिः समुदायादेकदेशस्य पृथक्करणं निर्धारणम्"—काशिका, पा० २.३.४१ ।

6. तु०—"एत्थ चग्गहणं इध कच्चायने वुत्तावसेसं समुच्चिनोति; बालावतारे पन चकारेन पठमत्थे छट्ठी सत्तमी ति वुत्तं"—सुत्तनि०, पि० १३३ ।

१. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि ।

7. तु०—"अनादरम्हि च"—सद्द०, सु० ६३३; "षष्ठी चानादरे"—पा० २.३.३८ ।

३०८. क्वचि दुतिया छट्ठीनमत्थे । २. ६. ३६ ।

छट्ठीनमत्थे क्वचि दुतिया विभत्ति होति । अप्पिस्सु मं अग्गिवेसन तिस्सो उपमायो पटिभंसु ।

सुत्तेहि निक्खन्तं । द्विपदं[8] । विसयअनुकड्ढननिद्देसा । अनादरे गम्यमाने भाववाचका लिङ्गम्हा छट्ठी विभत्ति होति, सत्तमी चा ति अत्थो[9] ।

रुदतो[10] दारकस्स पब्बजि*, रुदन्तस्मिं दारके पब्बजी ति उदाहरणानि । तत्थ रुदतो ति रुदन्तस्सा ति अत्थो; दारकस्सा ति दारकं रुदन्तं अनादरित्वा पब्बजी ति अत्थो । एत्थ च दारकस्सा ति अनादरकिरियाभूताय पब्बजिकिरियाय लक्खणभूताय रोदनकिरियाय योगत्ता कम्मत्थे अनादरे छट्ठी; रुदन्तस्मिं दारके ति एत्था पि एसेव नयो[11] ।

एवं अत्तनो अत्तनो अत्थेसु विभत्तीनं उप्पत्तिं दस्सेत्वा, तेसं अञ्ञत्थेसु पि पवत्तिं दस्सेतुं—

३०८. क्वचि दुतिया छट्ठीनमत्थे[12] ति वुत्तं । इदं सुत्तं 'लिङ्गत्थे पठमा (२८६), 'कम्मत्थे दुतिया' (२९९) त्यादीहि विभत्तिकारकसुत्तेहि निक्खन्तं; तं सुविञ्ञेय्यमेव । चतुप्पदं । क्वचत्थविसयीसम्बन्धछट्ठीविसयनिद्देसा । पतिभातियोगे—अपिस्सु मं अग्गिवेसन तिस्सो उपमायो पटिभंसु, मय्हं तिस्सो उपमायो पटिभंसू त्यत्थो ।

---

*. पब्बजी—सी० ।

8. द०—'चग्गहणं छट्ठीसत्तमीग्गहणानुकड्ढनत्थं''—क० न्या०, पि० २५६-२५७; ''एत्थ चग्गहणं विभत्तिद्वयानुकड्ढनत्थं; 'अनादरे चा' ति अनादरत्थे च छट्ठी विभत्ति होति; नत्थि आदरं एत्थ अनादरो; आदरं नाम इच्छानुरूपकरणं····''—सुत्तनि०, पि० १३३ ।

9. तु०—रूप०, सु० वु० ३०८; सद्द०, सु० वु० ६३३ ।

10-11. वि० द०—सुत्तनि०, पि० १३३–१३४ ।

12. तु०—''क्वचि छट्ठीनमत्थे अन्तरादियोगे''—सद्द०, सु० ५८८; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—''छट्ठीनमत्थे अन्तरादीहि योगे सति क्वचि दुतिया विभत्ति होति; अन्तरा-अभितो-परितो-पति-पटिभाति-योगे चायं''; रूप०, सु० वु० २८६; ''अन्तराऽन्तरेण युक्ते''—पा० २.३.४; ''अभितःपरित समयानिकषाहाप्रतियोगेऽपि''—वा०, सि० कौ०, सू० ५४५; वि० द०—टि०, सू० ३१७ ।

३०९. ततियासत्तमीनञ्च । २. ६. ३७ ।

ततियासत्तमीनं अत्थे क्वचि दुतिया विभत्ति होति । सचे मं समणो गोतमो नालपिस्सति, त्वञ्च मं नाभिभाससि–एवं ततियत्थे । पुब्बण्हसमयं निवासेत्वा, एकं समयं भगवा–एवं सत्तम्यत्थे ।

३१०. छट्ठी च । २. ६. ३८ ।

ततियासत्तमीनं च अत्थे क्वचि छट्ठी विभत्ति होति । कतो[२] मे कल्याणो[३], कतं मे पापं—एवं ततियत्थे; कुसला नच्चगीतस्स सिक्खिता चतुरित्थियो, कुसलो त्वं रथस्स अङ्गपच्चङ्गानं—एवं सत्तम्यत्थे ।

क्वची ति किमत्थं ? देसितो आनन्द मया धम्मो च[४] विनयो च पञ्ञत्तो[४], आनन्दो अत्थेसु विचक्खणो ।

---

३०९. ततियासत्तमीनञ्चा[1] तिमस्स निक्खन्तनयो पुब्बसुत्तसदिसो व । द्विपदं। सम्बन्धछट्ठीअनुकड्ढननिद्देसा, समुच्चयनिद्देसो वा। तेन सम्पदानत्थे, पञ्चम्यत्थे, क्रियाविसेसने च दुतिया[2] । सम्पदानत्थे[3]—पञ्चारोचेमि तं देव त्यादि; पञ्चम्यत्थे—पुब्बेन गामं रमणीयं* त्यादि; ततियासत्तमीनं अत्थे क्वचि दुतिया विभत्ति होती ति अत्थो—सचे मं समणो गोतमो नालपिस्सति, त्वं च मं नाभिभाससी ति एत्थ मं ति मया; त्वं च मं ति त्वं मया ति अत्थो; पुब्बण्हसमयं ति पुब्बण्हसमये, एकं समयं ति एकस्मिं समये ति अत्थो[4] ।

३१०. छट्ठी चा[5] तिमस्स निक्खन्तं वुत्तनयमेव । ततियासत्तमीनमत्थे क्वचि

---

१. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि । २. कतं—से०, । ३. कल्याणं—से० । ४-४. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि ।

*. रमनीयं—सी० ।

1. तु०—सद्द०, सु० ५८६; "तृतीयार्थे"—पा० १.४.८५ ।

2. तु०—"एत्थ चग्गहणं उत्तरसुत्तनानुवत्तनत्थं, दुतियाविभत्तियानुकड्ढनत्थं । चकारेन सम्पदाने पञ्चम्यत्थे च क्वचि दुतिया ति वदन्ति"—सुत्तनि०, पि० १३४ ।

3-4. रूपसिद्धियं अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—"…ततियत्थे…सत्तमियत्थे… काले, उपन्वज्झावसस्स पयोगे, तप्पानाचारे च दुतिया"—सु० वु० २८७; पा० १.४.४६, १.४.४७, १.४.४८ ।

5. तु०—"क्वचि ततिया-सत्तमियत्थे छट्ठी"—सद्द०, सु० ६३४; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"…कत्तरि कितप्पच्चययोगे"; तत्थेव अञ्ञानि पि सुत्तानि दिस्सन्ति, यथा—"ततियत्थे वा ततिया"—सु० ६३५, "यजस्स करणे"—सु० ६३६, "पूरितत्थयोगे"—सु० ६३७, "तुल्यत्थ-फिमलमादियोगे"—सु० ६३८, "सत्तमियत्थे कुसलादियोगे"—सु० ६३९; "ततिया-सत्तमीनमत्थे क्वचि छट्ठी विभत्ति होति—यजस्स करणे

३११. दुतियापञ्चमीनञ्च । २. ६. ३९ ।

दुतियापञ्चमीनं च[1] अत्थे क्वचि छट्ठी विभत्ति होति। तस्स भवन्ति वत्तारो, सहसा[2] तस्स[3] कम्मस्स कत्तारो—एवं दुतियत्थे। अस्सवनता धम्मस्स परिहायन्ति, किन्नु खो अहं तस्स सुखस्स[4] भायामि, सब्बे तसन्ति दण्डस्स, सब्बे भायन्ति मच्चुनो, भीतो चतुन्नं आसिविसानं[5] नागानं[6] भायामि घोरविसस्स नागस्स—एवं पञ्चम्यत्थे।

३१२. कम्मकरणनिमित्तत्थेसु सत्तमी । २. ६. ४० ।

कम्मकरणनिमित्तत्थेसु सत्तमी विभत्ति होति। सुन्दरावुसो इमे

छट्ठी विभत्ति होती त्यत्थो। कतो मे कल्याणो, कतम्मे पापं ति एत्थ मया त्यत्थो; नच्चगीतस्सा ति नच्चगीते, अङ्गपच्चङ्गानं ति अङ्गपच्चङ्गेसु।

३११. दुतियापञ्चमीनञ्चे[6] तिमस्स निक्खन्तनयो वुत्तसदिसो व। द्विपदं। सम्बन्धछट्ठीअनुकड्ढननिद्देसा। दुतियापञ्चमीनं अत्थे क्वचि छट्ठी विभत्ति होती त्यत्थो। तस्स भवन्ति वत्तारो, सहसा तस्स कम्मस्स कत्तारो ति तं भवन्ति वत्तारो, तं कम्मं कत्तारो ति अत्थो; अस्सवणता धम्मस्स परिहायन्ति, किन्नु खो अहं तस्स सुखस्स भायामि, सब्बे तसन्ति दण्डस्सा त्यादिसु धम्मतो, तस्मा सुखम्हा, दण्डस्मा ति अत्थो।

३१२. कम्मकरणनिमित्तत्थेसु सत्तमी[7] तिमस्स निक्खन्तनयो वुत्तसदिसो व।

सुहितत्थयोगे'''तुल्यत्थकिमलमादियोगे'''कत्तरि क्तप्पच्चययोगे'''सत्तमियत्थे कुसलादियोगे ....''—रूप०, सु० वु० ३०४; ''यजेश्च करणे''—पा० २.३.६३, त०, २.३.६५, ''उभयप्राप्तौ कर्मणि''—त०, २.३.६६, ''क्तस्य च वर्तमाने''—त०, २.३.६७, ''अधिकरणवाचिनश्च''—त०, २.३.६८, ''कृत्यानां कर्तरि वा''—त०, २.३.७१, ''तुल्यार्थैरतुलोपमाभ्यां'''''—त०, २.३.७२, ''चतुर्थी चाशिष्या'''''—त०, २.३.७३।

१. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। २. से० पोत्थके नत्थि। ३. सी० १ पोत्थके नत्थि। ४. से० पोत्थके नत्थि। ५. आसीविसानं—से०। ६. घोरविसानं—सी० १।

6. तु०—सद्द०, सु० ६४०; ''कर्तृकर्मणोः कृति''—पा० २.३.६५; रूपसिद्धियं अस्स वण्णना एवमागता—''दुतियत्थे कम्मणि कितकयोगे'''तथा सरिच्छादीनं कम्मणि''' करोतिस्स पतियतने च'''पञ्चमियत्थे परिहानिभयत्थयोगे''''—सु० ३०५।

7. तु०—सद्द०, सु० ६४१; ''निमित्तात्कर्मसंयोगे सप्तमी वक्तव्या''—वा०, पा० २.३.३६; वि० द०—रूप०, सु० वु० ३०९।

आजीवका[1] भिक्खूसु अभिवादेन्ति—एवं कम्मत्थे। हत्थेसु पिण्डाय चरन्ति, पत्तेसु पिण्डाय चरन्ति, पथेसु गच्छन्ति[2]—एवं करणत्थे। दीपी चम्मेसु[3] हञ्ञते कुञ्जरो दन्तेसु हञ्ञते—एवं निमित्तत्थे।

३१३. सम्पदाने च। २. ६. ४१।

सम्पदाने च सत्तमी विभत्ति होति। सङ्घे दिन्नं महप्फलं, सङ्घे गोतमि देहि, सङ्घे दिन्ने अहञ्चेव पूजितो भविस्सामि।

३१४. पञ्चम्यत्थे च। २. ६. ४२।

पञ्चम्यत्थे च सत्तमी विभत्ति होति। कदलीसु गजे रक्खन्ति।

३१५. कालभावेसु च। २. ६. ४३।

कालभावेसु च कत्तरि पयुज्जमाने सत्तमी विभत्ति होति। पुब्बण्हसमये गतो, सायण्हसमये आगतो, भिक्खुसङ्घेसु भोजियमानेसु गतो, भुत्तेसु आगतो, गोसु दुय्हमानासु गतो, दुद्धासु आगतो।

द्विपदं। विसयीविसयनिद्देसा। कम्मकरणनिमित्तत्थेसु सत्तमी विभत्ति होती त्यत्थो। भिक्खुसु अभिवादेन्ती ति भिक्खू अभिवादेन्ती ति अत्थो; हत्थेसु, पादेसु, पत्तेसू ति हत्थेहि, पादेहि, पत्तेही ति अत्थो; चम्मेसु, दन्तेसू ति एत्थ चम्मनिमित्तेसु, दन्तनिमित्तेसू ति अत्थो।

३१३. सम्पदाने च[1] तिमस्स निक्खन्तनयो वुत्तसदिसो व। द्विपदं। विसयअनुकड्ढननिद्देसा। सङ्घे दिन्नं महप्फलं, सङ्घे गोतमी देहि, सङ्घे दिन्ने अहं चेव पूजितो भविस्सामी त्यादिसु सङ्घस्सा ति अत्थो।

३१४. पञ्चम्यत्थे च[2] तिमस्स निक्खन्तं वुत्तनयमेव। द्विपदं। विसयसमुच्चयनिद्देसा। कदलीसू ति कदलितो त्यत्थो।

३१५. कालभावेसु च[3] तिमस्स निक्खन्तं वुत्तनयमेव। द्विपदं[4]। विसय-

---

१. आजीविका—से०, सी० १ २. चरन्ति—से०। ३. चम्मे—सी० १।

1. तु०—सद्द०, सु० ६४२।

2. तु०—त०, सु० ६४३; "एत्थ चग्गहणं वुत्तसमुच्चयत्थं। तेन न केवलं कम्मकरणनिमित्तत्थेसु सम्पदानत्थे चेव होति, अथ खो पञ्चम्यत्थे पि होती ति दस्सेति"—सुत्तनि०, पि० १३५।

3. तु०—सद्द०, सु० ६४४; तत्थेव वत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"कालत्थेसु च

अनुकड्ढननिद्देसा। कालत्थे च, भावेन भावलक्खणे च सत्तमी विभत्ति होती त्यत्थो। काले—पुब्बण्हसमये गतो, सायण्हसमये आगतो त्यादि; भावेन भावलक्खणे—भिक्खुसङ्घेसु भोजियमानेसु गतो, गोसु दुय्हमानासु जनो गतो, गोसु दुद्धासु जनो आगतो त्यादि।

तत्थ[5] च भावेन भावलक्खणे लक्खणं, लक्खणवन्तो, लक्ख्यं, लक्ख्यवन्तो ति चत्तारि अङ्गानि होन्ति। तेसु भोजियमानेसू ति लक्खणं, भिक्खुसङ्घेसू ति लक्खणवन्तो, गतो ति लक्ख्यं, जनो ति लक्ख्यवन्तो; एवं सेसेसु पि। एत्थ च लक्खणं किरियाय भावप्पधानतो इमिना सुत्तेन सत्तमी भवति—भोजियमानेसू तिदं; तस्मिं सिद्धे तेन सह चरितत्ता तेनेव सुत्तेन लक्खणवन्तो पि सिज्झति, तथा भिक्खुसङ्घेसू ति। एवं सेसेसु पि[6]।

भावलक्खणे भावे च लिङ्गम्हा सत्तमी विभत्ति होति। एत्थ च कालो नाम खण-लय-मुहुत्त-पुब्बण्हादिको समयो; तत्थ दसच्छरापमाणो कालो खणो नाम, तेन खणेन दसखणो कालो लयो नाम, तेन लयेन दसलयो कालो खणलयो नाम, तेन दसगुणो मुहुत्तो नाम, मुहुत्तेन दसगुणो खणमुहुत्तो नामा ति—अयं विभागो वेदितब्बो। भावो नाम किरिया, सा धात्वत्थो ति पि वुच्चति; सा चेत्थ किरियन्तरोपलक्खणा व अधिप्पेता"; रूपसिद्धियं तु अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—"कालो नाम निमेसखणलवमुहुत्तपुब्बण्हादिको; भावो नाम किरिया, सा चेत्थ किरियन्तरूपलक्खणा व अधिप्पेता। तस्मिं कालत्थे च भावलक्खणे भावत्थे च लिङ्गम्हा सत्तमी विभत्ति होति"—सु० वु० ३१२; वि०द०—सुत्तनि०, पि० १३५-१३६; "यस्य च भावेन भावलक्षणम्"—पा० २.३.३७; काशिकायं अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—"सप्तमीति वर्तते। भावः क्रिया। यस्य च भावेन यस्य च क्रियया क्रियान्तरं लक्ष्यते ततो भाववतः सप्तमी विभक्तिर्भवति; प्रसिद्धा च क्रिया क्रियान्तरं लक्षयति"।

4. तु०—"द्विपदमिदं। सत्तमिग्गहणमिहानुवत्तते। एत्थ च भावो ति धात्वत्थो अधिप्पेतो" —क० न्या०, पि० २५८।

5-6. तु०—सुत्तनि०, पि० १३६।

३१६. उपाध्यधिकिस्सरवचने । २. ६. ४४ ।

उप-अधि इच्चेतेसं पयोगे अधिकिस्सरवचनेसु[1] सत्तमी विभत्ति होति । उप खारियं[2] दोणो, उप निक्खे कहापणं, अधि ब्रह्मदत्ते[3] पञ्चाला, अधि नच्चेसु[4] गोतमी, अधि देवेसु बुद्धो ।

---

३१६. उपाध्यधिकिस्सरवचने[1] तिमस्स निक्खन्तं वुत्तनयमेव । द्विपदं[2]। उपाधी ति सहत्थनिद्देसो, ततियालोपवसेन; अधिकिस्सरवचने ति विसयनिद्देसो । अधिकत्थे इस्सरत्थे वत्तमानेहि उप-अधि इच्चेतेहि योगे, अधिकिस्सरवचने गम्यमाने सत्तमी विभत्ति होती ति अत्थो[3] ।

---

१. ०वचने—से० । २. खारिया—सी०१, सी०२ । ३. ब्रह्मदत्तेसु—सी०२ । ४. नच्चे—से० ।

1. तु०—"उपाधियोगे अधिकिस्सरवचने"—सद्द०, सु० ६४५; तत्थेव वुत्तियं अस्स सुत्तस्स वण्णना एवमागता—"यस्मा उप-अधि इच्चेते अधिकिस्सरवचने वत्तन्ति, तस्मा तेसं उप-अधीनं योगे गम्ममाने अधिकवचने च इस्सरवचने च सत्तमी विभत्ति होति । एत्थ च इस्सरवचनं ति इदं द्विधा गहितं—इस्सरस्स वचनं उदीरणं ति इस्सरवचनं, इस्सरवचनं यस्स वत्थुनो तं इस्सरवचनं ति च, तेनिस्सरपरिदीपकवचने, यस्स कस्सचि अयं इस्सरो ति वदन्ति, तंदीपकवचने च सत्तमी विभत्ति होति····"; "अधिरीश्वरे" —पा० १.४.९७; काशिकायं अस्स सुत्तस्स विवरणं एवमागतं—"ईश्वरः स्वामी, स च स्वमपेक्षते । तदयं स्वस्वामिसंबन्धे कर्मप्रवचनीयसंज्ञो भवति । तत्र कदाचित्स्वामिनः कर्मप्रवचनीयविभक्तिः सप्तमी भवति कदाचित्स्वात्····" ।

2-3. तु०—"···इस्सरवचनं तिदं द्विधा गहितं । इस्सरस्स वचनं उदीरणं ति इस्सरवचनं, इस्सरस्स वचनं यस्स जनस्से ति च । तेनिस्सरपरिदीपकवचने, यस्स कस्सचि अयमिस्सरो ति वदन्ति, तद्दीपकवचने च सत्तमी विभत्ति होती ति । तत्थ पुब्बपक्खवसेन वुत्तं—'अधि ब्रह्मदत्ते पञ्चाला' ति । अयं पनेत्थ अत्थो —'ब्रह्मदत्तिस्सरा पञ्चाला' ति । इतरानि इतरवसेन वुत्तानि···"—क० न्या०, पि० २५८; रूप०, सु० वु० ३१३; "····अधिकस्स वत्थुस्स च इस्सरस्स पुग्गलस्स च वचनं उदीरणं अधिकिस्सरवचनं; उप-अधिकसद्दानं तंवचने सति अधिक-इस्सरवन्तवाचकलिङ्गम्हा सत्तमीविभत्ति होती ति अत्थो । अथ वा अधिकस्स वचनं एतस्मिं अत्थी ति अधिकवचनं । किन्तं ? खारी । इस्सरस्स वचनं एतस्मिं अत्थी ति इस्सरवचनो । को सो ? इस्सरेन गोतमीब्रह्मदत्तादिना सम्बन्धो पञ्चालादिको । अधिकवचनञ्च इस्सरवचनो चे ति अधिकिस्सरवचनं । तस्मिं अत्थे सत्तमी

३१७. मण्डितुस्सुक्केसु[1] ततिया च। २. ६. ४५।

मण्डित-उस्सुक्क इच्चेतेस्वत्थेसु च[2] ततिया विभत्ति होति सत्तमी च। ञाणेन पसीदितो, ञाणस्मिं वा[3] पसीदितो; ञाणेन उस्सुक्को, ञाणस्मिं वा[4] उस्सुक्को, तथागतो वा तथागतगोत्तो वा तथागतसावको[5] वा[5]।

इति[6] नामकप्पे

कारककप्पो छट्ठो कण्डो[6]।

उप खारियं[1] दोणो, उप निक्खे कहापणं ति खारियं खारितो दोणो अधिको ति अत्थो; अपादानत्थे पञ्चमी; निक्खतो कहापणं अधिको ति अत्थो। अधि नच्चेसु गोतमी, अधि ब्रह्मदत्तेसु पञ्चाला*, अधि देवेसु बुद्धो; गोतमी नच्चतो अधिका, बुद्धो देवेहि अधिको ति अत्थो; अधि ब्रह्मदत्तेसु पञ्चाला ति एत्थ अधिसद्दो इस्सरत्थो, ब्रह्मदत्तिस्सरा पञ्चाला ति अत्थो[2]।

३१७. मण्डितुस्सुक्केसु ततिया[3] तिमस्स निक्खन्तं वुत्तनयमेव। द्विपदं। विसय-विसयीनिद्देसा। रूपसिद्धिसद्दनीतिपकरणेसु[4] चसद्दो अत्थि, सो सम्पिण्डनत्थो[5]। मण्डित-उस्सुक इच्चेतेस्वत्थेसु ततिया विभत्ति होति, सत्तमी चा त्यत्थो। ञाणेन पसीदितो, ञाणस्मिं वा पसीदितो; ञाणेन उस्सुक्को+, ञाणस्मिं वा उस्सुको। मण्डितसद्दो पसन्नत्थवाचको, उस्सुक्कसद्दो ईहत्थवाचको[6]।

इति कच्चायनवण्णनायं नामकप्पस्स**

छट्ठमकारककण्डवण्णना।

होती ति अत्थो। न्यास-बालावतारेसु पन···द्विधा विग्गहं कत्वा····अधि नच्चे ति आदिप्पयोगं सङ्गण्हाति····तं अधिकवचनसद्देन विरुज्झति विय दिस्सति। अपरे पि तं न्यासादीसु वुत्तवचनं निस्साय····सत्तमी ति वदन्ति, तं पि विरुद्धं विय दिस्सति। उप-अधिसद्दे कम्मप्पवचनीये ति वदन्ति, तं पि न पच्चेतब्बं, पुनवचने पयोजनाभावा, कम्मप्पवचनीययुत्ते ति इमिना सङ्गण्हितुं सक्कुणेय्यत्ता च···''—सुत्तनि०, पि० १३७।

1-2. तु०—रूप०, सु० वु० ३१३।

*. पञ्चला—सी०। +. उस्सूक्को—सी०। **. नामकप्पे—सी०।

१. ०स्सुकेसु—से०। २. सी० १ पोत्थके नत्थि। ३. से०, सी०१ पोत्थकेसु नत्थि। ४. से०, सी० १ पोत्थकेसु नत्थि। ५-५. से० पोत्थके नत्थि। ६-६. इति कारककप्पे छट्ठो कण्डो—से०, सी० १।

3. तु०—"उस्सुक्क-मण्डितेसु ततिया च"—सद्द०, सु० ६४६; तत्थेव वुत्तियं अस्स वण्णना एवमागता—"....एत्थ च उस्सुक्कसद्दो ईहत्थवाचको, मण्डितसद्दो पसन्नवाचको...एत्थ पन किञ्चा पि उस्सुक्कमण्डितत्थेसु वुत्तप्पकारा विभत्तियो न होन्ति अञ्ञस्मिं येवत्थे होन्ति, तथा पि अञ्ञस्मिं अत्थे तासं उप्पत्ति उस्सुक्कमण्डितत्थेसु येव होती ति ते अत्थे पधाने कत्वा 'उस्सुक्कमण्डितेसू' ति वुत्तं ति दट्ठब्बं; एस नयो अञ्ञत्रा पि ईदिसेसु ठानेसु"; "प्रसितोत्सुकाभ्यां तृतीया च"—पा० २.३.४४; अस्स सुत्तस्स वण्णना काशिकायं एवमागता—"प्रसित-उत्सुक इत्येताभ्यां योगे तृतीया विभक्तिर्भवति, चकारात् सप्तमी च...." ।

4. सद्द०, सु० ६४६; रूप०, सु० ३१४ ।

5. द०—सुत्तनि०, पि० १३७ ।

6. तु०—"....एत्थ च मण्डितसद्दो पसन्नत्थवाचको, उस्सुक्कसद्दो ईहत्थवाचको...."—क० न्या०, पि० २५९; रूप०, सु०वु० ३१४; अस्स सुत्तस्स अनन्तरं कच्चायनन्यासे एकूनतिंसति अञ्ञानि उपसुत्तानि पि दिन्नानि, तेसं विवरणं तत्थ वित्थारेन आगतं, तेसं पमाणिकता-विसये तत्थ विसदरूपेन संसया पि उट्ठापिता, यथा वुत्तं—"अलमस्स वचनेन, न चेतं पोराणकं" ति । इमानि उपसुत्तानि पाणिनिआदिवेय्याकरणानं आधारं गहेत्वा वुत्तानी ति पाकटं । तानि तु एवं विज्जन्ति–१. "ततियाय च दुतिया"; २. सरिच्छादीनं कम्मनि छट्ठी; ३. करोतिस्स पतियतने; ४. कत्तुकम्मानं किति; ५. यजस्स करणे; ६. न निट्ठादीसु; ७. आहुतिकालद्धानेसु दुतिया ततिया च; ८. किलमत्थे छट्ठी चतुत्थी च ९. कत्तुरीच्छिततमं कम्मं; १०. युत्ते चानिच्छिते; ११. उपानवज्झावसस्स; १२. अन्तरादीहि युत्ते; १३. अभितोपरितोम्हि; १४. तप्पानाचारत्थे; १५. हेतुप्पयोगे छट्ठी ततिया च; १६. साधुनिपुणयुत्ते सत्तमी; १७. गोत्तनामजातिसिप्पवयेसु ततिया; १८. उभयपत्ते कम्मनि; १९. वतस्स च वत्तमाने; २०. तुल्योपमाने ततिया च; २१. गहादीनं कम्मनि सत्तमी; २२. करणत्थे भिक्खाचारे; २३. पञ्चमिया युत्ते; २४. ऊनपुण्णेहि दुतिया ततिया च; २५. वुपास्स च; २६. कम्मत्थे पठमा; २७. आख्यातोपयोगे पञ्चमी; २८. जात्याख्यायं बहुवचनमेकस्मिं क्वचि; २९. अत्तनि गरूसु च क्वचि"—क० न्या०, पि० २५८–२६५ ।

२९००८

वाल्मीकि विद्यापीठ पुस्तकालयः

प्रत्यावर्तनतिथिः

DATE DUE

R69
KAC
V.E. 208c

ACC: 29003

२१००९

AUTHOR कच्चायन

TITLE कच्चायनव्याकरणं (पहिलो भाग)

R 694
KAC
2048 V.S.

२१००९

महेन्द्र संस्कृत विश्वविद्यालय
वाल्मीकि विद्यापीठ
पुस्तकालय